पंचामृत

पाँच पुस्तकों का समुच्चय

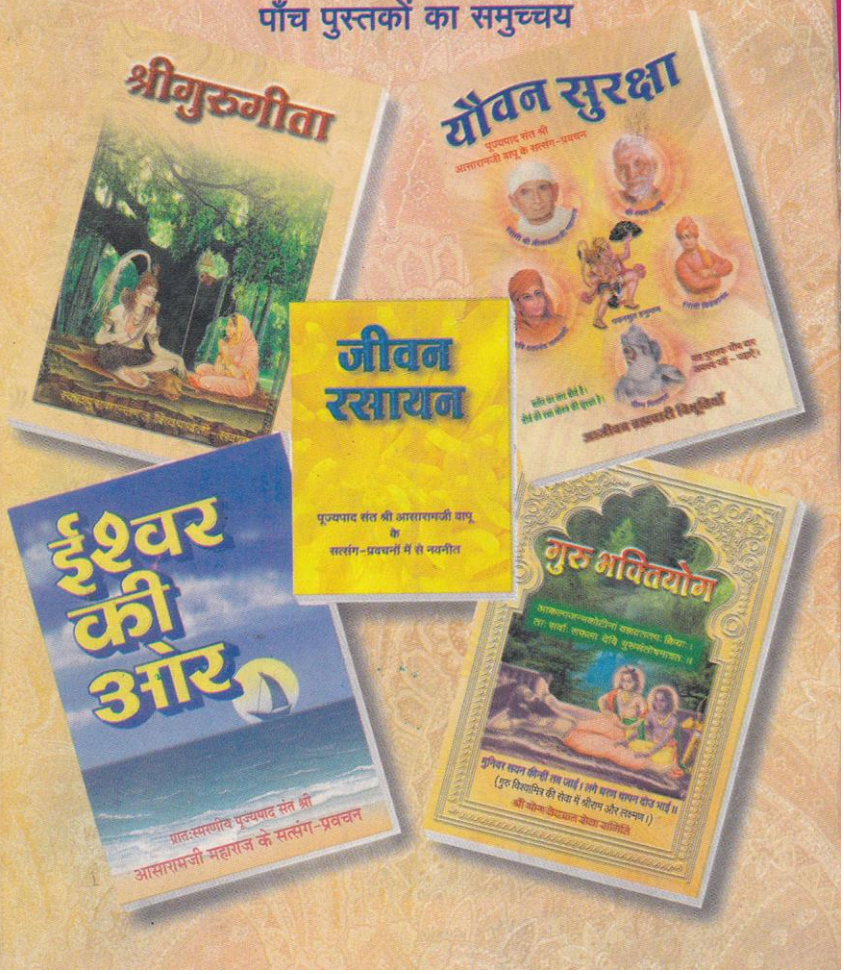

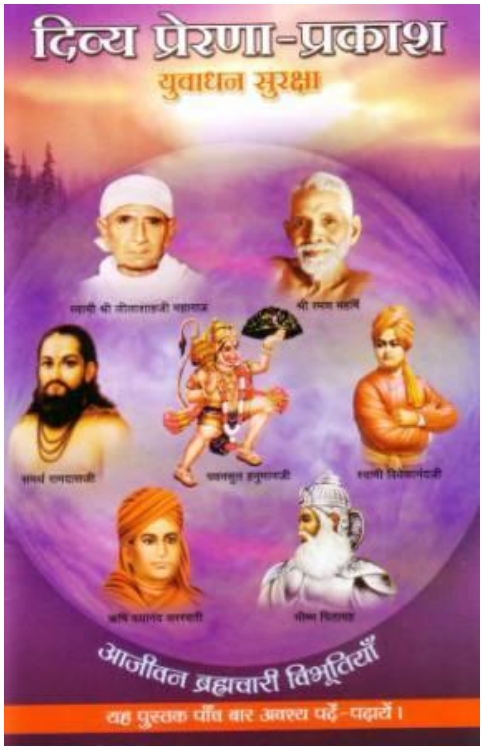

प्रस्तावना

आज तक पूज्यश्री के सम्पर्क में आकर असंख्य लोगों ने अपने पतनोन्मुख जीवन को यौवन सुरक्षा के प्रयोगों द्वारा ऊर्ध्वगामी बनाया है। वीर्यनाश और स्वप्नदोष जैसी बीमारियों की चपेट में आकर हतबल हुए कई युवक-युवतियों के लिए अपने निराशापूर्ण जीवन में पूज्यश्री की सतेज अनुभवयुक्त वाणी एवं उनका पवित्र मार्गदर्शन डूबते को तिनके का ही नहीं, बल्कि नाव का सहारा बन जाता है।

समाज की तेजस्विता का हरण करने वाला आज के विलासितापूर्ण, कुत्सित और वासनामय वातावरण में यौवन सुरक्षा के लिए पूज्यश्री जैसे महापुरुषों के ओजस्वी मार्गदर्शन की अत्यंत आवश्यकता है।

उस आवश्यकता की पूर्ति हेतु ही पूज्यश्री ने जहाँ अपने प्रवचनों में 'अमूल्य यौवन-धन की सुरक्षा' विषय को छुआ है, उसे संकलित करके पाठकों के सम्मुख रखने का यह अल्प प्रयास है।

इस पुस्तक में स्त्री-पुरुष, गृहस्थी-वानप्रस्थी, विद्यार्थी एवं वृद्ध सभी के लिए अनुपम सामग्री है। सामान्य दैनिक जीवन को किस प्रकार जीने से यौवन का ओज बना रहता है और जीवन दिव्य बनता है, उसकी भी रूपरेखा इसमें सन्निहित है और सबसे प्रमुख बात कि योग की गूढ़ प्रक्रियाओं से स्वयं परिचित होने के कारण पूज्यश्री की वाणी में तेज, अनुभव एवं प्रमाण का सामंजस्य है जो अधिक प्रभावोत्पादक सिद्ध होता है।

यौवन सुरक्षा का मार्ग आलोकित करने वाली यह छोटी सी पुस्तक दिव्य जीवन की चाबी है। इससे स्वयं लाभ उठायें एवं औरों तक पहुँचाकर उन्हें भी लाभान्वित करने का पुण्यमय कार्य करें।

श्री योग वेदान्त सेवा समिति, अमदावाद आश्रम।

वीर्यवान बनो

पालो ब्रह्मचर्य विषय-वासनाएँ त्याग। ईश्वर के भक्त बनो जीवन जो प्यारा है।।

उठिए प्रभात काल रहिये प्रसन्नचित्त। तजो शोक चिन्ताएँ जो दुःख का पिटारा है।।

कीजिए व्यायाम नित्य भ्रात! शक्ति अनुसार। नहीं इन नियमों पै किसी का इजारा[1] है।।

देखिये सौ शरद औ'कीजिए सुकर्म प्रिय! सदा स्वस्थ रहना ही कर्त्तव्य तुम्हारा है।।

लाँघ गया पवनसुत ब्रह्मचर्य से ही सिंधु। मेघनाद मार कीर्ति लखन कमायी है।।

लंका बीच अंगद ने जाँघ जब रोप दई। हटा नहीं सका जिसे कोई बलदायी है।।

पाला व्रत ब्रह्मचर्य राममूर्ति, गामा ने भी। देश और विदेशों में नामवरी[2] पायी है।।

भारत के वीरो! तुम ऐसे वीर्यवान बनो। ब्रह्मचर्य महिमा तो वेदन में गायी है।।

1- एकाधिकार। 2- प्रसिद्धि

ॐॐॐॐॐॐ

ब्रह्मचर्य रक्षा हेतु मंत्र

एक कटोरी दूध में निहारते हुए इस मंत्र का इक्कीस बार जप करें | तदपश्चात उस दूध को पी लें, ब्रह्मचर्य रक्षा में सहायता मिलती है | यह मंत्र सदैव मन में धारण करने योग्य है :

ॐ नमो भगवते महाबले पराक्रमाय

मनोभिलाषितं मनः स्तंभ कुरु कुरु स्वाहा |

अनुक्रम

यौवन सुरक्षा

प्रस्तावना

वीर्यवान बनो

ब्रह्मचर्य रक्षा हेतु मंत्र

परमपूज्य बापू जी की कृपा-प्रसाद से लाभान्वित हृदयों के उद्गार

महामृत्युंजय मंत्र

मंगली बाधा निवारक मंत्र

1. विद्यार्थियों, माता-पिता-अभिभावकों व राष्ट्र के कर्णधारों के नाम ब्रह्मनिष्ठ संत श्री आसारामजी बापू का संदेश

2. यौवन-सुरक्षा

ब्रह्मचर्य क्या है ?

ब्रह्मचर्य उत्कृष्ट तप है

वीर्यरक्षण ही जीवन है

आधुनिक चिकित्सकों का मत

वीर्य कैसे बनता है

आकर्षक व्यक्तित्व का कारण

माली की कहानी

सृष्टि क्रम के लिए मैथुन : एक प्राकृतिक व्यवस्था

सहजता की आड़ में भ्रमित न होवें

अपने को तोलें

मनोनिग्रह की महिमा

आत्मघाती तर्क

स्त्री प्रसंग कितनी बार ?

राजा ययाति का अनुभव

राजा मुचकन्द का प्रसंग

गलत अभ्यास का दुष्परिणाम

वीर्यरक्षण सदैव स्तुत्य

अर्जुन और अंगारपर्ण गंधर्व

ब्रह्मचर्य का तात्त्विक अर्थ

3. वीर्यरक्षा के उपाय

सादा रहन-सहन बनायें

उपयुक्त आहार

शिश्नेन्द्रिय स्नान

उचित आसन एवं व्यायाम करो

ब्रह्ममुहूर्त में उठो

दुर्व्यसनों से दूर रहो

सत्संग करो

शुभ संकल्प करो

त्रिबन्धयुक्त प्राणायाम और योगाभ्यास करो

नीम का पेड चला

स्त्री-जाति के प्रति मातृभाव प्रबल करो

शिवाजी का प्रसंग

अर्जुन और उर्वशी

वीर्यसंचय के चमत्कार

भीष्म पितामह और वीर अभिमन्यु

पृथ्वीराज चौहान क्यों हारा ?

स्वामी रामतीर्थ का अनुभव

युवा वर्ग से दो बातें

हस्तमैथुन का दुष्परिणाम

अमेरिका में किया गया प्रयोग

कामशक्ति का दमन या ऊर्ध्वगमन ?

एक साधक का अनुभव

दूसरे साधक का अनुभव

योगी का संकल्पबल

क्या यह चमत्कार है ?

हस्तमैथुन व स्वप्नदोष से कैसे बचें

सदैव प्रसन्न रहो

वीर्य का ऊर्ध्वगमन क्या है ?

वीर्यरक्षा का महत्त्वपूर्ण प्रयोग

दूसरा प्रयोग

वीर्यरक्षक चूर्ण

गोंद का प्रयोग

ब्रह्मचर्य रक्षा हेतु मंत्र

पादपश्चिमोत्तानासन

पादांगुष्ठानासन

बुद्धिशक्तिवर्धक प्रयोगः

हमारे अनुभव

महापुरुष के दर्शन का चमत्कार

'यौवन सुरक्षा' पुस्तक आज के युवा वर्ग के लिये एक अमूल्य भेंट है

‘यौवन सुरक्षा’ पुस्तक नहीं, अपितु एक शिक्षा ग्रन्थ है

ब्रह्मचर्य ही जीवन है

शास्त्रवचन

भस्मासुर क्रोध से बचो

ब्रह्माचर्य-रक्षा का मंत्र

सुख-शांति व स्वास्थ्य का प्रसाद बाँटने के लिए ही बापू जी का अवतरण हुआ है।

हर व्यक्ति जो निराश है उसे आसाराम जी की जरूरत है

बापू नित्य नवीन, नित्य वर्धनीय आनंदस्वरूप हैं

पुण्य संचय व ईश्वर की कृपा का फलः ब्रह्मज्ञान का दिव्य सत्संग

बापू जी का सान्निध्य गंगा के पावन प्रवाह जैसा है

भगवन्नाम का जादू

पूज्यश्री के सत्संग में प्रधानमंत्री श्री अटल बिहारी वाजपेयीजी के उदगार

पू. बापूः राष्ट्रसुख के संवर्धक

राष्ट्र उनका ऋणी है

गरीबों व पिछड़ों को ऊपर उठाने के कार्य चालू रहें

सराहनीय प्रयासों की सफलता के लिए बधाई

आपने दिव्य ज्ञान का प्रकाशपुंज प्रस्फुटित किया है

आप समाज की सर्वांगीण उन्नति कर रहे हैं

'योग व उच्च संस्कार शिक्षा' हेतु भारतवर्ष आपका चिर-आभारी रहेगा

आपने जो कहा है हम उसका पालन करेंगे

जब गुरु के साक्षात दर्शन हो गये हैं तो कुछ बदलाव ज़रूर आयेगा

बापूजी सर्वत्र संस्कार धरोहर को पहुँचाने के लिए अथक तपश्चर्या कर रहे हैं

आपके दर्शनमात्र से मुझे अदभुत शक्ति मिलती है

हम सभी का कर्तव्य होगा कि आपके बताये रास्ते पर चलें

आपका मंत्र हैः 'आओ, सरल रास्ता दिखाऊँ, राम को पाने के लिए'

संतों के मार्गदर्शन में देश चलेगा तो आबाद होगा

सत्य का मार्ग कभी न छूटे ऐसा आशीर्वाद दो

पुण्योदय पर संत समागम

बापूजी जहाँ नहीं होते वहाँ के लोगों के लिए भी बहुत कुछ करते हैं

जीवन की सच्ची शिक्षा तो पूज्य बापूजी ही दे सकते हैं

आपकी कृपा से योग की अणुशक्ति पैदा हो रही है....

धरती तो बापू जैसे संतों के कारण टिकी है

मैं कमनसीब हूँ जो इतने समय तक गुरुवाणी से वंचित रहा

इतनी मधुर वाणी! इतना अदभुत ज्ञान!

सत्संग श्रवण से मेरे हृदय की सफाई हो गयी....

ज्ञानरूपी गंगाजी स्वयं बहकर यहाँ आ गयीं...

बापू जी के सत्संग से विश्वभर के लोग लाभान्वित...

पूरी डिक्शनरी याद कर विश्व रिकॉर्ड बनाया

मंत्रदीक्षा व यौगिक प्रयोगों से बुद्धि का अप्रतिम विकास

सत्संग व मंत्रदीक्षा ने कहाँ से कहाँ पहुँचा दिया

5 वर्ष के बालक ने चलायी जोखिम भरी सडकों पर कार

ऐसे संतों का जितना आदर किया जाय, कम है

मुझे निर्व्यसनी बना दिया....

गुरुजी की तस्वीर ने प्राण बचा लिये

सदगुरू शिष्य का साथ कभी नहीं छोडते

गुरूकृपा से अंधापन दूर हुआ

और डकैत घबराकर भाग गये

मंत्र द्वारा मृतदेह में प्राण-संचार

सदगुरूदेव की कृपा से नेत्रज्योति वापस मिली

बडदादा की मिट्टी व जल से जीवनदान

पूज्य बापू ने फेंका कृपा-प्रसाद

बेटी ने मनौती मानी और गुरुकृपा हुई

और गुरुदेव की कृपा बरसी

गुरुदेव ने भेजा अक्षयपात्र

स्वप्न में दिये हुए वरदान से पुत्रप्राप्ति

'श्री आसारामायण' के पाठ से जीवनदान

गुरूवाणी पर विश्वास से अवर्णीय लाभ

सेवफल के दो टुकडों से दो संतानें

साइकिल से गुरूधाम जाने पर खराब टाँग ठीक हो गयी

अदभुत रही मौनमंदिर की साधना !

असाध्य रोग से मुक्ति

कैसेट का चमत्कार

पूज्यश्री की तस्वीर से मिली प्रेरणा

नेत्रबिंदु का चमत्कार

मंत्र से लाभ

काम क्रोध पर विजय पायी

जला हुआ कागज पूर्व रूप में

नदी की धारा मुड़ गयी

सदगुरू-महिमा

लेडी मार्टिन के सुहाग की रक्षा करने अफगानिस्तान में प्रकटे शिवजी

सुखपूर्वक प्रसवकारक मंत्र

सर्वांगीण विकास की कुंजियाँ

ॐॐॐॐॐॐ

(अनुक्रम)

महामृत्युंजय मंत्र

ॐ हौं जूँ सः। ॐ भूर्भुवः स्वः। ॐ त्र्यम्बकं यजामहे सुगंधिं पुष्टिवर्धनम्। उर्वारुकमिव बन्धनान्मृत्योर्मुक्षिय मामृतात्। स्वः भुवः भूः ॐ। सः जूँ हौं ॐ।

भगवान शिव का यह महामृत्युंजय मंत्र जपने से अकाल मृत्यु तो टलती ही है, आरोग्यता की भी प्राप्ति होती है। स्नान करते समय शरीर पर लोटे से पानी डालते वक्त इस मंत्र का जप करने से स्वास्थ्य लाभ होता है। दूध में निहारते हुए इस मंत्र का जप करके दूध पी लिया जाये तो यौवन की सुरक्षा में भी सहायता मिलती है। आजकल की तेज रफ्तार वाली ज़िंदगी कें कहाँ उपद्रव, दुर्घटना हो जाये, कहना मुश्किल है। घर से निकलते समय एक बार यह मंत्र जपने वाला उपद्रवों से सुरक्षित रहता है और सुरक्षित लौटता है। (इस मंत्र के अनुष्ठान की पूर्ण जानकारी के लिए आश्रम की **'आरोग्यनिधि'** पुस्तक पढ़ें।

श्रीमदभागवत के आठवें स्कंध में तीसरे अध्याय के श्लोक 1 से 33 तक में वर्णित 'गजेन्द्र मोक्ष' स्तोत्र का पाठ करने से तमाम विघ्न दूर होते हैं।

मंगली बाधा निवारक मंत्र

अं रां अं। इस मंत्र को 108 बार जपने से क्रोध दूर होता है। जन्मकुण्डली में मंगली दोष होने से जिनके विवाह न हो रहे हों, वे 27 मंगलवार इसका 108 बार जप करते हुए व्रत रख के हनुमान जी पर सिंदूर का चोला चढ़ायें तो मंगल बाधा का क्षय होता है।

1. विद्यार्थियों, माता-पिता-अभिभावकों व राष्ट्र के कर्णधारों के नाम ब्रह्मनिष्ठ संत श्री आसारामजी बापू का संदेश

हमारे देश का भविष्य हमारी युवा पीढ़ी पर निर्भर है किन्तु उचित मार्गदर्शन के अभाव में वह आज गुमराह हो रही है |

पाश्चात्य भोगवादी सभ्यता के दुष्प्रभाव से उसके यौवन का ह्रास होता जा रहा है | विदेशी चैनल, चलचित्र, अशलील साहित्य आदि प्रचार माध्यमों के द्वारा युवक-युवतियों को गुमराह किया जा रहा है | विभिन्न सामयिकों और समाचार-पत्रों में भी तथाकथित पाश्चात्य मनोविज्ञान से प्रभावित मनोचिकित्सक और 'सेक्सोलॉजिस्ट' युवा छात्र-छात्राओं को चरित्र, संयम और नैतिकता से भ्रष्ट करने पर तुले हुए हैं |

ब्रितानी औपनिवेशिक संस्कृति की देन इस वर्त्तमान शिक्षा-प्रणाली में जीवन के नैतिक मूल्यों के प्रति उदासीनता बरती गई है | फलतः आज के विद्यार्थी का जीवन कौमार्यवस्था से ही विलासी और असंयमी हो जाता है |

पाश्चात्य आचार-व्यवहार के अंधानुकरण से युवानों में जो फैशनपरस्ती, अशुद्ध आहार-विहार के सेवन की प्रवृत्ति कुसंग, अभद्रता, चलचित्र-प्रेम आदि बढ़ रहे हैं उससे दिनोंदिन उनका पतन होता जा रहा है | वे निर्बल और कामी बनते जा रहे हैं | उनकी इस अवदशा को देखकर ऐसा लगता है कि वे ब्रह्मचर्य की महिमा से सर्वथा अनभिज्ञ हैं |

लाखों नहीं, करोड़ों-करोड़ों छात्र-छात्राएँ अज्ञानतावश अपने तन-मन के मूल ऊर्जा-स्रोत का व्यर्थ में अपक्षय कर पूरा जीवन दीनता-हीनता-दुर्बलता में तबाह कर देते हैं और सामाजिक अपयश के भय से मन-ही-मन कष्ट झेलते रहते हैं | इससे उनका शारीरिक-मानसिक स्वास्थ्य चौपट हो जाता है, सामान्य शारीरिक-मानसिक विकास भी नहीं हो पाता | ऐसे युवान रक्ताल्पता, विस्मरण तथा दुर्बलता से पीड़ित होते हैं |

यही वजह है कि हमारे देश में औषधालयों, चिकित्सालयों, हजारों प्रकार की एलोपैथिक दवाइयों, इन्जेक्शनों आदि की लगातार वृद्धि होती जा रही है | असंख्य डॉक्टरों ने अपनी-अपनी दुकानें खोल रखी हैं फिर भी रोग एवं रोगियों की संख्या बढ़ती ही जा रही है |

इसका मूल कारण क्या है ? दुर्व्यसन तथा अनैतिक, अप्राकृतिक एवं अमर्यादित मैथुन द्वारा वीर्य की क्षति ही इसका मूल कारण है | इसकी कमी से रोगप्रतिकारक शक्ति घटती है, जीवनशक्ति का ह्रास होता है |

इस देश को यदि जगदगुरु के पद पर आसीन होना है, विश्व-सभ्यता एवं विश्व-संस्कृति का सिरमौर बनना है, उन्नत स्थान फिर से प्राप्त करना है तो यहाँ की सन्तानों को चाहिए कि वे ब्रह्मचर्य के महत्व को समझें और सतत सावधान रहकर सख्ती से इसका पालन करें |

ब्रह्मचर्य के द्वारा ही हमारी युवा पीढ़ी अपने व्यक्तित्व का संतुलित एवं श्रेष्ठतर विकास कर सकती है | ब्रह्मचर्य के पालन से बुद्धि कुशाग्र बनती है, रोगप्रतिकारक शक्ति बढ़ती है तथा महान्-

से-महान् लक्ष्य निर्धारित करने एवं उसे सम्पादित करने का उत्साह उभरता है, संकल्प में दृढ़ता आती है, मनोबल पुष्ट होता है |

आध्यात्मिक विकास का मूल भी ब्रह्मचर्य ही है | हमारा देश औद्योगिक, तकनीकी और आर्थिक क्षेत्र में चाहे कितना भी विकास कर ले , समृद्धि प्राप्त कर ले फिर भी यदि युवाधन की सुरक्षा न हो पाई तो यह भौतिक विकास अंत में महाविनाश की ओर ही ले जायेगा क्योंकि संयम, सदाचार आदि के परिपालन से ही कोई भी सामाजिक व्यवस्था सुचारु रूप से चल सकती है | भारत का सर्वांगीण विकास सच्चरित्र एवं संयमी युवाधन पर ही आधारित है |

अतः हमारे युवाधन छात्र-छात्राओं को ब्रह्मचर्य में प्रशिक्षित करने के लिए उन्हें यौन-स्वास्थ्य, आरोग्यशास्त्र, दीर्घायु-प्राप्ति के उपाय तथा कामवासना नियंत्रित करने की विधि का स्पष्ट ज्ञान प्रदान करना हम सबका अनिवार्य कर्त्तव्य है | इसकी अवहेलना करना हमारे देश व समाज के हित में नहीं है | यौवन सुरक्षा से ही सुदृढ़ राष्ट्र का निर्माण हो सकता है |

(अनुक्रम)

2. यौवन-सुरक्षा

शरीरमाद्यं खलु धर्मसाधनम् |

धर्म का साधन शरीर है | शरीर से ही सारी साधनाएँ सम्पन्न होती हैं | यदि शरीर कमजोर है तो उसका प्रभाव मन पर पड़ता है, मन कमजोर पड़ जाता है |

कोई भी कार्य यदि सफलतापूर्वक करना हो तो तन और मन दोनों स्वस्थ होने चाहिए | इसीलिये कई बूढ़े लोग साधना की हिम्मत नहीं जुटा पाते, क्योंकि वैषयिक भोगों से उनके शरीर का सारा ओज-तेज नष्ट हो चुका होता है | यदि मन मजबूत हो तो भी उनका जर्जर शरीर पूरा साथ नहीं दे पाता | दूसरी ओर युवक वर्ग साधना करने की क्षमता होते हुए भी संसार की चकाचौंध से प्रभावित

होकर वैषयिक सुखों में बह जाता है | अपनी वीर्यशक्ति का महत्व न समझने के कारण बुरी आदतों में पड़कर उसे खर्च कर देता है, फिर जिन्दगी भर पछताता रहता है |

मेरे पास कई ऐसे युवक आते हैं, जो भीतर-ही भीतर परेशान रहते हैं | किसीको वे अपना दुःख-दर्द सुना नहीं पाते, क्योंकि बुरी आदतों में पड़कर उन्होंने अपनी वीर्यशक्ति को खो दिया है | अब, मन और शरीर कमजोर हो गये गये, संसार उनके लिये दुःखालय हो गया, ईश्वरप्राप्ति उनके लिए असंभव हो गई | अब संसार में रोते-रोते जीवन घसीटना ही रहा |

इसीलिए हर युग में महापुरुष लोग ब्रह्मचर्य पर जोर देते हैं | जिस व्यक्ति के जीवन में संयम नहीं है, वह न तो स्वयं की ठीक से उन्नति कर पाता है और न ही समाज में कोई महान् कार्य कर पाता है | ऐसे व्यक्तियों से बना हुआ समाज और देश भी भौतिक उन्नति व आध्यात्मिक उन्नति में पिछड़ जाता है | उस देश का शीघ्र पतन हो जाता है |

(अनुक्रम)

ब्रह्मचर्य क्या है ?

पहले ब्रह्मचर्य क्या है- यह समझना चाहिए | 'याज्ञवल्क्य संहिता' में आया है :

कर्मणा मनसा वाचा सर्वास्थासु सर्वदा |

सर्वत्र मैथुनतुआगो ब्रह्मचर्यं प्रचक्षते ||

'सर्व अवस्थाओं में मन, वचन और कर्म तीनों से मैथुन का सदैव त्याग हो, उसे ब्रह्मचर्य कहते हैं |'

भगवान वेदव्यासजी ने कहा है :

ब्रह्मचर्यं गुप्तेन्द्रिस्योपस्थस्य संयमः |

'विषय-इन्द्रियों द्वारा प्राप्त होने वाले सुख का संयमपूर्वक त्याग करना ब्रह्मचर्य है |'

भगवान शंकर कहते हैं :

सिद्धे बिन्दौ महादेवि किं न सिद्धयति भूतले |

'हे पार्वती! बिन्दु अर्थात वीर्यरक्षण सिद्ध होने के बाद कौन-सी सिद्धि है, जो साधक को प्राप्त नहीं हो सकती ?'

साधना द्वारा जो साधक अपने वीर्य को ऊर्ध्वगामी बनाकर योगमार्ग में आगे बढ़ते हैं, वे कई प्रकार की सिद्धियों के मालिक बन जाते हैं | ऊर्ध्वरेता योगी पुरुष के चरणों में समस्त सिद्धियाँ दासी बनकर रहती हैं | ऐसा ऊर्ध्वरेता पुरुष परमानन्द को जल्दी पा सकता है अर्थात् आत्म-साक्षात्कार जल्दी कर सकता है |

देवताओं को देवत्व भी इसी ब्रह्मचर्य के द्वारा प्राप्त हुआ है:

ब्रह्मचर्येण तपसा देवा मृत्युमुपाघ्नत |

इन्द्रो ह ब्रह्मचर्येण देवेभ्यः स्वराभरत ||

'ब्रह्मचर्यरूपी तप से देवों ने मृत्यु को जीत लिया है | देवराज इन्द्र ने भी ब्रह्मचर्य के प्रताप से ही देवताओं से अधिक सुख व उच्च पद को प्राप्त किया है |'

(अथर्ववेद 1.5.19)

ब्रह्मचर्य बड़ा गुण है | वह ऐसा गुण है, जिससे मनुष्य को नित्य मदद मिलती है और जीवन के सब प्रकार के खतरों में सहायता मिलती है |

(अनुक्रम)

ब्रह्मचर्य उत्कृष्ट तप है

ऐसे तो तपस्वी लोग कई प्रकार के तप करते हैं, परन्तु ब्रह्मचर्य के बारे में भगवान शंकर कहते हैं:

न तपस्तप इत्याहुर्ब्रह्मचर्यं तपोत्तमम् |

ऊर्ध्वरेता भवेद्यस्तु स देवो न तु मानुषः ||

'ब्रह्मचर्य ही उत्कृष्ट तप है | इससे बढ़कर तपश्चर्या तीनों लोकों में दूसरी नहीं हो सकती | ऊर्ध्वरेता पुरुष इस लोक में मनुष्यरूप में प्रत्यक्ष देवता ही है |'

जैन शास्त्रों में भी इसे उत्कृष्ट तप बताया गया है |

तवेसु वा उत्तमं बंभचेरम् |

'ब्रह्मचर्य सब तपों में उत्तम तप है |'

वीर्यरक्षण ही जीवन है

वीर्य इस शरीररूपी नगर का एक तरह से राजा ही है | यह वीर्यरूपी राजा यदि पुष्ट है, बलवान् है तो रोगरूपी शत्रु कभी शरीररूपी नगर पर आक्रमण नही करते | जिसका वीर्यरूपी राजा निर्बल है, उस शरीररूपी नगर को कई रोगरूपी शत्रु आकर घेर लेते हैं | इसीलिए कहा गया है :

मरणं बिन्दोपातेन जीवनं बिन्दुधारणात् |

'बिन्दुनाश (वीर्यनाश) ही मृत्यु है और बिन्दुरक्षण ही जीवन है |'

जैन ग्रंथों में अब्रह्मचर्य को पाप बताया गया है :

अबंभचरियं घोरं पमायं दुरहिठ्ठियम् |

'अब्रह्मचर्य घोर प्रमादरूप पाप है |' (दश वैकालिक सूत्र: 6.17)

'अथर्वेद' में इसे उत्कृष्ट व्रत की संज्ञा दी गई है:

व्रतेषु वै वै ब्रह्मचर्यम् |

वैद्यकशास्त्र में इसको परम बल कहा गया है :

ब्रह्मचर्यं परं बलम् | 'ब्रह्मचर्य परम बल है |'

वीर्यरक्षण की महिमा सभी ने गायी है | योगीराज गोरखनाथ ने कहा है :

कंत गया कूँ कामिनी झूरै | बिन्दु गया कूँ जोगी ||

'पति के वियोग में कामिनी तड़पती है और वीर्यपतन से योगी पश्चाताप करता है |'

भगवान शंकर ने तो यहाँ तक कह दिया कि इस ब्रह्मचर्य के प्रताप से ही मेरी ऐसी महान् महिमा हुई है :

यस्य प्रसादान्महिमा ममाप्येतादृशो भवेत् |

(अनुक्रम)

आधुनिक चिकित्सकों का मत

यूरोप के प्रतिष्ठित चिकित्सक भी भारतीय योगियों के कथन का समर्थन करते हैं | डॉ. निकोल कहते हैं :

"यह एक भैषजिक और देहिक तथ्य है कि शरीर के सर्वोत्तम रक्त से स्त्री तथा पुरुष दोनों ही जातियों में प्रजनन तत्त्व बनते हैं | शुद्ध तथा व्यवस्थित जीवन में यह तत्त्व पुनः अवशोषित हो जाता है | यह सूक्ष्मतम मस्तिष्क, स्नायु तथा मांसपेशिय ऊत्तकों (Tissue) का निर्माण करने के लिये तैयार होकर पुनः परिसंचारण में जाता है | मनुष्य का यह वीर्य वापस ऊपर जाकर शरीर में विकसित होने पर उसे निर्भीक, बलवान्, साहसी तथा वीर बनाता है | यदि इसका अपव्यय किया गया तो यह उसको स्त्रैण, दुर्बल, कृशकलेवर एवं कामोत्तेजनशील बनाता है तथा उसके शरीर के अंगों के कार्यव्यापार को विकृत एवं स्नायुतंत्र को शिथिल (दुर्बल) करता है और उसे मिर्गी (मृगी) एवं अन्य अनेक रोगों और मृत्यु का शिकार बना देता है | जननेन्द्रिय के व्यवहार की निवृति से शारीरिक, मानसिक तथा अध्यात्मिक बल में असाधारण वृद्धि होती है |"

परम धीर तथा अध्यवसायी वैज्ञानिक अनुसंधानों से पता चला है कि जब कभी भी रेतःस्राव को सुरक्षित रखा जाता तथा इस प्रकार शरीर में उसका पुनर्वशोषण किया जाता है तो वह रक्त को समृद्ध तथा मस्तिष्क को बलवान् बनाता है |

डॉ. डिओ लुई कहते हैं : "शारीरिक बल, मानसिक ओज तथा बौद्धिक कुशाग्रता के लिये इस तत्त्व का संरक्षण परम आवश्यक है |"

एक अन्य लेखक डॉ. ई. पी. मिलर लिखते हैं : "शुक्रस्राव का स्वैच्छिक अथवा अनैच्छिक अपव्यय जीवनशक्ति का प्रत्यक्ष अपव्यय है | यह प्रायः सभी स्वीकार करते हैं कि रक्त के सर्वोत्तम तत्त्व शुक्रस्राव की संरचना में प्रवेश कर जाते हैं | यदि यह निष्कर्ष ठीक है तो इसका अर्थ यह हुआ कि व्यक्ति के कल्याण के लिये जीवन में ब्रह्मचर्य परम आवश्यक है |"

पश्चिम के प्रख्यात चिकित्सक कहते हैं कि वीर्यक्षय से, विशेषकर तरुणावस्था में वीर्यक्षय से विविध प्रकार के रोग उत्पन्न होते हैं | वे हैं : शरीर में व्रण, चेहरे पर मुँहासे अथवा विस्फोट, नेत्रों के चतुर्दिक नीली रेखायें, दाढ़ी का अभाव, धँसे हुए नेत्र, रक्तक्षीणता से पीला चेहरा, स्मृतिनाश, दृष्टि की क्षीणता, मूत्र के साथ वीर्यस्खलन, अण्डकोश की वृद्धि, अण्डकोशों में पीड़ा, दुर्बलता, निद्रालुता, आलस्य, उदासी, हृदय-कम्प, श्वासावरोध या कष्टश्वास, यक्ष्मा, पृष्ठशूल, कटिवात, शोरोवेदना, संधि-पीड़ा, दुर्बल वृक्क, निद्रा में मूत्र निकल जाना, मानसिक अस्थिरता, विचारशक्ति का अभाव, दुःस्वप्न, स्वप्न दोष तथा मानसिक अशांति |

उपरोक्त रोग को मिटाने का एकमात्र ईलाज ब्रह्मचर्य है | दवाइयों से या अन्य उपचारों से ये रोग स्थायी रूप से ठीक नहीं होते |

(अनुक्रम)

वीर्य कैसे बनता है

वीर्य शरीर की बहुत मूल्यवान् धातु है | भोजन से वीर्य बनने की प्रक्रिया बड़ी लम्बी है | श्री सुश्रुताचार्य ने लिखा है :

रसाद्रक्तं ततो मांसं मांसान्मेदः प्रजायते |

मेदस्यास्थिः ततो मज्जा मज्जाया: शुक्रसंभवः ||

जो भोजन पचता है, उसका पहले रस बनता है | पाँच दिन तक उसका पाचन होकर रक्त बनता है | पाँच दिन बाद रक्त में से मांस, उसमें से 5-5 दिन के अंतर से मेद, मेद से हड्डी, हड्डी से मज्जा और मज्जा से अंत में वीर्य बनता है | स्त्री में जो यह धातु बनती है उसे 'रज' कहते हैं |

वीर्य किस प्रकार छः-सात मंजिलों से गुजरकर अपना यह अंतिम रूप धारण करता है, यह सुश्रुत के इस कथन से ज्ञात हो जाता है | कहते हैं कि इस प्रकार वीर्य बनने में करीब 30 दिन व 4 घण्टे लग जाते हैं | वैज्ञनिक लोग कहते हैं कि 32 किलोग्राम भोजन से 700 ग्राम रक्त बनता है और 700 ग्राम रक्त से लगभग 20 ग्राम वीर्य बनता है |

(अनुक्रम)

आकर्षक व्यक्तित्व का कारण

इस वीर्य के संयम से शरीर में एक अदभुत आकर्षक शक्ति उत्पन्न होती है जिसे प्राचीन वैद्य धन्वंतरि ने 'ओज' नाम दिया है | यही ओज मनुष्य को अपने परम-लाभ 'आत्मदर्शन' कराने में सहायक बनता है | आप जहाँ-जहाँ भी किसी व्यक्ति के जीवन में कुछ विशेषता, चेहरे पर तेज, वाणी में बल, कार्य में उत्साह पायेंगे, वहाँ समझो इस वीर्य रक्षण का ही चमत्कार है |

यदि एक साधारण स्वस्थ मनुष्य एक दिन में 700 ग्राम भोजन के हिसाब से चालीस दिन में 32 किलो भोजन करे, तो समझो उसकी 40 दिन की कमाई लगभग 20 ग्राम वीर्य होगी | 30 दिन अर्थात

महीने की करीब 15 ग्राम हुई और 15 ग्राम या इससे कुछ अधिक वीर्य एक बार के मैथुन में पुरुष द्वारा खर्च होता है |

माली की कहानी

एक था माली | उसने अपना तन, मन, धन लगाकर कई दिनों तक परिश्रम करके एक सुन्दर बगीचा तैयार किया | उस बगीचे में भाँति-भाँति के मधुर सुगंध युक्त पुष्प खिले | उन पुष्पों को चुनकर उसने इकठ्ठा किया और उनका बढ़िया इत्र तैयार किया | फिर उसने क्या किया समझे आप ...? उस इत्र को एक गंदी नाली (मोरी) में बहा दिया |

अरे ! इतने दिनों के परिश्रम से तैयार किये गये इत्र को, जिसकी सुगन्ध से सारा घर महकने वाला था, उसे नाली में बहा दिया ! आप कहेंगे कि 'वह माली बड़ा मूर्ख था, पागल था ...' मगर अपने आपमें ही झाँककर देखें | वह माली कहीं और ढूँढ़ने की जरूरत नहीं है | हममें से कई लोग ऐसे ही माली हैं |

वीर्य बचपन से लेकर आज तक यानी 15-20 वर्षों में तैयार होकर ओजरूप में शरीर में विद्यमान रहकर तेज, बल और स्फूर्ति देता रहा | अभी भी जो करीब 30 दिन के परिश्रम की कमाई थी, उसे यूँ ही सामान्य आवेग में आकर अविवेकपूर्वक खर्च कर देना कहाँ की बुद्धिमानी है ?

क्या यह उस माली जैसा ही कर्म नहीं है ? वह माली तो दो-चार बार यह भूल करने के बाद किसी के समझाने पर सँभल भी गया होगा, फिर वही-की-वही भूल नही दोहराई होगी, परन्तु आज तो कई लोग वही भूल दोहराते रहते हैं | अंत में पश्चाताप ही हाथ लगता है |

क्षणिक सुख के लिये व्यक्ति कामान्ध होकर बड़े उत्साह से इस मैथुनरूपी कृत्य में पड़ता है परन्तु कृत्य पूरा होते ही वह मुर्दे जैसा हो जाता है | होगा ही | उसे पता ही नहीं कि सुख तो नहीं मिला, केवल सुखाभास हुआ, परन्तु उसमें उसने 30-40 दिन की अपनी कमाई खो दी |

युवावस्था आने तक वीर्यसंचय होता है वह शरीर में ओज के रूप में स्थित रहता है | वह तो वीर्यक्षय से नष्ट होता ही है, अति मैथुन से तो हड्डियों में से भी कुछ सफेद अंश निकलने लगता है, जिससे अत्यधिक कमजोर होकर लोग नपुंसक भी बन जाते हैं | फिर वे किसी के सम्मुख आँख उठाकर भी नहीं देख पाते | उनका जीवन नारकीय बन जाता है |

वीर्यरक्षण का इतना महत्व होने के कारण ही कब मैथुन करना, किससे मैथुन करना, जीवन में कितनी बार करना आदि निर्देशन हमारे ऋषि-मुनियों ने शास्त्रों में दे रखे हैं |

(अनुक्रम)

सृष्टि क्रम के लिए मैथुन : एक प्राकृतिक व्यवस्था

शरीर से वीर्य-व्यय यह कोई क्षणिक सुख के लिये प्रकृति की व्यवस्था नहीं है | सन्तानोत्पत्ति के लिये इसका वास्तविक उपयोग है | यह प्रकृति की व्यवस्था है |

यह सृष्टि चलती रहे, इसके लिए सन्तानोत्पत्ति होना जरूरी है | प्रकृति में हर प्रकार की वनस्पति व प्राणीवर्ग में यह काम-प्रवृत्ति स्वभावतः पाई जाती है | इस काम- प्रवृत्ति के वशीभूत होकर हर प्राणी मैथुन करता है और उसका रतिसुख भी उसे मिलता है | किन्तु इस प्राकृतिक व्यवस्था को ही बार-बार क्षणिक सुख का आधार बना लेना कहाँ की बुद्धिमानी है ? पशु भी अपनी ऋतु के अनुसार ही इस कामवृति में प्रवृत होते हैं और स्वस्थ रहते हैं, तो क्या मनुष्य पशु वर्ग से भी गया बीता है ? पशुओं में तो बुद्धितत्व विकसित नहीं होता, परन्तु मनुष्य में तो उसका पूर्ण विकास होता है |

आहारनिद्राभयमैथुनं च सामान्यमेतत्पशुभिर्नराणाम् |

भोजन करना, भयभीत होना, मैथुन करना और सो जाना यह तो पशु भी करते हैं | पशु शरीर में रहकर हम यह सब करते आए हैं | अब यह मनुष्य शरीर मिला है | अब भी यदि बुद्धि और विवेकपूर्ण अपने जीवन को नहीं चलाया और क्षणिक सुखों के पीछे ही दौड़ते रहे तो कैसे अपने मूल लक्ष्य पर पहुँच पायेंगे ?

(अनुक्रम)

सहजता की आड़ में भ्रमित न होवें

कई लोग तर्क देने लग जाते हैं : "शास्त्रों में पढ़ने को मिलता है और ज्ञानी महापुरुषों के मुखारविन्द से भी सुनने में आता है कि सहज जीवन जीना चाहिए | काम करने की इच्छा हुई तो काम किया, भूख लगी तो भोजन किया, नींद आई तो सो गये | जीवन में कोई 'टेन्शन', कोई तनाव नहीं होना चाहिए | आजकल के तमाम रोग इसी तनाव के ही फल हैं ... ऐसा मनोवैज्ञानिक कहते हैं | अतः जीवन सहज और सरल होना चाहिए | कबीरदास जी ने भी कहा है : **साधो, सहज समाधि भली** |"

ऐसा तर्क देकर भी कई लोग अपने काम-विकार की तृप्ति को सहमति दे देते हैं | परन्तु यह अपने आपको धोखा देने जैसा है | ऐसे लोगों को खबर ही नहीं है कि ऐसा सहज जीवन तो महापुरुषों का होता है, जिनके मन और बुद्धि अपने अधिकार में होते हैं, जिनको अब संसार में अपने लिये पाने को कुछ भी शेष नहीं बचा है, जिन्हें मान-अपमान की चिन्ता नहीं होती है | वे उस आत्मतत्त्व में स्थित हो जाते हैं जहाँ न पतन है न उत्थान | उनको सदैव मिलते रहने वाले आनन्द में अब संसार के विषय न तो वृद्धि कर सकते हैं न अभाव | विषय-भोग उन महान् पुरुषों को आकर्षित करके अब बहका या भटका नहीं सकते | इसलिए अब उनके सम्मुख भले ही विषय-सामग्रियों का ढ़ेर लग जाये किन्तु उनकी चेतना इतनी जागृत होती है कि वे चाहें तो उनका उपयोग करें और चाहें तो ठुकरा दें |

बाहरी विषयों की बात छोड़ो, अपने शरीर से भी उनका ममत्व टूट चुका होता है | शरीर रहे अथवा न रहे- इसमें भी उनका आग्रह नहीं रहता | ऐसे आनन्दस्वरूप में वे अपने-आपको हर समय अनुभव करते रहते हैं | ऐसी अवस्थावालों के लिये कबीर जी ने कहा है :

साधो, सहज समाधि भली |

(अनुक्रम)

अपने को तोलें

हम यदि ऐसी अवस्था में हैं तब तो ठीक है | अन्यथा ध्यान रहे, ऐसे तर्क की आड़ में हम अपने को धोखा देकर अपना ही पतन कर डालेंगे | जरा, अपनी अवस्था की तुलना उनकी अवस्था से करें | हम तो, कोई हमारा अपमान कर दे तो क्रोधित हो उठते हैं, बदला तक लेने को तैयार हो जाते हैं | हम लाभ-हानि में सम नहीं रहते हैं | राग-द्वेष हमारा जीवन है | 'मेरा-तेरा' भी वैसा ही बना हुआ है | 'मेरा धन ... मेरा मकान ... मेरी पत्नी ... मेरा पैसा ... मेरा मित्र ... मेरा बेटा ... मेरी इज्जत ... मेरा पद ...' ये सब सत्य भासते हैं कि नहीं ? यही तो देहभाव है, जीवभाव है | हम इससे ऊपर उठ कर व्यवहार कर सकते हैं क्या ? यह जरा सोचें |

कई साधु लोग भी इस देहभाव से छुटकारा नहीं पा सके, सामान्य जन की तो बात ही क्या ? कई साधु भी 'मैं स्त्रियों की तरफ देखता ही नहीं हूँ ... मैं पैसे को छूता ही नहीं हूँ ...' इस प्रकार की अपनी-अपनी मन और बुद्धि की पकड़ों में उलझे हुए हैं | वे भी अपना जीवन अभी सहज नहीं कर पाए हैं और हम ... ?

हम अपने साधारण जीवन को ही सहज जीवन का नाम देकर विषयों में पड़े रहना चाहते हैं | कहीं मिठाई देखी तो मुँह में पानी भर आया | अपने संबंधी और रिश्तेदारों को कोई दुःख हुआ तो भीतर से हम भी दुःखी होने लग गये | व्यापार में घाटा हुआ तो मुँह छोटा हो गया | कहीं अपने घर से ज्यादा दिन दूर रहे तो बार-बार अपने घरवालों की, पत्नी और पुत्रों की याद सताने लगी | ये कोई सहज जीवन के लक्षण हैं, जिसकी ओर ज्ञानी महापुरुषों का संकेत है ? नहीं |

(अनुक्रम)

मनोनिग्रह की महिमा

आज कल के नौजवानों के साथ बड़ा अन्याय हो रहा है | उन पर चारों ओर से विकारों को भड़काने वाले आक्रमण होते रहते हैं |

एक तो वैसे ही अपनी पाशवी वृत्तियाँ यौन उच्छृंखलता की ओर प्रोत्साहित करती हैं और दूसरे, सामाजिक परिस्थितियाँ भी उसी ओर आकर्षण बढ़ाती हैं ... इस पर उन प्रवृत्तियों को वौज्ञानिक समर्थन मिलने लगे और संयम को हानिकारक बताया जाने लगे ... कुछ तथाकथित आचार्य भी फ्रायड जैसे नास्तिक एवं अधूरे मनोवैज्ञानिक के व्यभिचारशास्त्र को आधार बनाकर **'संभोग से समाधि'** का उपदेश देने लगें तब तो ईश्वर ही ब्रह्मचर्य और दाम्पत्य जीवन की पवित्रता का रक्षक है |

16 सितम्बर , 1977 के 'न्यूयॉर्क टाइम्स में छ्पा था:

"अमेरिकन पेनल कहती है कि अमेरिका में दो करोड़ से अधिक लोगों को मानसिक चिकित्सा की आवश्यकता है |"

उपरोक्त परिणामों को देखते हुए अमेरिका के एक महान् लेखक, सम्पादक और शिक्षा विशारद श्री मार्टिन ग्रोस अपनी पुस्तक 'The Psychological Society' में लिखते हैं : "हम जितना समझते हैं उससे कहीं ज्यादा फ्रायड के मानसिक रोगों ने हमारे मानस और समाज में गहरा प्रवेश पा लिया है | यदि हम इतना जान लें कि उसकी बातें प्रायः उसके विकृत मानस के ही प्रतिबिम्ब हैं और उसकी मानसिक विकृतियों वाले व्यक्तित्व को पहचान लें तो उसके विकृत प्रभाव से बचने में सहायता मिल सकती है | अब हमें डॉ. फ्रायड की छाया में बिल्कुल नहीं रहना चाहिए |"

आधुनिक मनोविज्ञान का मानसिक विश्लेषण, मनोरोग शास्त्र और मानसिक रोग की चिकित्सा ... ये फ्रायड के रुग्ण मन के प्रतिबिम्ब हैं | फ्रायड स्वयं स्फटिक कोलोन, प्रायः सदा रहने वाला मानसिक

अवसाद, स्नायविक रोग, सजातीय सम्बन्ध, विकृत स्वभाव, माईग्रेन, कब्ज, प्रवास, मृत्यु और धननाश भय, साईनोसाइटिस, घृणा और खूनी विचारों के दौरे आदि रोगों से पीडित था |

प्रोफेसर एडलर और प्रोफेसर सी. जी. जुंग जैसे मूर्धन्य मनोवैज्ञानिकों ने फ्रायड के सिद्धांतों का खंडन कर दिया है फिर भी यह खेद की बात है कि भारत में अभी भी कई मानसिक रोग विशेषज्ञ और सेक्सोलॉजिस्ट फ्रायड जैसे पागल व्यक्ति के सिद्धांतों को आधार लेकर इस देश के जवानों को अनैतिक और अप्राकृतिक मैथुन (Sex) का, संभोग का उपदेश वर्त्तमान पत्रों और सामयोकों के द्वारा देते रहते हैं | फ्रायड ने तो मृत्यु के पहले अपने पागलपन को स्वीकार किया था लेकिन उसके लेकिन उसके स्वयं स्वीकार न भी करें तो भी अनुयायी तो पागल के ही माने जायेंगे | अब वे इस देश के लोगों को चरित्रभ्रष्ट करने का और गुमराह करने का पागलपन छोड़ दें ऐसी हमारी नम्र प्रार्थना है | यह **'यौवन सुरक्षा'** पुस्तक पाँच बार पढ़ें और पढ़ाएँ- इसी में सभी का कल्याण निहित है |

आँकड़े बताते हैं कि आज पाश्चात्य देशों में यौन सदाचार की कितनी दुर्गति हुई है ! इस दुर्गति के परिणामस्वरूप वहाँ के निवासियों के व्यक्तिगत जीवन में रोग इतने बढ़ गये हैं कि भारत से 10 गुनी ज्यादा दवाइयाँ अमेरिका में खर्च होती हैं जबकि भारत की आबादी अमेरिका से तीन गुनी ज्यादा है | मानसिक रोग इतने बढ़े हैं कि हर दस अमेरिकन में से एक को मानसिक रोग होता है | दुर्वासनाएँ इतनी बढ़ी है कि हर छः सेकण्ड में एक बलात्कार होता है और हर वर्ष लगभग 20 लाख कन्याएँ विवाह के पूर्व ही गर्भवती हो जाती हैं | मुक्त साहचर्य (free sex) का हिमायती होने के कारण शादी के पहले वहाँ का प्रायः हर व्यक्ति जातीय संबंध बनाने लगता है | इसी वजह से लगभग 65% शादियाँ तलाक में बदल जाती हैं | मनुष्य के लिये प्रकृति द्वारा निर्धारित किये गये संयम का उपहास करने के कारण प्रकृति ने उन लोगों को जातीय रोगों का शिकार बना रखा है | उनमें मुख्यतः एड्स (AIDS) की बीमारी दिन दूनी रात चौगुनी फैलती जा रही है | वहाँ के पारिवारिक व सामाजिक जीवन में क्रोध, कलह, असंतोष, संताप, उच्छृंखलता, उद्यंडता और शत्रुता का महा भयानक वातावरण छा गया है | विश्व की लगभग 4% जनसंख्या अमेरिका में है | उसके उपभोग के लिये विश्व की लगभग 40% साधन-सामग्री (जैसे कि कार, टी वी, वातानुकूलित मकान आदि) मौजूद हैं फिर भी वहाँ अपराधवृति इतनी बढ़ी है की हर 10 सेकण्ड में एक सेंधमारी होती है, हर लाख व्यक्तियों में से 425 व्यक्ति कारागार में सजा भोग रहे हैं जबकि भारत में हर लाख व्यक्ति में से केवल 23 व्यक्ति ही जेल की सजा काट रहे हैं |

कामुकता के समर्थक फ्रायड जैसे दार्शनिकों की ही यह देन है कि जिन्होंने पश्चात्य देशों को मनोविज्ञान के नाम पर बहुत प्रभावित किया है और वहीं से यह आँधी अब इस देश में भी फैलती जा रही है | अतः इस देश की भी अमेरिका जैसी अवदशा हो, उसके पहले हमें सावधान रहना पड़ेगा | यहाँ के कुछ अविचारी दार्शनिक भी फ्रायड के मनोविज्ञान के आधार पर युवानों को बेलगाम संभोग की तरफ उत्साहित कर रहे हैं, जिससे हमारी युवापीढ़ी गुमराह हो रही है | फ्रायड ने तो केवल मनोवैज्ञानिक मान्यताओं के आधार पर व्यभिचार शास्त्र बनाया लेकिन तथाकथित दार्शनिक ने तो **'संभोग से समाधि'** की परिकल्पना द्वारा व्यभिचार को आध्यात्मिक जामा पहनाकर धार्मिक लोगों को भी भ्रष्ट किया है | **संभोग से समाधि नहीं होती, सत्यानाश होता है** | 'संयम से ही समाधि होती है ...' इस भारतीय मनोविज्ञान को अब पाश्चात्य मनोविज्ञानी भी सत्य मानने लगे हैं |

जब पश्चिम के देशों में ज्ञान-विज्ञान का विकास प्रारम्भ भी नहीं हुआ था और मानव ने संस्कृति के क्षेत्र में प्रवेश भी नहीं किया था उस समय भारतवर्ष के दार्शनिक और योगी मानव मनोविज्ञान के विभिन्न पहलुओं और समस्याओं पर गम्भीरता पूर्वक विचार कर रहे थे | फिर भी पाश्चात्य विज्ञान की छत्रछाया में पले हुए और उसके प्रकाश से चकाचौंध वर्त्तमान भारत के मनोवैज्ञानिक भारतीय मनोविज्ञान का अस्तित्व तक मानने को तैयार नहीं हैं | यह खेद की बात है | भारतीय मनोवैज्ञानिकों ने चेतना के चार स्तर माने हैं : जाग्रत, स्वप्न, सुषुप्ति और तुरीय | पाश्चात्य मनोवैज्ञानिक प्रथम तीन स्तर को ही जानते हैं | पाश्चात्य मनोविज्ञान नास्तिक है | भारतीय मनोविज्ञान ही आत्मविकास और चरित्र निर्माण में सबसे अधिक उपयोगी सिद्ध हुआ है क्योंकि यह धर्म से अत्यधिक प्रभावित है | भारतीय मनोविज्ञान आत्मज्ञान और आत्म सुधार में सबसे अधिक सहायक सिद्ध होता है | इसमें बुरी आदतों को छोड़ने और अच्छी आदतों को अपनाने तथा मन की प्रक्रियाओं को समझने तथा उसका नियंत्रण करने के महत्वपूर्ण उपाय बताये गये हैं | इसकी सहायता से मनुष्य सुखी, स्वस्थ और सम्मानित जीवन जी सकता है |

पश्चिम की मनोवैज्ञानिक मान्यताओं के आधार पर विश्वशांति का भवन खड़ा करना बालू की नींव पर भवन-निर्माण करने के समान है | पाश्चात्य मनोविज्ञान का परिणाम पिछले दो विश्वयुद्धों के रूप में दिखलायी पड़ता है | यह दोष आज पश्चिम के मनोवैज्ञानिकों की समझ में आ रहा है | जबकि भारतीय मनोविज्ञान मनुष्य का दैवी रूपान्तरण करके उसके विकास को आगे बढ़ाना चाहता है | उसके 'अनेकता में एकता' के सिद्धांत पर ही संसार के विभिन्न राष्ट्रों, सामाजिक वर्गों, धर्मों और प्रजातियों

में सहिष्णुता ही नहीं, सक्रिय सहयोग उत्पन्न किया जा सकता है | भारतीय मनोविज्ञान में शरीर और मन पर भोजन का क्या प्रभाव पड़ता है इस विषय से लेकर शरीर में विभिन्न चक्रों की स्थिति, कुण्डलिनी की स्थिति, वीर्य को ऊर्ध्वगामी बनाने की प्रक्रिया आदि विषयों पर विस्तारपूर्वक चर्चा की गई है | पाश्चात्य मनोविज्ञान मानव-व्यवहार का विज्ञान है | भारतीय मनोविज्ञान मानस विज्ञान के साथ-साथ आत्मविज्ञान है | भारतीय मनोविज्ञान इन्द्रियनियंत्रण पर विशेष बल देता है जबकि पाश्चात्य मनोविज्ञान केवल मानसिक क्रियाओं या मस्तिष्क-संगठन पर बल देता है | उसमें मन द्वारा मानसिक जगत का ही अध्ययन किया जाता है | उसमें भी प्रायड का मनोविज्ञान तो एक रुग्ण मन के द्वारा अन्य रुग्ण मनों का ही अध्ययन है जबकि भारतीय मनोविज्ञान में इन्द्रिय-निरोध से मनोनिरोध और मनोनिरोध से आत्मसिद्धि का ही लक्ष्य मानकर अध्ययन किया जाता है | पाश्चात्य मनोविज्ञान में मानसिक तनावों से मुक्ति का कोई समुचित साधन परिलक्षित नहीं होता जो उसके व्यक्तित्व में निहित निषेधात्मक परिवेशों के लिए स्थायी निदान प्रस्तुत कर सके | इसलिए प्रायड के लाखों बुद्धिमान अनुयायी भी पागल हो गये | संभोग के मार्ग पर चलकर कोई भी व्यक्ति योगसिद्ध महापुरुष नहीं हुआ | उस मार्ग पर चलनेवाले पागल हुए हैं | ऐसे कई नमूने हमने देखे हैं | इसके विपरीत भारतीय मनोविज्ञान में मानसिक तनावों से मुक्ति के विभिन्न उपाय बताये गये हैं यथा योगमार्ग, साधन-चतुष्टय, शुभ-संस्कार, सत्संगति, अभ्यास, वैराग्य, ज्ञान, भक्ति, निष्काम कर्म आदि | इन साधनों के नियमित अभ्यास से संगठित एवं समायोजित व्यक्तित्व का निर्माण संभव है | इसलिये भारतीय मनोविज्ञान के अनुयायी पाणिनि और महाकवि कालिदास जैसे प्रारम्भ में अल्पबुद्धि होने पर भी महान विद्वान हो गये | भारतीय मनोविज्ञान ने इस विश्व को हजारों महान भक्त समर्थ योगी तथा ब्रह्मज्ञानी महापुरुष दिये हैं |

अतः पाशचात्य मनोविज्ञान को छोड़कर भारतीय मनोविज्ञान का आश्रय लेने में ही व्यक्ति, कुटुम्ब, समाज, राष्ट्र और विश्व का कल्याण निहित है |

भारतीय मनोविज्ञान पतंजलि के सिद्धांतों पर चलनेवाले हजारों योगासिद्ध महापुरुष इस देश में हुए हैं, अभी भी हैं और आगे भी होते रहेंगे जबकि संभोग के मार्ग पर चलकर कोई योगसिद्ध महापुरुष हुआ हो ऐसा हमने तो नहीं सुना बल्कि दुर्बल हुए, रोगी हुए, एड्स के शिकार हुए, अकाल मृत्यु के शिकार हुए, खिन्न मानस हुए, अशांत हुए | उस मार्ग पर चलनेवाले पागल हुए हैं, ऐसे कई नमूने हमने देखे हैं |

फ्रायड ने अपनी मनःस्थिति की तराजू पर सारी दुनिया के लोगों को तौलने की गलती की है|उसका अपना जीवन-क्रम कुछ बेतुके ढ़ंग से विकसित हुआ है |उसकी माता अमेलिया बड़ी खूबसूरत थी |उसने योकोव नामक एक अन्य पुरुष के साथ अपना दूसरा विवाह किया था |जब फ्रायड जन्मा तब वह २१ वर्ष की थी |बच्चे को वह बहुत प्यार करती थी |

ये घटनाएँ फ्रायड ने स्वयं लिखी हैं |इन घटनाओं के अधार पर फ्रायड कहता है: “पुरुष बचपन से ही ईडिपस कॉमप्लेक्स (Oedipus Complex) अर्थात अवचेतन मन में अपनी माँ के प्रति यौन-आकांक्षा से आकर्षित होता है तथा अपने पिता के प्रति यौन-ईर्ष्या से ग्रसित रहता है |ऐसे ही लड़की अपने बाप के प्रति आकर्षित होती है तथा अपनी माँ से ईर्ष्या करती है |इसे इलेक्ट्रा कोऊम्प्लेक्स (Electra Complex) कहते हैं |तीन वर्ष की आयु से ही बच्चा अपनी माँ के साथ यौन-सम्बन्ध स्थापित करने के लिये लालायित रहता है |एकाध साल के बाद जब उसे पता चलता है कि उसकी माँ के साथ तो बाप का वैसा संबंध पहले से ही है तो उसके मन में बाप के प्रति ईर्ष्या और घृणा जाग पड़ती है |यह विद्वेष उसके अवचेतन मन में आजीवन बना रहता है |इसी प्रकार लड़की अपने बाप के प्रति सोचती है और माँ से ईर्ष्या करती है|"

फ्रायड आगे कहता है: "इस मानसिक अवरोध के कारण मनुष्य की गति रुक जाती है | 'ईडिपस कोऊम्प्लेक्स' उसके सामने तरह-तरह के अवरोध खड़े करता है |यह स्थिति कोई अपवाद नहीं है वरन साधारणतया यही होता है |

यह कितना घृणित और हास्यास्पद प्रतिपादन है ! छोटा बच्चा यौनाकांक्षा से पीडित होगा, सो भी अपनी माँ के प्रति ? पशु-पक्षियों के बच्चे के शरीर में भी वासना तब उठती है जब उनके शरीर प्रजनन के योग्य सुदृढ हो जाते हैं |... तो मनुष्य के बालक में यह वृत्ति इतनी छोटी आयु में कैसे पैदा हो सकती है ? ... और माँ के साथ वैसी तृप्ति करने कि उसकी शारिरिक-मानसिक स्थिति भी नहीं होती |फिर तीन वर्ष के बालक को काम-क्रिया और माँ-बाप के रत रहने की जानकारी उसे कहाँ से हो जाती है ? फिर वह यह कैसे समझ लेता है कि उसे बाप से ईर्ष्या करनी चाहिए ?

बच्चे द्वारा माँ का दूध पीने की क्रिया को ऐसे मनोविज्ञानियों ने रतिसुख के समकक्ष बतलाया है | यदि इस स्तनपान को रतिसुख माना जाय तब तो आयु बढ़ने के साथ-साथ यह उत्कंठा भी प्रबलतर होती जानी चाहिए और वयस्क होने तक बालक को माता का दूध ही पीते रहना चाहिए | किन्तु यह किस प्रकार संभव है ?

... तो ये ऐसे बेतुके प्रतिपादन हैं कि जिनकी भर्त्सना ही की जानी चाहिए | फ्रायड ने अपनी मानसिक विकृतियों को जनसाधारण पर थोपकर मनोविज्ञान को विकृत बना दिया |

जो लोग मानव समाज को पशुता में गिराने से बचाना चाहते हैं, भावी पीढ़ी का जीवन पिशाच होने से बचाना चाहते हैं, युवानों का शारीरिक स्वास्थ्य, मानसिक प्रसन्नता और बौद्धिक सामर्थ्य बनाये रखना चाहते हैं, इस देश के नागरिकों को एडस (AIDS) जैसी घातक बीमारियों से ग्रस्त होने से रोकना चाहते हैं, स्वस्थ समाज का निर्माण करना चाहते हैं उन सबका यह नैतिक कर्त्व्य है कि वे हमारी गुमराह युवा पीढ़ी को **'यौवन सुरक्षा'** जैसी पुस्तकें पढ़ायें |

यदि काम-विकार उठा और हमने 'यह ठीक नहीं है ... इससे मेरे बल-बुद्धि और तेज का नाश होगा ...' ऐसा समझकर उसको टाला नहीं और उसकी पूर्ति में लम्पट होकर लग गये, तो हममें और पशुओं में अंतर ही क्या रहा ? पशु तो जब उनकी कोई विशेष ऋतु होती है तभी मैथुन करते हैं, बाकी ऋतुओं में नहीं | इस दृष्टि से उनका जीवन सहज व प्राकृतिक ढ़ंग का होता है | परंतु मनुष्य ... !

मनुष्य तो बारहों महीने काम-क्रिया की छूट लेकर बैठा है और ऊपर से यह भी कहता है कि यदि काम-वासना की पूर्ति करके सुख नहीं लिया तो फिर ईश्वर ने मनुष्य में जो इसकी रचना की है, उसका क्या मतलब ? ... आप अपने को विवेकपूर्ण रोक नहीं पाते हो, छोटे-छोटे सुखों में उलझ जाते हो- इसका तो कभी ख्याल ही नहीं करते और ऊपर से भगवान तक को अपने पापकर्मों में भागीदार बनाना चाहते हो ?

(अनुक्रम)

आत्मघाती तर्क

अभी कुछ समय पूर्व मेरे पास एक पत्र आया | उसमें एक व्यक्ति ने पूछा था: "आपने सत्संग में कहा और एक पुस्तिका में भी प्रकाशित हुआ कि : 'बीड़ी, सिगरेट, तम्बाकू आदि मत पियो | ऐसे व्यसनों से बचो, क्योंकि ये तुम्हारे बल और तेज का हरण करते हैं ...' यदि ऐसा ही है तो भगवान ने तम्बाकू आदि पैदा ही क्यों किया ?"

अब उन सज्जन से ये व्यसन तो छोड़े नहीं जाते और लगे हैं भगवान के पीछे | भगवान ने गुलाब के साथ काँटे भी पैदा किये हैं | आप फूल छोड़कर काँटे तो नहीं तोड़ते ! भगवान ने आग भी पैदा की है | आप उसमें भोजन पकाते हो, अपना घर तो नहीं जलाते ! भगवान ने आक (मदार), धतूरे, बबूल आदि भी बनाये हैं, मगर उनकी तो आप सब्जी नहीं बनाते ! इन सब में तो आप अपनी बुद्धि का उपयोग करके व्यवहार करते हो और जहाँ आप हार जाते हो, जब आपका मन आपके कहने में नहीं होता। तो आप लगते हो भगवान को दोष देने ! अरे, भगवान ने तो बादाम-पिस्ते भी पैदा किये हैं, दूध भी पैदा किया है | उपयोग करना है तो इनका करो, जो आपके बल और बुद्धि की वृद्धि करें | पैसा ही खर्चना है तो इनमें खर्चो | यह तो होता नहीं और लगें हैं तम्बाकू के पीछे | यह बुद्धि का सदुपयोग नहीं है, दुरुपयोग है | तम्बाकू पीने से तो बुद्धि और भी कमजोर हो जायेगी |

शरीर के बल बुद्धि की सुरक्षा के लिये वीर्यरक्षण बहुत आवश्यक है | योगदर्शन के 'साधपाद' में ब्रह्मचर्य की महत्ता इन शब्दों में बतायी गयी है :

ब्रह्मचर्यप्रतिष्ठायां वीर्यलाभः ||37||

ब्रह्मचर्य की दृढ़ स्थिति हो जाने पर सामर्थ्य का लाभ होता है |

(अनुक्रम)

स्त्री प्रसंग कितनी बार ?

फिर भी यदि कोई जान-बूझकर अपने सामर्थ्य को खोकर श्रीहीन बनना चाहता हो तो यह यूनान के प्रसिद्ध दार्शनिक सुकरात के इन प्रसिद्ध वचनों को सदैव याद रखे | सुकरात से एक व्यक्ति ने पूछा :

"पुरुष के लिए कितनी बार स्त्री-प्रसंग करना उचित है ?"

"जीवन भर में केवल एक बार |"

"यदि इससे तृप्ति न हो सके तो ?"

"तो वर्ष में एक बार |"

"यदि इससे भी संतोष न हो तो ?"

"फिर महीने में एक बार |"

इससे भी मन न भरे तो ?"

"तो महीने में दो बार करें, परन्तु मृत्यु शीघ्र आ जायेगी |"

"इतने पर भी इच्छा बनी रहे तो क्या करें ?"

इस पर सुकरात ने कहा :

"तो ऐसा करें कि पहले कब्र खुदवा लें, फिर कफन और लकड़ी घर में लाकर तैयार रखें | उसके पश्चात जो इच्छा हो, सो करें |"

सुकरात के ये वचन सचमुच बड़े प्रेरणाप्रद हैं | वीर्यक्षय के द्वारा जिस-जिसने भी सुख लेने का प्रयास किया है, उन्हें घोर निराशा हाथ लगी है और अन्त में श्रीहीन होकर मृत्यु का ग्रास बनना पड़ा

है | कामभोग द्वारा कभी तृप्ति नहीं होती और अपना अमूल्य जीवन व्यर्थ चला जाता है | राजा ययाति की कथा तो आपने सुनी होगी |

(अनुक्रम)

राजा ययाति का अनुभव

शुक्राचार्य के शाप से राजा ययाति युवावस्था में ही वृद्ध हो गये थे | परन्तु बाद में ययाति के प्रार्थना करने पर शुक्राचार्य ने दयावश उनको यह शक्ति दे दी कि वे चाहें तो अपने पुत्रों से युवावस्था लेकर अपना वार्धक्य उन्हें दे सकते थे | तब ययाति ने अपने पुत्र यदु, तर्वसु, द्रुह्यु और अनु से उनकी जवानी माँगी, मगर वे राजी न हुए | अंत में छोटे पुत्र पुरु ने अपने पिता को अपना यौवन देकर उनका बुढ़ापा ले लिया |

पुनः युवा होकर ययाति ने फिर से भोग भोगना शुरु किया | वे नन्दनवन में विश्वाची नामक अप्सरा के साथ रमण करने लगे | इस प्रकार एक हजार वर्ष तक भोग भोगने के बाद भी भोगों से जब वे संतुष्ट नहीं हुए तो उन्होंने अपना बचा हुआ यौवन अपने पुत्र पुरु को लौटाते हुए कहा :

न जातु कामः कामानामुपभोगेन शाम्यति |

हविषा कृष्णवर्त्मेव भूय एवाभिवर्धते ||

"पुत्र ! मैंने तुम्हारी जवानी लेकर अपनी रुचि, उत्साह और समय के अनुसार विष्यों का सेवन किया लेकिन विषयों की कामना उनके उपभोग से कभी शांत नहीं होती, अपितु घी की आहुति पड़ने पर अग्नि की भाँति वह अधिकाधिक बढ़ती ही जाती है |

रत्नों से जड़ी हुई सारी पृथ्वी, संसार का सारा सुवर्ण, पशु और सुन्दर स्त्रियाँ, वे सब एक पुरुष को मिल जायें तो भी वे सबके सब उसके लिये पर्याप्त नहीं होंगे | अतः तृष्णा का त्याग कर देना चाहिए |

छोटी बुद्धिवाले लोगों के लिए जिसका त्याग करना अत्यंत कठिन है, जो मनुष्य के बूढ़े होने पर भी स्वयं बूढ़ी नहीं होती तथा जो एक प्राणान्तक रोग है उस तृष्णा को त्याग देनेवाले पुरुष को ही सुख मिलता है |" (महाभारत : आदिपर्वाणि संभवपर्व : 12)

ययाति का अनुभव वस्तुतः बड़ा मार्मिक और मनुष्य जाति ले लिये हितकारी है | ययाति आगे कहते हैं :

"पुत्र ! देखो, मेरे एक हजार वर्ष विषयों को भोगने में बीत गये तो भी तृष्णा शांत नहीं होती और आज भी प्रतिदिन उन विषयों के लिये ही तृष्णा पैदा होती है |

पूर्णं वर्षसहस्रं मे विषयासक्तचेतसः |

तथाप्यनुदिनं तृष्णा ममैतेष्वभिजायते ||

इसलिए पुत्र ! अब मैं विषयों को छोड़कर ब्रह्माभ्यास में मन लगाऊँगा | निर्द्वन्द्व तथा ममतारहित होकर वन में मृगों के साथ विचरूँगा | हे पुत्र ! तुम्हारा भला हो | तुम पर मैं प्रसन्न हूँ | अब तुम अपनी जवानी पुनः प्राप्त करो और मैं यह राज्य भी तुम्हें ही अर्पण करता हूँ |

इस प्रकार अपने पुत्र पुरु को राज्य देकर ययाति ने तपस्या हेतु वनगमन किया | उसी राजा पुरु से पौरव वंश चला | उसी वंश में परीक्षित का पुत्र राजा जन्मेजय पैदा हुआ था |

(अनुक्रम)

राजा मुचकन्द का प्रसंग

राजा मुचकन्द गर्गाचार्य के दर्शन-सत्संग के फलस्वरूप भगवान का दर्शन पाते हैं | भगवान से स्तुति करते हुए वे कहते हैं :

"प्रभो ! मुझे आपकी दृढ़ भक्ति दो |"

तब भगवान कहते हैं : "तूने जवानी में खूब भोग भोगे हैं, विकारों में खूब डूबा है | विकारी जीवन जीनेवाले को दृढ़ भक्ति नहीं मिलती | मुचकन्द ! दृढ़ भक्ति के लिए जीवन में संयम बहुत जरूरी है | तेरा यह क्षत्रिय शरीर समाप्त होगा तब दूसरे जन्म में तुझे दृढ़ भक्ति प्राप्त होगी |"

वही राजा मुचकन्द कलियुग में नरसिंह मेहता हुए |

जो लोग अपने जीवन में वीर्यरक्षा को महत्व नहीं देते, वे जरा सोचें कि कहीं वे भी राजा ययाति का तो अनुसरण नहीं कर रहे हैं ! यदि कर रहे हों तो जैसे ययाति सावधान हो गये, वैसे आप भी सावधान हो जाओ भैया ! हिम्मत करो | सयाने हो जाओ | दया करो | हम पर दया न करो तो अपने-आप पर तो दया करो भैया ! हिम्मत करो भैया ! सयाने हो जाओ मेरे प्यारे ! जो हो गया उसकी चिन्ता न करो | आज से नवजीवन का प्रारंभ करो | ब्रह्मचर्यरक्षा के आसन, प्राकृतिक औषधियाँ इत्यादि जानकर वीर बनो | ॐ ... ॐ ... ॐ ...

(अनुक्रम)

गलत अभ्यास का दुष्परिणाम

आज संसार में कितने ही ऐसे अभागे लोग हैं, जो शृंगार रस की पुस्तकें पढ़कर, सिनेमाओं के कुप्रभाव के शिकार होकर स्वप्नावस्था या जाग्रतावस्था में अथवा तो हस्तमैथुन द्वारा सप्ताह में कितनी बार वीर्यनाश कर लेते हैं | शरीर और मन को ऐसी आदत डालने से वीर्याशय बार-बार खाली होता रहता है | उस वीर्याशय को भरने में ही शारीरिक शक्ति का अधिकतर भाग व्यय होने लगता है, जिससे शरीर को कांतिमान् बनाने वाला ओज संचित ही नहीं हो पाता और व्यक्ति शक्तिहीन, ओजहीन और उत्साहशून्य बन जाता है | ऐसे व्यक्ति का वीर्य पतला पड़ता जाता है | यदि वह समय पर अपने को सँभाल नहीं सके तो शीघ्र ही वह स्थिति आ जाती है कि उसके अण्डकोश वीर्य बनाने में असमर्थ हो जाते हैं | फिर भी यदि थोड़ा बहुत वीर्य बनता है तो वह भी पानी जैसा ही बनता है

जिसमें सन्तानोत्पत्ति की ताकत नहीं होती | उसका जीवन जीवन नहीं रहता | ऐसे व्यक्ति की हालत मृतक पुरुष जैसी हो जाती है | सब प्रकार के रोग उसे घेर लेते हैं | कोई दवा उस पर असर नहीं कर पाती | वह व्यक्ति जीते जी नर्क का दुःख भोगता रहता है | शास्त्रकारों ने लिखा है :

आयुस्तेजोबलं वीर्यं प्रज्ञा श्रीश्च महदयशः |

पुण्यं च प्रीतिमत्वं च हन्यतेऽब्रह्मचर्या ||

'आयु, तेज, बल, वीर्य, बुद्धि, लक्ष्मी, कीर्ति, यश तथा पुण्य और प्रीति ये सब ब्रह्मचर्य का पालन न करने से नष्ट हो जाते हैं |'

(अनुक्रम)

वीर्यरक्षण सदैव स्तुत्य

इसीलिए वीर्यरक्षा स्तुत्य है | 'अथर्ववेद में कहा गया है :

अति सृष्टो अपा वृषभोऽतिसृष्टा अग्नयो दिव्या ||1||

इदं तमति सृजामि तं माऽभ्यवनिक्षि ||2||

अर्थात् 'शरीर में व्याप्त वीर्य रूपी जल को बाहर ले जाने वाले, शरीर से अलग कर देने वाले काम को मैंने परे हटा दिया है | अब मैं इस काम को अपने से सर्वथा दूर फेंकता हूँ | मैं इस आरोग्यता, बल-बुद्धिनाशक काम का कभी शिकार नहीं होऊँगा |'

... और इस प्रकार के संकल्प से अपने जीवन का निर्माण न करके जो व्यक्ति वीर्यनाश करता रहता है, उसकी क्या गति होगी, इसका भी 'अथर्ववेद' में उल्लेख आता है :

रुजन् परिरुजन् मृणन् परिमृणन् |

म्रोको मनोहा खनो निर्दाह आत्मदूषिस्तनूदूषिः ||

यह काम रोगी बनाने वाला है, बहुत बुरी तरह रोगी करने वाला है | मृणन् यानी मार देने वाला है | परिमृणन् यानी बहुत बुरी तरह मारने वाला है |यह टेढ़ी चाल चलता है, मानसिक शक्तियों को नष्ट कर देता है | शरीर में से स्वास्थ्य, बल, आरोग्यता आदि को खोद-खोदकर बाहर फेंक देता है | शरीर की सब धातुओं को जला देता है | आत्मा को मलिन कर देता है | शरीर के वात, पित्त, कफ को दूषित करके उसे तेजोहीन बना देता है |

ब्रह्मचर्य के बल से ही अंगारपर्ण जैसे बलशाली गंधर्वराज को अर्जुन ने पराजित कर दिया था |

(अनुक्रम)

अर्जुन और अंगारपर्ण गंधर्व

अर्जुन अपने भाईयों सहित द्रौपदी के स्वंयवर-स्थल पांचाल देश की ओर जा रहा था, तब बीच में गंगा तट पर बसे सोमाश्रयाण तीर्थ में गंधर्वराज अंगारपर्ण (चित्ररथ) ने उसका रास्ता रोक दिया | वह गंगा में अपनी स्त्रियों के साथ जलक्रिड़ा कर रहा था | उसने पाँचों पांडवों को कहा : "मेरे यहाँ रहते हुए राक्षस, यक्ष, देवता अथवा मनुष्य कोई भी इस मार्ग से नहीं जा सकता | तुम लोग जान की खैर चाहते हो तो लौट जाओ |"

तब अर्जुन कहता है :

"मैं जानता हूँ कि सम्पूर्ण गंधर्व मनुष्यों से अधिक शक्तिशाली होते हैं, फिर भी मेरे आगे तुम्हारी दाल नहीं गलेगी | तुम्हें जो करना हो सो करो, हम तो इधर से ही जायेंगे |"

अर्जुन के इस प्रतिवाद से गंधर्व बहुत क्रोधित हुआ और उसने पांडवों पर तीक्ष्ण बाण छोड़े | अर्जुन ने अपने हाथ में जो जलती हुई मशाल पकड़ी थी, उसीसे उसके सभी बाणों को निष्फल कर दिया | फिर गंधर्व पर आग्नेय अस्त्र चला दिया | अस्त्र के तेज से गंधर्व का रथ जलकर भस्म हो गया और

वह स्वंय घायल एवं अचेत होकर मुँह के बल गिर पड़ा | यह देखकर उस गंधर्व की पत्नी कुम्मीनसी बहुत घबराई और अपने पति की रक्षार्थ युधिष्ठिर से प्रार्थना करने लगी | तब युधिष्ठिर ने अर्जुन से उस गंधर्व को अभयदान दिलवाया |

जब वह अंगारपर्ण होश में आया तब बोला ;

"अर्जुन ! मैं परास्त हो गया, इसलिए अपने पूर्व नाम अंगारपर्ण को छोड़ देता हूँ | मैं अपने विचित्र रथ के कारण चित्ररथ कहलाता था | वह रथ भी आपने अपने पराक्रम से दग्ध कर दिया है | अतः अब मैं दग्धरथ कहलाऊँगा |

मेरे पास चाक्षुषी नामक विद्या है जिसे मनु ने सोम को, सोम ने विश्वावसु को और विश्वावसु ने मुझे प्रदान की है | यह गुरु की विद्या यदि किसी कायर को मिल जाय तो नष्ट हो जाती है | जो छः महीने तक एक पैर पर खड़ा रहकर तपस्या करे, वही इस विद्या को पा सकता है | परन्तु अर्जुन ! मैं आपको ऐसी तपस्या के बिना ही यह विद्या प्रदान करता हूँ |

इस विद्या की विशेषता यह है कि तीनों लोकों में कहीं भी स्थित किसी वस्तु को आँख से देखने की इच्छा हो तो उसे उसी रूप में इस विद्या के प्रभाव से कोई भी व्यक्ति देख सकता है | अर्जुन ! इस विद्या के बल पर हम लोग मनुष्यों से श्रेष्ठ माने जाते हैं और देवताओं के तुल्य प्रभाव दिखा सकते हैं |"

इस प्रकार अंगारपर्ण ने अर्जुन को चाक्षुषी विद्या, दिव्य घोड़े एवं अन्य वस्तुएँ भेंट कीं |

अर्जुन ने गंधर्व से पूछा : गंधर्व ! तुमने हम पर एकाएक आक्रमण क्यों किया और फिर हार क्यों गये ?"

तब गंधर्व ने बड़ा मर्मभरा उत्तर दिया | उसने कहा :

"शत्रुओं को संताप देनेवाले वीर ! यदि कोई कामासक्त क्षत्रिय रात में मुझसे युद्ध करने आता तो किसी भी प्रकार जीवित नहीं बच सकता था क्योंकि रात में हम लोगों का बल और भी बढ़ जाता है |

अपने बाहुबल का भरोसा रखने वाला कोई भी पुरुष जब अपनी स्त्री के सम्मुख किसीके द्वारा अपना तिरस्कार होते देखता है तो सहन नहीं कर पाता | मैं जब अपनी स्त्री के साथ जलक्रीड़ा कर रहा था, तभी आपने मुझे ललकारा, इसीलिये मैं क्रोधाविष्ट हुआ और आप पर बाणवर्षा की | लेकिन यदि आप यह पूछो कि मैं आपसे पराजित क्यों हुआ तो उसका उत्तर है :

ब्रह्मचर्यं परो धर्मः स चापि नियतस्त्वयि |

यस्मात् तस्मादहं पार्थ रणेऽस्मि विजितस्त्वया ||

"ब्रह्मचर्य सबसे बड़ा धर्म है और वह आपमें निश्चित रूप से विद्यमान है | हे कुन्तीनंदन ! इसीलिये युद्ध में मैं आपसे हार गया हूँ |" (महाभारत : आदिपर्वणि चैत्ररथ पर्व : 71)

हम समझ गये कि वीर्यरक्षण अति आवश्यक है | अब वह कैसे हो इसकी चर्चा करने से पूर्व एक बार ब्रह्मचर्य का तात्त्विक अर्थ ठीक से समझ लें |

(अनुक्रम)

ब्रह्मचर्य का तात्त्विक अर्थ

'ब्रह्मचर्य' शब्द बड़ा चित्ताकर्षक और पवित्र शब्द है | इसका स्थूल अर्थ तो यही प्रसिद्ध है कि जिसने शादी नहीं की है, जो काम-भोग नहीं करता है, जो स्त्रियों से दूर रहता है आदि-आदि | परन्तु यह बहुत सतही और सीमित अर्थ है | इस अर्थ में केवल वीर्यरक्षण ही ब्रह्मचर्य है | परन्तु ध्यान रहे, केवल वीर्यरक्षण मात्र साधना है, मंजिल नहीं | मनुष्य जीवन का लक्ष्य है अपने-आपको जानना अर्थात् आत्म-साक्षात्कार करना | जिसने आत्म-साक्षात्कार कर लिया, वह जीवन्मुक्त हो गया | वह आत्मा के

आनन्द में, ब्रह्मानन्द में विचरण करता है | उसे अब संसार से कुछ पाना शेष नहीं रहा | उसने आनन्द का स्रोत अपने भीतर ही पा लिया | अब वह आनन्द के लिये किसी भी बाहरी विषय पर निर्भर नहीं है | वह पूर्ण स्वतंत्र है | उसकी क्रियाएँ सहज होती हैं | संसार के विषय उसकी आनन्दमय आत्मिक स्थिति को डोलायमान नहीं कर सकते | वह संसार के तुच्छ विषयों की पोल को समझकर अपने आनन्द में मस्त हो इस भूतल पर विचरण करता है | वह चाहे लँगोटी में हो चाहे बहुत से कपड़ों में, घर में रहता हो चाहे झोंपड़े में, गृहस्थी चलाता हो चाहे एकान्त जंगल में विचरता हो, ऐसा महापुरुष ऊपर से भले कंगाल नजर आता हो, परन्तु भीतर से शहंशाह होता है, क्योंकि उसकी सब वासनाएँ, सब कर्तव्य पूरे हो चुके हैं | ऐसे व्यक्ति को, ऐसे महापुरुष को वीर्यरक्षण करना नहीं पड़ता, सहज ही होता है | सब व्यवहार करते हुए भी उनकी हर समय समाधि रहती है | उनकी समाधि सहज होती है, अखण्ड होती है | ऐसा महापुरुष ही सच्चा ब्रह्मचारी होता है, क्योंकि वह सदैव अपने ब्रह्मानन्द में अवस्थित रहता है |

स्थूल अर्थ में ब्रह्मचर्य का अर्थ जो वीर्यरक्षण समझा जाता है, उस अर्थ में ब्रह्मचर्य श्रेष्ठ व्रत है, श्रेष्ठ तप है, श्रेष्ठ साधना है और इस साधना का फल है आत्मज्ञान, आत्म-साक्षात्कार | इस फलप्राप्ति के साथ ही ब्रह्मचर्य का पूर्ण अर्थ प्रकट हो जाता है |

जब तक किसी भी प्रकार की वासना शेष है, तब तक कोई पूर्ण ब्रह्मचर्य को उपलब्ध नहीं हो सकता | जब तक आत्मज्ञान नहीं होता तब तक पूर्ण रूप से वासना निवृत्त नहीं होती | इस वासना की निवृत्ति के लिये, अंतःकरण की शुद्धि के लिये, ईश्वर की प्राप्ति के लिये, सुखी जीवन जीने के लिये, अपने मनुष्य जीवन के सर्वोच्च लक्ष्य को प्राप्त करने के लिये या कहो परमानन्द की प्राप्ति के लिये... कुछ भी हो, वीर्यरक्षणरूपी साधना सदैव अब अवस्थाओं में उत्तम है, श्रेष्ठ है और आवश्यक है |

वीर्यरक्षण कैसे हो, इसके लिये यहाँ हम कुछ स्थूल और सूक्ष्म उपायों की चर्चा करेंगे |

(अनुक्रम)

3. वीर्यरक्षा के उपाय

सादा रहन-सहन बनायें

काफी लोगों को यह भ्रम है कि जीवन तड़क-भड़कवाला बनाने से वे समाज में विशेष माने जाते हैं | वस्तुतः ऐसी बात नहीं है | इससे तो केवल अपने अहंकार का ही प्रदर्शन होता है | लाल रंग के भड़कीले एवं रेशमी कपड़े नहीं पहनो | तेल-फुलेल और भाँति-भाँति के इत्रों का प्रयोग करने से बचो | जीवन में जितनी तड़क-भड़क बढ़ेगी, इन्द्रियाँ उतनी चंचल हो उठेंगी, फिर वीर्यरक्षा तो दूर की बात है |

इतिहास पर भी हम दृष्टि डालें तो महापुरुष हमें ऐसे ही मिलेंगे, जिनका जीवन प्रारंभ से ही सादगीपूर्ण था | सादा रहन-सहन तो बडप्पन का द्योतक है | दूसरों को देख कर उनकी अप्राकृतिक व अधिक आवश्यकताओंवाली जीवन-शैली का अनुसरण नहीं करो |

उपयुक्त आहार

ईरान के बादशाह वहमन ने एक श्रेष्ठ वैद्य से पूछा :

"दिन में मनुष्य को कितना खाना चाहिए?"

"सौ दिराम (अर्थात् 31 तोला) | "वैद्य बोला |

"इतने से क्या होगा?" बादशाह ने फिर पूछा |

वैद्य ने कहा : "शरीर के पोषण के लिये इससे अधिक नहीं चाहिए | इससे अधिक जो कुछ खाया जाता है, वह केवल बोझा ढोना है और आयुष्य खोना है |"

लोग स्वाद के लिये अपने पेट के साथ बहुत अन्याय करते हैं, ठूँस-ठूँसकर खाते हैं | यूरोप का एक बादशाह स्वादिष्ट पदार्थ खूब खाता था | बाद में औषधियों द्वारा उलटी करके फिर से स्वाद लेने के लिये भोजन करता रहता था | वह जल्दी मर गया |

आप स्वादलोलुप नहीं बनो | जिह्वा को नियंत्रण में रखो | क्या खायें, कब खायें, कैसे खायें और कितना खायें इसका विवेक नहीं रखा तो पेट खराब होगा, शरीर को रोग घेर लेंगे, वीर्यनाश को प्रोत्साहन मिलेगा और अपने को पतन के रास्ते जाने से नहीं रोक सकोगे |

प्रेमपूर्वक, शांत मन से, पवित्र स्थान पर बैठ कर भोजन करो | जिस समय नासिका का दाहिना स्वर (सूर्य नाड़ी) चालू हो उस समय किया भोजन शीघ्र पच जाता है, क्योंकि उस समय जठराग्नि बड़ी प्रबल होती है | भोजन के समय यदि दाहिना स्वर चालू नहीं हो तो उसको चालू कर दो | उसकी विधि यह है : वाम कुक्षि में अपने दाहिने हाथ की मुठ्ठी रखकर कुक्षि को जोर से दबाओ या बाँयी (वाम) करवट लेट जाओ | थोड़ी ही देर में दाहिना याने सूर्य स्वर चालू हो जायेगा |

रात्रि को बाँयी करवट लेटकर ही सोना चाहिए | दिन में सोना उचित नहीं किन्तु यदि सोना आवश्यक हो तो दाहिनी करवट ही लेटना चाहिए |

एक बात का खूब ख्याल रखो | यदि पेय पदार्थ लेना हो तो जब चन्द्र (बाँया) स्वर चालू हो तभी लो | यदि सूर्य (दाहिना) स्वर चालू हो और आपने दूध, काफी, चाय, पानी या कोई भी पेय पदार्थ लिया तो वीर्यनाश होकर रहेगा | खबरदार ! सूर्य स्वर चल रहा हो तब कोई भी पेय पदार्थ न पियो | उस समय यदि पेय पदार्थ पीना पड़े तो दाहिना नथुना बन्द करके बाँये नथुने से श्वास लेते हुए ही पियो |

रात्रि को भोजन कम करो | भोजन हल्का-सुपाच्य हो | बहुत गर्म-गर्म और देर से पचने वाला गरिष्ठ भोजन रोग पैदा करता है | अधिक पकाया हुआ, तेल में तला हुआ, मिर्च-मसालेयुक्त, तीखा, खट्टा, चटपटेदार भोजन वीर्यनाड़ियों को क्षुब्ध करता है | अधिक गर्म भोजन और गर्म चाय से दाँत कमजोर होते हैं | वीर्य भी पतला पड़ता है |

भोजन खूब चबा-चबाकर करो | थके हुए हो तो तत्काल भोजन न करो | भोजन के तुरंत बाद परिश्रम न करो |

भोजन के पहले पानी न पियो | भोजन के बीच में तथा भोजन के एकाध घंटे के बाद पानी पीना हितकर होता है |

रात्रि को संभव हो तो फलाहार लो | अगर भोजन लेना पड़े तो अल्पाहार ही करो | बहुत रात गये भोजन या फलाहार करना हितावह नहीं है | कब्ज की शिकायत हो तो 50 ग्राम लाल फिटकरी तवे पर फुलाकर, कूटकर, कपड़े से छानकर बोतल में भर लो | रात्रि में 15 ग्राम सौंफ एक गिलास पानी में भिगो दो | सुबह उसे उबाल कर छान लो और ड़ेढ़ ग्राम फिटकरी का पाउडर मिलाकर पी लो | इससे कब्ज व बुखार भी दूर होता है | कब्ज तमाम बिमारियों की जड़ है | इसे दूर करना आवश्यक है |

भोजन में पालक, परवल, मेथी, बथुआ आदि हरी तरकारियाँ, दूध, घी, छाछ, मक्खन, पके हुए फल आदि विशेष रूप से लो | इससे जीवन में सात्त्विकता बढ़ेगी | काम, क्रोध, मोह आदि विकार घटेंगे | हर कार्य में प्रसन्नता और उत्साह बना रहेगा |

रात्रि में सोने से पूर्व गर्म-गर्म दूध नहीं पीना चाहिए | इससे रात को स्वप्नदोष हो जाता है |

कभी भी मल-मूत्र की शिकायत हो तो उसे रोको नहीं | रोके हुए मल से भीतर की नाड़ियाँ क्षुब्ध होकर वीर्यनाश कराती हैं |

पेट में कब्ज होने से ही अधिकांशतः रात्रि को वीर्यपात हुआ करता है | पेट में रुका हुआ मल वीर्यनाड़ियों पर दबाव डालता है तथा कब्ज की गर्मी से ही नाड़ियाँ क्षुभित होकर वीर्य को बाहर धकेलती हैं | इसलिये पेट को साफ रखो | इसके लिये कभी-कभी त्रिफला चूर्ण या 'संतकृपा चूर्ण' या 'इसबगुल' पानी के साथ लिया करो | अधिक तिक्त, खट्टी, चरपरी और बाजारू औषधियाँ उत्तेजक होती हैं, उनसे बचो | कभी-कभी उपवास करो | पेट को आराम देने के लिये कभी-कभी निराहार भी रह सकते हो तो अच्छा है |

आहारं पचति शिखी दोषान् आहारवर्जितः |

अर्थात पेट की अग्नि आहार को पचाती है और उपवास दोषों को पचाता है | उपवास से पाचनशक्ति बढ़ती है |

उपवास अपनी शक्ति के अनुसार ही करो | ऐसा न हो कि एक दिन तो उपवास किया और दूसरे दिन मिष्ठान्न-लड्डू आदि पेट में ठूँस-ठूँस कर उपवास की सारी कसर निकाल दी | बहुत अधिक भूखा रहना भी ठीक नहीं |

वैसे उपवास का सही अर्थ तो होता है ब्रह्म के, परमात्मा के निकट रहना | **उप** यानी समीप और **वास** यानी रहना | निराहार रहने से भगवद्भजन और आत्मचिंतन में मदद मिलती है | वृत्ति अन्तर्मुख होने से काम-विकार को पनपने का मौका ही नहीं मिल पाता |

मद्यपान, प्याज, लहसुन और मांसाहार – ये वीर्यक्षय में मदद करते हैं, अतः इनसे अवश्य बचो |

(अनुक्रम)

शिश्नेन्द्रिय स्नान

शौच के समय एवं लघुशंका के समय साथ में गिलास अथवा लोटे में ठंड़ा जल लेकर जाओ और उससे शिश्नेन्द्रिय को धोया करो | कभी-कभी उस पर ठंड़े पानी की धार किया करो | इससे कामवृत्ति का शमन होता है और स्वप्नदोष नहीं होता |

उचित आसन एवं व्यायाम करो

स्वस्थ शरीर में स्वस्थ मन का निवास होता है | अंग्रेजी में कहते हैं : **A healthy mind resides in a healthy body.**

जिसका शरीर स्वस्थ नहीं रहता, उसका मन अधिक विकारग्रस्त होता है | इसलिये रोज प्रातः व्यायाम एवं आसन करने का नियम बना लो |

रोज प्रातः काल 3-4 मिनट दौड़ने और तेजी से टहलने से भी शरीर को अच्छा व्यायाम मिल जाता है |

सूर्यनमस्कार 13 अथवा उससे अधिक किया करो तो उत्तम है | इसमें आसन व व्यायाम दोनों का समावेश होता है |

'व्यायाम' का अर्थ पहलवानों की तरह मांसपेशियाँ बढ़ाना नहीं है | शरीर को योग्य कसरत मिल जाय ताकि उसमें रोग प्रवेश न करें और शरीर तथा मन स्वस्थ रहें – इतना ही उसमें हेतु है |

व्यायाम से भी अधिक उपयोगी आसन हैं | आसन शरीर के समुचित विकास एवं ब्रह्मचर्य-साधना के लिये अत्यंत उपयोगी सिद्ध होते हैं | इनसे नाड़ियाँ शुद्ध होकर सत्त्वगुण की वृद्धि होती है | वैसे तो शरीर के अलग-अलग अंगों की पुष्टि के लिये अलग-अलग आसन होते हैं, परन्तु वीर्यरक्षा की दृष्टि से मयूरासन, पादपश्चिमोत्तानासन, सर्वांगासन थोड़ी बहुत सावधानी रखकर हर कोई कर सकता है | इनमें से पादपश्चिमोत्तानासन तो बहुत ही उपयोगी है | आश्रम में आनेवाले कई साधकों का यह निजी अनुभव है |

किसी कुशल योग-प्रशिक्षक से ये आसन सीख लो और प्रातःकाल खाली पेट, शुद्ध हवा में किया करो | शौच, स्नान, व्यायाम आदि के पश्चात् ही आसन करने चाहिए |

स्नान से पूर्व सुखे तौलिये अथवा हाथों से सारे शरीर को खूब रगड़ो | इस प्रकार के घर्षण से शरीर में एक प्रकार की विद्युत शक्ति पैदा होती है, जो शरीर के रोगों को नष्ट करती है | श्वास तीव्र गति

से चलने पर शरीर में रक्त ठीक संचरण करता है और अंग-प्रत्यंग के मल को निकालकर फेफड़ों में लाता है | फेफड़ों में प्रविष्ट शुद्ध वायु रक्त को साफ कर मल को अपने साथ बाहर निकाल ले जाती है | बचा-खुचा मल पसीने के रूप में त्वचा के छिद्रों द्वारा बाहर निकल आता है | इस प्रकार शरीर पर घर्षण करने के बाद स्नान करना अधिक उपयोगी है, क्योंकि पसीने द्वारा बाहर निकला हुआ मल उससे धुल जाता है, त्वचा के छिद्र खुल जाते हैं और बदन में स्फूर्ति का संचार होता है |

(अनुक्रम)

ब्रह्ममुहूर्त में उठो

स्वप्नदोष अधिकांशतः रात्रि के अंतिम प्रहर में हुआ करता है | इसलिये प्रातः चार-साढ़े चार बजे यानी ब्रह्ममुहूर्त में ही शैया का त्याग कर दो | जो लोग प्रातः काल देरी तक सोते रहते हैं, उनका जीवन निस्तेज हो जाता है |

दुर्व्यसनों से दूर रहो

शराब एवं बीड़ी-सिगरेट-तम्बाकू का सेवन मनुष्य की कामवासना को उद्यीप्त करता है |

कुरान शरीफ के अल्लाहपाक त्रिकोल रोशल के सिपारा में लिखा है कि शैतान का भड़काया हुआ मनुष्य ऐसी नशायुक्त चीजों का उपयोग करता है | ऐसे व्यक्ति से अल्लाह दूर रहता है, क्योंकि यह काम शैतान का है और शैतान उस आदमी को जहन्नुम में ले जाता है |

नशीली वस्तुओं के सेवन से फेफड़े और हृदय कमजोर हो जाते हैं, सहनशक्ति घट जाती है और आयुष्य भी कम हो जाता है | अमरीकी डॉक्टरों ने खोज करके बतलाया है कि नशीली वस्तुओं के सेवन से कामभाव उत्तेजित होने पर वीर्य पतला और कमजोर पड़ जाता है |

(अनुक्रम)

सत्संग करो

आप सत्संग नहीं करोगे तो कुसंग अवश्य होगा | इसलिये मन, वचन, कर्म से सदैव सत्संग का ही सेवन करो | जब-जब चित्त में पतित विचार डेरा जमाने लगें तब-तब तुरंत सचेत हो जाओ और वह स्थान छोड़कर पहुँच जाओ किसी सत्संग के वातावरण में, किसी सन्मित्र या सत्पुरुष के सान्निध्य में | वहाँ वे कामी विचार बिखर जायेंगे और आपका तन-मन पवित्र हो जायेगा | यदि ऐसा नहीं किया तो वे पतित विचार आपका पतन किये बिना नहीं छोड़ेंगे, क्योंकि जो मन में होता है, देर-सबेर उसीके अनुसार बाहर की क्रिया होती है | फिर तुम पछताओगे कि हाय ! यह मुझसे क्या हो गया ?

पानी का स्वभाव है नीचे की ओर बहना | वैसे ही मन का स्वभाव है पतन की ओर सुगमता से बढ़ना | मन हमेशा धोखा देता है | वह विषयों की ओर खींचता है, कुसंगति में सार दिखता है, लेकिन वह पतन का रास्ता है | कुसंगति में कितना ही आकर्षण हो, मगर...

जिसके पीछे हो गम की कतारें, भूलकर उस खुशी से न खेलो |

अभी तक गत जीवन में आपका कितना भी पतन हो चुका हो, फिर भी सत्संगति करो | आपके उत्थान की अभी भी गुंजाइश है | बड़े-बड़े दुर्जन भी सत्संग से सज्जन बन गये हैं |

शठ सुधरहिं सत्संगति पाई |

सत्संग से वंचित रहना अपने पतन को आमंत्रित करना है | इसलिये अपने नेत्र, कर्ण, त्वचा आदि सभी को सत्संगरूपी गंगा में स्नान कराते रहो, जिससे कामविकार आप पर हावी न हो सके |

(अनुक्रम)

शुभ संकल्प करो

'हम ब्रह्मचर्य का पालन कैसे कर सकते हैं? बड़े-बड़े ऋषि-मुनि भी इस रास्ते पर फिसल पड़ते हैं...' – इस प्रकार के हीन विचारों को तिलांजलि दे दो और अपने संकल्पबल को बढ़ाओ | शुभ संकल्प करो | जैसा आप सोचते हो, वैसे ही आप हो जाते हो | यह सारी सृष्टि ही संकल्पमय है |

दृढ़ संकल्प करने से वीर्यरक्षण में मदद होती है और वीर्यरक्षण से संकल्पबल बढ़ता है | **विश्वासो फलदायकः** | जैसा विश्वास और जैसी श्रद्धा होगी वैसा ही फल प्राप्त होगा | ब्रह्मज्ञानी महापुरुषों में यह संकल्पबल असीम होता है | वस्तुतः ब्रह्मचर्य की तो वे जीती-जागती मुर्ति ही होते हैं |

(अनुक्रम)

त्रिबन्धयुक्त प्राणायाम और योगाभ्यास करो

त्रिबन्ध करके प्राणायाम करने से विकारी जीवन सहज भाव से निर्विकारिता में प्रवेश करने लगता है | मूलबन्ध से विकारों पर विजय पाने का सामर्थ्य आता है | उड्डियानबन्ध से आदमी उन्नति में विलक्षण उड़ान ले सकता है | जालन्धरबन्ध से बुद्धि विकसित होती है |

अगर कोई व्यक्ति अनुभवी महापुरुष के सान्निध्य में त्रिबन्ध के साथ प्रतिदिन 12 प्राणायाम करे तो प्रत्याहार सिद्ध होने लगेगा | 12 प्रत्याहार से धारणा सिद्ध होने लगेगी | धारणा-शक्ति बढ़ते ही प्रकृति के रहस्य खुलने लगेंगे | स्वभाव की मिठास, बुद्धि की विलक्षणता, स्वास्थ्य की सौरभ आने लगेगी | 12 धारणा सिद्ध होने पर ध्यान लगेगा, सविकल्प समाधि होने लगेगी | सविकल्प समाधि का 12 गुना समय पकने पर निर्विकल्प समाधि लगेगी |

इस प्रकार छः महीने अभ्यास करनेवाला साधक सिद्ध योगी बन सकता है | रिद्धि-सिद्धियाँ उसके आगे हाथ जोड़कर खड़ी रहती हैं | यक्ष, गंधर्व, किन्नर उसकी सेवा के लिए उत्सुक होते हैं | उस

पवित्र पुरुष के निकट संसारी लोग मनौती मानकर अपनी मनोकामना पूर्ण कर सकते हैं | साधन करते समय रग-रग में इस महान् लक्ष्य की प्राप्ति के लिए धुन लग जाय|

ब्रह्मचर्य-व्रत पालने वाला साधक पवित्र जीवन जीनेवाला व्यक्ति महान् लक्ष्य की प्राप्ति में सफल हो सकता है |

हे मित्र ! बार-बार असफल होने पर भी तुम निराश मत हो | अपनी असफलताओं को याद करके हारे हुए जुआरी की तरह बार-बार गिरो मत | ब्रह्मचर्य की इस पुस्तक को फिर-फिर से पढ़ो | प्रातः निद्रा से उठते समय बिस्तर पर ही बैठे रहो और दृढ़ भावना करो :

"मेरा जीवन प्रकृति की थप्पड़ें खाकर पशुओं की तरह नष्ट करने के लिए नहीं है | मैं अवश्य पुरुषार्थ करूँगा, आगे बढ़ूँगा | हरि ॐ ... ॐ ... ॐ ...

मेरे भीतर परब्रह्म परमात्मा का अनुपम बल है | हरि ॐ ... ॐ ... ॐ ...

तुच्छ एवं विकारी जीवन जीनेवाले व्यक्तियों के प्रभाव से मैं अपनेको विनिर्मुक्त करता जाऊँगा | हरि ॐ ... ॐ ... ॐ ...

सुबह में इस प्रकार का प्रयोग करने से चमत्कारिक लाभ प्राप्त कर सकते हो | सर्वनियन्ता सर्वेश्वर को कभी प्यार करो ... कभी प्रार्थना करो ... कभी भाव से, विह्वलता से आर्तनाद करो | वे अन्तर्यामी परमात्मा हमें अवश्य मार्गदर्शन देते हैं | बल-बुद्धि बढ़ाते हैं | साधक तुच्छ विकारी जीवन पर विजयी होता जाता है | ईश्वर का असीम बल तुम्हारे साथ है | निराश मत हो भैया ! हताश मत हो | बार-बार फिसलने पर भी सफल होने की आशा और उत्साह मत छोड़ो |

शाबाश वीर ... ! शाबाश ... ! हिम्मत करो, हिम्मत करो | ब्रह्मचर्य-सुरक्षा के उपायों को बार-बार पढ़ो, सूक्ष्मता से विचार करो | उन्नति के हर क्षेत्र में तुम आसानी से विजेता हो सकते हो |

करोगे न हिम्मत ?

अति खाना, अति सोना, अति बोलना, अति यात्रा करना, अति मैथुन करना अपनी सुषुप्त योग्यताओं को धराशायी कर देता है, जबकि संयम और पुरुषार्थ सुषुप्त योग्यताओं को जगाकर जगदीश्वर से मुलाकात करा देता है |

(अनुक्रम)

नीम का पेड चला

हमारे सदगुरुदेव परम पूज्य लीलाशाहजी महाराज के जीवन की एक घटना बताता हूँ:

सिंध में उन दिनों किसी जमीन की बात में हिन्दू और मुसलमानों का झगड़ा चल रहा था | उस जमीन पर नीम का एक पेड़ खड़ा था, जिससे उस जमीन की सीमा-निर्धारण के बारे में कुछ विवाद था | हिन्दू और मुसलमान कोर्ट-कचहरी के धक्के खा-खाकर थके | आखिर दोनों पक्षों ने यह तय किया कि यह धार्मिक स्थान है | दोनों पक्षों में से जिस पक्ष का कोई पीर-फकीर उस स्थान पर अपना कोई विशेष तेज, बल या चमत्कार दिखा दे, वह जमीन उसी पक्ष की हो जायेगी |

पूज्य लीलाशाहजी बापू का नाम पहले 'लीलाराम' था | लोग पूज्य लीलारामजी के पास पहुँचे और बोले: "हमारे तो आप ही एकमात्र संत हैं | हमसे जो हो सकता था वह हमने किया, परन्तु असफल रहे | अब समग्र हिन्दू समाज की प्रतिष्ठा आपश्री के चरणों में है |

इंसाँ की अज्म से जब दूर किनारा होता है |

तूफाँ में टूटी किश्ती का एक भगवान किनारा होता है ||

अब संत कहो या भगवान कहो, आप ही हमारा सहारा हैं | आप ही कुछ करेंगे तो यह धर्मस्थान हिन्दुओं का हो सकेगा |"

संत तो मौजी होते हैं | जो अहंकार लेकर किसी संत के पास जाता है, वह खाली हाथ लौटता है और जो विनम्र होकर शरणागति के भाव से उनके सम्मुख जाता है, वह सब कुछ पा लेता है | विनम्र और श्रद्धायुक्त लोगों पर संत की करुणा कुछ देने को जल्दी उमड़ पड़ती है |

पूज्य लीलारामजी उनकी बात मानकर उस स्थान पर जाकर भूमि पर दोनों घुटनों के बीच सिर नीचा किये हुए शांत भाव से बैठ गये |

विपक्ष के लोगों ने उन्हें ऐसी सरल और सहज अवस्था में बैठे हुए देखा तो समझ लिया कि ये लोग इस साधु को व्यर्थ में ही लाये हैं | यह साधु क्या करेगा ...? जीत हमारी होगी |

पहले मुस्लिम लोगों द्वारा आमंत्रित पीर-फकीरों ने जादू-मंत्र, टोने-टोटके आदि किये | 'अला बाँधूँ बला बाँधूँ... पृथ्वी बाँधूँ... तेज बाँधूँ... वायू बाँधूँ... आकाश बाँधूँ... फूsss' आदि-आदि किया | फिर पूज्य लीलाराम जी की बारी आई |

पूज्य लीलारामजी भले ही साधारण से लग रहे थे, परन्तु उनके भीतर आत्मानन्द हिलोरे ले रहा था | 'पृथ्वी, आकाश क्या समग्र ब्रह्माण्ड में मेरा ही पसारा है... मेरी सत्ता के बिना एक पत्ता भी नहीं हिल सकता... ये चाँद-सितारे मेरी आज्ञा में ही चल रहे हैं... सर्वत्र मैं ही इन सब विभिन्न रूपों में विलास कर रहा हूँ...' ऐसे ब्रह्मानन्द में डूबे हुए वे बैठे थे |

ऐसी आत्ममस्ती में बैठा हुआ किन्तु बाहर से कंगाल जैसा दिखने वाला संत जो बोल दे, उसे घटित होने से कौन रोक सकता है ?

वशिष्ठ जी कहते हैं : "हे रामजी ! त्रिलोकी में ऐसा कौन है, जो संत की आज्ञा का उल्लंघन कर सके ?"

जब लोगों ने पूज्य लीलारामजी से आग्रह किया तो उन्होंने धीरे से अपना सिर ऊपर की ओर उठाया | सामने ही नीम का पेड़ खड़ा था | उस पर दृष्टि डालकर गर्जना करते हुए आदेशात्मक भाव से बोल उठे :

"ऐ नीम ! इधर क्या खड़ा है ? जा उधर हटकर खड़ा रह |"

बस उनका कहना ही था कि नीम का पेड 'सर्रर्र... सर्रर्र...' करता हुआ दूर जाकर पूर्ववत् खड़ा हो गया |

लोग तो यह देखकर आवाक रह गये ! आज तक किसी ने ऐसा चमत्कार नहीं देखा था | अब विपक्षी लोग भी उनके पैरों पड़ने लगे | वे भी समझ गये कि ये कोई सिद्ध महापुरुष हैं |

वे हिन्दुओं से बोले : "ये आपके ही पीर नहीं हैं बल्कि आपके और हमारे सबके पीर हैं | अब से ये 'लीलाराम' नहीं किंतु 'लीलाशाह' हैं |

तब से लोग उनका 'लीलाराम' नाम भूल ही गये और उन्हें 'लीलाशाह' नाम से ही पुकारने लगे | लोगों ने उनके जीवन में ऐसे-ऐसे और भी कई चमत्कार देखे |

वे 93 वर्ष की उम्र पार करके ब्रह्मलीन हुए | इतने वृद्ध होने पर भी उनके सारे दाँत सुरक्षित थे, वाणी में तेज और बल था | वे नियमित रूप से आसन एवं प्राणायाम करते थे | मीलों पैदल यात्रा करते थे | वे आजन्म ब्रह्मचारी रहे | उनके कृपा-प्रसाद द्वारा कई पुत्रहीनों को पुत्र मिले, गरीबों को धन मिला, निरुत्साहियों को उत्साह मिला और जिज्ञासुओं का साधना-मार्ग प्रशस्त हुआ | और भी क्या-क्या हुआ यह बताने जाऊँगा तो विषयान्तर होगा और समय भी अधिक नहीं है | मैं यह बताना चाहता हूँ कि

उनके द्वारा इतने चमत्कार होते हुए भी उनकी महानता चमत्कारों में निहित नहीं है | उनकी महानता तो उनकी ब्रह्मनिष्ठता में निहित थी |

छोटे-मोटे चमत्कार तो थोड़े बहुत अभ्यास के द्वारा हर कोई कर लेता है, मगर ब्रह्मनिष्ठा तो चीज ही कुछ और है | वह तो सभी साधनाओं की अंतिम निष्पति है | ऐसा ब्रह्मनिष्ठ होना ही तो वास्तविक ब्रह्मचारी होना है | मैंने पहले भी कहा है कि केवल वीर्यरक्षा ब्रह्मचर्य नहीं है | यह तो ब्रह्मचर्य की साधना है | यदि शरीर द्वारा वीर्यरक्षा हो और मन-बुद्धि में विषयों का चिंतन चलता रहे, तो ब्रह्मनिष्ठा कहाँ हुई ? फिर भी वीर्यरक्षा द्वारा ही उस ब्रह्मानन्द का द्वार खोलना शीघ्र संभव होता है | वीर्यरक्षण हो और कोई समर्थ ब्रह्मनिष्ठ गुरु मिल जायें तो बस, फिर और कुछ करना शेष नहीं रहता | फिर वीर्यरक्षण करने में परिश्रम नहीं करना पड़ता, वह सहज होता है | साधक सिद्ध बन जाता है | फिर तो उसकी दृष्टि मात्र से कामुक भी संयमी बन जाता है |

संत ज्ञानेश्वर महाराज जिस चबूतरे पर बैठे थे, उसीको कहा: 'चल...' तो वह चलने लगा | ऐसे ही पूज्यपाद लीलाशाहजी बापू ने नीम के पेड़ को कहा : 'चल...' तो वह चलने लगा और जाकर दूसरी जगह खड़ा हो गया | यह सब संकल्प बल का चमत्कार है | ऐसा संकल्प बल आप भी बढ़ा सकते हैं |

विवेकानन्द कहा करते थे कि भारतीय लोग अपने संकल्प बल को भूल गये हैं, इसीलिये गुलामी का दुःख भोग रहे हैं | 'हम क्या कर सकते हैं...' ऐसे नकारात्मक चिंतन द्वारा वे संकल्पहीन हो गये हैं जबकि अंग्रेज का बच्चा भी अपने को बड़ा उत्साही समझता है और कार्य में सफल हो जाता है, क्योंकि वे ऐसा विचार करता है : 'मैं अंग्रेज हूँ | दुनिया के बड़े भाग पर हमारी जाति का शासन रहा है | ऐसी गौरवपूर्ण जाति का अंग होते हुए मुझे कौन रोक सकता है सफल होने से ? मैं क्या नहीं कर सकता ?' 'बस, ऐसा विचार ही उसे सफलता दे देता है |

जब अंग्रेज का बच्चा भी अपनी जाति के गौरव का स्मरण कर दृढ़ संकल्पवान् बन सकता है, तो आप क्यों नहीं बन सकते ?

"मैं ऋषि-मुनियों की संतान हूँ | भीष्म जैसे दृढ़प्रतिज्ञ पुरुषों की परम्परा में मेरा जन्म हुआ है | गंगा को पृथ्वी पर उतारनेवाले राजा भगीरथ जैसे दृढ़निश्चयी महापुरुष का रक्त मुझमें बह रहा है | समुद्र को भी पी जानेवाले अगस्त्य ऋषि का मैं वंशज हूँ | श्री राम और श्रीकृष्ण की अवतार-भूमि भारत में, जहाँ देवता भी जन्म लेने को तरसते हैं वहाँ मेरा जन्म हुआ है, फिर मैं ऐसा दीन-हीन क्यों? मैं जो चाहूँ सो कर सकता हूँ | आत्मा की अमरता का, दिव्य ज्ञान का, परम निर्भयता का संदेश सारे संसार को जिन ऋषियों ने दिया, उनका वंशज होकर मैं दीन-हीन नहीं रह सकता | मैं अपने रक्त के निर्भयता के संस्कारों को जगाकर रहूँगा | मैं वीर्यवान् बनकर रहूँगा |" ऐसा दृढ़ संकल्प हरेक भारतीय बालक को करना चाहिए |

(अनुक्रम)

स्त्री-जाति के प्रति मातृभाव प्रबल करो

श्री रामकृष्ण परमहंस कहा करते थे : " किसी सुंदर स्त्री पर नजर पड़ जाए तो उसमें माँ जगदम्बा के दर्शन करो | ऐसा विचार करो कि यह अवश्य देवी का अवतार है, तभी तो इसमें इतना सौंदर्य है | माँ प्रसन्न होकर इस रूप में दर्शन दे रही है, ऐसा समझकर सामने खड़ी स्त्री को मन-ही-मन प्रणाम करो | इससे तुम्हारे भीतर काम विकार नहीं उठ सकेगा |

मातृवत् परदारेषु परद्रव्येषु लोष्टवत् |

पराई स्त्री को माता के समान और पराए धन को मिट्टी के ढेले के समान समझो |

(अनुक्रम)

शिवाजी का प्रसंग

शिवाजी के पास कल्याण के सूबेदार की स्त्रियों को लाया गया था तो उस समय उन्होंने यही आदर्श उपस्थित किया था | उन्होंने उन स्त्रियों को 'माँ' कहकर पुकारा तथा उन्हें कई उपहार देकर सम्मान सहित उनके घर वापस भेज दिया | शिवाजी परम गुरु समर्थ रामदास के शिष्य थे |

भारतीय सभ्यता और संस्कृति में 'माता' को इतना पवित्र स्थान दिया गया है कि यह मातृभाव मनुष्य को पतित होते-होते बचा लेता है | श्री रामकृष्ण एवं अन्य पवित्र संतों के समक्ष जब कोई स्त्री कुचेष्टा करना चाहती तब वे सज्जन, साधक, संत यह पवित्र मातृभाव मन में लाकर विकार के फंदे से बच जाते | यह मातृभाव मन को विकारी होने से बहुत हद तक रोके रखता है | जब भी किसी स्त्री को देखने पर मन में विकार उठने लगे, उस समय सचेत रहकर इस मातृभाव का प्रयोग कर ही लेना चाहिए |

(अनुक्रम)

अर्जुन और उर्वशी

अर्जुन सशरीर इन्द्र सभा में गया तो उसके स्वागत में उर्वशी, रम्भा आदि अप्सराओं ने नृत्य किये | अर्जुन के रूप सौन्दर्य पर मोहित हो उर्वशी रात्रि के समय उसके निवास स्थान पर गई और प्रणय-निवेदन किया तथा साथ ही 'इसमें कोई दोष नहीं लगता' इसके पक्ष में अनेक दलीलें भी कीं | किन्तु अर्जुन ने अपने दृढ़ इन्द्रियसंयम का परिचय देते हुए कह :

गच्छ मूर्ध्ना प्रपन्नोऽस्मि पादौ ते वरवर्णिनी | त्वं हि में मातृवत् पूज्या रक्ष्योऽहं पुत्रवत् त्वया ||

(महाभारत : वनपर्वणि इन्द्रलोकाभिगमनपर्व : ४६.४७)

"मेरी दृष्टि में कुन्ती, माद्री और शची का जो स्थान है, वही तुम्हारा भी है | तुम मेरे लिए माता के समान पूज्या हो | मैं तुम्हारे चरणों में प्रणाम करता हूँ | तुम अपना दुराग्रह छोड़कर लौट जाओ |" इस पर उर्वशी ने क्रोधित होकर उसे नपुंसक होने का शाप दे दिया | अर्जुन ने उर्वशी से शापित होना स्वीकार किया, परन्तु संयम नहीं तोड़ा | जो अपने आदर्श से नहीं हटता, धैर्य और सहनशीलता को अपने चरित्र का भूषण बनाता है, उसके लिये शाप भी वरदान बन जाता है | अर्जुन के लिये भी ऐसा ही हुआ | जब इन्द्र तक यह बात पहुँची तो उन्होंने अर्जुन को कहा : "तुमने इन्द्रिय संयम के द्वारा ऋषियों को भी पराजित कर दिया | तुम जैसे पुत्र को पाकर कुन्ती वास्तव में श्रेष्ठ पुत्रवाली है | उर्वशी का शाप तुम्हें वरदान सिद्ध होगा | भूतल पर वनवास के १३वें वर्ष में अज्ञातवास करना पड़ेगा उस समय यह सहायक होगा | उसके बाद तुम अपना पुरुषत्व फिर से प्राप्त कर लोगे |" इन्द्र के कथनानुसार अज्ञातवास के समय अर्जुन ने विराट के महल में नर्तक वेश में रहकर विराट की

राजकुमारी को संगीत और नृत्य विद्या सिखाई थी और इस प्रकार वह शाप से मुक्त हुआ था | परस्त्री के प्रति मातृभाव रखने का यह एक सुंदर उदाहरण है | ऐसा ही एक उदाहरण वाल्मीकिकृत रामायण में भी आता है | भगवान श्रीराम के छोटे भाई लक्ष्मण को जब सीताजी के गहने पहचानने को कहा गया तो लक्ष्मण जी बोले : हे तात ! मैं तो सीता माता के पैरों के गहने और नूपुर ही पहचानता हूँ, जो मुझे उनकी चरणवन्दना के समय दृष्टिगोचर होते रहते थे | केयूर-कुण्डल आदि दूसरे गहनों को मैं नहीं जानता |" यह मातृभाववाली दृष्टि ही इस बात का एक बहुत बड़ा कारण था कि लक्ष्मणजी इतने काल तक ब्रह्मचर्य का पालन किये रह सके | तभी रावणपुत्र मेघनाद को, जिसे इन्द्र भी नहीं हरा सका था, लक्ष्मणजी हरा पाये | पवित्र मातृभाव द्वारा वीर्यरक्षण का यह अनुपम उदाहरण है जो ब्रह्मचर्य की महत्ता भी प्रकट करता है |

(अनुक्रम)

सत्साहित्य पढ़ो

जैसा साहित्य हम पढ़ते हैं, वैसे ही विचार मन के भीतर चलते रहते हैं और उन्हींसे हमारा सारा व्यवहार प्रभावित होता है | जो लोग कुत्सित, विकारी और कामोत्तेजक साहित्य पढ़ते हैं, वे कभी ऊपर नही उठ सकते | उनका मन सदैव काम-विषय के चिंतन में ही उलझा रहता है और इससे वे अपनी वीर्यरक्षा करने में असमर्थ रहते हैं | गन्दे साहित्य कामुकता का भाव पैदा करते हैं | सुना गया है कि पाश्चात्य जगत से प्रभावित कुछ नराधम चोरी-छिपे गन्दी फिल्मों का प्रदर्शन करते हैं जो अपना और अपने संपर्क में आनेवालों का विनाश करते हैं | ऐसे लोग महिलाओं, कोमल वय की कन्याओं तथा किशोर एवं युवावस्था में पहुँचे हुए बच्चों के साथ बड़ा अन्याय करते हैं | 'ब्ल्यू फिल्म' देखने-दिखानेवाले महा अधम कामान्ध लोग मरने के बाद शूकर, कूकर आदि योनियों में जन्म लेकर अथवा गन्दी नालियों के कीड़े बनकर छटपटाते हुए दुःख भोगेंगे ही | निर्दोष कोमलवय के नवयुवक उन दुष्टों के शिकार न बनें, इसके लिए सरकार और समाज को सावधान रहना चाहिए |

बालक देश की संपत्ति हैं | ब्रह्मचर्य के नाश से उनका विनाश हो जाता है | अतः नवयुवकों को मादक द्रव्यों, गन्दे साहित्यों व गन्दी फिल्मों के द्वारा बर्बाद होने से बचाया जाये | वे ही तो राष्ट्र के भावी कर्णधार हैं | युवक-युवतियाँ तेजस्वी हों, ब्रह्मचर्य की महिमा समझें इसके लिए हम सब लोगों का कर्त्तवय है कि स्कूलों-कालेजों में विद्यार्थियों तक ब्रह्मचर्य पर लिखा गया साहित्य पहुँचायें | सरकार का यह नैतिक कर्त्तव्य है कि वह शिक्षा प्रदान कर ब्रह्मचर्य विशय पर विद्यार्थियों को

सावधान करे ताकि वे तेजस्वी बनें | जितने भी महापुरुष हुए हैं, उनके जीवन पर दृष्टिपात करो तो उन पर किसी-न-किसी सत्साहित्य की छाप मिलेगी | अमेरिका के प्रसिद्ध लेखक इमर्सन के गुरु थोरो ब्रह्मचर्य का पालन करते थे | उन्हों ने लिखा है : "मैं प्रतिदिन गीता के पवित्र जल से स्नान करता हूँ | यद्यपि इस पुस्तक को लिखनेवाले देवताओं को अनेक वर्ष व्यतीत हो गये, लेकिन इसके बराबर की कोई पुस्तक अभी तक नहीं निकली है |"

योगेश्वरी माता गीता के लिए दूसरे एक विदेशी विद्वान्, इंग्लैण्ड के एफ. एच. मोलेम कहते हैं : "बाइबिल का मैंने यथार्थ अभ्यास किया है | जो ज्ञान गीता में है, वह ईसाई या यदूही बाइबिलों में नहीं है | मुझे यही आश्चर्य होता है कि भारतीय नवयुवक यहाँ इंग्लैण्ड तक पदार्थ विज्ञान सीखने क्यों आते हैं ? नि:संदेह पाश्चात्यों के प्रति उनका मोह ही इसका कारण है | उनके भोलेभाले हृदयों ने निर्दय और अविनम्र पश्चिमवासियों के दिल अभी पहचाने नहीं हैं | इसीलिए उनकी शिक्षा से मिलनेवाले पदों की लालच से वे उन स्वार्थियों के इन्द्रजाल में फंसते हैं | अन्यथा तो जिस देश या समाज को गुलामी से छुटना हो उसके लिए तो यह अधोगति का ही मार्ग है |

मैं ईसाई होते हुए भी गीता के प्रति इतना आदर-मान इसलिए रखता हूँ कि जिन गूढ़ प्रश्नों का हल पाश्चात्य वैज्ञानिक अभी तक नहीं कर पाये, उनका हल इस गीता ग्रंथ ने शुद्ध और सरल रीति से दे दिया है | गीता में कितने ही सूत्र आलौकिक उपदेशों से भरपूर देखे, इसी कारण गीताजी मेरे लिए साक्षात योगेश्वरी माता बन गई हैं | विश्व भर में सारे धन से भी न मिल सके, भारतवर्ष का यह ऐसा अमूल्य खजाना है |

सुप्रसिद्ध पत्रकार पॉल ब्रिन्टिन सनातन धर्म की ऐसी धार्मिक पुस्तकें पढ़कर जब प्रभावित हुआ तभी वह हिन्दुस्तान आया था और यहाँ के रमण महर्षि जैसे महात्माओं के दर्शन करके धन्य हुआ था | देशभक्तिपूर्ण साहित्य पढ़कर ही चन्द्रशेखर आजाद, भगतसिंह, वीर सावरकर जैसे रत्न अपने जीवन को देशाहित में लगा पाये |

इसलिये सत्साहित्य की तो जितनी महिमा गाई जाये, उतनी कम है | श्रीयोगवशिष्ठ महारामायण, उपनिषद, दासबोध, सुखमनि, विवेकचूड़ामणि, श्री रामकृष्ण साहित्य, स्वामी रामतीर्थ के

प्रवचन आदि भारतीय संस्कृति की ऐसी कई पुस्तकें हैं जिन्हें पढ़ो और उन्हें अपने दैनिक जीवन का अंग बना लो | ऐसी-वैसी विकारी और कुत्सित पुस्तक-पुस्तिकाएँ हों तो उन्हें उठाकर कचरे ले ढ़ेर पर फेंक दो या चूल्हे में डालकर आग तापो, मगर न तो स्वयं पढ़ो और न दूसरे के हाथ लगने दो |

इस प्रकार के आध्यात्मिक सहित्य-सेवन में ब्रह्मचर्य मजबूत करने की अथाह शक्ति होती है | प्रातःकाल स्नानादि के पश्चात दिन के व्यवसाय में लगने से पूर्व एवं रात्रि को सोने से पूर्व कोई-न-कोई आध्यात्मिक पुस्तक पढ़ना चाहिए | इससे वे ही सतोगुणी विचार मन में घूमते रहेंगे जो पुस्तक में होंगे और हमारा मन विकारग्रस्त होने से बचा रहेगा |

कौपीन (लंगोटी) पहनने का भी आग्रह रखो | इससे अण्डकोष स्वस्थ रहेंगे और वीर्यरक्षण में मदद मिलेगी |

वासना को भड़काने वाले नग्न व अश्लील पोस्टरों एवं चित्रों को देखने का आकर्षण छोड़ो | अश्लील शायरी और गाने भी जहाँ गाये जाते हों, वहाँ न रुको |

(अनुक्रम)

वीर्यसंचय के चमत्कार

वीर्य के एक-एक अणु में बहुत महान् शक्तियाँ छिपी हैं | इसीके द्वारा शंकराचार्य, महावीर, कबीर, नानक जैसे महापुरुष धरती पर अवतीर्ण हुए हैं | बड़े-बड़े वीर, योद्धा, वैज्ञानिक, साहित्यकार- ये सब वीर्य की एक बूँद में छिपे थे ... और अभी आगे भी पैदा होते रहेंगे | इतने बहुमूल्य वीर्य का सदुपयोग जो व्यक्ति नहीं कर पाता, वह अपना पतन आप आमंत्रित करता है |

वीयं वै भर्गः | **(शतपथ ब्राह्मण)**

वीर्य ही तेज है, आभा है, प्रकाश है |

जीवन को ऊर्ध्वगामी बनाने वाली ऐसी बहुमूल्य वीर्यशक्ति को जिसने भी खोया, उसको कितनी हानि उठानी पड़ी, यह कुछ उदाहरणों के द्वारा हम समझ सकते हैं |

(अनुक्रम)

भीष्म पितामह और वीर अभिमन्यु

महाभारत में ब्रह्मचर्य से संबंधित दो प्रसंग आते हैं : एक भीष्म पितामह का और दूसरा वीर अभिमन्यु का | भीष्म पितामह बाल ब्रह्मचारी थे, इसलिये उनमें अथाह सामर्थ्य था | भगवान श्री कृष्ण का यह व्रत था कि 'मैं युद्ध में शस्त्र नहीं उठाऊँगा |' किन्तु यह भीष्म की ब्रह्मचर्य शक्ति का ही चमत्कार था कि उन्होंने श्री कृष्ण को अपना व्रत भंग करने के लिए मजबूर कर दिया | उन्होंने अर्जुन पर ऐसी बाण वर्षा की कि दिव्यास्त्रों से सुसज्जित अर्जुन जैसा धुरन्धर धनुर्धारी भी उसका प्रतिकार करने में असमर्थ हो गया जिससे उसकी रक्षार्थ भगवान श्री कृष्ण को रथ का पहिया लेकर भीष्म की ओर दौड़ना पड़ा |

यह ब्रह्मचर्य का ही प्रताप था कि भीष्म मौत पर भी विजय प्राप्त कर सके | उन्होंने ही यह स्वयं तय किया कि उन्हें कब शरीर छोड़ना है | अन्यथा शरीर में प्राणों का टिके रहना असंभव था, परन्तु भीष्म की बिना आज्ञा के मौत भी उनसे प्राण कैसे छीन सकती थी ! भीष्म ने स्वेच्छा से शुभ मुहूर्त में अपना शरीर छोड़ा |

दूसरी ओर अभिमन्यु का प्रसंग आता है | महाभारत के युद्ध में अर्जुन का वीर पुत्र अभिमन्यु चक्रव्यूह का भेदन करने के लिए अकेला ही निकल पड़ा था | भीम भी पीछे रह गया था | उसने जो शौर्य दिखाया, वह प्रशंसनीय था | बड़े-बड़े महारथियों से घिरे होने पर भी वह रथ का पहिया लेकर अकेला युद्ध करता रहा, परन्तु आखिर में मारा गया | उसका कारण यह था कि युद्ध में जाने से पूर्व वह अपना ब्रह्मचर्य खण्डित कर चुका था | वह उत्तरा के गर्भ में पाण्डव वंश का बीज डालकर आया था | मात्र इतनी छोटी सी कमजोरी के कारण वह पितामह भीष्म की तरह अपनी मृत्यु का आप मालिक नहीं बन सका |

(अनुक्रम)

पृथ्वीराज चौहान क्यों हारा ?

भारात में पृथ्वीराज चौहान ने मोहम्मद गोरी को सोलह बार हराया किन्तु सत्रहवें युद्ध में वह खुद हार गया और उसे पकड़ लिया गया | गोरी ने बाद में उसकी आँखें लोहे की गर्म सलाखों से फुड़वा दीं | अब यह एक बड़ा आश्चर्य है कि सोलह बार जीतने वाला वीर योद्धा हार कैसे गया ? इतिहास बताता है कि जिस दिन वह हारा था उस दिन वह अपनी पत्नी से अपनी कमर कसवाकर अर्थात अपने वीर्य का सत्यानाश करके युद्धभूमि में आया था | यह है वीर्यशक्ति के व्यय का दुष्परिणाम |

रामायण महाकाव्य के पात्र रामभक्त हनुमान के कई अदभुत पराक्रम तो हम सबने सुने ही हैं जैसे- आकाश में उड़ना, समुद्र लाँघना, रावण की भरी सभा में से छूटकर लौटना, लंका जलाना, युद्ध में रावण को मुक्का मार कर मूर्छित कर देना, संजीवनी बूटी के लिये पूरा पहाड़ उठा लाना आदि | ये सब ब्रह्मचर्य की शक्ति का ही प्रताप था |

फ्रांस का सम्राट नेपोलियन कहा करता था : "**असंभव** शब्द ही मेरे शब्दकोष में नहीं है |" परन्तु वह भी हार गया | हारने के मूल कारणों में एक कारण यह भी था कि युद्ध से पूर्व ही उसने स्त्री के आकर्षण में अपने वीर्य का क्षय कर दिया था |

सेम्सन भी शूरवीरता के क्षेत्र में बहुत प्रसिद्ध था | "बाइबिल" में उसका उल्लेख आता है | वह भी स्त्री के मोहक आकर्षण से नहीं बच सका और उसका भी पतन हो गया |

(अनुक्रम)

स्वामी रामतीर्थ का अनुभव

स्वामी रामतीर्थ जब प्रोफेसर थे तब उन्होंने एक प्रयोग किया और बाद में निष्कर्षरूप में बताया कि जो विद्यार्थी परीक्षा के दिनों में या परीक्षा के कुछ दिन पहले विषयों में फंस जाते हैं, वे परीक्षा में प्रायः असफल हो जाते हैं, चाहे वर्ष भर अपनी कक्षा में अच्छे विद्यार्थी क्यों न रहे हों। जिन विद्यार्थियों का चित्त परीक्षा के दिनों में एकाग्र और शुद्ध रहा करता है, वे ही सफल होते हैं। काम विकार को रोकना वस्तुतः बड़ा दुःसाध्य है।

यही कारण है कि मनु महाराज ने यहां तक कह दिया है :

"माँ, बहन और पुत्री के साथ भी व्यक्ति को एकान्त में नहीं बैठना चाहिये, क्योंकि मनुष्य की इन्द्रियाँ बहुत बलवान् होती हैं। वे विद्वानों के मन को भी समान रूप से अपने वेग में खींच ले जाती हैं।"

(अनुक्रम)

युवा वर्ग से दो बातें

मैं युवक वर्ग से विशेषरूप से दो बातें कहना चाहता हूं क्योंकि यही वह वर्ग है जो अपने देश के सुदृढ़ भविष्य का आधार है। भारत का यही युवक वर्ग जो पहले देशोत्थान एवं आध्यात्मिक रहस्यों की खोज में लगा रहता था, वही अब कामिनियों के रंग-रूप के पीछे पागल होकर अपना अमूल्य जीवन व्यर्थ में खोता जा रहा है। यह कामशक्ति मनुष्य के लिए अभिशाप नहीं, बल्कि वरदान स्वरूप है। यह जब युवक में खिलने लगती है तो उसे उस समय इतने उत्साह से भर देती है कि वह संसार में सब कुछ कर सकने की स्थिति में अपने को समर्थ अनुभव करने लगता है, लेकिन आज के अधिकांश युवक दुर्व्यसनों में फँसकर हस्तमैथुन एवं स्वप्नदोष के शिकार बन जाते हैं।

(अनुक्रम)

हस्तमैथुन का दुष्परिणाम

इन दुर्व्यस्नों से युवक अपनी वीर्यधारण की शक्ति खो बैठता है और वह तीव्रता से नपुसंकता की ओर अग्रसर होने लगता है। उसकी आँखें और चेहरा निस्तेज और कमजोर हो जाता है।

थोड़े परिश्रम से ही वह हाँफने लगता है, उसकी आंखों के आगे अंधेरा छाने लगता है | अधिक कमजोरी से मूर्च्छा भी आ जाती है | उसकी संकल्पशक्ति कमजोर हो जाती है |

अमेरिका में किया गया प्रयोग

अमेरिका में एक विज्ञानशाला में ३० विद्यार्थियों को भूखा रखा गया | इससे उतने समय के लिये तो उनका काम विकार दबा रहा परन्तु भोजन करने के बाद उनमें फिर से काम-वासना जोर पकड़ने लगी | लोहे की लंगोट पहन कर भी कुछ लोग कामदमन की चेष्टा करते पाए जाते हैं | उनको 'सिकडिया बाबा' कहते हैं | वे लोहे या पीतल की लंगोट पहन कर उसमें ताला लगा देते हैं | कुछ ऐसे भी लोग हुए हैं, जिन्होंने इस काम-विकार से छुट्टी पाने के लिये अपनी जननेन्द्रिय ही काट दी और बाद में बहुत पछताये | उन्हें मालूम नहीं था कि जननेन्द्रिय तो काम विकार प्रकट होने का एक साधन है | फूल-पत्ते तोड़ने से पेड़ नष्ट नहीं होता | मार्गदर्शन के अभाव में लोग कैसी-कैसी भूलें करते हैं, ऐसा ही यह एक उदाहरण है |

जो युवक १७ से २४ वर्ष की आयु तक संयम रख लेता है, उसका मानसिक बल एवं बुद्धि बहुत तेजस्वी हो जाती है | जीवनभर उसका उत्साह एवं स्फूर्ति बनी रहती है | जो युवक बीस वर्ष की आयु पूरी होने से पूर्व ही अपने वीर्य का नाश करना शुरू कर देता है, उसकी स्फूर्ति और होसला पस्त हो जाता है तथा सारे जीवनभर के लिये उसकी बुद्धि कुण्ठित हो जाती है | मैं चाहता हूँ कि युवावर्ग वीर्य के संरक्षण के कुछ ठोस प्रयोग सीख ले | छोटे-मोटे प्रयोग, उपवास, भोजन में सुधार आदि तो ठीक है, परन्तु वे अस्थाई लाभ ही दे पाते हैं | कई प्रयोगों से यह बात सिद्ध हुई है |

(अनुक्रम)

कामशक्ति का दमन या ऊर्ध्वगमन ?

कामशक्ति का दमन सही हल नहीं है | सही हल है इस शक्ति को ऊर्ध्वमुखी बनाकर शरीर में ही इसका उपयोग करके परम सुख को प्राप्त करना | यह युक्ति जिसको आ गई, उसे सब आ गया

और जिसे यह नहीं आई वह समाज में कितना भी सत्तावान्, धनवान्, प्रतिश्ठावान् बन जाय, अन्त में मरने पर अनाथ ही रह जायेगा, अपने-आप को नहीं मिल पायेगा | गौतम बुद्ध यह युक्ति जानते थे, तभी अंगुलीमाल जैसा निर्दयी हत्यारा भी सारे दुष्कृत्य छोड़कर उनके आगे भिक्षुक बन गया | ऐसे महापुरुषों में वह शक्ति होती है, जिसके प्रयोग से साधक के लिए ब्रह्मचर्य की साधना एकदम सरल हो जाती है | फिर काम-विकार से लड़ना नही पड़ता है, बल्कि जीवन में ब्रह्मचर्य सहज ही फलित होने लगता है |

मैंने ऐसे लोगों को देखा है, जो थोड़ा सा जप करते हैं और बहुत पूजे जाते हैं | और ऐसे लोगों को भी देखा है, जो बहुत जप-तप करते हैं, फिर भी समाज पर उनका कोई प्रभाव नहीं, उनमें आकर्षण नहीं | जाने-अनजाने, हो-न-हो, जागृत अथवा निद्रावस्था में या अन्य किसी प्रकार से उनकी वीर्य शक्ति अवशय नष्ट होती रहती है |

(अनुक्रम)

एक साधक का अनुभव

एक साधक ने, यहाँ उसका नाम नहीं लूँगा, मुझे स्वयं ही बताया : "स्वामीजी ! यहाँ आने से पूर्व मैं महीने में एक दिन भी पत्नी के बिना नहीं रह सकता था ... इतना अधिक काम-विकार में फँसा हुआ था, परन्तु अब ६-६ महीने बीत जाते हैं पत्नी के बिना और काम-विकार भी पहले की भाँति नहीं सताता |"

दूसरे साधक का अनुभव

दूसरे एक और सज्जन यहाँ आते हैं, उनकी पत्नी की शिकायत मुझे सुनने को मिली है | वह स्वयं तो यहाँ आती नहीं, मगर लोगों से कहा है कि : "किसी प्रकार मेरे पति को समझायें कि वे आश्रम में नहीं जाया करें |"

वैसे तो आश्रम में जाने के लिए कोई क्यों मना करेगा ? मगर उसके इस प्रकार मना करने का कारण जो उसने लोगों को बताया और लोगों ने मुझे बताया वह इस प्रकार है : वह कहती है : "इन बाबा ने मेरे पति पर न जाने क्या जादू किया है कि पहले तो वे रात में मुझे पास में सुलाते थे, परन्तु अब मुझसे दूर सोते हैं | इससे तो वे सिनेमा में जाते थे, जैसे-तैसे दोस्तों के साथ घूमते रहते थे, वही ठीक था | उस समय कम से कम मेरे कहने में तो चलते थे, परन्तु अब तो..."

कैसा दुर्भाग्य है मनुष्य का ! व्यक्ति भले ही पतन के रास्ते चले, उसके जीवन का भले ही सत्यानाश होता रहे, परन्तु "वह मेरे कहने में चले ..." यही संसारी प्रेम का ढ़ाँचा है | इसमें प्रेम दो-पांच प्रतिशत हो सकता है, बाकी ९५ प्रतिशत तो मोह ही होता है, वासना ही होती है | मगर मोह भी प्रेम का चोला ओढ़कर फिरता रहता है और हमें पता नहीं चलता कि हम पतन की ओर जा रहे हैं या उत्थान की ओर |

(अनुक्रम)

योगी का संकल्पबल

ब्रह्मचर्य उत्थान का मार्ग है | बाबाजी ने कुछ जादू-वादू नहीं किया| केवल उनके द्वारा उनकी यौगिक शक्ति का सहारा उस व्यक्ति को मिला, जिससे उसकी कामशक्ति ऊर्ध्वगामी हो गई | इस कारण उसका मन संसारी काम सुख से ऊपर उठ गया | जब असली रस मिल गया तो गंदी नाली द्वारा मिलने वाले रस की ओर कोई क्यों ताकेगा ? ऐसा कौन मूर्ख होगा जो ब्रह्मचर्य का पवित्र और असली रस छोड़कर घृणित और पतनोन्मुख करने वाले संसारी कामसुख की ओर दौड़ेगा ?

क्या यह चमत्कार है ?

सामान्य लोगों के लिये तो यह मानों एक बहुत बड़ा चमत्कार है, परन्तु इसमें चमत्कार जैसी कोई बात नहीं है | जो महापुरुष योगमार्ग से परिचित हैं और अपनी आत्ममस्ती में मस्त रहते हैं

उनके लिये तो यह एक खेल मात्र है | योग का भी अपना एक विज्ञान है, जो स्थूल विज्ञान से भी सूक्ष्म और अधिक प्रभावी होता है | जो लोग ऐसे किसी योगी महापुरुष के सान्निध्य का लाभ लेते हैं, उनके लिये तो ब्रह्मचर्य का पालन सहज हो जाता है | उन्हें अलग से कोई मेहनत नहीं करनी पड़ती |

(अनुक्रम)

हस्तमैथुन व स्वप्नदोष से कैसे बचें

यदि कोई हस्त मैथुन या स्वप्नदोष की समस्या से ग्रस्त है और वह इस रोग से छुटकारा पाने को वस्तुतः इच्छुक है, तो सबसे पहले तो मैं यह कहूँगा कि अब वह यह चिंता छोड़ दे कि 'मुझे यह रोग है और अब मेरा क्या होगा ? क्या मैं फिर से स्वास्थ्य लाभ कर सकूँगा ?' इस प्रकार के निराशावादी विचारों को वह जड़मूल से उखाड़ फेंके |

सदैव प्रसन्न रहो

जो हो चुका वह बीत गया | **बीती सो बीती, बीती ताही बिसार दे, आगे की सुधि लेय** | एक तो रोग, फिर उसका चिंतन और भी रुग्ण बना देता है | इसलिये पहला काम तो यह करो कि दीनता के विचारों को तिलांजलि देकर प्रसन्न और प्रफुल्लित रहना प्रारंभ कर दो |

पीछे कितना वीर्यनाश हो चुका है, उसकी चिंता छोड़कर अब कैसे वीर्यरक्षण हो सके, उसके लिये उपाय करने हेतु कमर कस लो |

ध्यान रहे: वीर्यशक्ति का दमन नहीं करना है, उसे ऊर्ध्वगामी बनाना है | वीर्यशक्ति का उपयोग हम ठीक ढ़ंग से नहीं कर पाते | इसलिये इस शक्ति के ऊर्ध्वगमन के कुछ प्रयोग हम समझ लें |

(अनुक्रम)

वीर्य का ऊर्ध्वगमन क्या है ?

वीर्य के ऊर्ध्वगमन का अर्थ यह नहीं है कि वीर्य स्थूल रूप से ऊपर सहस्रार की ओर जाता है | इस विषय में कई लोग भ्रमित हैं | वीर्य तो वहीं रहता है, मगर उसे संचालित करनेवाली जो कामशक्ति है, उसका ऊर्ध्वगमन होता है | वीर्य को ऊपर चढ़ाने की नाड़ी शरीर के भीतर नहीं है | इसलिये शुक्राणु ऊपर नहीं जाते बल्कि हमारे भीतर एक वैद्युतिक चुम्बकीय शक्ति होती है जो नीचे की ओर बहती है, तब शुक्राणु सक्रिय होते हैं |

इसलिये जब पुरुष की दृश्टि भड़कीले वस्त्रों पर पड़ती है या उसका मन स्त्री का चिंतन करता है, तब यही शक्ति उसके चिंतनमात्र से नीचे मूलाधार केन्द्र के नीचे जो कामकेन्द्र है, उसको सक्रिय कर, वीर्य को बाहर धकेलती है | वीर्य स्खलित होते ही उसके जीवन की उतनी कामशक्ति व्यर्थ में खर्च हो जाती है | योगी और तांत्रिक लोग इस सूक्ष्म बात से परिचित थे | स्थूल विज्ञानवाले जीवशास्त्री और डॉक्टर लोग इस बात को ठीक से समझ नहीं पाये इसलिये आधुनिकतम औजार होते हुए भी कई गंभीर रोगों को वे ठीक नहीं कर पाते जबकि योगी के दृष्टिपात मात्र या आशीर्वाद से ही रोग ठीक होने के चमत्कार हम प्रायः देखा-सुना करते हैं |

आप बहुत योगसाधना करके ऊर्ध्वरेता योगी न भी बनो फिर भी वीर्यरक्षण के लिये इतना छोटा-सा प्रयोग तो कर ही सकते हो :

(अनुक्रम)

वीर्यरक्षा का महत्त्वपूर्ण प्रयोग

अपना जो 'काम-संस्थान' है, वह जब सक्रिय होता है तभी वीर्य को बाहर धकेलता है | किन्तु निम्न प्रयोग द्वारा उसको सक्रिय होने से बचाना है |

ज्यों ही किसी स्त्री के दर्शन से या कामुक विचार से आपका ध्यान अपनी जननेन्द्रिय की तरफ खिंचने लगे, तभी आप सतर्क हो जाओ | आप तुरन्त जननेन्द्रिय को भीतर पेट की तरफ़ खींचो | जैसे पंप का पिस्टन खींचते हैं उस प्रकार की क्रिया मन को जननेन्द्रिय में केन्द्रित करके करनी है | योग की भाषा में इसे योनिमुद्रा कहते हैं |

अब आँखें बन्द करो | फिर ऐसी भावना करो कि मैं अपने जननेन्द्रिय-संस्थान से ऊपर सिर में स्थित सहस्रार चक्र की तरफ देख रहा हूँ | जिधर हमारा मन लगता है, उधर ही यह शक्ति बहने लगती है | सहस्रार की ओर वृत्ति लगाने से जो शक्ति मूलाधार में सक्रिय होकर वीर्य को स्खलित करनेवाली थी, वही शक्ति ऊर्ध्वगामी बनकर आपको वीर्यपतन से बचा लेगी | लेकिन ध्यान रहे : यदि आपका मन काम-विकार का मजा लेने में अटक गया तो आप सफल नहीं हो पायेंगे | थोड़े संकल्प और विवेक का सहारा लिया तो कुछ ही दिनों के प्रयोग से महत्त्वपूर्ण फायदा होने लगेगा | आप स्पष्ट महसूस करेंगे कि एक आँधी की तरह काम का आवेग आया और इस प्रयोग से वह कुछ ही क्षणों में शांत हो गया |

(अनुक्रम)

दूसरा प्रयोग

जब भी काम का वेग उठे, फेफड़ों में भरी वायु को जोर से बाहर फेंको | जितना अधिक बाहर फेंक सको, उतना उत्तम | फिर नाभि और पेट को भीतर की ओर खींचो | दो-तीन बार के प्रयोग से ही काम-विकार शांत हो जायेगा और आप वीर्यपतन से बच जाओगे |

यह प्रयोग दिखता छोटा-सा है, मगर बड़ा महत्त्वपूर्ण यौगिक प्रयोग है | भीतर का श्वास कामशक्ति को नीचे की ओर धकेलता है | उसे जोर से और अधिक मात्रा में बाहर फेंकने से वह मूलाधार चक्र में कामकेन्द्र को सक्रिय नहीं कर पायेगा | फिर पेट व नाभि को भीतर संकोचने से वहाँ खाली जगह बन जाती है | उस खाली जगह को भरने के लिये कामकेन्द्र के आसपास की सारी शक्ति, जो वीर्यपतन में

सहयोगी बनती है, खिंचकर नाभि की तरफ चली जाती है और इस प्रकार आप वीर्यपतन से बच जायेंगे |

इस प्रयोग को करने में न कोई खर्च है, न कोई विशेष स्थान ढूँढ़ने की जरूरत है | कहीं भी बैठकर कर सकते हैं | काम-विकार न भी उठे, तब भी यह प्रयोग करके आप अनुपम लाभ उठा सकते हैं | इससे जठराग्नि प्रदीप्त होती है, पेट की बीमारियाँ मिटती हैं, जीवन तेजस्वी बनता है और वीर्यरक्षण सहज में होने लगता है |

(अनुक्रम)

वीर्यरक्षक चूर्ण

बहुत कम खर्च में आप यह चूर्ण बना सकते हैं | कुछ सुखे आँवलों से बीज अलग करके उनके छिलकों को कूटकर उसका चूर्ण बना लो | आजकल बाजार में आँवलों का तैयार चूर्ण भी मिलता है | जितना चूर्ण हो, उससे दुगुनी मात्रा में मिश्री का चूर्ण उसमें मिला दो | यह चूर्ण उनके लिए भी हितकर है जिन्हें स्वप्नदोष नहीं होता हो |

रोज रात्रि को सोने से आधा घंटा पूर्व पानी के साथ एक चम्मच यह चूर्ण ले लिया करो | यह चूर्ण वीर्य को गाढ़ा करता है, कब्ज दूर करता है, वात-पित्त-कफ के दोष मिटाता है और संयम को मजबूत करता है |

(अनुक्रम)

गोंद का प्रयोग

6 ग्राम खेरी गोंद रात्रि को पानी में भिगो दो | इसे सुबह खाली पेट ले लो | इस प्रयोग के दौरान अगर भूख कम लगती हो तो दोपहर को भोजन के पहले अदरक व नींबू का रस मिलाकर लेना चाहिए |

तुलसी: एक अदभुत औषधि

प्रेन्च डॉक्टर विक्टर रेसीन ने कहा है : "तुलसी एक अदभुत औषधि है | तुलसी पर किये गये प्रयोगों ने यह सिद्ध कर दिया है कि रक्तचाप और पाचनतंत्र के नियमन में तथा मानसिक रोगों में तुलसी अत्यंत लाभकारी है | इससे रक्तकणों की वृद्धि होती है | मलेरिया तथा अन्य प्रकार के बुखारों में तुलसी अत्यंत उपयोगी सिद्ध हुई है |

तुलसी रोगों को तो दूर करती ही है, इसके अतिरिक्त ब्रह्मचर्य की रक्षा करने एवं यादशक्ति बढ़ाने में भी अनुपम सहायता करती है | तुलसीदल एक उत्कृष्ट रसायन है | यह त्रिदोषनाशक है | रक्तविकार, वायु, खाँसी, कृमि आदि की निवारक है तथा हृदय के लिये बहुत हितकारी है |

(अनुक्रम)

ब्रह्मचर्य रक्षा हेतु मंत्र

एक कटोरी दूध में निहारते हुए इस मंत्र का इक्कीस बार जप करें | तदपश्चात उस दूध को पी लें, ब्रह्मचर्य रक्षा में सहायता मिलती है | यह मंत्र सदैव मन में धारण करने योग्य है :

ॐ नमो भगवते महाबले पराक्रमाय

मनोभिलाषितं मनः स्तंभ कुरु कुरु स्वाहा |

पादपश्चिमोत्तानासन

विधि: जमीन पर आसन बिछाकर दोनों पैर सीधे करके बैठ जाओ | फिर दोनों हाथों से पैरों के अगूँठे पकड़कर झुकते हुए सिर को दोनों घुटनों से मिलाने का प्रयास करो | घुटने जमीन पर सीधे रहें | प्रारंभ में घुटने

जमीन पर न टिकें तो कोई हर्ज नहीं | सतत अभ्यास से यह आसन सिद्ध हो जायेगा | यह आसन करने के 15 मिनट बाद एक-दो कच्ची भिण्डी खानी चाहिए | सेवफल का सेवन भी फायदा करता है |

लाभ: इस आसन से नाड़ियों की विशेष शुद्धि होकर हमारी कार्यक्षमता बढ़ती है और शरीर की बीमारियाँ दूर होती हैं | बदहजमी, कब्ज जैसे पेट के सभी रोग, सर्दी-जुकाम, कफ गिरना, कमर का दर्द, हिचकी, सफेद कोढ़, पेशाब की बीमारियाँ, स्वप्नदोष, वीर्य-विकार, अपेन्डिक्स, साईटिका, नलों की सुजन, पाण्डुरोग (पीलिया), अनिद्रा, दमा, खट्टी ड्कारें, ज्ञानतंतुओं की कमजोरी, गर्भाशय के रोग, मासिकधर्म की अनियमितता व अन्य तकलीफें, नपुंसकता, रक्त-विकार, ठिंगनापन व अन्य कई प्रकार की बीमारियाँ यह आसन करने से दूर होती हैं |

प्रारंभ में यह आसन आधा मिनट से शुरु करके प्रतिदिन थोड़ा बढ़ाते हुए 15 मिनट तक कर सकते हैं | पहले 2-3 दिन तकलीफ होती है, फिर सरल हो जाता है |

इस आसन से शरीर का कद लम्बा होता है | यदि शरीर में मोटापन है तो वह दूर होता है और यदि दुबलापन है तो वह दूर होकर शरीर सुडौल, तन्दुरुस्त अवस्था में आ जाता है | ब्रह्मचर्य पालनेवालों के लिए यह आसन भगवान शिव का प्रसाद है | इसका प्रचार पहले शिवजी ने और बाद में जोगी गोरखनाथ ने किया था |

(अनुक्रम)

पादांगुष्ठानासन

इसमें शरीर का भार केवल पाँव के अँगूठे पर आने से इसे 'पादाँगुष्ठानासन' कहते हैं। वीर्य की रक्षा व ऊर्ध्वगमन हेतु महत्त्वपूर्ण होने से सभी को विशेषतः बच्चों व युवाओं को यह आसन अवश्य करना चाहिए।

लाभः अखण्ड ब्रह्मचर्य की सिद्धि, वज्रनाड़ी (वीर्यनाड़ी) व मन पर नियंत्रण तथा वीर्यशक्ति को ओज में रूपांतरित करने में उत्तम है। मस्तिष्क स्वस्थ रहता है व बुद्धि की स्थिरता व प्रखरता शीघ्र प्राप्त होती है। रोगी-नीरोगी सभी के लिए लाभप्रद है।

रोगों में लाभः स्वप्नदोष, मधुमेह, नपुंसकता व समस्त वीर्योदोषों में लाभप्रद है।

विधिः पंजों के बल बैठ जायें। बायें पैर की एड़ी सिवनी (गुदा व जननेन्द्रिये के बीच का स्थान) पर लगायें। दोनों हाथों की उंगलियाँ ज़मीन पर रखकर दायाँ पैर बायीं जंघा पर रखें। सारा भार बायें पंजे पर (विशेषतः अँगुठे पर) संतुलित करके हाथ कमर पर या नमस्कार की मुद्रा में रखें। प्रारम्भ में कुछ दिन आधार लेकर कर सकते हैं। कमर सीधी व शरीर स्थिर रहे। श्वास सामान्य, दृष्टि आगे किसी बिंदु पर एकाग्र व ध्यान संतुलन रखने में हों। यही क्रिया पैर बदल कर भी करें।

समयः प्रारंभ में दोनों पैरों से आधा-एक मिनट। दोनों पैरों को एक समान समय देकर यथासंभव बढ़ा सकते हैं।

सावधानीः अंतिम स्थिती में आने की शीघ्रता न करें, क्रमशः अभ्यास बढ़ायें। इसे दिन भर में दो-तीन बार कभी भी कर सकते हैं। किन्तु भोजन के तुरन्त बाद न करें।

बुद्धिशक्तिवर्धक प्रयोगः

लाभः इसके नियमित अभ्यास से ज्ञानतन्तु पुष्ट होते हैं। चोटी के स्थान के नीचे गाय के खुर के आकार वाला बुद्धिमंडल है, जिस पर इस प्रयोग का विशेष प्रभाव पड़ता है और बुद्धि ब धारणाशक्ति का विकास होता है।

विधिः सीधे खड़े हो जायें। हाथों की मुट्ठियाँ बंद करके हाथों को शरीर से सटाकर रखें। सिर पीछे की तरफ ले जायें। दृष्टि आसमान की ओर हो। इस स्थिति में 25 बार गहरा श्वास लें और छोड़ें। मूल स्थिती में आ जायें।

मेधाशक्तिवर्धक प्रयोगः

लाभः इसके नियमित अभ्यास से मेधाशक्ति बढ़ती है।

विधिः सीधे खड़े हो जायें। हाथों की मुट्ठियाँ बंद करके हाथों को शरीर से सटाकर रखें।

आँखें बंद करके सिर को नीचे की तरफ इस तरफ झुकायें कि ठोढ़ी कंठकूप से लगी रहे और कंठकूप पर हलका-सा दबाव पड़े। इस स्थिती में 25 बार गहरा श्वास लें और छोड़ें। मूल स्थिती में आ जायें।

विशेषः श्वास लेते समय मन में 'ॐ' का जप करें व छोड़ते समय उसकी गिनती करें।

ध्यान दें- प्रत्येक प्रयोग सुबह खाली पेट 15 बार करें, फिर धीरे-धीरे बढ़ाते हुए 25 बार तक कर सकते हैं।

(अनुक्रम)

हमारे अनुभव

महापुरुष के दर्शन का चमत्कार

"पहले मैं कामतृप्ति में ही जीवन का आनन्द मानता था | मेरी दो शादियाँ हुईं परन्तु दोनों पत्नियों के देहान्त के कारण अब तीसरी शादी 17 वर्ष की लड़की से करने को तैयार हो गया | शादी से पूर्व मैं परम पूज्य स्वामी श्री लीलाशाहजी महारज का आशीर्वाद लेने डीसा आश्रम में जा पहुँचा |

आश्रम में वे तो नहीं मिले मगर जो महापुरुष मिले उनके दर्शनमात्र से न जाने क्या हुआ कि मेरा सारा भविष्य ही बदल गया | उनके योगयुक्त विशाल नेत्रों में न जाने कैसा तेज चमक रहा था कि मैं अधिक देर तक उनकी ओर देख नहीं सका और मेरी नजर उनके चरणों की ओर झुक गई | मेरी कामवासना तिरोहित हो गई | घर पहुँचते ही शादी से इन्कार कर दिया | भाईयों ने एक कमरे में उस 17 वर्ष की लड़की के साथ मुझे बन्द कर दिया |

मैंने कामविकार को जगाने के कई उपाय किये, परन्तु सब निरर्थक सिद्ध हुआ ... जैसे, कामसुख की चाबी उन महापुरुष के पास ही रह गई हो ! एकान्त कमरे में आग और पेट्रोल जैसा संयोग था फिर भी !

मैंने निश्चय किया कि अब मैं उनकी छत्रछाया को नहीं छोड़ूँगा, भले कितना ही विरोध सहन करना पड़े | उन महापुरुष को मैंने अपना मार्गदर्शक बनाया | उनके सान्निध्य में रहकर कुछ यौगिक क्रियाएँ सीखीं | उन्होंने मुझसे ऐसी साधना करवाई कि जिससे शरीर की सारी पुरानी व्याधियाँ जैसे मोटापन, दमा, टी.बी., कब्ज और छोटे-मोटे कई रोग आदि निवृत हो गये |

उन महापुरुष का नाम है परम पूज्य संत श्री आसारामजी बापू | उन्हींके सान्निध्य में मैं अपना जीवन धन्य कर रहा हूँ | उनका जो अनुपम उपकार मेरे ऊपर हुआ है, उसका बदला तो मैं अपना सम्पूर्ण लौकिक वैभव समर्पण करके भी चुकाने में असमर्थ हूँ |"

-महन्त चंदीराम (भूतपूर्व चंदीराम कृपालदास)

संत श्री आसारामजी आश्रम, साबरमति, अमदावाद |

मेरी वासना उपासना में बदली

"आश्रम द्वारा प्रकाशित "**यौवन सुरक्षा**" पुस्तक पढ़ने से मेरी दृष्टि अमीदृष्टि हो गई | पहले परस्त्री को एवं हम उम्र की लड़कियों को देखकर मेरे मन में वासना और कुदृष्टि का भाव पैदा होता था लेकिन यह पुस्तक पढ़कर मुझे जानने को मिला कि: 'स्त्री एक वासनापूर्ति की वस्तु नहीं है, परन्तु शुद्ध प्रेम और शुद्ध भावपूर्वक जीवनभर साथ रहनेवाली एक शक्ति है |' सचमुच इस '**यौवन सुरक्षा**' पुस्तक को पढ़कर मेरे अन्दर की वासना, उपासना में बदल गयी है |"

-मकवाणा रवीन्द्र रतिभाई

एम. के. जमोड हाईस्कूल, भावनगर (गुज)

(अनुक्रम)

‘यौवन सुरक्षा’ पुस्तक आज के युवा वर्ग के लिये एक अमूल्य भेंट है

“सर्वप्रथम मैं पूज्य बापू का एवं श्री योग वेदान्त सेवा समिति का आभार प्रकट करता हूँ |

‘यौवन सुरक्षा’ पुस्तक आज के युवा वर्ग के लिये अमूल्य भेंट है | यह पुस्तक युवानों के लिये सही दिशा दिखानेवाली है |

आज के युग में युवानों के लिये वीर्यरक्षण अति कठिन है | परन्तु इस पुस्तक को पढ़ने के बाद ऐसा लगता है कि वीर्यरक्षण करना सरल है | **‘यौवन सुरक्षा’** पुस्तक आज के युवा वर्ग को सही युवान बनने की प्रेरणा देती है | इस पुस्तक में मैने ‘अनुभव-अमृत’ नामक पाठ पढ़ा | उसके बाद ऐसा लगा कि संत दर्शन करने से वीर्यरक्षण की प्रेरणा मिलती है | यह बात नितांत सत्य है | मैं हरिजन जाति का हूँ | पहले मांस, मछली, लहसुन, प्याज आदि सब खाता था लेकिन **‘यौवन सुरक्षा’** पुस्तक पढ़ने के बाद मुझे मांसाहार से सख्त नफरत हो गई है | उसके बाद मैंने इस पुस्तक को दो-तीन बार पढ़ा है | अब मैं मांस नहीं खा सकता हूँ | मुझे मांस से नफरत सी हो गई है | इस पुस्तक को पढ़ने से मेरे मन पर काफी प्रभाव पड़ा है | यह पुस्तक मनुष्य के जीवन को समृद्ध बनानेवाली है और वीर्यरक्षण की शक्ति प्रदान करने वाली है |

यह पुस्तक आज के युवा वर्ग के लिये एक अमूल्य भेंट है | आज के युवान जो कि 16 वर्ष से 17 वर्ष की उम्र तक ही वीर्यशक्ति का व्यय कर देते हैं और दीन-हीन, क्षीणसंकल्प, क्षीणजीवन होकर अपने लिए व औरों के लिए भी खूब दुःखद हो जाते हैं, उनके लिए यह पुस्तक सचमुच प्रेरणादायक है | वीर्य ही शरीर का तेज है, शक्ति है, जिसे आज का युवा वर्ग नष्ट कर देता है | उसके लिए जीवन में विकास करने का उत्तम मार्ग तथा दिग्दर्शक यह **‘यौवन सुरक्षा’** पुस्तक है | तमाम युवक-युवतियों को यह पुस्तक पूज्य बापू की आज्ञानुसार पाँच बार अवश्य पढ़नी चाहिए | इससे बहुत लाभ होता है |”

-राठौड निलेश दिनेशभाई

(अनुक्रम)

'यौवन सुरक्षा' पुस्तक नहीं, अपितु एक शिक्षा ग्रन्थ है

"यह **'यौवन सुरक्षा'** एक पुस्तक नहीं अपितु एक शिक्षा ग्रन्थ है, जिससे हम विद्यार्थियों को संयमी जीवन जीने की प्रेरणा मिलती है | सचमुच इस अनमोल ग्रन्थ को पढ़कर एक अदभुत प्रेरणा तथा उत्साह मिलता है | मैंने इस पुस्तक में कई ऐसी बातें पढ़ीं जो शायद ही कोई हम बालकों को बता व समझा सके | ऐसी शिक्षा मुझे आज तक किसी दूसरी पुस्तक से नहीं मिली | मैं इस पुस्तक को जनसाधारण तक पहुँचाने वालों को प्रणाम करता हूँ तथा उन महापुरुष महामानव को शत-शत प्रणाम करता हूँ जिनकी प्रेरणा तथा आशीर्वाद से इस पुस्तक की रचना हुई |"

हरप्रीत सिंह अवतार सिंह

कक्षा-7, राजकीय हाईस्कूल, सेक्टर-24 चण्डीगढ़

ब्रह्मचर्य ही जीवन है

ब्रह्मचर्य के बिना जगत में, नहीं किसीने यश पाया |

ब्रह्मचर्य से परशुराम ने, इक्कीस बार धरणी जीती |

ब्रह्मचर्य से वाल्मीकी ने, रच दी रामायण नीकी |

ब्रह्मचर्य के बिना जगत में, किसने जीवन रस पाया ?

ब्रह्मचर्य से रामचन्द्र ने, सागर-पुल बनवाया था।

ब्रह्मचर्य से लक्ष्मणजी ने मेघनाद मरवाया था।

ब्रह्मचर्य के बिना जगत में, सब ही को परवश पाया।

ब्रह्मचर्य से महावीर ने, सारी लंका जलाई थी।

ब्रह्मचर्य से अगंदजी ने, अपनी पैज जमाई थी।

ब्रह्मचर्य के बिना जगत में, सबने ही अपयश पाया।

ब्रह्मचर्य से आल्हा-उदल ने, बावन किले गिराए थे।

पृथ्वीराज दिल्लीश्वर को भी, रण में मार भगाए थे।

ब्रह्मचर्य के बिना जगत में, केवल विष ही विष पाया।

ब्रह्मचर्य से भीष्म पितामह, शरशैया पर सोये थे।

ब्रह्मचारी वर शिवा वीर से, यवनों के दल रोये थे।

ब्रह्मचर्य के रस के भीतर, हमने तो षटरस पाया।

ब्रह्मचर्य से राममूर्ति ने, छाती पर पत्थर तोड़ा।

लोहे की जंजीर तोड़ दी, रोका मोटर का जोड़ा।

ब्रह्मचर्य है सरस जगत में, बाकी को करकश पाया।

(अनुक्रम)

शास्त्रवचन

राजा जनक शुकदेवजी से बोले :

"बाल्यावस्था में विद्यार्थी को तपस्या, गुरु की सेवा, ब्रह्मचर्य का पालन एवं वेदाध्ययन करना चाहिए |"

तपसा गुरुवृत्त्या च ब्रह्मचर्येण वा विभो |

- महाभारत में मोक्षधर्म पर्व

संकल्पाज्जायते कामः सेव्यमानो विवर्धते |

यदा प्राज्ञो विरमते तदा सद्यः प्रणश्यति ||

"काम संकल्प से उत्पन्न होता है | उसका सेवन किया जाये तो बढ़ता है और जब बुद्धिमान् पुरुष उससे विरक्त हो जाता है, तब वह काम तत्काल नष्ट हो जाता है |"

-महाभारत में आपद्धर्म पर्व

"राजन् (युधिष्ठिर)! जो मनुष्य आजन्म पूर्ण ब्रह्मचारी रहता है, उसके लिये इस संसार में कोई भी ऐसा पदार्थ नहीं है, जो वह प्राप्त न कर सके | एक मनुष्य चारों वेदों को जाननेवाला हो और दूसरा पूर्ण ब्रह्मचारी हो तो इन दोनों में ब्रह्मचारी ही श्रेष्ठ है |"

-भीष्म पितामह

"मैथुन संबंधी ये प्रवृतियाँ सर्वप्रथम तो तरंगों की भाँति ही प्रतीत होती हैं, परन्तु आगे चलकर ये कुसंगति के कारण एक विशाल समुद्र का रूप धारण कर लेती हैं | कामसबंधी वार्तालाप कभी श्रवण न करें |"

-नारदजी

"जब कभी भी आपके मन में अशुद्ध विचारों के साथ किसी स्त्री के स्वरूप की कल्पना उठे तो आप **'ॐ दुर्गा देव्यै नमः'** मंत्र का बार-बार उच्चारण करें और मानसिक प्रणाम करें |"

-शिवानंदजी

"जो विद्यार्थी ब्रह्मचर्य के द्वारा भगवान के लोक को प्राप्त कर लेते हैं, फिर उनके लिये ही वह स्वर्ग है | वे किसी भी लोक में क्यों न हों, मुक्त हैं |"

-छान्दोग्य उपनिषद

"बुद्धिमान् मनुष्य को चाहिए कि वह विवाह न करे | विवाहित जीवन को एक प्रकार का दहकते हुए अंगारों से भरा हुआ खड्डा समझे | संयोग या संसर्ग से इन्द्रियजनित ज्ञान की उत्पत्ति होती है, इन्द्रिजनित ज्ञान से तत्संबंधी सुख को प्राप्त करने की अभिलाषा दृढ़ होती है, संसर्ग से दूर रहने पर जीवात्मा सब प्रकार के पापमय जीवन से मुक्त रहता है |"

-महात्मा बुद्ध

भृगुवंशी ऋषि जनकवंश के राजकुमार से कहते हैं :

मनोऽप्रतिकूलानि प्रेत्य चेह च वांछसि |

भूतानां प्रतिकूलेभ्यो निवर्तस्व यतेन्द्रियः ||

"यदि तुम इस लोक और परलोक में अपने मन के अनुकूल वस्तुएँ पाना चाहते हो तो अपनी इन्द्रियों को संयम में रखकर समस्त प्राणियों के प्रतिकूल आचरणों से दूर हट जाओ |"

–महाभारत में मोक्षधर्म पर्व: 3094

(अनुक्रम)

भस्मासुर क्रोध से बचो

काम, क्रोध, लोभ, मोह, अहंकार- ये सब विकार आत्मानंदरूपी धन को हर लेनेवाले शत्रु हैं | उनमें भी क्रोध सबसे अधिक हानिकर्त्ता है | घर में चोरी हो जाए तो कुछ-न-कुछ सामान बच जाता है, लेकिन घर में यदि आग लग जाये तो सब भस्मीभूत हो जाता है | भस्म के सिवा कुछ नही बचता |

इसी प्रकार हमारे अंतःकरण में लोभ, मोहरूपी चोर आये तो कुछ पुण्य क्षीण होते हैं लेकिन क्रोधरूपी आग लगे तो हमारा तमाम जप, तप, पुण्यरूपी धन भस्म हो जाता है | अंतः सावधान होकर क्रोधरूपी भस्मासुर से बचो | क्रोध का अभिनय करके फुफकारना ठीक है, लेकिन क्रोधाग्नि तुम्हारे अतःकरण को जलाने न लगे, इसका ध्यान रखो |

25 मिनट तक चबा-चबाकर भोजन करो | सात्त्विक आहर लो | लहसुन, लाल मिर्च और तली हुई चीजों से दूर रहो | क्रोध आवे तब हाथ की अँगुलियों के नाखून हाथ की गद्दी पर दबे, इस प्रकार मुठ्ठी बंद करो |

एक महीने तक किये हुए जप-तप से चित्त की जो योग्यता बनती है वह एक बार क्रोध करने से नष्ट हो जाती है | अतः मेरे प्यारे भैया ! सावधान रहो | अमूल्य मानव देह ऐसे ही व्यर्थ न खो देना |

दस ग्राम शहद, एक गिलास पानी, तुलसी के पत्ते और संतकृपा चूर्ण मिलाकर बनाया हुआ शर्बत यदि हररोज सुबह में लिया जाए तो चित्त की प्रसन्नता बढ़ती है | चूर्ण और तुलसी नहीं मिले तो केवल शहद ही लाभदायक है | डायबिटिज के रोगियों को शहद नहीं लेना चाहिए |

हरि ॐ

ब्रह्मचर्य-रक्षा का मंत्र

ॐ नमो भगवते महाबले पराक्रमाय मनोभिलाषतं मनः स्तंभ कुरु कुरु स्वाहा।

रोज दूध में निहार कर 21 बार इस मंत्र का जप करें और दूध पी लें। इससे ब्रह्मचर्य की रक्षा होती है। स्वभाव में आत्मसात् कर लेने जैसा यह नियम है।

ॐॐॐॐॐॐॐॐ

(अनुक्रम)

पावन उदगार

पावन उदगार

सुख-शांति व स्वास्थ्य का प्रसाद बाँटने के लिए ही बापू जी का अवतरण हुआ है।

"मेरे अत्यन्त प्रिय मित्र श्री आसाराम जी बापू से मैं पूर्वकाल से हृदयपूर्वक परिचित हूँ। संसार में सुखी रहने के लिए समस्त जनता को शारीरिक स्वास्थ्य और मानसिक शांति दोनों आवश्यक हैं। सुख-शांति व स्वास्थ्य का प्रसाद बाँटने के लिए ही इन संत का, महापुरुष का अवतरण हुआ है। आज के संतों-महापुरुषों में प्रमुख मेरे प्रिय मित्र बापूजी हमारे भारत देश के, हिन्दू जनता के, आम जनता के, विश्ववासियों के उद्धार के लिए रात-दिन घूम-घूमकर सत्संग, भजन, कीर्तन आदि द्वारा सभी विषयों पर मार्गदर्शन दे रहें हैं। अभी में गले में थोड़ी तकलीफ है तो उन्होंने तुरन्त मुझे दवा बताई। इस प्रकार सबके स्वास्थ्य और मानसिक शांति, दोनों के लिए उनका जीवन समर्पित है। वे धनभागी हैं जो लोगों को बापूजी के सत्संग व सान्निध्य में लाने का दैवी कार्य करते हैं।"

काँची कामकोटि पीठ के शंकराचार्य जगदगुरु श्री जयेन्द्र सरस्वती जी महाराज।

(अनुक्रम) पावन उदगार

हर व्यक्ति जो निराश है उसे आसाराम जी की ज़रूरत है

"श्रद्धेय-वंदनीय जिनके दर्शन से कोटि-कोटि जनों के आत्मा को शांति मिली है व हृदय उन्नत हुआ है, ऐसे महामनीषि संत श्री आसारामजी के दर्शन करके आज मैं कृतार्थ हुआ। जिस महापुरुष ने, जिस महामानव ने, जिस दिव्य चेतना से संपन्न पुरुष ने इस धरा पर धर्म, संस्कृति, अध्यात्म और भारत की उदात्त परंपराओं को पूरी ऊर्जा (शक्ति) से स्थापित किया है, उस महापुरुष के मैं दर्शन न करूँ ऐसा तो हो ही नहीं सकता। इसलिए मैं स्वयं यहाँ आकर अपने-आपको धन्य और कृतार्थ महसूस कर रहा हूँ। मेरे प्रति इनका जो स्नेह है यह तो मुझ पर इनका आशीर्वाद है और बड़ों का स्नेह तो हमेशा रहता ही है छोटों के प्रति। यहाँ पर मैं आशीर्वाद लेने के लिए आया हूँ।

मैं समझता हूँ कि जीवन में लगभग हर व्यक्ति निराश है और उसको आसारामजी की ज़रूरत है। देश यदि ऊँचा उठेगा, समृद्ध बनेगा, विकसित होगा तो अपनी प्राचीन परंपराओं, नैतिक मूल्यों और आदर्शों से ही होगा और वह आदर्शों, नैतिक मूल्यों, प्राचीन सभ्यता, धर्म-दर्शन

और संस्कृति का जो जागरण है, वह आशाओ के राम बनने से ही होगा। इसलिए श्रद्धेय, वंदनीय महाराज श्री 'आसाराम जी' की सारी दुनिया को जरूरत है। बापू जी के चरणों में प्रार्थना करते हुए कि आप दिशा देते रहना, राह दिखाते रहना, हम भी आपके पीछे-पीछे चलते रहेंगे और एक दिन मंजिल मिलेगी ही, पुनः आपके चरणों में वंदन!"

प्रसिद्ध योगाचार्य श्री रामदेव जी महाराज।

(अनुक्रम) पावन उदगार

बापू नित्य नवीन, नित्य वर्धनीय आनंदस्वरूप हैं

"परम पूज्य बापू के दर्शन करके मैं पहले भी आ चुका हूँ। दर्शन करके '**दिने-दिने नवं-नवं प्रतिक्षण वर्धनाम्**' अर्थात बापू नित्य नवीन, नित्य वर्धनीय आनंदस्वरूप हैं, ऐसा अनुभव हो रहा है और यह स्वाभाविक ही है। पूज्य बापू जी को प्रणाम!"

सुप्रसिद्ध कथाकार संत श्री मोरारी बापू।

(अनुक्रम) पावन उदगार

पुण्य संचय व ईश्वर की कृपा का फलः ब्रह्मज्ञान का दिव्य सत्संग

"ईश्वर की कृपा होती है तो मनुष्य जन्म मिलता है। ईश्वर की अतिशय कृपा होती है तो मुमुक्षत्व का उदय होता है परन्तु जब अपने पूर्वजन्मों के पुण्य इकट्ठे होते हैं और ईश्वर की परम कृपा होती है तब ऐसा ब्रह्मज्ञान का दिव्य सत्संग सुनने को मिलता है, जैसा पूज्यपाद बापूजी के श्रीमुख से आपको यहाँ सुनने को मिल रहा है।"

प्रसिद्ध कथाकार सुश्री कनकेश्वरी देवी।

(अनुक्रम) पावन उदगार

बापू जी का सान्निध्य गंगा के पावन प्रवाह जैसा है

"कल-कल करती इस भागीरथी की धवल धारा के किनारे पर पूज्य बापू जी के सान्निध्य में बैठकर मैं बड़ा ही आह्लादित व प्रमुदित हूँ... आनंदित हूँ... रोमाँचित हूँ...

गंगा भारत की सुषुम्ना नाड़ी है। गंगा भारत की संजीवनी है। श्री विष्णुजी के चरणों से निकलकर ब्रह्माजी के कमण्डलु व जटाधर के माथे पर शोभायमान गंगा त्रैयोगसिद्धिकारक है। विष्णुजी के चरणों से निकली गंगा भक्तियोग की प्रतीति कराती है और शिवजी के मस्तक पर स्थित गंगा ज्ञानयोग की उच्चतर भूमिका पर आरूढ़ होने की खबर देती है। मुझे ऐसा लग रहा है कि आज बापूजी के प्रवचनों को सुनकर मैं गंगा में गोता लगा रहा हूँ क्योंकि उनका प्रवचन, उनका सान्निध्य गंगा के पावन प्रवाह जैसा है।

वे अलमस्त फकीर हैं। वे बड़े सरल और सहज हैं। वे जितने ही ऊपर से सरल हैं, उतने ही अंतर में गूढ़ हैं। उनमें हिमालय जैसी उच्चता, पवित्रता, श्रेष्ठता है और सागरतल जैसी गम्भीरता है। वे राष्ट्र की अमूल्य धरोहर हैं। उन्हें देखकर ऋषि-परम्परा का बोध होता है। गौतम, कणाद, जैमिनि, कपिल, दादू, मीरा, कबीर, रैदास आदि सब कभी-कभी उनमें दिखते हैं।

रे भाई! कोई सत्गुरु संत कहावे, जो नैनन अलख लखावे।

धरती उखाड़े, आकाश उखाड़े, अधर मड़इया धावे।

शून्य शिखर के पार शिला पर, आसन अचल जमावे।।

रे भाई! कोई सत्गुरु संत कहावे.....

ऐसे पावन सान्निध्य में हम बैठे हैं जो बड़ा दुर्लभ व सहज योगस्वरूप है। ऐसे महापुरुष के लिए पंक्तियाँ याद आ रही हैं- **तुम चलो तो चले धरती, चले अंबर, चले दुनिया...**

ऐसे महापुरुष चलते हैं तो उनके लिए सूर्य, चंद्र, तारे, ग्रह, नक्षत्र आदि सब अनुकूल हो जाते हैं। ऐसे इन्द्रियातीत, गुणातीत, भावातीत, शब्दातीत और सब अवस्थाओं से परे किन्हीं महापुरुष के श्रीचरणों में जब बैठते हैं तो .... भागवत कहता हैः **साधुनां दर्शनं लोके सर्वसिद्धिकरं परम्।** साधुओं के दर्शनमात्र से विचार, विभूति, विद्वता, शक्ति, सहजता, निर्विषयता, प्रसन्नता, सिद्धियाँ व आत्मानंद की प्राप्ति होती है।

देश के महान संत यहाँ सहज ही आते हैं, भारत के सभी शंकराचार्य भी आते हैं। मेरे मन में भी विचार आया कि जहाँ सब आते हैं, वहाँ जाना चाहिए क्योंकि यही वह ठौर-ठिकाना है, जहाँ मन का अभिमान मिटाया जा सकता है। ऐसे महापुरुषों के दर्शन से केवल आनंद व मस्ती ही नहीं बल्कि वह सब कुछ मिल जाता है जो अभिलषित है, आकांक्षित है, लक्षित है। यहाँ मैं करुणा, कर्मठता, विवेक-वैराग्य व ज्ञान के दर्शन कर रहा हूँ। वैराग्य और भक्ति के रक्षण, पोषण व संवर्धन क लिए यह सप्तऋषियों का उत्तम ज्ञान जाना जाता है। आज गंगा अगर फिर से साकार दिख रही है तो वे बापू जी के विचार व वाणी में दिख रही है। अलमस्तता, सहजता, उच्चता, श्रेष्ठता, पवित्रता, तीर्थ-सी शुचिता, शिशु-सी सरलता, तरुणों-सा जोश, वृद्धों-सा गांभीर्य और ऋषियों जैसा ज्ञानावबोध मुझे जहाँ हो रहा है, वह पंडाल है। इसे आनंदगर कहूँ या प्रेमनगर? करुणा का सागर कहूँ या विचारों का समन्दर?... लेकिन इतना जरूर कहूँगा कि मेरे मन का कोना-कोना आह्लादित हो रहा है। आपलोग बड़भागी है जो ऐसे महापुरुष के श्रीचरणों में बैठे हैं, जहाँ भाग्य का, दिव्य व्यक्तित्व का निर्माण होता है। जीवन की कृतकृत्यता जहाँ प्राप्त हो सकती है वह यही दर है।

मिले तुम मिली मंजिल, मिला मकसद और मुद्दा भी।

न मिले तुम तो रह गया मुद्दा, मकसद और मंजिल भी।।

आपका यह भावराज्य व प्रेमराज्य देखकर मैं चकित भी हूँ और आनंद का भी अनुभव कर रहा हूँ। मुझे लगता है कि बापू जी सबके आत्मसूर्य हैं। आपके प्रति मेरा विश्वास व अटूट निष्ठा बढ़े इस हेतु मेरा नमन स्वीकार करें।"

स्वामी अवधेशानंदजी महाराज, हरिद्वार।

(अनुक्रम) पावन उदगार

भगवन्नाम का जादू

"संतश्री आसारामजी बापू के यहाँ सबसे अधिक जनता आती है कारण कि इनके पास भगवन्नाम-संकीर्तन का जादू, सरल व्यवहार, प्रेमरसभरी वाणी तथा जीवन के मूल प्रश्नों का उत्तर भी है।"

विरक्तशिरोमणि श्री वामदेवजी महाराज।

"स्वामी आसारामजी के पास भ्रांति तोड़ने की दृष्टि मिलती है।"

युगपुरुष स्वामी श्री परमानंदजी महाराज।

"आसारामजी महाराज ऐसी शक्ति के धनी हैं कि दृष्टिपातमात्र से लाखों लोगों के ज्ञानचक्षु खोलने का मार्ग प्रशस्त करते हैं।"

लोकलाडले स्वामी श्री ब्रह्मानंदगिरीजी महाराज।

"हमारे पूज्य आसारामजी बापू बहुत ही कम समय में संस्कृति का जतन और उत्थान करने वाले संत हैं।" **आचार्य श्री गिरीराज किशोरजी, विश्वहिन्दू परिषद।**

(अनुक्रम) पावन उदगार

पूज्यश्री के सत्संग में प्रधानमंत्री श्री अटल बिहारी वाजपेयीजी के उदगार

"पूज्य बापूजी के भक्तिरस में डूबे हुए श्रोता भाई-बहनों! मैं यहाँ पर पूज्य बापूजी का अभिनंदन करने आया हूँ.... उनका आशीर्वचन सुनने आया हूँ.... भाषण देने य बकबक करने नहीं आया हूँ। बकबक तो हम करते रहते हैं। बापू जी का जैसा प्रवचन है, कथा-अमृत है, उस तक पहुँचने के लिए बड़ा परिश्रम करना पड़ता है। मैंने पहले उनके दर्शन पानीपत में किये थे। वहाँ पर रात को पानीपत में पुण्य प्रवचन समाप्त होते ही बापूजी कुटीर में जा रहे थे.. तब उन्होंने मुझे बुलाया। मैं भी उनके दर्शन और आशीर्वाद के लिए लालायित था। संत-महात्माओं के दर्शन तभी होते हैं, उनका सान्निध्य तभी मिलता है जब कोई पुण्य जागृत होता है।

इस जन्म में मैंने कोई पुण्य किया हो इसका मेरे पास कोई हिसाब तो नहीं है किंतु जरुर यह पूर्व जन्म के पुण्यों का फल है जो बापू जी के दर्शन हुए। उस दिन बापूजी ने जो कहा, वह अभी तक मेरे हृदय-पटल पर अंकित हैं। देशभर की परिक्रमा करते हुए जन-जन के मन में अच्छे संस्कार जगाना, यह एक ऐसा परम राष्ट्रीय कर्तव्य है, जिसने हमारे देश को आज तक जीवित रखा है और इसके बल पर हम उज्जवल भविष्य का सपना देख रहे हैं... उस सपने को साकार करने की शक्ति-भक्ति एकत्र कर रहे हैं।

पूज्य बापूजी सारे देश में भ्रमण करके जागरण का शंखनाद कर रहे हैं, सर्वधर्म-समभाव की शिक्षा दे रहे हैं, संस्कार दे रहे हैं तथा अच्छे और बुरे में भेद करना सिखा रहे हैं।

हमारी जो प्राचीन धरोहर थी और हम जिसे लगभग भूलने का पाप कर बैठे थे, बापू जी हमारी आँखों में ज्ञान का अंजन लगाकर उसको फिर से हमारे सामने रख रहे हैं। बापूजी ने कहा कि ईश्वर की कृपा से कण-कण में व्याप्त एक महान शक्ति के प्रभाव से जो कुछ घटित होता है, उसकी छानबीन और उस पर अनुसंधान करना चाहिए।

पूज्य बापूजी ने कहा कि जीवन के व्यापार में से थोड़ा समय निकाल कर सत्संग में आना चाहिए। पूज्य बापूजी उज्जैन में थे तब मेरी जाने की बहुत इच्छा थी लेकिन कहते हैं न, कि दाने-दाने पर खाने वाले की मोहर होती है, वैसे ही संत-दर्शन के लिए भी कोई मुहूर्त होता है। आज यह मुहूर्त आ गया है। यह मेरा क्षेत्र है। पूज्य बापू जी ने चुनाव जीतने का तरीका भी बता दिया है।

आज देश की दशा ठीक नहीं है। बापू जी का प्रवचन सुनकर बड़ा बल मिला है। हाल में हुए लोकसभा अधिवेशन के कारण थोड़ी-बहुत निराशा हुई थी किन्तु रात को लखनऊ में पुण्य प्रवचन सुनते ही वह निराशा भी आज दूर हो गयी। बापू जी ने मानव जीवन के चरम लक्ष्य मुक्ति-शक्ति की प्राप्ति के लिए पुरुषार्थ चतुष्टय, भक्ति के लिए समर्पण की भावना तथा ज्ञान, भक्ति और कर्म तीनों का उल्लेख किया है। भक्ति में अहंकार का कोई स्थान नहीं है। ज्ञान अभिमान पैदा करता है। भक्ति में पूर्ण समर्पण होता है। 13 दिन के शासनकाल के बाद मैंने कहाः "मेरा जो कुछ है, तेरा है।" यह तो बापू जी की कृपा है कि श्रोता को वक्ता बना दिया और वक्ता को नीचे से ऊपर चढ़ा दिया। जहाँ तक ऊपर चढ़ाया है वहाँ तक ऊपर बना रहूँ इसकी चिंता भी बापू जी को करनी पड़ेगी।

राजनीति की राह बड़ी रपटीली है। जब नेता गिरता है तो यह नहीं कहता कि मैं गिर गया बल्कि कहता हैः "हर हर गंगे।" बापू जी का प्रवचन सुनकर बड़ा आनंद आया। मैं लोकसभा

का सदस्य होने के नाते अपनी ओर से एवं लखनऊ की जनता की ओर से बापू जी के चरणों में विनम्र होकर नमन करना चाहता हूँ।

उनका आशीर्वाद हमें मिलता रहे, उनके आशीर्वाद से प्रेरणा पाकर बल प्राप्त करके हम कर्तव्य के पथ पर निरन्तर चलते हुए परम वैभव को प्राप्त करें, यही प्रभु से प्रार्थना है।"

श्री अटल बिहारी वाजपेयी, प्रधानमंत्री, भारत सरकार।

परम पूज्य बापू संत श्री आसारामजी बापू के कृपा-प्रसाद से परिप्लावित हृदयों के उदगार

(अनुक्रम) पावन उदगार

पू. बापूः राष्ट्रसुख के संवर्धक

"पूज्य बापू द्वारा दिया जाने वाला नैतिकता का संदेश देश के कोने-कोने में जितना अधिक प्रसारित होगा, जितना अधिक बढ़ेगा, उतनी ही मात्रा में राष्ट्रसुख का संवर्धन होगा, राष्ट्र की प्रगति होगी। जीवन के हर क्षेत्र में इस प्रकार के संदेश की जरूरत है।"

(श्री लालकृष्ण आडवाणी, उपप्रधानमंत्री एवं केन्द्रीय गृहमंत्री, भारत सरकार।)

(अनुक्रम) पावन उदगार

राष्ट्र उनका ऋणी है

भारत के भूतपूर्व प्रधानमंत्री श्री चन्द्रशेखर, दिल्ली के स्वर्ण जयन्ती पार्क में 25 जुलाई 1999 को बापू जी की अमृतवाणी का रसास्वादन करने के पश्चात बोलेः

"आज पूज्य बापू जी की दिव्य वाणी का लाभ लेकर मैं धन्य हो गया। संतों की वाणी ने हर युग में नया संदेश दिया है, नयी प्रेरणा जगायी है। कलह, विद्रोह और द्वेष से ग्रस्त वर्तमान वातावरण में बापू जिस तरह सत्य, करुणा और संवेदनशीलता के संदेश का प्रसार कर रहे हैं, इसके लिए राष्ट्र उनका ऋणी है।" ***(श्री चन्द्रशेखर, भूतपूर्व प्रधानमंत्री, भारत सरकार।)***

(अनुक्रम) पावन उदगार

गरीबों व पिछड़ों को ऊपर उठाने के कार्य चालू रहें

"गरीबों और पिछड़ों को ऊपर उठाने का कार्य आश्रम द्वारा चलाये जा रहे हैं, मुझे प्रसन्नता है। मानव-कल्याण के लिए, विशेषतः, प्रेम व भाईचारे के संदेश के माध्यम से किये जा रहे विभिन्न आध्यात्मिक एवं मानवीय प्रयास समाज की उन्नति के लिए सराहनीय हैं।"

डॉ. ए.पी.जे.अब्दुल कलाम, राष्ट्रपति, भारत गणतंत्र।

(अनुक्रम) पावन उदगार

सराहनीय प्रयासों की सफलता के लिए बधाई

"मुझे यह जानकर बड़ी प्रसन्नता हुई है कि 'संत श्री आसारामजी आश्रम न्यास' जन-जन में शांति, अहिंसा और भ्रातृत्व का संदेश पहुँचाने के लिए देश भर में सत्संग का आयोजन कर रहा है। उसके सराहनीय प्रयासों की सफलता के लिए मैं बधाई देता हूँ।"

श्री के. आर. नारायणन्, तत्कालीन राष्ट्रपति, भारत गणतंत्र, नई दिल्ली।

(अनुक्रम) पावन उदगार

आपने दिव्य ज्ञान का प्रकाशपुंज प्रस्फुटित किया है

"आध्यात्मिक चेतना जागृत और विकसित करने हेतु भारतीय एवं वैश्विक समाज में दिव्य ज्ञान का जो प्रकाशपुंज आपने प्रस्फुटित किया है, संपूर्ण मानवता उससे आलोकित है। मूढ़ता, जड़ता, द्वंद्व और त्रितापों से ग्रस्त इस समाज में व्याप्त अनास्था तथा नास्तिकता का तिमिर समाप्त कर आस्था, संयम, संतोष और समाधान का जो आलोक आपने बिखेरा है, संपूर्ण

समाज उसके लिए कृतज्ञ है।" **श्री कमलनाथ, वाणिज्य एवं उद्योग मंत्री, भारत सरकार।**

(अनुक्रम) पावन उदगार

आप समाज की सर्वांगीण उन्नति कर रहे हैं

"आज के भागदौड़ भरे स्पर्धात्मक युग में लुप्तप्राय-सी हो रही आत्मिक शांति का आपश्री मानवमात्र को सहज में अनुभव करा रहे हैं। आप आध्यात्मिक ज्ञान द्वारा समाज की सर्वांगीण उन्नति कर रहे हैं व उसमें धार्मिक एवं नैतिक आस्था को सुदृढ़ कर रहे हैं।

श्री कपिल सिब्बल, विज्ञान व प्रौद्योगिकी तथा महासागर विकास राज्यमंत्री, भारत सरकार।

(अनुक्रम) पावन उदगार

'योग व उच्च संस्कार शिक्षा' हेतु भारतवर्ष आपका चिर-आभारी रहेगा

"देश विदेश में भारतीय संस्कृति की ज्ञानगंगाधारा बच्चे-बच्चे के दिल-दिमाग में बापू जी के निर्देश पर परिचालित होना शुभंकर है। विद्यार्थियों में संस्कार सिंचन द्वारा हमारी संस्कृति और नैतिक शिक्षा सुदृढ़ बन जायेगी। देश को संस्कारित बनाने के लिए चलाये जाने वाले 'योग व उच्च संस्कार शिक्षा' कार्यक्रम हेतु भारतवर्ष आप जैसे महात्माओं का चिरआभारी रहेगा।"

श्री चन्द्रशेखर साहू, ग्रामीण विकास राज्यमन्त्री, भारत सरकार।

(अनुक्रम) पावन उदगार

आपने जो कहा है हम उसका पालन करेंगे

"आज तक केवल सुना था कि '**तेरा साँई तुझमें है।**' लेकिन आज पूज्य बापू जी के सत्संग सुनकर आज लगा - '**मेरा साँई मुझमें है।**' बापूजी! आपको देखकर ही शक्ति आ गयी,

आपको सुनकर भक्ति प्रकट हो गयी और आपके दर्शन और आशीर्वाद से मुक्ति अब सुनिश्चित हो गयी। प्रार्थना करता हूँ कि यहीं बस जाओ। हम बार-बार आपके दर्शन करते रहें और भक्ति, शक्ति प्राप्त करते हुए मुक्ति की ओर बढ़ते रहें। अब ह्रदय से कभी निकल न पाओगे बापू जी! जो भक्ति रस की सरिता और ज्ञान की गंगा आपने बहायी है वह मध्य प्रदेश वासियों को हमेशा प्रेरणा देती रहेगी। हम तो भक्त हैं, शिष्य हैं। आपने जो कुछ बातें कहीं हैं, हम उनका पालन करेंगे। हम विशेषरूप से ध्यान रखेंगे कि आपने जो आज्ञा की है नीम, पीपल, आँवला जगह-जगह लगे और तुलसी मैया का पौधा हर घर में लहराये, उस आज्ञा का पालन हो। फिर मध्य-प्रदेश नंदनवन की तरह महकेगा।

तीन चीज़ें आपसे माँगता हूँ – सत् बुद्धि, सत् मार्ग और सामर्थ्य देना ताकि जनता की सुचारू रूप से सेवा कर सकूँ।" **श्री शिवराजसिंह चौहान, मुख्यमंत्री, मध्यप्रदेश**

(अनुक्रम) पावन उदगार

जब गुरु के साक्षात दर्शन हो गये हैं तो कुछ बदलाव ज़रूर आयेगा

"राजमाता की वजह से महाराज बापूजी से हमारा बहुत पुराना रिश्ता है। आज रामनवमी के दिन मैं तो मानती हूँ कि मैं तो धन्य हो गयी क्योंकि सुबह से लेकर दर्शन हो रहे हैं। महाराज! आपका आशीर्वाद बना रहे क्योंकि मैं राज करने के लिए नहीं आयी, धर्म और कर्म को एक साथ जोड़कर मैं सेवा करने के लिए आयी हूँ और वह मैं करती रहूँगी। आप आते रहोगे, आशीर्वाद देते रहोगे तो हममें ऊर्जा भी पैदा होगी। आप रास्ता बताते रहो और इस राज्यरूपी परिवार की सेवा करने की शक्ति देते रहो।

मैं माफी चाहती हूँ कि आपके चरणों में इतनी देर से पहुँची लेकिन मैं मानती हूँ कि जब गुरु के साक्षात दर्शन हो गये हैं तो कुछ बदलाव ज़रूर आयेगा, राज्य की समस्याएँ हल होंगी व हम लोग जनसेवा के काम कर सकेंगे।" **वसुन्धराराजे सिंधिया, मुख्यमंत्री, राजस्थान।**

(अनुक्रम) पावन उदगार

बापूजी सर्वत्र संस्कार धरोहर को पहुँचाने के लिए अथक तपश्चर्या कर रहे हैं

"पूज्य बापू जी! आप देश और दुनिया – सर्वत्र ऋषि-परम्परा की संस्कार-धरोहर को पहुँचाने के लिए अथक तपश्चर्या कर रहे हैं। अनेक युगों से चलते आये मानव-कल्याण के इस तपश्चर्या-यज्ञ में आप अपने पल-पल की आहूति देते रहे हैं। उसमें से जो संस्कार की दिव्य ज्योति प्रकट हुई है, उसके प्रकाश में मैं और जनता – सब चलते रहे हैं। मैं संतों के आशीर्वाद से जी रहा हूँ। मैं यहाँ इसलिए आया हूँ कि लासेन्स रिन्यू हो जाये। जैसे नेवला अपने घर में जाकर औषधि सूँघकर ताकत लेकर आता है, वैसे ही मैं समय निकाल कर ऐसा अवसर खोज लेता हूँ।"

श्री नरेन्द्र मोदी, मुख्यमंत्री, गुजरात।

(अनुक्रम) पावन उदगार

आपके दर्शनमात्र से मुझे अदभुत शक्ति मिलती है

"पूज्य बापू जी के लिए मेरे दिल में जो श्रद्धा है, उसको बयान करने के लिए मेरे पास कोई शब्द नहीं है। आज के भटके समाज में भी यदि कुछ लोग सन्मार्ग पर चल रहे हैं तो यह इन महापुरुषों के अमृतवचनों का ही प्रभाव है। बापूजी की अमृतवाणी का विशेषकर मुझ पर तो बहुत प्रभाव पड़ता है। मेरा तो मन करता है कि बापू जी जहाँ कहीं भी हों वहीं पर उड़कर उनके दर्शन करने के लिए पहुँच जाऊँ व कुछ पल ही सही, उनके सान्निध्य का लाभ लूँ। आपके दर्शनमात्र से ही मुझे एक अदभुत शक्ति मिलती है।" **श्री प्रकाश सिंह बादल, मुख्यमंत्री, पंजाब।**

(अनुक्रम) पावन उदगार

हम सभी का कर्तव्य होगा कि आपके बताये रास्ते पर चलें

"हम सबका परम सौभाग्य है कि बापू जी के दर्शन हुए। कल आपसे मुलाकात हुई, आशीर्वाद मिला, मार्गदर्शन भी मिला और इशारों-इशारों में आपने वह सब कुछ जो सदगुरुदेव एक शिष्य को बता सकते हैं, मेरे जैसे एक शिष्य को आशीर्वाद रूप में प्रदान किया। आपके आशीर्वाद

व कृपादृष्टि से छत्तीसगढ़ में सुख-शांति व समृद्धि रहे। यहाँ के एक-एक व्यक्ति के घर में विकास की किरण आये।

आपने जो ज्ञानोपदेश दिया है हम सभी का कर्तव्य होगा कि उस रास्ते पर चलें। बापूजी से खासतौर से पीपल, नीम, आँवला व तुलसी के वृक्ष लगाने के बारे में कहा है। हम इस पर विशेषरूप से ध्यान रखेंगे।" **डॉ. रमन सिंह, मुख्यमंत्री, छत्तीसगढ़।**

(अनुक्रम) पावन उदगार

आपका मंत्र हैः 'आओ, सरल रास्ता दिखाऊँ, राम को पाने के लिए'

"पूज्य बाबा आसारामजी बापू! आपका नाम आसारामजी बापू इसलिए निकला है क्योंकि आपका यही मंत्र है कि 'आओ, सरल रास्ता दिखाऊँ राम को पाने के लिए।' आज हम धन्य हैं कि सत्संग में आये। सत्संग उसे कहते हैं जिसके संग में हम सत् हो जायें। पूज्य बापू जी ने हमें भगवान को पाने का सरल रास्ता दिखाया है, इसलिए मैं जनता की ओर से बापूजी का धन्यवाद करता हूँ।" **श्री ई.एस.एल. नरसिम्हन, राज्यपाल, छत्तीसगढ़।**

(अनुक्रम) पावन उदगार

संतों के मार्गदर्शन में देश चलेगा तो आबाद होगा

"पूज्य बापू जी में कर्मयोग, भक्तियोग तथा ज्ञानयोग तीनों का ही समावेश है। आप आज करोड़ों-करोड़ों भक्तों का मार्गदर्शन कर रहे हैं। संतों के मार्गदर्शन में देश चलेगा तो आबाद होगा। मैं तो बड़े-बड़े नेताओं से यही कहता हूँ कि आप संतों का आशीर्वाद जरूर लो। इनके चरणों में अगर रहेंगे तो सत्ता रहेगी, टिकेगी तथा उसी से धर्म की स्थापना होगी।"

श्री अशोक सिंघल, अध्यक्ष, विश्व हिन्दू परिषद।

(अनुक्रम) पावन उदगार

सत्य का मार्ग कभी न छूटे ऐसा आशीर्वाद दो

"हमें आपके मार्गदर्शन की जरूरत है, वह सतत मिलता रहे। आपने हमारे कंधों पर जो जवाबदारी दी है उसे हम भली प्रकार निभायें। बुरे मार्ग पर न जायें, सत्य के मार्ग पर चलें। लोगों की अच्छे ढंग से सेवा करें। संस्कृति की सेवा करें। सत्य का मार्ग कभी न छूटे, ऐसा आशीर्वाद दो।"

श्री उद्धव ठाकरे, कार्यकारी अध्यक्ष, शिवसेना।

(अनुक्रम) पावन उदगार

पुण्योदय पर संत समागम

"जीवन की दौड़-धूप से क्या मिलता है यह हम सब जानते हैं। फिर भी भौतिकवादी संसार में हम उसे छोड़ नहीं पाते। संत श्री आसारामजी जैसे दिव्य शक्तिसम्पन्न संत पधारें और हमको आध्यात्मिक शांति का पान कराकर जीवन की अंधी दौड़ से छुड़ायें, ऐसे प्रसंग कभी-कभी ही प्राप्त होते हैं। ये पूजनीय संतश्री संसार में रहते हुए भी पूर्णतः विश्वकल्याण के लिए चिन्तन करते हैं, कार्य करते हैं। लोगों को आनंदपूर्वक जीवन व्यतीत करने की कलाएँ और योगसाधना की युक्तियाँ बताते हैं।

आज उनके समक्ष थोड़ी ही देर बैठने से एवं सत्संग सुनने से हमलोग और सब भूल गये हैं तथा भीतर शांति व आनंद का अनुभव कर रहे हैं। ऐसे संतों के दरबार में पहुँचना पुण्योदय का फल है। उन्हे सुनकर हमको लगता है कि प्रतिदिन हमें ऐसे सत्संग के लिए कुछ समय अवश्य निकालना चाहिए। पूज्य बापू जी जैसे महान संत व महापुरुष के सामने मैं अधिक क्या कहूँ? चाहे कुछ भी कहूँ, वह सब सूर्य के सामने चिराग दिखाने जैसा है।"

श्री मोतीलाल वोरा, अखिल भारतीय काँग्रेस कोषाध्यक्ष, पूर्व मुख्यमंत्री (म.प्र.), पूर्व राज्यपाल (उ.प्र.)।

(अनुक्रम) पावन उदगार

बापूजी जहाँ नहीं होते वहाँ के लोगों के लिए भी बहुत कुछ करते हैं

"सारे देश के लोग पूज्य बापूजी के आशीर्वचनों की पावन गंगा में नहा कर धन्य हो रहे हैं। आज बापूजी यहाँ उड़ीसा में सत्संग-अमृत पिलाने के लिए उपस्थित हैं। वे जब यहाँ नहीं होते

हैं तब भी उड़ीसा के लोगों के बहुत कुछ करते हैं, उनको सब समय याद करते हैं। उड़ीसा के दरिद्रनारायणों की तन-मन-धन से सेवा दूर-दराज में भी चलाते हैं।"

श्री जानकीवल्लभ पटनायक, मुख्यमंत्री, उड़ीसा।

(अनुक्रम) पावन उदगार

जीवन की सच्ची शिक्षा तो पूज्य बापूजी ही दे सकते हैं

"बापूजी कितने प्रेमदाता हैं कि कोई भी व्यक्ति समाज में दुःखी न रहे इसलिए सतत प्रयत्न करते रहते हैं। मैं हमेशा 'संस्कार चैनल' चालू करके आपके आशीर्वाद लेने के बाद ही सोती हूँ। जीवन की सच्ची शिक्षा तो हम भी नहीं दे पा रहे हैं, ऐसी शिक्षा तो पूज्य संत श्री आसारामजी बापू जैसे संत शिरोमिणी ही दे सकते हैं।"

आनंदीबहन पटेल, शिक्षामंत्री (पूर्व), राजस्व एवं मार्ग व मकान मंत्री (वर्तमान), गुजरात।

(अनुक्रम) पावन उदगार

आपकी कृपा से योग की अणुशक्ति पैदा हो रही है....

"अनेक प्रकार की विकृतियाँ मानव के मन पर, सामाजिक जीवन पर, संस्कार और संस्कृति पर आक्रमण कर रही हैं। वस्तुतः इस समय संस्कृति और विकृति के बीच एक महासंघर्ष चल रहा है जो किसी सरहद के लिए नहीं बल्कि संस्कारों के लिए लड़ा जा रहा है। इसमें संस्कृति को जिताने का बम है योगशक्ति। हे गुरुदेव! आपकी कृपा से इस योग की दिव्य अणुशक्ति लाखों लोगों में पैदा हो रही है... ये संस्कृति के सैनिक बन रहे हैं।

गुरुदेव! मैं आपसे प्रार्थना करता हूँ कि शासन के अंदर भी धर्म और वैराग्य के संस्कार उत्पन्न हों। आपसे आशीर्वाद प्राप्त करने के लिए मैं आपके चरणों में आया हूँ।"

(श्री अशोकभाई भट्ट, कानूनमंत्री, गुजरात राज्य)

(अनुक्रम) पावन उदगार

धरती तो बापू जैसे संतों के कारण टिकी है

"मुझे सत्संग में आने का मौका पहली बार मिला है और पूज्य बापूजी से एक अदभुत बात मुझे और आप सब को सुनने को मिली है, वह है प्रेम की बात। इस सृष्टि का जो मूल तत्त्व है, वह है प्रेम। यह प्रेम नाम का तत्त्व यदि न हो तो सृष्टि नष्ट हो जाएगी। लेकिन संसार में कोई प्रेम करना नहीं जानता, या तो भगवान प्यार करना जानते हैं या संत प्यार करना जानते हैं। जिसको संसारी लोग अपनी भाषा में प्रेम कहते हैं, उसमें तो कहीं-न-कहीं स्वार्थ जुड़ा होता है लेकिन भगवान, संत और गुरु का प्रेम ऐसा होता है जिसको हम सचमुच प्रेम की परिभाषा में बाँध सकते हैं। मैं यह कह सकती हूँ कि साधू संतों को देश की सीमाएँ नहीं बाँधतीं। जैसे नदियों की धाराएँ देश और जाति की सीमाओं में नहीं बाँधती, उसी प्रकार परमात्मा का प्रेम और संतों का आशीर्वाद भी कभी देश, जाति और संप्रदाय की सीमाओं में नहीं बंधता। कलियुग में हृदय की निष्कपटता, निःस्वार्थ प्रेम, त्याग और तपस्या का क्षय होने लगा है, फिर भी धरती टिकी है तो बापू! इसलिए कि आप जैसे संत भारतभूमि पर विचरण करते हैं। बापू की कथा में ही मैंने यह विशेषता देखी है कि गरीब और अमीर, दोनों को अमृत के घूँट एक जैसे पीने को मिलते हैं। यहाँ कोई भेदभाव नहीं है।"

(सुश्री उमा भारती, मुख्यमंत्री, मध्यप्रदेश।)

(अनुक्रम) पावन उदगार

मैं कमनसीब हूँ जो इतने समय तक गुरुवाणी से वंचित रहा

"परम पूज्य गुरुदेव के श्री चरणों में सादर प्रणाम! मैंने अभी तक महाराजश्री का नाम भर सुना था। आज दर्शन करने का अवसर मिला है लेकिन मैं अपने-आपको कमनसीब मानता हूँ क्योंकि देर से आने के कारण इतने समय तक गुरुदेव की वाणी सुनने से वंचित रहा। अब मेरी कोशिश रहेगी कि मैं महाराजश्री की अमृतवाणी सुनने का हर अवसर यथासम्भव पा सकूँ। मैं ईश्वर से यही प्रार्थना करता हूँ कि वे हमें ऐसा मौका दें कि हम गुरु की वाणी को सुनकर अपने-आपको सुधार सकें। गुरु जी के श्री चरणों में सादर समर्पित होते हुए मध्यप्रदेश की जनता की ओर से प्रार्थना करता हूँ कि गुरुदेव! आप इस मध्यप्रदेश में बार-बार पधारें और हम लोगों को आशीर्वाद देते रहें ताकि परमार्थ के उस कार्य में, जो आपने पूरे देश में ही नहीं, देश के बाहर भी फैलाया है, मध्यप्रदेश के लोगों को भी जुड़ने का ज्यादा-से-ज्यादा अवसर मिले।"

(श्री दिग्विजय सिंह, तत्कालीन मुख्यमंत्री, मध्यप्रदेश।)

(अनुक्रम) पावन उदगार

इतनी मधुर वाणी! इतना अदभुत ज्ञान!

"मैं अपनी ओर से तथा यहाँ उपस्थित सभी महानुभावों की ओर से परम श्रद्धेय संतशिरोमणि बापू जी का हार्दिक स्वागत करता हूँ। मैंने कई बार टी.वी. पर आपको देखा सुना है और दिल्ली में एक बार आपका प्रवचन भी सुना है। इतनी मधुर वाणी! इतना मधुर ज्ञान! अगर आपके प्रवचन पर गहराई से विचार करके अमल किया जाये तो इन्सान को ज़िंदगी में सही रास्ता मिल सकता है। वे लोग धन भागी हैं जो इस युग में ऐसे महापुरुष के दर्शन व सत्संग से अपने जीवन-सुमन खिलाते हैं।"

(श्री भजनलाल, तत्कालीन मुख्यमत्री, हरियाणा।)

(अनुक्रम) पावन उदगार

सत्संग श्रवण से मेरे हृदय की सफाई हो गयी....

पूज्यश्री के दर्शन करने व आशीर्वाद लेने हेतु आये हुए उत्तरप्रदेश के तत्कालीन राज्यपाल श्री सूरजभान ने कहाः "स्मशानभूमि से आने के बाद हम लोग शरीर की शुद्धि के लिए स्नान कर लेते हैं। ऐसे ही विदेशों में जाने के कारण मुझ पर दूषित परमाणू लग जाते थे, परंतु वहाँ से लौटने के बाद यह मेरा परम सौभाग्य है कि यहाँ महाराज श्री के दर्शन व पावन सत्संग-श्रवण करने से मेरे चित्त की सफाई हो गयी। विदेशों में रह रहे अनेकों भारतवासी पूज्य बापू के प्रवचनों को प्रत्यक्ष या परोक्ष रूप से सुन रहे हैं। मेरा यह सौभाग्य है कि मुझे यहाँ महाराजश्री को सुनने का सुअवसर प्राप्त हुआ।"

(श्री सूरजभान, तत्कालीन राज्यपाल, उत्तरप्रदेश।)

(अनुक्रम) पावन उदगार

ज्ञानरूपी गंगाजी स्वयं बहकर यहाँ आ गयीं...

उत्तरांचल राज्य का सौभाग्य है कि इस देवभूमी में देवता स्वरुप पूज्य बापूजी का आश्रम बन रहा है |आप ऐसा आश्रम बनाये जैसा कहीं भी न हो |यह हम लोगों का सौभाग्य है कि अब पूज्य बापूजी की ज्ञानरूपी गंगाजी स्वयं बहकर यहां आ गयी है |अब गंगा जाकर दर्शन करने व स्नान करने की उतनी आवश्यकता नहीं है, जितनी संत श्री आसारामजी बापू के चरणों में बैठकर

उनके आशीर्वाद लेने की है |

-श्री नित्यानंद स्वामीजी,

तत्कालीन, मुख्यमंत्री, उत्तरांचल

(अनुक्रम) पावन उदगार

बापू जी के सत्संग से विश्वभर के लोग लाभान्वित...

भारतभूमि सदैव से ही ऋषि-मुनियों तथा संत-महात्माओं की भूमि रही है, जिन्होंने विश्व को शांति एवं अध्यात्म का संदेश दिया है। आज के युग में पूज्य संत श्री आसारामजी अपनी अमृतवाणी द्वारा दिव्य आध्यात्मिक संदेश दे रहे हैं, जिससे न केवल भारत वरन् विश्वभर में लोग लाभान्वित हो रहे हैं।

(श्री सुरजीत सिंह बरनाला, राज्यपाल, आन्ध्रप्रदेश)

(अनुक्रम) पावन उदगार

पूरी डिक्शनरी याद कर विश्व रिकॉर्ड बनाया

ऑक्सफोर्ड एडवांस लर्नर्स डिक्शनरी (अंग्रेजी छठा संस्करण) के 80000 शब्दों को उनकी पृष्ठ संख्या सहित मैंने याद कर लिया, जो कि समस्त विश्व के लिए किसी चमत्कार से कम नहीं है। फलस्वरूप मेरा नाम 'लिम्का बुक ऑफ वर्ल्ड रिकॉर्डस' में दर्ज हो गया। यही नहीं 'जी' टी.वी. पर दिखाये जाने वाले रियालिटी शो में 'शाबाश इंडिया' में भी मैंने विश्व रिकॉर्ड बनाया। 'द वीक' पत्रिका के एक सर्वेक्षण में भी मेरा नाम 25 अदभुत व्यक्तियों की सूची में है।

मुझे पूज्य गुरुदेव से मंत्रदीक्षा प्राप्त होना, 'भ्रामरी प्राणायाम' सीखने को मिलना तथा अपनी कमजोरी को ही महानता प्राप्त करने का साधन बनाने की प्रेरणा, कला, बल एवं उत्साह प्राप्त होना – यह सब तो गुरुदेव की अहैतुकी कृपा का ही चमत्कार है। **"गुरुकृपा ही केवलं शिष्यस्य परं मंगलम्।"**

विरेन्द्र मेहता, अर्जनु नगर, रोहतक (हरि.)।

(अनुक्रम) पावन उदगार

मंत्रदीक्षा व यौगिक प्रयोगों से बुद्धि का अप्रतिम विकास

"पहले मैं एक साधारण छात्र था। मुझे लगभग 50-55 प्रतिशत अंक ही मिलते थे। 11वीं कक्षा में तो ऐसी स्थिति हुई कि स्कूल का नाम खराब न हो इसलिए प्रधानाध्यापक ने मेरे अभिभावकों को बुलाकर मुझे स्कूल से निकाल देने तक की बात कही थी। बाद में मुझे पूज्य बापू जी से सारस्वत्य मंत्र की दीक्षा मिली। इस मंत्र के जप व बापूजी द्वारा बताये गये प्रयोगों के अभ्यास से कुछ ही समय में मेरी बुद्धिशक्ति का अप्रतिम विकास हुआ। तत्पश्चात 'नोकिया' मोबाइल कंपनी में 'ग्लोबल सर्विसेस प्रोडक्ट मैनेजर' के पद पर मेरी नियुक्ति हुई और मैंने एक पुस्तक लिखी जो अंतर्राष्ट्रीय कंपनियों को सेल्युलर नेटवर्क की डिज़ाईन बनाने में उपयोगी हो रही है। एक विदेशी प्रकाशन द्वारा प्रकाशित इस पुस्तक की कीमत 110 डॉलर (करीब 4500 रुपये) है। इसके प्रकाशन के बाद मेरी पदोन्नती हुई और अब विश्व के कई देशों में मोबाइल के क्षेत्र में प्रशिक्षण देने हेतु मुझे बुलाते हैं। फिर मैंने एक और पुस्तक लिखी, जिसकी 150 डॉलर (करीब 6000 रुपये) है। यह पूज्यश्री से प्राप्त सारस्वत्य मंत्रदीक्षा का ही परिणाम है।"

अजय रंजन मिश्रा, जनकपुरी, दिल्ली।

(अनुक्रम) पावन उदगार

सत्संग व मंत्रदीक्षा ने कहाँ से कहाँ पहुँचा दिया

"पहले मैं भैंसे चराता था। रोज सुबह रात की रखी रोटी, प्याज, नमक और मोबिल ऑयल के डिब्बे में पानी लेकर निकालता व दोपहर को वही खाता था। आर्थिक स्थिति ठीक न होने से टायर की ढाई रुपये वाली चप्पल पहनता था।

12वीं में मुझे केवल 60 प्रतिशत अंक प्राप्त हुए थे। उसके बाद मैंने इलाहाबाद में इंजीनियरिंग में प्रवेश लिया। तब मैं अज्ञानवश संतों का विरोध करता था। संतों के लिए जहर उगलने वाले मूर्खों के संग में आकर मैं कुछ-का-कुछ बकता था लेकिन इलाहाबाद में पूज्य बापू जी का सत्संग आयोजित हुआ तो सोचा, '5 मिनट बैठते हैं।' वहाँ बैठा तो बैठ ही गया। फिर मुझे बापूजी द्वारा सारस्वत्य मंत्र मिला। मेरी सूझबूझ में सदगुरु की कृपा का संचार हुआ। मैंने सविधि मंत्र-अनुष्ठान किया। छठे दिन मेरे आज्ञाचक्र में कम्पन होने लगा था। मैं एक साल तक

एकादशी के निर्जल व्रत व जागरण करते हुए "श्री आसारामायण", "श्री विष्णु सहस्रनाम", "गजेन्द्रमोक्ष" का पाठ व सारस्वत्य मंत्र का जप करता था। रात भर मैं यही प्रार्थना करता था, 'बस, प्रभु! मुझे गुरु जी से मिला दो।'

प्रभुकृपा से अब मेरा उद्देश्य पूरा हो गया है। इस समय मैं 'गो एयर' (हवाई जहाज कम्पनी) में इंजीनियर हूँ। महीने भर का करीब एक लाख 80 हजार पाता हूँ। कुछ दिनों में तनख्वाह ढाई लाख हो जायेगी। गुरु जी ने भैंसे चराने वाले एक गरीब लड़के को आज स्थिति में पहुँचा दिया है।"

क्षितिज सोनी (एयरक्राफट इंजीनियर), दिल्ली।

(अनुक्रम) पावन उदगार

5 वर्ष के बालक ने चलायी जोखिम भरी सड़कों पर कार

"मैंने पूज्य बापूजी से 'सारस्वत्य मंत्र' की दीक्षा ली है। जब मैं पूजा करता हूँ, बापूजी मेरी तरफ पलक झपकाते हैं। मैं बापूजी से बातें करता हूँ। मैं रोज़ दस माला करता हूँ। मैं बापूजी से जो माँगता हूँ, वह मुझे मिल जाता है। मुझे हमेशा ऐसा एहसास होता है कि बापूजी मेरे साथ हैं।

5 जुलाई 2005 को मैं अपने दोस्तों के साथ खेल रहा था। मेरा छोटा भाई छत से नीचे गिर गया। उस समय हमारे घर में कोई बड़ा नहीं था। इसलिए हम सब बच्चे डर गये। इतने में पूज्य बापूजी की आवाज़ आयी कि ताशु! इसे वैन में बिठा और वैन चलाकर हॉस्पिटल ले जा।' उसके बाद मैंने अपनी दीदियों की मदद से हिमांशु को वैन में लिटाया। गाड़ी कैसी चली और अस्पताल कैसे पहुँची, मुझे नहीं पता। मुझे रास्ते भर ऐसा एहसास रहा कि बापूजी मेरे साथ बैठे हैं और गाड़ी चलवा रहे हैं।" (घर से अस्पताल का 5 कि.मी. से अधिक है।)

तांशु बेसोया, राजवीर कॉलोनी, दिल्ली – 16.

(अनुक्रम) पावन उदगार

ऐसे संतों का जितना आदर किया जाय, कम है

"किसी ने मुझसे कहा थाः ध्यान की कैसेट लगाकर सोयेंगे तो स्वप्न में गुरुदेव के दर्शन होंगे...'

मैंने उसी रात ध्यान की कैसेट लगायी और सुनते-सुनते सो गया। उस वक्त रात्रि के बारह-साढ़े बारह बजे होंगे। वक्त का पता नहीं चला। ऐसा लगा मानों, किसी ने मुझे उठा दिया। मैं गहरी नींद से उठा एवं गुरु जी की लैंपवाले फोटो की तरफ टकटकी लगाकर एक-दो मिनट तक देखता रहा। इतने में आश्चर्य! टेप अपने-आप चल पड़ी और केवल ये तीन वाक्य सुनने को मिलेः 'आत्मा चैतन्य है। शरीर जड़ है। शरीर पर अभिमान मत करो।'

टेप स्वतः बंद हो गयी और पूरे कमरे में यह आवाज गूँज उठी। दूसरे कमरे में मेरी पत्नी की भी आँखें खुल गयीं और उसने तो यहाँ तक महसूस किया, जैसे कोई चल रहा है। वे गुरुजी के सिवाय और कोई नहीं हो सकते।

मैंने कमरे की लाइट जलायी और दौड़ता हुआ पत्नी के पास गया। मैंने पूछाः 'सुना?' वह बोलीः 'हाँ।'

उस समय सुबह के ठीक चार बजे थे। स्नान करके मैं ध्यान में बैठा तो डेढ़ घण्टे तक बैठा रहा। इतना लंबा ध्यान तो मेरा कभी नहीं लगा। इस घटना के बाद तो ऐसा लगता है कि गुरुजी साक्षात् ब्रह्मस्वरूप हैं। उनको जो जिस रूप में देखता है वैसे वे दिखते हैं।

मेरा मित्र पाश्चात्य विचारधारावाला है। उसने गुरुजी का प्रवचन सुना और बोलाः 'मुझे तो ये एक बहुत अच्छे लेक्चरर लगते हैं।'

मैंने कहाः 'आज जरूर इस पर गुरुजी कुछ कहेंगे।'

यह सूरत आश्रम में मनायी जा रही जन्माष्टमी के समय की बात है। हम कथा में बैठे। गुरुजी ने कथा के बीच में ही कहाः 'कुछ लोगों को मैं लैक्चरर दिखता हूँ, कुछ को 'प्रोफेसर' दिखता हूँ, कुछ को 'गुरु' दिखता हूँ और वैसा ही वह मुझे पाता है।'

मेरे मित्र का सिर शर्म से झुक गया। फिर भी वह नास्तिक तो था ही। उसने हमारे निवास पर मजाक में गुरुजी के लिए कुछ कहा, तब मैंने कहाः "यह ठीक नहीं है। अबकी बार मान जा, नहीं तो गुरु जी तुझे सजा देंगे।"

15 मिनट में ही उसके घर से फोन आ गया कि "बच्चे की तबीयत बहुत खराब है उसे अस्पताल में दाखिल करना पड़ रहा है।"

तब मेरे मित्र की सूरत देखने लायक थी। वह बोलाः "गल्ती हो गयी। अब मैं गुरु जी के लिए कुछ नहीं कहूँगा, मुझे चाहे विश्वास हो या न हो।"

अखबारों में गुरु जी की निंदा लिखनेवाले अज्ञानी लोग नहीं जानते कि जो महापुरुष भारतीय संस्कृति को एक नया रूप दे रहे हैं, कई संतों की वाणियों को पुनर्जीवित कर रहे हैं, लोगों के शराब-कबाब छुड़वा रहे हैं, जिनसे समाज का कल्याण हो रहा है उनके ही बारे में हम हलकी बातें लिख रहे हैं। यह हमारे देश के लिए बहुत ही शर्मजनक बात है। ऐसे संतों का तो जितना आदर किया जाये, वह कम है। गुरुजी के बारे में कुछ भी बखान करने के लिए मेरे पास शब्द नहीं हैं।

(डॉ. सतवीर सिंह छाबड़ा, बी.बी.ई.एम., आकाशवाणी, इन्दौर।)

(अनुक्रम) पावन उदगार

मुझे निर्व्यसनी बना दिया....

"मैं पिछले कई वर्षों से तम्बाकू का व्यसनी था और इस दुर्गुण को छोड़ने के लिए मैंने कितने ही प्रयत्न किये, पर मैं निष्फल रहा। जनवरी 1995 में पूज्य बापू जब प्रकाशा आश्रम (महा.) पधारे तो मैं भी उनके दर्शनार्थ वहाँ पहुँचा और उनसे अनुरोध कियाः

"बापू! विगत 32 वर्षों से तम्बाकू का सेवन कर रहा हूँ। अनेक प्रयत्नों के बाद भी इस दुर्गुण से मैं मुक्त न हो सका। अब आप ही कृपा कीजिए।'

पूज्य बापू ने कहाः 'लाओ तम्बाकू की डिब्बी और तीन बार थूककर कहो कि आज से मैं तम्बाकू नहीं खाऊँगा।'

मैंने पूज्य बापू जी के निर्देशानुसार वही किया और महान आश्चर्य! उसी दिन से मेरा तम्बाकू खाने का व्यसन छूट गया। पूज्य बापू की ऐसी कृपादृष्टि हुई कि वर्ष पूरा होने पर भी मुझे कभी तम्बाकू खाने की तलब नहीं लगी।

मैं किन शब्दों में पूज्य बापू का आभार व्यक्त करूँ! मेरे पास शब्द ही नहीं हैं। मुझे आनन्द है कि इन राष्ट्रसंत ने बरबाद व नष्ट होते हुए मेरे जीवन को बचाकर मुझे निर्व्यसनी दिया।"

(श्री लखन भटवाल, जि.धुलिया, महाराष्ट्र)

(अनुक्रम) पावन उदगार

गुरुजी की तस्वीर ने प्राण बचा लिये

"कुछ ही दिनों पहले मेरा दूसरा बेटा एम. ए. पास करके नौकरी के लिये बहुत जगह घूमा, बहुत जगह आवेदन-पत्र भेजा किन्तु उसे नौकरी नहीं मिली | फिर उसने बापूजी से दीक्षा ली | मैंने आश्रम का कुछ सामान कैसेट, सतसाहित्य लाकर उसको देते हुए कहा: 'शहर में जहाँ मंदिर है, जहाँ मेले लगते हैं तथा जहाँ हनुमानजी का प्रसिद्ध दक्षिणमुखी मंदिर है वहां स्टाल लगाओ |' बेटे ने स्टाल लगाना शुरु किया | ऐसे ही एक स्टाल पर जलगांव के एक प्रसिद्ध व्यापारी अग्रवालजी आये, बापूजी की कुछ कैसेट खरीदीं और 'ईश्वर की ओर' नामक पुस्तक भी साथ में ले गये, पुस्तक पढ़ी और कैसेट सुनी | दूसरे दिन वे फिर आये और कुछ सतसाहित्य खरीद कर ले गये, वे पान के थोक विक्रता हैं | उनको पान खाने की आदत है | पुस्तक पढ़कर उन्हें लगा: 'मैं पान छोड़ दूँ |' उनकी दुकान पर एक आदमी आया | पांचसौ रुपयों का सामान खरीदा और उनका फोन नम्बर ले गया | एक घंटे के बाद उसने दुकान पर फोन किया: 'सेठ अग्रवालजी ! मुझे आपका खून करने का काम सौंपा गया था | काफी पैसे (सुपारी) भी दिये गये थे और मैं तैयार भी हो गया था, पर जब में आपकी दुकान पर पहुंचा तो परम पूज्य संत श्री आसारामजी बापू के चित्र पर मेरी नजर पड़ी | मुझे ऐसा लगा मानो, साक्षात बापू बैठे हों और मुझे नेक इन्सान बनने की प्रेरणा दे रहे हों ! गुरुजी की तस्वीर ने (तस्वीर के रुप में साक्षात गुरुदेव ने आकर) आपके प्राण बचा लिये |' अदभुत चमत्कार है ! मुम्बई की पार्टी ने उसको पैसे भी दिये थे और वह आया भी था खून करने के इरादे से, परन्तु जाको राखे सांइयाँ.... चित्र के द्वार भी अपनी कृपा बरसाने वाले ऐसे गुरुदेव के प्रत्यक्ष दर्शन करने के लिये वह यहाँ भी आया है |"

-बालकृष्ण अग्रवाल,

जलगांव, महाराष्ट्र

(अनुक्रम) पावन उदगार

सदगुरू शिष्य का साथ कभी नहीं छोड़ते

"एक रात मैं दुकान से स्कूटर द्वारा अपने घर जा रहा था |स्कूटर की डिक्की में काफी रूपये रखे हुए थे |ज्यों ही घर के पास पहुंचा तो गली में तीन बदमाश मिले |उन्होंने मुझे घेर लिया और पिस्तौल दिखायी |स्कूटर रूकवाकर मेरे सिर पर तमंचे का बट मार दिया और धक्के मार कर मुझे एक तरफ गिरा दिया |उन्होंने सोचा होगा कि मैं अकेला हूं, पर शिष्य जब सदगुरू से मंत्र लेता है, श्रद्धा-विश्वास रखकर उसका जप करता है तब सदगुरू उसका साथ नहीं छोड़ते | मैंने सोचा "डिक्की में बहुत रूपये हैं और ये बदमाश तो स्कूटर ले जा रहे हैं |मैंने गुरूदेव से प्रार्थना की |इतने में वे तीनों बदमाश स्कूटर छोड़कर थैला ले भागे |घर जाकर खोला होगा तो सब्जी और खाली टिफ़िन देखकर सिर कूटा, पता नहीं पर बड़ा मजा आया होगा |मेरे पैसे बच गये...उनका सब्जी का खर्च बच गया |"

-गोकुलचन्द्र गोयल,

आगरा

(अनुक्रम) पावन उदगार

गुरूकृपा से अंधापन दूर हुआ

"मुझे ग्लुकोमा हो गया था |लगभग पैंतीस साल से यह तकलीफ़ थी |करीब छः साल तक तो मैं अंधा रहा |कोलकाता, चेन्नई आदि सब जगहों पर गया, शंकर नेत्रालय में भी गया किन्तु वहां भी निराशा हाथ लगी |कोलकाता के सबसे बड़े नेत्र-विशेषज्ञ के पास गया |उसने भी मना कर दिया और कहा |'धरती पर ऐसा कोई इन्सान नहीं जो तुम्हें ठीक कर सके |' ...लेकिन सूरत आश्रम में मुझे गुरूदेव से मंत्र मिला |वह मंत्र मैंने खूब श्रद्धा-विश्वासपूर्वक जपा क्योंकि सक्षात ब्रह्मस्वरूप गुरूदेव से वह मंत्र मिला था |करीब छः-सात महीने ही जप हुआ था कि मुझे थोड़ा-थोड़ा दिखायी देने लगा | डॉक्टर कहते थे कि तुमको भ्रांति हो गयी है, पर मुझे तो अब भी अच्छी तरह दिखता है |एक बार एक अन्य भंयकर दुर्घटना से भी गुरूदेव ने मुझे बचाया था | ऐसे गुरूदेव का ऋण हम जन्मों-जन्मों तक नहीं चुका सकते |"

-शंकरलाल महेश्वरी, कोलकाता

(अनुक्रम) पावन उदगार

और डकैत घबराकर भाग गये

"१४ जुलाई '९९ को करीब साढ़े तीन बजे मेरे मकान में छः डकैत घुस आये और उस समय दुर्भाग्य से बाहर का दरवाजा खुला हुआ था |दो डकैत बाहर मारूति चालू रखकर खड़े थे | एक डकैत ने धक्का देकर मेरी माँ का मुँह बंद कर दिया और अलमारी की चाबी माँगने लगा | इस घटना के दौरान मैं दुकान पर था |मेरी पत्नी को भी डकैत धमकाने लगे और आवाज न करने को कहा |मेरी पत्नी ने पूज्य बापूजी के चित्र के सामने हाथ जोड़कर प्रार्थना की 'अब आप ही रक्षा करो ...' इतना ही कहा तो आश्चर्य ! आश्चर्य ! परम आश्चर्य !! वे सब डकैत घबराकर भागने लगे |उनकी हड़बड़ाहट देखकर ऐसा लग रहा था मानों उन्हें कुछ दिखायी नहीं दे रहा था |वे भाग गये |मेरा परिवार गुरुदेव का ऋणी है |बापूजी के आशीर्वाद से सब सकुशल हैं | हमने १५ नवम्बर '९८ को वाराणसी में मंत्रदीक्षा ली थी |"

-मनोहरलाल तलरेजा,

४, झुलेलाल नगर, शिवाजी नगर,

वाराणसी

(अनुक्रम) पावन उदगार

मंत्र द्वारा मृतदेह में प्राण-संचार

"मैं श्री योग वेदान्त सेवा समिति, आमेट से जीप द्वारा रवाना हुआ था |११ जुलाई १९९४ को मध्यान्ह बारह बजे हमारी जीप किसी तकनीकी त्रुटि के कारण नियंत्रण से बाहर होकर तीन पल्टियाँ खा गयी |मेरा पूरा शरीर जीप के नीचे दब गया |किसी तरह मुझे बाहर निकाला गया | एक तो दुबला पतला शरीर और ऊपर से पूरी जीप का वजन ऊपर आ जाने के कारण मेरे शरीर के प्रत्येक हिस्से में असह्य दर्द होने लगा |मुझे पहले तो केसरियाजी अस्पताल में दाखिल कराया गया |ज्यों-ज्यों उपचार किया गया, कष्ट बढ़ता ही गया क्योंकि चोट बाहर नहीं, शरीर के भीतरी हिस्सों में लगी थी और भीतर तक डॉक्टरों का कोई उपचार काम नहीं कर रहा था |जीप के नीचे दबने से मेरा सीना व पेट विशेष प्रभावित हुए थे और हाथ-पैर में काँच के टुकड़े घुस गये थे |दर्द के मारे मुझे साँस लेने में भी तकलीफ हो रही थी |ऑक्सीजन दिये जाने के बाद भी दम घुट रहा था और मृत्यु की घडियाँ नजदीक दिखायी पड़ने लगीं |मैं मरणासन्न स्थिति में

पहुँच गया |मेरा मृत्यु-प्रमाणपत्र बनाने की तैयारियाँ कि जाने लगीं व मुझे घर ले जाने को कहा गया |इसके पूर्व मेरा मित्र पूज्य बापू से फ़ोन पर मेरी स्थिति के सम्बन्ध में बात कर चुका था |प्राणीमात्र के परम हितैषी, दयालु स्वभाव के संत पूज्य बापू ने उसे एक गुप्त मंत्र प्रदान करते हुए कहा था कि 'पानी में निहारते हुए इस मंत्र का एक सौ आठ बार (एक माला) जप करके वह पानी मनोज को एवं दुर्घटना में घायल अन्य लोगों को भी पिला देना |' जैसे ही वह अभिमंत्रित जल मेरे मुँह में डाला गया, मेरे शरीर में हलचल होने के साथ ही वमन हुआ |इस अदभुत चमत्कार से विस्मित होकर डॉक्टरों ने मुझे तुरंत ही विशेष मशीनों के नीचे ले जाकर लिटाया | गहन चिकित्सकीय परीक्षण के बाद डॉक्टरों को पता चला कि जीप के नीचे दबने से मेरा पूरा खून काला पड़ गया था तथा नाड़ी-चालन (पल्स), हृदयगति व रक्त प्रवाह भी बंद हो चुके थे | मेरे शरीर का सम्पूर्ण रक्त बदल दिया गया तथा आपरेशन भी हुआ |उसके ७२ घंटे बाद मुझे होश आया |बेहोशी में मुझे केवल इतना ही याद था की मेरे भीतर पूज्य बापू द्वारा प्रदत्त गुरूमंत्र का जप चल रहा है |होश में आने पर डॉक्टरों ने पूछा : 'तुम आपरेशन के समय 'बापू...बापू...' पुकार रहे थे |ये 'बापू' कौन हैं ? मैंने बताया :'वे मेरे गुरूदेव प्रातः स्मरणीय परम पूज्य संत श्री असारामजी बापू हैं |' डॉक्टरों ने पुनः मुझसे प्रश्न किया : 'क्या तुम कोई व्यायाम करते हो ?' मैंने कहा :'मैं अपने गुरूदेव द्वारा सिखायी गयी विधि से आसन व प्राणायाम करता हूँ |' वे बोले : 'इसीलिये तुम्हारे इस दुबले-पतले शरीर ने यह सब सहन कर लिया और तुम मरकर भी पुनः जिन्दा हो उठे दूसरा कोई होता तो तुरंत घटनास्थल पर ही उसकी हड्डियाँ बाहर निकल जातीं और वह मर जाता |' मेरे शरीर में आठ-आठ नलियाँ लगी हुई थीं |किसीसे खून चढ़ रहा था तो किसी से कृत्रिम ऑक्सीजन दिया जा रहा था |यद्यपि मेरे शरीर के कुछ हिस्सों में अभी-भी काँच के टुकड़े मौजूद हैं लेकिन गुरूकृपा से आज में पूर्ण स्वस्थ होकर अपना व्यवसाय व गुरूसेवा दोनों कार्य कर रह हूँ |मेरा जीवन तो गुरूदेव का ही दिया हुआ है |इन मंत्रदृष्टा महर्षि ने उस दिन मेरे मित्र को मंत्र न दिया होता तो मेरा पुनर्जीवन तो सम्भव नहीं था |पूज्य बापू मानव-देह में दिखते हुए भी अति असाधारण महापुरूष हैं |टेलिफ़ोन पर दिये हुए उनके एक मंत्र से ही मेरे मृत शरीर में पुनः प्राणों का संचार हो गया तो जिन पर बापू की प्रत्यक्ष दृष्टि पड़ती होगी वे लोग कितने भाग्यशाली होते होंगे ! ऐसे दयालु जीवनदाता सदगुरू के श्रीचरणों में कोटि-कोटि दंडवत प्रणाम..."

-मनोज कुमार सोनी,

ज्योति टेलर्स, लक्ष्मी बाजार, आमेट, राजस्थान

(अनुक्रम) पावन उदगार

सदगुरूदेव की कृपा से नेत्रज्योति वापस मिली

"मेरी दाहिनी आँख से कम दिखायी देता था तथा उसमें तकलीफ़ भी थी |ध्यानयोग शिविर, दिल्ली में पूज्य गुरूदेव मेवा बाँट रहे थे, तब एक मेवा मेरी दाहिनी आँख पर आ लगा | आँख से पानी निकलने लगा |... पर आश्चर्य ! दूसरे ही दिन से आँख की तकलीफ मिट गयी और अच्छी तरह दिखायी देने लगा |" **-राजकली देवी,**

असैनापुर, लालगंज अजारा, जि. प्रतापगढ़, उत्तर प्रदेश

(अनुक्रम) पावन उदगार

बड़दादा की मिट्टी व जल से जीवनदान

"अगस्त '९८ में मुझे मलेरिया हुआ |उसके बाद पीलिया हो गया |मेरे बड़े भाई ने आश्रम से प्रकाशित 'आरोग्यनिधि' पुस्तक में से पीलिया का मंत्र पढ़कर पीलिया तो उतार दिया परंतु कुछ ही दिनों बाद अंग्रेजी दवाओं के 'रिएक्षन' से दोनो किडनियाँ 'फेल' (निष्क्रिय) हो गईं |मेरा 'हार्ट' (हृदय) और 'लीवर' (यकृत) भी 'फेल' होने लगे |डॉक्टरों ने तो कह दिया 'यह लड़का बच नहीं सकता |' फिर मुझे गोंदिया से नागपुर हॉस्पिटल में ले जाया गया लेकिन वहाँ भी डॉक्टरों ने जवाब दे दिया कि अब कुछ नहीं हो सकता |मेरे भाई मुझे वहीं छोड़कर सूरत आश्रम आये, वैद्यजी से मिले और बड़दादा की परिक्रमा करके प्रार्थना की तथा वहाँ की मिट्टी और जल लिया |८ तारीख को डॉक्टर मेरी किडनी बदलने वाले थे |जब मेरे भाई बड़दादा को प्रार्थना कर रहे थे, तभी से मुझे आराम मिलना शुरू हो गया था |भाई ने ७ तारीख को आकर मुझे बड़दादा कि मिट्टी लगाई और जल पिलाया तो मेरी दोनों किडनीयाँ स्वस्थ हो गयी |मुझे जीवनदान मिल गया |अब मैं बिल्कुल स्वस्थ हूँ |"

-प्रवीण पटेल,

गोंदिया, महाराष्ट्र

(अनुक्रम) पावन उदगार

पूज्य बापू ने फेंका कृपा-प्रसाद

"कुछ वर्ष पूर्व पूज्य बापू राजकोट आश्रम में पधारे थे |मुझे उन दिनों निकट से दर्शन करने का सौभाग्य मिला |उस समय मुझे छाती में 'एन्जायना पेक्टटोरिस' के कारण दर्द रहता था |सत्संग पूरा होने के बाद कुछ लोग पूज्य बापू के पास एक-एक करके जा रहे थे |मैं कुछ फल-फूल नहीं लाया था इसलिए श्रद्धा के फूल लिये बैठा था |पूज्य बापू कृपा-प्रसाद फेंक रहे थे कि इतने मैं एक चीकू मेरी छाती पर आ लगा और छाती का वह दर्द हमेशा के लिए मिट गया |"

-अरविंदभाई वसावड़ा,

राजकोट

(अनुक्रम) पावन उदगार

बेटी ने मनौती मानी और गुरुकृपा हुई

"मेरी बेटी को शादी किये आठ साल हो गये थे |पहली बार जब वह गर्भवती हुई तब बच्चा पेट में ही मर गया |दूसरी बार बच्ची जन्मी, पर छः महीने में वह भी चल बसी |फिर मेरी पत्नी ने बेटी से कहा : 'अगर तू संकल्प करे कि जब तीसरी बार प्रसूती होगी तब तुम बालक की जीभ पर बापूजी के बताने के मुताबिक 'ॐ' लिखोगी तो तेरा बालक जीवित रहेगा, ऐसा मुझे विश्वास है क्योंकि ॐकार मंत्र में परमानंदस्वरूप प्रभु विराजमान हैं |' मेरी बेटी ने इस प्रकार मनौती मानी और समय पाकर वह गर्भवती हुई |सोनोग्राफ़ी करवायी गयी तो डॉक्टरों ने बताया : 'गर्भ में बच्ची है और उसके दिमाग में पानी भरा हुआ है |वह जिंदा नहीं रह सकेगी | गर्भपात करवा दो |मेरी बेटी ने अपनी माँ से सलाह की |उसकी माँ ने कहा : 'गर्भपात का महापाप नहीं करवाना है |जो होगा, देखा जायेगा |गुरुदेव कृपा करेंगे |' जब प्रसूती हुई तो बिल्कुल प्राकृतिक ढ़ंग से हुई और उस बच्ची की जीभ पर शहद एवं मिश्री से ॐ लिखा गया |आज वह बिल्कुल ठीक है |जब उसकी डॉक्टरी जाँच करवायी गयी तो डॉक्टर आश्चर्य में पड़ गये ! सोनोग्राफ़ी में जो बीमारियाँ दिख रही थीं वे कहाँ चली गयीं ? दिमाग का पानी कहाँ चला गया ? हिन्दुजा हॉस्पिटलवाले यह करिश्मा देखकर दंग रह गये ! अब घर में जब कोई दूसरी कोई कैसेट चलती है तो वह बच्ची इशारा करके कहती है : 'ॐवाली कैसेट चलाओ |' पिछली पूनम को हम मुंबई से 'टाटा सुमो' में आ रहे थे |बाढ़ के पानी के कारण रास्ता बंद था |हम सोच में पड़ गये कि पूनम का नियम टूटेगा |हमने गुरूदेव का स्मरण किया |इतने में हमारे ड्राइवर ने हमसे पूछा :'जाने दूँ ?' हमने भी गुरूदेव का स्मरण करके कहा : 'जाने दो और 'हरि हरि ॐ...' कीर्तन की कैसेट लगा दो |' गाड़ी आगे चली |इतना पानी कि हम जहाँ बैठे थे वहाँ तक पानी आ गया |

फिर भी हम गुरुदेव के पास सकुशल पहुँच गये और उनके दर्शन किये|"

-मुरारीलाल अग्रवाल,

सांताक्रूज, मुंबई

(अनुक्रम) पावन उदगार

और गुरुदेव की कृपा बरसी

"जबसे सूरत आश्रम की स्थापना हुई तबसे मैं गुरुदेव के दर्शन करते आ रहा हूँ, उनकी अमृतवाणी सुनता आ रहा हूँ |मुझे पूज्यश्री से मंत्रदीक्षा भी मिली है |प्रारब्धवश एक दिन मेरे साथ एक भयंकर दुर्घटना घटी |डॉक्टर कहते थे: आपका एक हाथ अब काम नहीं करेगा |' मैं अपना मानसिक जप मनोबल से करता रहा |अब हाथ बिल्कुल ठीक है |उससे मैं ७० कि.ग्रा. वजन उठा सकता हूँ |मेरी समस्या थी कि शादी होने के बाद मुझे कोई संतान नहीं थी |डॉक्टर कहते थे कि संतान नहीं हो सकती |हम लोगों ने गुरुकृपा एवं गुरूमंत्र का सहारा लिया, ध्यानयोग शिविर में आये और गुरुदेव की कृपा बरसी |अब हमारी तीन संताने है: दो पुत्रियाँ और एक पुत्र |गुरूदेव ने ही बड़ी बेटी का नाम गोपी और बेटे का नाम हरिकिशन रखा है |जय हो सदगुरुदेव की..."

-हँसमुख कांतिलाल मोदी,

५७, 'अपना घर' सोसायटी, संदेर रोड़, सूरत

(अनुक्रम) पावन उदगार

गुरुदेव ने भेजा अक्षयपात्र

"हमें प्रचारयात्रा के दौरान गुरुकृपा का जो अदभुत अनुभव हुआ वह अवर्णनीय है |यात्रा की शुरूआत से पहले दिनांक : ८-११-९९ को हम पूज्य गुरूदेव के आशीर्वाद लेने गये |गुरूदेव ने कार्यक्रम के विषय में पूछा और कहा "पंचेड़ आश्रम (रतलाम) में भंडारा था |उसमें बहुत सामान बच गया है |गाड़ी भेजकर मँगवा लेना... गरीबों में बाँटना |हम झाबुआ जिले के आस-पास के

गरीब आदिवासी इलाकों में जानेवाले थे |वहाँ से रतलाम के लिए गाड़ी भेजी |गिनकर सामान भरा गया |दो दिन चले उतना सामान था |एक दिन में दो भंडारे होते थे |अतः चार भंडारे का सामान था |सबने खुल्ले हाथों बर्तन, कपड़े, साड़ियाँ धोती, आदि सामान छः दिनों तक बाँटा फिर भी सामान बचा रहा |सबको आश्चर्य हुआ ! हम लोग सामान फिर से गिनने लगे परंतु गुरूदेव की लीला के विषय में क्या कहें ? केवल दो दिन चले उतना सामान छः दिनों तक खुल्ले हाथों बाँटा, फिर भी अंत में तीन बोरे बर्तन बच गये, मानों गुरूदेव ने अक्षयपात्र भेजा हो ! एक दिन शाम को भंडारा पूरा हुआ तब देखा कि एक पतीला चावल बच गया है |करीब १००-१२५ लोग खा सके उतने चावल थे |हमने सोचा : 'चावल गाँव में बांट देते है |'... परंतु गुरूदेव की लीला देखो ! एक गाँव के बदले पाँच गाँवों में बाँटे फिर भी चावल बचे रहे |आखिर रात्रि में ९ बजे के बाद सेवाधारियों ने थककर गुरूदेव से प्रार्थना की कि 'गुरुदेव ! अब जंगल का विस्तार है... हम पर कृपा करो |'... और चावल खत्म हुए |फिर सेवाधारी निवास पर पहुँचे |"

-संत श्री आसारामजी भक्तमंडल,

कतारगाम, सूरत

(अनुक्रम) पावन उदगार

स्वप्न में दिये हुए वरदान से पुत्रप्राप्ति

"मेरे ग्रहस्थ जीवन में एक-एक करके तीन कन्याएँ जन्मी |पुत्रप्राप्ति के लिए मेरी धर्मपत्नी ने गुरूदेव से आशीर्वाद प्राप्त किया था |चौथी प्रसूति होने के पहले जब उसने वलसाड़ में सोनोग्राफ़ी करवायी तो रिपोर्ट में लड़की बताया गया |यह सुनकर हम निराश हो गये |एक रात पत्नी को स्वप्न में गुरूदेव ने दर्शन दिये और कहा : 'बेटी चिंता मत कर |घबराना मत धीरज रख |लड़का ही होगा |' हमने सूरत आश्रम में बड़दादा की परिक्रमा करके मनौती मानी थी, वह भी फ़लीभूत हुई और गुरूदेव का ब्रह्मवाक्य भी सत्य साबित हुआ, जब प्रसूति होने पर लड़का हुआ |सभी गुरूदेव की जय-जयकार करने लगे |"

-सुनील कुमार राधेश्याम चौरसिया,

दीपकवाड़ी, किल्ला पारड़ी, जि. वलसाड़

(अनुक्रम) पावन उदगार

'श्री आसारामायण' के पाठ से जीवनदान

"मेरा दस वर्षीय पुत्र एक रात अचानक बीमार हो गया | साँस भी मुश्किल से ले रहा था | जब उसे हॉस्पिटल में भर्ती किया तब डॉक्टर बोले | 'बच्चा गंभीर हालत में है | ऑपरेशन करना पड़ेगा |' मैं बच्चे को हॉस्पिटल में ही छोड़कर पैसे लेने के लिए घर गया और घर में सभी को कहा : "आप लोग 'श्री आसारामायण' का पाठ शुरू करो |" पाठ होने लगा | थोड़ी देर बाद मैं हॉस्पिटल पहुँचा | वहाँ देखा तो बच्चा हँस-खेल रहा था | यह देख मेरी और घरवालों की खुशी का ठिकाना न रहा ! यह सब बापूजी की असीम कृपा, गुरू-गोविन्द की कृपा और श्री आसारामायण-पाठ का फल है |"

-सुनील चांडक,

अमरावती, महाराष्ट्र

(अनुक्रम) पावन उदगार

गुरूवाणी पर विश्वास से अवर्णीय लाभ

"शादी होने पर एक पुत्री के बाद सात साल तक कोई संतान नहीं हुई | हमारे मन में पुत्रप्राप्ति की इच्छा थी | १९९९ के शिविर में हम संतानप्राप्ति का आशीर्वाद लेनेवालों की पंक्ति में बैठे | बापूजी आशीर्वाद देने के लिए साधकों के बीच आये तो कुछ साधक नासमझी से कुछ ऐसे प्रश्न कर बैठे, जो उन्हें नहीं करने चाहिए थे | गुरूदेव नाराज होकर यह कहकर चले गये कि 'तुमको संतवाणी पर विश्वास नहीं है तो तुम लोग यहाँ क्यों आये ? तुम्हें डॉक्टर के पास जाना चाहिए था |' फिर गुरूदेव हमारे पास नहीं आये | सभी प्रार्थना करते रहे, पर गुरूदेव व्यासपीठ से बोले : 'दुबारा तीन शिविर भरना |' मैं मन में सोच रहा था कि कुछ साधकों के कारण मुझे आशीर्वाद नहीं मिल पाया परंतु '**वज्रादपि कठोराणि मृदुनि कुसुमादपि...**' बाहर से वज्र से भी कठोर दिखने वाले सदगुरू भीतर से फूल से भी कोमल होते हैं | तुरंत गुरूदेव विनोद करते हुए बोले : 'देखो ! ये लोग संतानप्राप्ति का आशीर्वाद लेने आये हैं | कैसे ठनठनपाल-से बैठे हैं ! अब जाओ... झूला-झुनझुना लेकर घर जाओ |' मैंने और मेरी पत्नी ने आपस में विचार किया : 'दयालु गुरूदेव ने आखिर आशीर्वाद दे ही दिया | अब गुरूदेव ने कहा है कि झूला-झुनझुना ले जाओ |' ... तो मैंने गुरूवचन मानकर रेलवे स्टेशन से एक झुनझुना खरीद लिया और ग्वालियर आकर गुरूदेव के चित्र के पास रख दिया | मुझे वहाँ से आने के १५ दिन बाद डॉक्टर द्वारा मालूम हुआ

कि पत्नी गर्भवती है |मैंने गुरूदेव को मन-ही-मन प्रणाम किया |इस बीच डॉक्टरों ने सलाह दी कि 'लड़का है या लड़की, इसकी जाँच करा लो |' मैंने बड़े विश्वास से कहा कि 'लड़का ही होगा | अगर लड़की भी हुई तो मुझे कोई आपत्ति नहीं है |मुझे गर्भपात का पाप अपने सिर पर नहीं लेना है |' नौ माह तक मेरी पत्नी भी स्वस्थ रही |हरिद्वार शिविर में भी हम लोग गये |समय आने पर गुरूदेव द्वारा बताये गये इलाज के मुताबिक गाय के गोबर का रस पत्नी को दिया और दिनांक २७ अक्तूबर १९९९ को एक स्वस्थ बालक का जन्म हुआ |"

-राजेन्द्र कुमार वाजपेयी, अर्चना वाजपेयी,

बलवंत नगर, ढाढीपुर, मुरारा, ग्वालियर

(अनुक्रम) पावन उदगार

सेवफल के दो टुकड़ों से दो संतानें

"मैंने सन १९९१ में चेटीचंड शिविर, अमदावाद में पूज्य बापूजी से मंत्रदीक्षा ली थी |मेरी शादी के १० वर्ष तक मुखे कोई संतान नहीं हुई |बहुत इलाज करवाये लेकिन सभी डॉक्टरों ने बताया कि बालक होने की कोई संभावना नहीं है |तब मैंने पूज्य बापूजी के पूनम दर्शन का व्रत लिया और बाँसवाड़ा में पूनम दर्शन के लिए गया |पूज्य बापूजी सबको प्रसाद दे रहे थे |मैंने मन में सोचा |'क्या मैं इतना पापी हूँ कि बापूजी मेरी तरफ देखते तक नहीं ?' इतने में पूज्य बापूजी कि दृष्टि मुझ पर पड़ी और उन्होंने मुझे दो मिनट तक देखा |फिर उन्होंने एक सेवफल लेकर मुझ पर फेंका जो मेरे दायें कंधे पर लगकर दो टुकड़ों में बँट गया |घर जाकर मैंने उस सेवफल के दोनों भाग अपनी पत्नी को खिला दिये |पूज्यश्री का कृपापूर्ण प्रसाद खाने से मेरी पत्नी गर्भवती हो गयी |निरीक्षण कराने पर पता चला कि उसको दो सिर वाला बालक उत्पन्न होगा | डॉक्टरों ने बताया " 'उसका 'सिजेरियन' करना पड़ेगा अन्यथा आपकी पत्नी के बचने की सम्भावना नहीं है |'सिजेरियन में लगभग बीस हजार रूपयों का खर्च आयेगा |' मैंने पूज्य बापूजी से प्रार्थना की "है बापूजी ! आपने ही फल दिया था |अब आप ही इस संकट का निवारण कीजिये |' फिर मैंने बड़ बादशाह के सामने भी प्रार्थना की : 'जब मैं अस्पताल पहुँचूँ तो मेरी पत्नी की प्रसूती सकुशल हो जाय... |' उसके बाद जब मैं अस्पताल पहूँचा तो मेरी पत्नी एक पुत्र और एक पुत्री को जन्म दे चुकी थी |पूज्यश्री के द्वारा दिये गये फल से मुझे एक की जगह दो संतानों की प्राप्ति हुई |"

-मुकेशभाई सोलंकी,

शारदा मंदिर स्कूल के पीछे,

बावन चाल, वड़ोदरा

(अनुक्रम) पावन उद्गार

साइकिल से गुरूधाम जाने पर खराब टाँग ठीक हो गयी

"मेरी बाँयी टाँग घुटने से उपर पतली हो गयी थी |'ऑल इण्डिया मेडिकल इन्स्टीट्यूट, दिल्ली' में मैं छः दिन तक रहा |वहाँ जाँच के बाद बतलाया गया कि 'तुम्हारी रीढ़ की हड्डी के पास कुछ नसें मर गयी हैं जिससे यह टाँग पतली हो गयी है |यह ठीक तो हो ही नहीं सकती | हम तुम्हें विटामिन 'ई' के कैप्सूल दे रहे हैं |तुम इन्हें खाते रहना |इससे टांग और ज्यादा पतली नहीं होगी |' मैंने एक साल तक कैप्सूल खाये |उसके बाद २२ जून, १९९७ को मुजफ़्फ़रनगर में मैंने गुरूजी से मंत्रदीक्षा ली और दवाई खाना बंद कर दी |जब एक साधक भाई राहुल गुप्ता ने कहा कि सहारनपुर से साइकिल द्वारा उत्तरायण शिविर, अमदावाद जाने का कार्यक्रम बन रहा है, तब मैंने टाँग के बारे में सोचे बिना साइकिल यात्रा में भाग लेने के लिए अपनी सहमति दे दी | जब मेरे घर पर पता चला कि मैंने साइकिल से गुरुधाम, अमदावाद जाने का विचार बनाया है, अतः तुम ११५० कि.मी. तक साइकिल नहीं चला पाओगे |' ... लेकिन मैंने कहा : 'मैं साइकिल से ही गुरुधाम जाऊँगा, चाहे कितनी भी दूरी क्यों न हो ?' ... और हम आठ साधक भाई सहारनपूर से २६ दिसम्बर '९७ को साइकिलों से रवाना हुए |मार्ग में चढ़ाई पर मुझे जब भी कोइ दिक्कत होती तो ऐसा लगता जैसे मेरी साइकिल को कोई पीछे से धकेल रहा है |मैं मुड़कर पीछे देखता तो कोई दिखायी नहीं पड़ता |९ जनवरी को जब हम अमदावाद गुरूआश्रम में पहूँचे और मैंने सुबह अपनी टाँग देखी तो मैं दंग रह गये ! जो टाँग पतली हो गयी थी और डॉक्टरों ने उसे ठीक होने से मना कर दिया था वह टाँग बिल्कुल ठीक हो गयी थी |इस कृपा को देखकर मैं चकित रह गया ! मेरे साथी भी दंग रह गये ! यह सब गुरूकृपा के प्रसाद का चमत्कार था |मेरे आठों साथी, मेरी पत्नी तथा ऑल इण्डिया मेडिकल इन्स्टीट्यूट, दिल्ली द्वारा जाँच के प्रमाणपत्र इस बात के साक्षी हैं |"

-निरंकार अग्रवाल,

विष्णुपुरी, न्यूमाधोनगर, सहारनपुर (उ.प्र.)

अदभुत रही मौनमंदिर की साधना !

"परम पूज्य सदगुरूदेव की कृपा से मुझे दिनांक १८ से २४ मई १९९९ तक अमदावाद आश्रम के मौनमंदिर में साधना करने का सुअवसर मिला |मौनमंदिर में साधना के पाँचवें दिन यानी २२ मई की रात्रि को लगभग २ बजे नींद में ही मुझे एक झटका लगा |लेटे रहने कि स्थिति में ही मुझे महसूस हुआ कि कोई अदृश्य शक्ति मुझे ऊपर... बहुत ऊपर उड़ये ले जा रही है |ऊपर उड़ते हुए जब मैंने नीचे झाँककर देखा तो अपने शरीर को उसी मौनमंदिर में चित्त लेटा हुआ, बेखबर सोता हुआ पाया |ऊपर जहाँ मुझे ले जाया गया वहाँ अलग ही छटा थी... अजीब और अवर्णीय ! आकाश को भी भेदकर मुझे ऐसे स्थान पर पहुँचाया गया था जहाँ चारों तरफ कोहरा-ही-कोहरा था, जैसे, शीशे की छत पर ओस फैली हो ! इतने में देखता हूँ कि एक सभा लगी है, बिना शरीर की, केवल आकृतियों की |जैसे रेखाओं से मनुष्यरूपी आकृतियाँ बनी हों |यह सब क्या चल रहा था... समझ से परे था |कुछ पल के बाद वे आकृतियाँ स्पष्ट होने लगी |देवी-देवताओं के पुंज के मध्य शीर्ष में एक उच्च आसन पर साक्षात बापूजी शंकर भगवान बने हुए कैलास पर्वत पर विराजमान थे और देवी-देवता कतार में हाथ बाँधे खड़े थे |मैं मूक-सा होकर अपलक नेत्रों से उन्हें देखता ही रहा, फिर मंत्रमुग्ध हो उनके चरणों मैं गिर पड़ा |प्रातः के ४ बजे थे |अहा ! मन और शरीर हल्का-फुल्का लग रहा था ! यही स्थिति २४ मई की मध्यरात्रि में भी दोहरायी गयी |दूसरे दिन सुबह पता चला कि आज तो बाहर निकलने का दिन है यानी रविवार २५ मई की सुबह |बाहर निकलने पर भावभरा हृदय, गदगद कंठ और आखों में आँसू ! यों लग रहा था कि जैसे निजधाम से बेघर किया जा रहा हूँ |धन्य है वह भूमि, मौनमंदिर में साधना की वह व्यवस्था, जहां से परम आनंद के सागर में डूबने की कुंजी मिलती है ! जी करता है, भगवान ऐसा अवसर फिर से लायें जिससे कि उसी मौनमंदिर में पुनः आंतरिक आनंद का रसपान कर पाऊँ |"

-इन्द्रनारायण शाह,

१०३, रतनदीप-२, निराला नगर, कानपुर

असाध्य रोग से मुक्ति

"सन १९९४ में मेरी पुत्री हिरल को शरद पूर्णिमा के दिन बुखार आया |डॉक्टरों को दिखाया तो किसीने मलेरिया कहकर दवाइयाँ दी तो किसीने टायफायड कहकर इलाज शुरू किया तो किसीने टायफायड और मलेरिया दोनों कहा |दवाई की एक खुराक लेने से शरीर नीला पड़ गया और सूज गया |शरीर में खून की कमी से उसे छः बोतलें खून चढ़ाया गया |इंजेक्षन देने से पूरे शरीर को लकवा मार गया |पीठ के पीछे शैयाव्रण जैसा हो गया |पीठ और पैर का एक्स-रे लिया गया |पैर पर वजन बाँधकर रखा गया |डॉक्टरों ने उसे वायु का बुखार तथा रक्त का कैंसर बताया और कहा कि उसके हृदय तो वाल्व चौड़ा हो गया है |अब हम हिम्मत हार गये | अब पूज्यश्री के सिवाय और कोई सहारा नहीं था |उस समय हिरल ने कहा :'मम्मी ! मुझे पूज्य बापू के पास ले चलो |वहाँ ठीक हो जाऊगी |' पाँच दिन तक हिरल पूज्यश्री की रट लगाती रही | हम उसे अमदावाद आश्रम में बापू के पास ले गये |बापू ने कहा: 'इसे कुछ नहीं हुआ है |' उन्होंने मुझे और हिरल को मंत्र दिया एवं बड़दादा की प्रदक्षिणा करने को कहा |हमने प्रदक्षिणा की और हिरल पन्द्रह दिन में चलने-फ़िरने लगी |हम बापू की इस करूणा-कृपा का ऋण कैसे चुकायें ! अभी तो हम आश्रम में पूज्यश्री के श्रीचरणों में सपरिवार रहकर धन्य हो रहे हैं |"

-प्रफुल्ल व्यास,

भावनगर

वर्तमान में अमदावाद आश्रम में सपरिवार समर्पित

(अनुक्रम) पावन उदगार

कैसेट का चमत्कार

"व्यापार उधारी में चले जाने से मैं हताश हो गया था एवं अपनी जिंदगी से तंग आकर आत्महत्या करने की बात सोचने लगा था |मुझे साधु-महात्माओं व समाज के लोगों से घृणा-सी हो गयी थी : धर्म व समाज से मेरा विश्वास उठ चुका था |एक दिन मेरी साली बापूजी के सत्संग कि दो कैसेटें 'विधि का विधान' एवं 'आखिर कब तक ?' ले आयी और उसने मुझे सुनने के लिए कहा |उसके कई प्रयास के बाद भी मैंने वे कैसेटें नहीं सुनीं एवं मन-ही-मन उन्हें 'ढ़ोंग' कहकर कैसेटों के डिब्बे में दाल दिया |मन इतना परेशान था कि रात को नींद आना बंद हो गया था |एक रात फ़िल्मी गाना सुनने का मन हुआ |अँधेरा होने की वजह से कैसेटे पहचान न सका और गलती से बापूजी के सत्संग की कैसेट हाथ में आ गयी |मैंने उसीको सुनना शुरू किया |फिर क्या था ? मेरी आशा बँधने लगी |मन शाँत होने लगा |धीरे-धीरे सारी पीड़ाएँ दूर

होती चली गयीं |मेरे जीवन में रोशनी-ही-रोशनी हो गयी |फिर तो मैंने पूज्य बापूजी के सत्संग की कई कैसेटें सुनीं और सबको सुनायीं |तदनंतर मैंने गाजियाबाद में बापूजी से दीक्षा भी ग्रहण की |व्यापार की उधारी भी चुकता हो गयी |बापूजी की कृपा से अब मुझे कोई दुःख नहीं है |हे गुरूदेव ! बस, एक आप ही मेरे होकर रहें और मैं आपका ही होकर रहूँ |"

-ओमप्रकाश बजाज,

दिल्ली रोड़, सहारनपुर, उत्तर प्रदेश

(अनुक्रम) पावन उदगार

मुझ पर बरसी संत की कृपा

"सन १९९५ के जून माह में मैं अपने लड़के और भतीजे के साथ हरिद्वार ध्यानयोग शिविर में भाग लेने गया |एक दिन जब मैं 'हर की पौड़ी' पर स्नान करने गया तो पानी के तेज बहाव के कारण पैर फिसलने से मेरा लड़का और भतीजा दोनों अपना संतुलन खो बैठे और गंगा में बह गये |ऐसी संकट की घड़ी में मैं अपना होश खो बैठा |क्या करूँ ? मैं फूट-फूटकर रोने लगा और बापूजी से प्रार्थना करने लगा कि ' हे नाथ ! हे गुरुदेव ! रक्षा कीजिये... मेरे बच्चों को बचा लीजिये |अब आपका ही सहारा है |पूज्यश्री ने मेरे सच्चे हृदय से निकली पुकार सुन ली और उसी समय मेरा लड़का मुझे दिखायी दिया |मैंने झपटकर उसको बाहर खींच लिया लेकिन मेरा भतीजा तो पता नहीं कहाँ बह गया ! मैं निरंतर रो रहा था और मन में बार-बार विचार उठ रहा था कि 'बापूजी ! मेरा लड़का बह जाता तो कोई बात नहीं थी लेकिन अपने भाई की अमानत के बिना मैं घर क्या मुँह लेकर जाऊँगा ? बापूजी ! आपही इस भक्त की लाज बचाओ |' तभी गंगाजी की एक तेज लहर उस बच्चे को भी बाहर छोड़ गयी |मैंने लपककर उसे पकड़ लिया | आज भी उस हादसे को स्मरण करता हूँ तो अपने-आपको सँभाल नहीं पाता हूँ और मेरी आँखों से निरंतर प्रेम की अश्रुधारा बहने लगती हैं |धन्य हुआ मैं ऐसे गुरुदेव को पाकर ! ऐसे सदगुरुदेव के श्रीचरणों में मेरे बार-बार शत-शत प्रणाम !"

-सुमालखाँ,

पानीपत, हरियाणा

(अनुक्रम) पावन उदगार

गुरूकृपा से जीवनदान

"दिनांक १५-१-९६ की घटना है |मैंने धातु के तार पर सूखने के लिए कपड़े फैला रखे थे | बारिश होने के कारण उस तार में करंट आ गया था |मेरा छोटा पुत्र विशाल, जो कि ११ वीं कक्षा में पढ़ता है, आकर उस तार से छू गया और बिजली का करंट लगते ही वह बेहोश हो गया, शव के समान हो गया |हमने उसे तुरंत बड़े अस्पताल में दाखिल करवाया |डॉक्टर ने बच्चे की हालत गंभीर बतायी |ऐसी परिस्थिति देखकर मेरी आँखों से अश्रुधाराएँ बह निकली |मैं निजानंद की मस्ती में मस्त रहने वाले पूज्य सदगुरूदेव को मन-ही-मन याद किया और प्रार्थना कि :'हे गुरुदेव ! अब तो इस बच्चे का जीवन आपके ही हाथों में है |हे मेरे प्रभु ! आप जो चाहे सो कर सकते है |' और आखिर मेरी प्रार्थना सफल हुई |बच्चे में एक नवीन चेतना का संचार हुआ एवं धीरे-धीरे बच्चे के स्वास्थ्य में सुधार होने लगा |कुछ ही दिनों में वह पूर्णतः स्वस्थ हो गया | डॉक्टर ने तो उपचार किया लेकिन जो जीवनदान उस प्यारे प्रभु की कृपा से, सदगुरूदेव की कृपा से मिला, उसका वर्णन करने के लिए मेरे पास शब्द नहीं है |बस, ईश्वर से में यही प्रार्थना करता हूँ कि ऐसे ब्रह्मनिष्ठ संत-महापुरुषों के प्रति हमारी श्रद्धा में वृद्धि होती रहे |" -

डॉ. वाय. पी. कालरा,

शामलदास कॉलेज, भावनगर, गुजरात

(अनुक्रम) पावन उदगार

पूज्य बापू जैसे संत दुनिया को स्वर्ग में बदल सकते हैं

मई १९९८ के अंतिम दिनों में पूज्यश्री के इंदौर प्रवास के दौरान ईरान के विख्यात फ़िजिशियन श्री बबाक अग्रानी भारत में अध्यात्मिक अनुभवों की प्राप्ति आये हुए थे |पूज्यश्री के दर्शन पाकर जब उन्होंने अध्यात्मिक अनुभवों को फलीभूत होते देखा तो वे पंचेड़ आश्रम में आयोजित ध्यानयोग शिविर में भी पहुँच गये |श्री अग्रानी जो दो दिन रुककर वापस लौटने वाले थे, वे पूरे ग्यारह दिन तक पंचेड़ आश्रम में रूके रहे |उन्होंने विधार्थी शिविर में सारस्वत्य मंत्र की दीक्षा ली एवं विशिष्ट ध्यानयोग साधना शिविर (४ -१० जून १९९८) का भी लाभ लिया |शिविर के दौरान श्री अग्रानी ने पूज्यश्री से मंत्रदीक्षा भी ले ली |पूज्यश्री के सान्निध्य मे संप्राप्त अनुभूतियों के बारे में क्षेत्रिय समाचार पत्र 'चेतना' को दी हुई भेंटवार्ता में श्री अग्रानी कहते है : "यदि पूज्य बापू जैसे संत हर देश में हो जायें तो यह दुनिया स्वर्ग बन सकती है |ऐसे शांति से बैठ पाना हमारे लिए कठिन है, लेकिन जब पूज्य बापूजी जैसे महापुरूषों के श्रीचरणों में बैठकर

सत्संग सुनते है तो ऐसा आनंद आता है कि समय का कुछ पता ही नहीं चलता |सचमुच, पूज्य बापू कोई साधारण संत नहीं है |"

-श्री बबाक अग्रानी,

विश्वविख्यात फ़िजिशियन, ईरान

(अनुक्रम) पावन उदगार

भौतिक युग के अंधकार में ज्ञान की ज्योति : पूज्य बापू

मादक नियंत्रण ब्यूरो भारत सरकार के महानिदेशक श्री एच.पी. कुमार ९ मई को अमदावाद आश्रम में सत्संग-कार्यक्रम के दौरान पूज्य बापू से आशीर्वाद लेने पहुँचे |बड़ी विनम्रता एवं श्रद्धा के साथ उन्होंने पूज्य बापू के प्रति अपने उदगार में कहा : "जिस व्यक्ति के पास विवेक नहीं है वह अपने लक्ष्य तक नहीं पहुँच सकता है और विवेक को प्राप्त करने का साधन पूज्य आसारामजी बापू जैसे महान संतों का सत्संग है |पूज्य बापू से मेरा प्रथम परिचय टी.वी. के माध्यम से हुआ |तत्पश्चात मुझे आश्रम द्वार प्रकाशित 'ऋषि प्रसाद' मासिक प्राप्त हुआ |उस समय मुझे लगा कि एक ओर जहाँ इस भौतिक युग के अंधकार में मानव भटक रहा है वहीं दूसरी ओर शांति की मंद-मंद सुगंधित वायु भी चल रही है |यह पूज्य बापू के सत्संग का ही प्रभाव है |पूज्यश्री के दर्शन करने का जो सौभाग्य मुझे प्राप्त हुआ है इससे मैं अपने को कृतकृत्य मानता हूँ |पूज्य बापू के श्रीमुख से जो अमृत वर्षा होती है तथा इनके सत्संग से करोड़ों हृदयों में जो ज्योति जगती है, व इसी प्रकार से जगती रहे और आने वाले लंबे समय तक पूज्यश्री हम सब का मार्गदर्शन करते रहे यही मेरी कामना है |पूज्य बापू के श्रीचरणों में मेरे प्रणाम..."

-श्री एच.पी. कुमार,

महानिदेशक, मादक नियंत्रण ब्यूरो, भारत सरकार

(अनुक्रम) पावन उदगार

मुस्लिम महिला को प्राणदान

२७ सितम्बर २००० को जयपुर में मेरे निवास पर पूज्य बापू का 'आत्म-साक्षात्कार दिवस' मनाया गया, जिसमें मेरे पड़ोस की मुस्लिम महिला नाथी बहन के पति, श्री माँगू खाँ, ने भी पूज्य बापू की आरती की और चरणामृत लिया |३-४ दिन बाद ही वे मुस्लिम दंपति ख्वाजा साहिब के उर्स में अजमेर चले गये |दिनांक ४ अक्टूबर २००० को अजमेर के उर्स में असामाजिक तत्वों ने प्रसाद में जहर बाँट दिया, जिससे उर्स मेले में आये कई दर्शनार्थी अस्वस्थ हो गये और कई मर भी गये |मेरे पड़ोस की नाथी बहन ने भी वह प्रसाद खाया और थोड़ी देर में ही वह बेहोश हो गयी |अजमेर में उसका उपचार किया गया किंतु उसे होश न आया |दूसरे दिन ही उसका पति उसे अपने घर ले आया |कॉलोनी के सभी निवासी उसकी हालत देखकर कह रहे थे कि अब इसका बचना मुश्किल है |मैं भी उसे देखने गया |वह बेहोश पड़ी थी |मैं जोर-जोर से हरि ॐ... हरि ॐ... का उच्चारण किया तो वह थोड़ा हिलने लगी |मुझे प्रेरणा हुई और मैं पुनः घर गया |पूज्य बापू से प्रार्थना की |३-४ घंटे बाद ही वह महिला ऐसे उठकर खड़ी हो गयी मानों, सोकर उठी हो |उस महिला ने बताया कि मेरे चाचा ससुर पीर हैं और उन्होंने मेरे पति के मुँह से बोलकर बताया कि तुमने २७ सितम्बर २००० को जिनके सत्संग में पानी पिया था, उन्हीं सफेद दाढ़ीवाले बाबा ने तुम्हें बचाया है ! कैसी करूणा है गुरूदेव की !

-जे.एल. पुरोहित,

८७, सुल्तान नगर, जयपुर (राज.)

उस महिला का पता है: -श्रीमती नाथी

पत्नी श्री माँगू खाँ,

१००, सुल्तान नगर,

गुर्जर की धड़ी,

न्यू सांगानेर रोड़,

जयपूर (राज.)

(अनुक्रम) पावन उदगार

हरिनाम की प्याली ने छुड़ायी शराब की बोतल

सौभाग्यवश, गत २६ दिसम्बर १९९८ को पूज्यश्री के १६ शिष्यों की एक टोली दिल्ली से हमारे गाँव में हरिनाम का प्रचार-प्रसार करने पहूँची |मैं बचपन से ही मदिरापान, धूम्रपान व शिकार करने का शौकीन था |पूज्य बापू के शिष्यों द्वारा हमारे गाँव में जगह-जगह पर तीन दिन तक लगातार हरिनाम का कीर्तन करने से मुझे भी हरिनाम का रंग लगता जा रहा था | उनके जाने के एक दिन के पश्चात शाम के समय रोज की भांति मैंने शराब की बोतल निकाली |जैसे ही बोतल खोलने के लिए ढक्कन घुमाया तो उस ढक्कन के घुमने से मुझे 'हरि ॐ... हरि ॐ' की ध्वनि सुनायी दी |इस प्रकार मैंने दो-तीन बार ढक्कन घुमाया और हर बार मुझे 'हरि ॐ' की ध्वनि सुनायी दी |कुछ देर बाद मैं उठा तथा पूज्यश्री के एक शिष्य के घर गया |उन्होंने थोड़ी देर मुझे पूज्यश्री की अमृतवाणी सुनायी |अमृतवाणी सुनने के बाद मेरा हृदय पुकारने लगा कि इन दुर्व्यसनों को त्याग दूँ |मैंने तुरंत बोतल उठायी तथा जोर-से दूर खेत में फेंक दी |ऐसे समर्थ व परम कृपालु सदगुरुदेव को मैं हृदय से प्रणाम करता हूँ, जिनकी कृपा से यह अनोखी घटना मेरे जीवन में घटी, जिससे मेरा जीवन परिवर्तित हुआ |

-मोहन सिंह बिष्ट,

भिख्यासैन, अल्मोड़ा (उ.प्र.)

(अनुक्रम) पावन उदगार

पूरे गाँव की कायापलट !

पूज्यश्री से दिनांक २७.६.९१ को दीक्षा लेने के बाद मैंने व्यवसनमुक्ति के प्रचार-प्रसार का लक्ष्य बना लिया |मैं एक बार कौशलपुर (जि. शाजापुर) पहुँचा |वहाँ के लोगों के व्यवसनी और लड़ाई-झगड़े युक्त जीवन को देखकर मैंने कहा: "आप लोग मनुष्य-जीवन सही अर्थ ही नहीं समझते हैं |एक बार आप लोग पूज्य बापूजी के दर्शन कर लें तो आपको सही जीवन जीने की कुंजी मिल जायेगी |" गाँव वालों ने मेरी बात मान ली और दस व्यक्ति मेरे गाँव ताजपुर आये | मैंने एक साधक को उनके साथ जन्माष्टमी महोत्सव में सूरत भेजा |पूज्य बापूजी की उन पर कृपा बरसी और सबको गुरूदीक्षा मिल गयी |जब वे लोग अपने गाँव पहुँचे तो सभी गाँववासियों को बड़ा कौतूहल था कि पूज्य बापूजी कैसे हैं ? बापूजी की लीलाएँ सुनकर गाँव के अन्य लोगों में भी पूज्य बापूजी के प्रति श्रद्धा जगी |उन दीक्षित साधकों ने सभी गाँववालों को सुविधानुसार पूज्य बापूजी के अलग-अलग आश्रमों मे भेजकर दीक्षा दिलवा दी |गाँव के सभी व्यक्ति अपने

पूरे परिवार सहित दीक्षित हो चुके हैं |प्रत्येक गुरूवार को पूरे गाँव में एक समय भोजन बनता है |सभी लोग गुरूवार का व्रत रखते है |कौशलपुर गाँव के प्रभाव से आस-पास के गाँववाले एवं उनके रिश्तेदारों सहित १००० व्यक्तियों शराब छोड़कर दीक्षा ले ली है |गाँव के इतिहास में तीन-तीन पीढ़ी से कोई मंदिर नहीं था |गाँववालों ने ५ लाख रूपये लगाकर दो मंदिर बनवायें हैं |पूरा गाँव व्यवसनमुक्त एवं भगवतभक्त बन गया है, यह पूज्य बापूजी की कृपा नहीं तो और क्या हैं ? सबके तारणहार पूज्य बापूजी के श्रीचरणों में कोटि-कोटि प्रणाम...

-श्याम प्रजापति (सुपरवाइजर, तिलहन संघ) ताजपुर,

उज्जैन (म.प्र.)

(अनुक्रम) पावन उदगार

पूज्यश्री की तस्वीर से मिली प्रेरणा

सर्वसमर्थ परम पूज्य श्री बापूजी के चरणकमलों में मेरा कोटि-कोटि नमन... १९८४ के भूकंप से सम्पूर्ण उत्तर बिहार में काफी नुकसान हुआ था, जिसकी चपेट में हमारा घर भी था | परिस्थितिवश मुझे नौंवी कक्षा में पढ़ायी छोड़ देनी पड़ी |किसी मित्र की सलाह से मैं नौकरी ढूँढ़ने के लिए दिल्ली गया लेकिन वहाँ भी निराशा ही हाथ लगी |मैं दो दिन से भूखा तो था ही, ऊपर से नौकरी की चिंता |अतः आत्महत्या का विचार करके रेलवे स्टेशन की ओर चल पड़ा |रानीबाग बाजार में एक दुकान पर पूज्यश्री का सत्साहित्य, कैसेट आदि रखा हुआ था एवं पूज्यश्री की बड़े आकार की तस्वीर भी टँगी थी |पूज्यश्री की हँसमुख एवं आशीर्वाद की मुद्रावाली उस तस्वीर पर मेरी नजर पड़ी तो १० मिनट तक मैं वहीं सड़क पर से ही खड़े-खड़े उसे देखता रहा |उस वक्त न जाने मुझे क्या मिल गया ! मैं काम भले मजदूरी का ही करता हूँ लेकिन तबसे लेकर आज तक मेरे चित्त में बड़ी प्रसन्नता बनी हुई है |न जाने मेरी जिन्दगी की क्या दशा होती अगर पूज्य बापूजी की 'युवाधन सुरक्षा', 'ईश्वर की ओर', 'निश्चिन्त जीवन' पुस्तकें और 'ऋषि प्रसाद' पत्रिका हाथ न लगती ! पूज्यश्री की तस्वीर से मिली प्रेरणा एवं उनके सत्साहित्य ने मेरी डूबती नैया को मानो, मझदार से बचा लिया |धनभागी है साहित्य की सेवा करने वाले ! जिन्होंने मुझे आत्महत्या के पाप से बचाया |

-महेश शाह,

नारायणपुर, दुमरा, जि. सीतामढ़ी (बिहार)

(अनुक्रम) पावन उदगार

नेत्रबिंदु का चमत्कार

मेरा सौभाग्य है कि मुझे 'संतकृपा नेत्रबिंदु' (आई ड्रॉप्स) का चमत्कार देखने को मिला | एक संत बाबा शिवरामदास उम्र ८० वर्ष, गीता कुटिर, तपोवन झाड़ी, सप्तसरोवर, हरिद्वार में रहते हैं |उनकी दाहिनी आँख के सफेद मोतिये का ऑपरेशन शाँतिकुंज हरिद्वार आयोजित कैम्प में हुआ |केस बिगड़ गया और काल मोतिया बन गया |दर्द रहने लगा और रोशनी घटने लगी | दोबारा भूमानन्द नेत्र चिकित्सालय में ऑपरेशन हुआ |एब्सल्यूट ग्लूकोमा बताते हुए कहा कि ऑपरेशन से सिरदर्द ठीक हो जायेगा पर रोशनी जाती रहेगी |परंतु अब वे बाबा संत श्री आसारामजी आश्रम द्वार निर्मित 'संतकृपा नेत्रबिंदु' सुबह-शाम डाल रहे हैं |मैंने उनके नेत्रों का परीक्षण किया |उनकी दाहिनी आँख में उँगली गिनने लायक रोशनी वापस आ गयी है |काले मोतिये का प्रेशर नॉर्मल है |कोर्निया में सूजन नहीं है |वे काफी संतुष्ट हैं |वे बताते हैं : 'आँख पहले लाल रहती थी परंतु अब नहीं है |आश्रम के 'नेत्रबिंदु' से कल्पनातीत लाभ हुआ |' बायीं आँख में भी उन्हें सफेद मोतिया बताया गया था और संशय था कि शायद काला मोतिया भी है | पर आज बायीं आँख भी ठीक है और दोनों आँखों का प्रेशर भी नॉर्मल है |सफेद मोतिया नहीं है और रोशनी काफी अच्छी है |यह 'संतकृपा नेत्रबंदु' का विलक्षण प्रभाव देखकर मैं भी अपने मरीजों को इसका उपयोग करने की सलाह दूँगा |

-डॉ. अनन्त कुमार अग्रवाल (नेत्ररोग विशेषज्ञ)

एम.बी.बी.एस., एम.एस. (नेत्र), डी.ओ.एम.एस. (आई),

सीतापुर, सहारनपुर (उ.प्र.)

(अनुक्रम) पावन उदगार

मंत्र से लाभ

मेरी माँ की हालत अचानक पागल जैसी हो गयी थी मानों, कोई भूत-प्रेत-डाकिनी या आसुरी तत्व उनमें घुस गया |मैं बहुत चिंतित हो गया एवं एक साधिका बहन को फोन किया | उन्होंने भूत-प्रेत भगाने का मंत्र बताया, जिसका वर्णन आश्रम से प्रकाशित 'आरोग्यनिधि' पुस्तक में भी है |वह मंत्र इस प्रकार है:

ॐ नमो भगवते रूरू भैरवाय भूतप्रेत क्षय कुरू कुरू हूं फट स्वाहा |

इस मंत्र का पानी में निहारकर १०८ बार जप किया और वही पानी माँ को पिला दिया | तुरंत ही माँ शांति से सो गयीं |दूसरे दिन भी इस मंत्र की पाँच माला करके माँ को वह जल पिलाया तो माँ बिल्कुल ठीक हो गयीं |हे मेरे साधक भाई-बहनो ! भूत-प्रेत भगाने के लिए 'अला बाँधूँ... बला बाँधूँ... ' ऐसा करके झाड़-फूँक करनेवालों के चक्कर में पड़ने की जरूरत नहीं हैं | इसके लिए तो पूज्य बापूजी का मंत्र ही तारणहार है |पूज्य बापूजी के श्रीचरणों में कोटि-कोटि प्रणाम !

-चंपकभाई एन. पटेल (अमेरिका)

(अनुक्रम) पावन उदगार

काम क्रोध पर विजय पायी

एक दिन 'मुंबई मेल' में टिकट चेकिंग करते हुए मैं वातानुकूलित बोगी में पहुँचा |देखा तो मखमल की गद्दी पर टाट का आसन बिछाकर स्वामी श्री लीलाशाहजी महाराज समाधिस्थ हैं | मुझे आश्चर्य हुआ कि जिन प्रथम श्रेणी की वातानुकूलित बोगियों में राजा-महाराजा यात्रा करते हैं ऐसी बोगी और तीसरी श्रेणी की बोगी के बीच इन संत को कोई भेद नहीं लगता |ऐसी बोगियों में भी वे समाधिस्थ होते है यह देखकर सिर झुक जाता है |मैंने पूज्य महाराजश्री को प्रणाम करके कहा : "आप जैसे संतों के लिए तो सब एक समान है |हर हाल में एकरस रहकर आप मुक्ति का आनंद ले सकते हैं |लेकिन हमारे जैसे ग्रहस्थों को क्या करना चाहिए ताकि हम भी आप जैसी समता बनाये रखकर जीवन जी सकें ?" पूज्य महाराजजी ने कहा : "काम और क्रोध को तू छोड़ दे तो तू भी जीवन्मुक्त हो सकता है |जहाँ राम तहँ नहीं काम, जहाँ काम तहँ नहीं राम |... और क्रोध तो, भाई ! भस्मासुर है |वह तमाम पुण्य को जलाकर भस्म कर देता है, अंतःकरण को मलिन कर देता है |" मैंने कहा : " प्रभु ! अगर आपकी कृपा होगी तो मैं काम-क्रोध को छोड़ पाऊँगा |" पूज्य महाराजजी ने कहा : "भाई ! कृपा ऐसे थोड़े ही की जाती है ! संतकृपा के साथ तेरा पुरूषार्थ और दृढ़ता भी चाहिए |पहले तू प्रतिज्ञा कर कि तू जीवनपर्यन्त काम और क्रोध से दूर रहेगा... तो मैं तुझे आशीर्वाद दूँ |" मैंने कहा : "महाराजजी मैं जीवनभर के लिए प्रतिज्ञा तो करूँ लेकिन उसका पालन न कर पाऊँ तो झूठा माना जाऊँगा |" पूज्य महाराजजी ने कहा : "अच्छा, पहले तू मेरे समक्ष आठ दिन के लिए प्रतिज्ञा कर |फिर प्रतिज्ञा को एक-एक दिन बढ़ते जाना |इस प्रकार तू उन बलाओं से बच सकेगा |है कबूल ?" मैंने हाथ जोड़कर कबूल

किया |पूज्य महाराजजी ने आशीर्वाद देकर दो-चार फूल प्रसाद में दिये |पूज्य महाराजजी ने मेरी जो दो कमजोरियाँ थीं उन पर ही सीधा हमला किया था |मुझे आश्चर्य हुआ कि अन्य कोई भी दुर्गुण छोड़ने का न कहकर इन दो दुर्गुणों के लिए ही उन्होंने प्रतिज्ञा क्यों करवायी ? बाद में मैं इस राज से अवगत हुआ |

दूसरे दिन मैं पैसेन्जर ट्रेन में कानपुर से आगे जा रहा था |सुबह के करीब नौ बजे थे | तीसरी श्रेणी की बोगी में जाकर मैंने यात्रियों के टिकट जाँचने का कार्य शुरू किया |सबसे पहले बर्थ पर सोये हुए एक यात्री के पास जाकर मैंने एक यात्री के पास जाकर मैंने टिकट दिखाने को कहा तो वह गुस्सा होकर मुझे कहने लगा : "अंधा है ? देखता नहीं कि मैं सो गया हूँ ? मुझे नींद से जगाने का तुझे क्या अधिकार है ? यह कोई रीत है टिकट के बारे में पूछने की ? ऐसी ही अक्ल है तेरी ?" ऐसा कुछ-का-कुछ वह बोलता ही गया... बोलता ही गया |मैं भी क्रोधाविष्ट होने लगा किंतु पूज्य महाराजजी के समक्ष ली हुई प्रतिज्ञा मुझे याद थी, अतः क्रोध को ऐसे पी गया मानों, विष की पुड़िया ! मैंने उसे कहा : "महाशय ! आप ठीक ही कहते हैं कि मुझे बोलने की अक्ल नहीं है, भान नहीं है |देखो, मेरे ये बाल धूप में सफेद हो गये हैं |आपमें बोलने की अक्ल अधिक है, नम्रता है तो कृपा करके सिखाओं कि टिकट के लिए मुझे किस प्रकार आपसे पूछना चाहिए |मैं लाचार हूँ कि 'डयूटी' के कारण मुझे टिकट चेक करना पड़ रहा है इसलिए मैं आपको कष्ट दे रहा हूँ|" ... और फ़िर मैंने खूब प्रेम से हाथ जोड़कर विनती की : "भैया ! कृपा करके कष्ट के लिए मुझे क्षमा करो |मुझे अपना टिकट दिखायेंगे ?" मेरी नम्रता देखकर वह लज्जित हो गया एवं तुरंत उठ बैठा |जल्दी-जल्दी नीचे उतरकर मुझसे क्षमा माँगते हुए कहने लगा :"मुझे माफ करना |मैं नींद में था |मैंने आपको पहचाना नहीं था |अब आप अपने मुँह से मुझे कहें कि आपने मुझे माफ़ किया ?" यह देखकर मुझे आनंद और संतोष हुआ |मैं सोचने लगा कि संतों की आज्ञा मानने में कितनी शक्ति और हित निहित है ! संतों की करुणा कैसा चमत्कारिक परिणाम लाती है ! वह व्यक्ति के प्राकृतिक स्वभाव को भी जड़-मूल से बदल सकती है |अन्यथा, मुझमें क्रोध को नियंत्रण में रखने की कोई शक्ति नहीं थी |मैं पूर्णतया असहाय था फिर भी मुझे महाराजजी की कृपा ने ही समर्थ बनाया |ऐसे संतों के श्रीचरणों में कोटि-कोटि नमस्कार !

-श्री रीजुमल,

रिटायर्ड टी.टी. आई., कानपुर

(अनुक्रम) पावन उदगार

जला हुआ कागज पूर्व रूप में

पूर्व रूप में एक बार परमहंस विशुद्धानंदजी से आनंदमयी माँ की निकटता पानेवाले सुप्रसिद्ध पंडित गोपीनाथ कविराज ने निवेदन किया: "तरणीकान्त ठाकुर को अलौकिक सिद्धि प्राप्त हुई है |वे बिना देखे या बिना छुए ही कागज में लिखी हुई बातें पढ़ लेते हैं |" गुरुदेव बोले :"तुम एक कागज पर कुछ लिखो और उसमें आग लगाकर जला दो |" कविराजजी ने कागज पर कुछ लिखा और पूरी तरह कागज जलाकर हवा में उड़ा दिया |उसके बाद गुरूदेव ने अपने तकिये के नीचे से वही कागज निकालकर कविराजजी के आगे रख दिया |यह देखकर उन्हें बड़ा आश्चर्य हुआ कि यह कागज वही था एवं जो उन्होंने लिखा था वह भी उस पर उन्हीं के सुलेख में लिखा था और साथ ही उसका उत्तर भी लिखा हुआ देखा |

जड़ता, पशुता और ईश्वरता का मेल हमारा शरीर है |जड़ शरीर को 'मैं-मेरा' मानने की वृत्ति जितनी मिटती है, पाशवी वासनाओं की गुलामी उतनी हटती है और हमारा ईश्वरीय अंश जितना अधिक विकसित होता है उतना ही योग-सामर्थ्य, ईश्वरीय सामर्थ्य प्रकट होता है |भारत के ऐसे कई भक्तों, संतों और योगियों के जीवन में ईश्वरीय सामर्थ्य देखा गया है, अनुभव किया गया है, उसके विषय में सुना गया है |धन्य हैं भारतभूमि में रहनेवाले... भारतीय संस्कृति में श्रद्धा-विश्वास रखनेवाले... अपने ईश्वरीय अंश को जगाने की सेवा-साधना करनेवाले ! स्वामी विशुद्धानंदजी वर्षों की एकांत साधना और वर्षों-वर्षों की गुरुसेवा से अपना देहाध्यास और पाशवी वासनाएँ मिटाकर अपने ईश्वरीय अंश को विकसित करनेवाले भारत के अनेक महापुरूषों में से थे |उनके जीवन की और भी अलौकिक घटनाओं का वर्णन आता है |ऐसे सत्पुरूषों के जीवन-चरित्र और उनके जीवन में घटित घटनाएँ पढ़ने-सुनने से हम लोग भी अपनी जड़ता एवं पशुता से ऊपर उठकर ईश्वरीय अंश को उभारने में उत्साहित होते है |बहुत ऊँचा काम है... बड़ी श्रद्धा, बड़ी समझ, बड़ा धैर्य चाहिए ईश्वरीय सामर्थ्य को पूर्ण रूप से विकसित करने में |

(अनुक्रम) पावन उदगार

नदी की धारा मुड़ गयी

आद्य शंकराचार्य की माता विशिष्टा देवी अपने कुलदेवता केशव की पूजा करने जाती थीं |वे पहले नदी में स्नान करतीं और फ़िर मंदिर में जाकर पूजन करतीं |एक दिन वे प्रातःकाल ही पूजन-सामग्री लेकर मंदिर की ओर गयीं, किंतु सायंकाल तक घर नहीं लौटीं |शंकराचार्य की आयु अभी सात-आठ वर्ष के मध्य में ही थी |वे ईश्वर के परम भक्त और निष्ठावान थे |सायंकाल

तक माता के वापस न लौटने पर आचार्य को बड़ी चिन्ता हुई और वे उन्हें खोजने के लिए निकल पड़े |मंदिर के निकट पहुँचकर उन्होंने माता को मार्ग में ही मूर्च्छित पड़े देखा |उन्होंने बहुत देर तक माता का उपचार किया तब वे होश में आ सकीं |नदी अधिक दूर थी |वहाँ तक पहुँचने में माता को बड़ा कष्ट होता था |आचार्य ने भगवान से मन-ही-मन प्रार्थना की कि "प्रभो ! किसी प्रकार नदी की धारा को मोड़ दो, जिससे कि माता निकट ही स्नान कर सकें |" वे इस प्रकार की प्रार्थना नित्य करने लगे |एक दिन उन्होंने देखा कि नदी की धारा किनारे की धरती को काटती-काटती मुड़ने लगी है तथा कुछ दिनों में ही वह आचार्य शंकर के घर के पास बहने लगी |इस घटना ने आचार्य का अलौकिक शक्तिसम्पन्न होना प्रसिद्ध कर दिया |

(अनुक्रम) पावन उदगार

सदगुरू-महिमा

गुरु बिनु भव निधि तरै न कोई |

जौं बरंचि संकर सम होई ||

-संत तुलसीदासजी

हरिहर आदिक जगत में पूज्यदेव जो कोय |

सदगुरू की पूजा किये सबकी पूजा होय ||

-निश्चलदासजी महाराज

सहजो कारज संसार को गुरू बिन होत नाँही |

हरि तो गुरू बिन क्या मिले, समझ ले मन माँही ||

-संत कबीरजी संत

सरनि जो जनु परै सो जनु उधरनहार |

संत की निंदा नानका बहुरि बहुरि अवतार ||

-गुरू नानक देवजी

"गुरूसेवा सब भाग्यों की जन्मभूमि है और वह शोकाकुल लोगों को ब्रह्ममय कर देती है |गुरुरूपी सूर्य अविद्यारूपी रात्रि का नाश करता है और ज्ञानाज्ञान रूपी सितारों का लोप करके बुद्धिमानों को आत्मबोध का सुदिन दिखाता है |"

-संत ज्ञानेश्वर महाराज

"सत्य के कंटकमय मार्ग में आपको गुरू के सिवाय और कोई मार्गदर्शन नहीं दे सकता |"

- स्वामी शिवानंद सरस्वती

"कितने ही राजा-महाराजा हो गये और होंगे, सायुज्य मुक्ति कोई नहीं दे सकता |सच्चे राजा-महाराज तो संत ही हैं |जो उनकी शरण जाता है वही सच्चा सुख और सायुज्य मुक्ति पाता है |"

-समर्थ श्री रामदास स्वामी

"मनुष्य चाहे कितना भी जप-तप करे, यम-नियमों का पालन करे परंतु जब तक सदगुरू की कृपादृष्टि नहीं मिलती तब तक सब व्यर्थ है |"

-स्वामी रामतीर्थ

प्लेटो कहते है कि : "सुकरात जैसे गुरू पाकर मैं धन्य हुआ |"

इमर्सन ने अपने गुरू थोरो से जो प्राप्त किया उसके महिमागान में वे भावविभोर हो जाते थे |

श्री रामकृष्ण परमहंस पूर्णता का अनुभव करानेवाले अपने सदगुरूदेव की प्रशंसा करते नहीं अघाते थे |

पूज्यपाद स्वामी श्री लीलाशाहजी महाराज भी अपने सदगुरूदेव की याद में स्नेह के आँसू बहाकर गदगद कंठ हो जाते थे |

पूज्य बापूजी भी अपने सदगुरूदेव की याद में कैसे हो जाते हैं यह तो देखते ही बनता है |अब हम उनकी याद में कैसे होते हैं यह प्रश्न है |बहिर्मुख निगुरे लोग कुछ भी कहें, साधक को अपने सदगुरू से क्या मिलता है इसे तो साधक ही जानते हैं |

(अनुक्रम) पावन उदगार

लेडी मार्टिन के सुहाग की रक्षा करने अफगानिस्तान में प्रकटे शिवजी

साधू संग संसार में, दुर्लभ मनुष्य शरीर |

सत्संग सवित तत्व है, त्रिविध ताप की पीर ||

मानव-देह मिलना दुर्लभ है और मिल भी जाय तो आधिदैविक, आधिभौतिक और आध्यात्मिक ये तीन ताप मनुष्य को तपाते रहते है |किंतु मनुष्य-देह में भी पवित्रता हो, सच्चाई हो, शुद्धता हो और साधु-संग मिल जाय तो ये त्रिविध ताप मिट जाते हैं |

सन १८७९ की बात है |भारत में ब्रिटिश शासन था, उन्हीं दिनों अंग्रेजों ने अफगानिस्तान पर आक्रमण कर दिया |इस युद्ध का संचालन आगर मालवा ब्रिटिश छावनी के लेफ़्टिनेंट कर्नल मार्टिन को सौंपा गया था |कर्नल मार्टिन समय-समय पर युद्ध-क्षेत्र से अपनी पत्नी को कुशलता के समाचार भेजता रहता था |युद्ध लंबा चला और अब तो संदेश आने भी बंद हो गये |लेडी मार्टिन को चिंता सताने लगी कि 'कहीं कुछ अनर्थ न हो गया हो, अफगानी सैनिकों ने मेरे पति को मार न डाला हो |कदाचित पति युद्ध में शहीद हो गये तो मैं जीकर क्या करूँगी ?'-यह सोचकर वह अनेक शंका-कुशंकाओं से घिरी रहती थी |चिन्तातुर बनी वह एक दिन घोड़े पर बैठकर घूमने जा रही थी |मार्ग में किसी मंदिर से आती हुई शंख व मंत्र ध्वनि ने उसे आकर्षित किया |वह एक पेड़ से अपना घोड़ा बाँधकर मंदिर में गयी |बैजनाथ महादेव के इस मंदिर में शिवपूजन में निमग्न पंडितों से उसने पूछा :"आप लोग क्या कर रहे हैं ?" एक व्रद्ध ब्राह्मण ने कहा : " हम भगवान शिव का पूजन कर रहे हैं |" लेडी मार्टिन : 'शिवपूजन की क्या महत्ता है ?' ब्राह्मण :'बेटी ! भगवान शिव तो औढरदानी हैं, भोलेनाथ हैं |अपने भक्तों के संकट-निवारण करने में वे तनिक भी देर नहीं करते हैं |भक्त उनके दरबार में जो भी मनोकामना लेकर के आता है, उसे वे शीघ्र पूरी करते हैं, किंतु बेटी ! तुम बहुत चिन्तित और उदास नजर आ रही हो ! क्या बात है ?" लेडी मार्टिन :" मेरे पतिदेव युद्ध में गये हैं और विगत कई दिनों से उनका कोई समाचार नहीं आया है |वे युद्ध में फँस गये हैं या मारे गये है, कुछ पता नहीं चल रहा |मैं उनकी ओर से बहुत चिन्तित हूँ |" इतना कहते हुए लेडी मार्टिन की आँखे नम हो गयीं |ब्राह्मण : "तुम चिन्ता मत करो, बेटी ! शिवजी का पूजन करो, उनसे प्रार्थना करो, लघुरूद्री करवाओ | भगवान शिव तुम्हारे पति का रक्षण अवश्य करेंगे |"

पंडितों की सलाह पर उसने वहाँ ग्यारह दिन का 'ॐ नमः शिवाय' मंत्र से लघुरूद्री अनुष्ठान प्रारंभ किया तथा प्रतिदिन भगवान शिव से अपने पति की रक्षा के लिए प्रार्थना करने लगी कि "हे भगवान शिव ! हे बैजनाथ महादेव ! यदि मेरे पति युद्ध से सकुशल लौट आये तो मैं आपका शिखरबंद मंदिर बनवाऊँगी |" लघुरूद्री की पूर्णाहुति के दिन भागता हुआ एक संदेशवाहक शिवमंदिर में आया और लेडी मार्टिन को एक लिफाफा दिया |उसने घबराते-घबराते वह लिफाफा खोला और पढ़ने लगी |

पत्र में उसके पति ने लिखा था :"हम युद्ध में रत थे और तुम तक संदेश भी भेजते रहे लेकिन

आक पठानी सेना ने घेर लिया |ब्रिटिश सेना कट मरती और मैं भी मर जाता |ऐसी विकट परिस्थिति में हम घिर गये थे कि प्राण बचाकर भागना भी अत्याधिक कठिन था |इतने में मैंने देखा कि युद्धभूमि में भारत के कोई एक योगी, जिनकी बड़ी लम्बी जटाएँ हैं, हाथ में तीन नोंकवाला एक हथियार (त्रिशूल) इतनी तीव्र गति से घुम रहा था कि पठान सैनिक उन्हें देखकर भागने लगे |उनकी कृपा से घेरे से हमें निकलकर पठानों पर वार करने का मौका मिल गया और हमारी हार की घड़ियाँ अचानक जीत में बदल गयीं |यह सब भारत के उन बाघाम्बरधारी एवं तीन नोंकवाला हथियार धारण किये हुए (त्रिशूलधारी) योगी के कारण ही सम्भव हुआ |उनके महातेजस्वी व्यक्तित्व के प्रभाव से देखते-ही-देखते अफगानिस्तान की पठानी सेना भाग खड़ी हुई और वे परम योगी मुझे हिम्मत देते हुए कहने लगे |घबराओं नहीं |मैं भगवान शिव हूँ तथा तुम्हारी पत्नी की पूजा से प्रसन्न होकर तुम्हारी रक्षा करने आया हूँ, उसके सुहाग की रक्षा करने आया हूँ |"

पत्र पढ़ते हुए लेडी मार्टिन की आँखों से अविरत अश्रुधारा बहती जा रही थी, उसका हृदय अहोभाव से भर गया और वह भगवान शिव की प्रतिमा के सम्मुख सिर रखकर प्रार्थना करते-करते रो पड़ी |कुछ सप्ताह बाद उसका पति कर्नल मार्टिन आगर छावनी लौटा |पत्नी ने उसे सारी बातें सुनाते हुए कहा : "आपके संदेश के अभाव में मैं चिन्तित हो उठी थी लेकिन ब्राह्मणों की सलाह से शिवपूजा में लग गयी और आपकी रक्षा के लिए भगवान शिव से प्रार्थना करने लगी |उन दुःखभंजक महादेव ने मेरी प्रार्थना सुनी और आपको सकुशल लौटा दिया |" अब तो पति-पत्नी दोनों ही नियमित रूप से बैजनाथ महादेव के मंदिर में पूजा-अर्चना करने लगे |अपनी पत्नी की इच्छा पर कर्नल मार्टिन मे सन १८८३ में पंद्रह हजार रूपये देकर बैजनाथ महादेव मंदिर का जीर्णोद्वार करवाया, जिसका शिलालेख आज भी आगर मालवा के इस मंदिर में लगा है |पूरे भारतभर में अंग्रेजों द्वार निर्मित यह एकमात्र हिन्दू मंदिर है |

यूरोप जाने से पूर्व लेडी मार्टिन ने पड़ितों से कहा : "हम अपने घर में भी भगवान शिव का मंदिर बनायेंगे तथा इन दुःख-निवारक देव की आजीवन पूजा करते रहेंगे |"

भगवान शिव में... भगवान कृष्ण में... माँ अम्बा में... आत्मवेत्ता सदगुरू में.. सत्ता तो एक ही है |आवश्यकता है अटल विश्वास की |एकलव्य ने गुरूमूर्ति में विश्वास कर वह प्राप्त कर लिया जो

अर्जुन को कठिन लगा |आरूणि, उपमन्यु, ध्रुव, प्रहलाद आदि अन्य सैकड़ों उदारहण हमारे सामने प्रत्यक्ष हैं |आज भी इस प्रकार का सहयोग हजारों भक्तों को, साधकों को भगवान व आत्मवेत्ता सदगुरूओं के द्वारा निरन्तर प्राप्त होता रहता है |आवश्यकता है तो बस, केवल विश्वास की |

(अनुक्रम) पावन उदगार

सुखपूर्वक प्रसवकारक मंत्र

पहला उपाय

"एं ह्रीं भगवति भगमालिनि चल चल भ्रामय भ्रामय पुष्पं विकासय विकासय स्वाहा |"

इस मंत्र द्वारा अभिमंत्रित दूध गर्भिणी स्त्री को पिलायें तो सुखपूर्वक प्रसव होगा |

दूसरा उपाय

गर्भिणी स्त्री स्वयं प्रसव के समय 'जम्भला-जम्भला' जप करे |

तीसरा उपाय

देशी गाय के गोबर का १२ से १५ मि.ली. रस 'ॐ नमो नारायणाय' मंत्र का २१ बार जप करके पीने से भी प्रसव-बाधाएँ दूर होंगी और बिना ऑपरेशन के प्रसव होगा |

प्रसुति के समय अमंगल की आशंका हो तो निम्न मंत्र का जप करें :

सर्वमंगल मांगल्ये शिवे सर्वार्थ साधिके |

शरण्ये त्र्यम्बके गौरी नारायणी नमोऽस्तुते ||

(दुर्गासप्तशती)

(अनुक्रम) पावन उदगार

सर्वांगीण विकास की कुंजियाँ

यादशक्ति बढ़ाने हेतुः प्रतिदिन 15 से 20 मि.ली. तुलसी रस व एक चम्मच च्यवनप्राश का थोड़ा सा घोल बना के सारस्वत्य मंत्र अथवा गुरुमंत्र जप कर पीयें। 40 दिन में चमत्कारिक लाभ होगा।

भोजन के बाद एक लड्डू चबा-चबाकर खायें।

100 ग्राम सौंफ, 100 ग्राम बादाम 200 ग्राम मिश्री तीनों को कूटकर मिला लें। सुबह यह मिश्रण 3 से 5 ग्राम चबा-चबाकर खायें, ऊपर से दूध पी लें। (दूध के साथ भी ले सकते हैं)। इससे भी यादशक्ति बढ़ेगी।

पढ़ा हुआ पाठ याद रहे, इस हेतुः अध्ययन के समय पूर्व या उत्तर की ओर मुँह करके सीधे बैठें।

सारस्वत्य मंत्र का जप करके, फिर जीभ की नोक को तालू में लगाकर पढ़ें।

अध्ययन के बीच-बीच में अंत में शांत हों और पढ़े हुए का मनन करें। ॐ शांति... राम..राम.. या गुरुमंत्र का स्मरण करके शांत हों।

कद बढ़ाने हेतुः प्रातःकाल दौड़ लगायें, पुल-अप्स व ताड़ासन करें तथा 2 काली मिर्च के टुकड़े करके मक्खन में मिलाकर निगल जायें। देशी गाय का दूध कदवृद्धि में विशेष सहायक है।

शरीरपुष्टि हेतुः भोजन के पहले हरड़ चूसें व भोजन के साथ भी खायें।

रात्रि में एक गिलास पानी में एक नींबू निचोड़कर उसमें दो किशमिश भिगो दें। सुबह पानी छानकर पी जायें व किशमिश चबाकर खा लें।

नेत्रज्योति बढ़ाने हेतुः सौंफ व मिश्री 1-1 चम्मच मिलाकर रात को सोते समय खायें। यह प्रयोग नियमित रूप से 5-6 माह तक करें।

नेत्ररोगों से रक्षा हेतुः पैरों के तलुवों व अँगूठों की सरसों के तेल से मालिश करें। **ॐ अरुणाय हूँ फट् स्वाहा।** इसे जपते हुए आँखें धोने से अर्थात आँखों में धीरे-धीरे पानी छाँटने से आँखों की असह्य पीड़ा मिटती है।

डरावने, बुरे स्वप्नों से बचाव हेतुः ॐ हरये नमः। मंत्र जपते हुए सोयें। सिरहाने आश्रम की निःशुल्क प्रसादी 'ग्रहदोष-बाधा निवारक यंत्र' रख दें।

दुःख मुसीबतें एवं ग्रहबाधा निवारण हेतुः जन्मदिवस के अवसर पर महामृत्युञ्जय मंत्र का जप करते हुए घी, दूध, शहद और दूर्वा घास के मिश्रण की आहूतियाँ डालते हुए हवन करें। इससे जीवन में दुःख आदि का प्रभाव शांत हो जायेगा व नया उत्साह प्राप्त होगा।

घर में सुख, स्वास्थय व शांति हेतुः रोज प्रातः व सांय देशी गाय के गोबर से बने कण्डे का एक छोटा टुकड़ा जला लें उस पर देशी गौघृत मिश्रित चावल के कुछ दाने डाल दें ताकि वे जल जायें। इससे घर में स्वास्थ्य व शांति बनी रहती है तथा वास्तुदोषों का निवारण होता है।

आध्यात्मिक उन्नति हेतुः चलते फिरते, दैनिक कार्य करते हुए भगवन्नाम का जप, सब में भगवन्नाम, हर दो कार्यों के बीच थोड़ा शांत होना, सबकी भलाई में अपना भला मानना, मन के विचारों पर निगरानी रखना, आदरपूर्वक सत्संग व स्वाध्याय करना आदि शीघ्र आध्यात्मिक उन्नति के उपाय हैं।

(अनुक्रम) पावन उदगार

ॐॐॐॐॐॐॐॐॐॐॐॐॐॐॐॐॐॐ

प्रातः स्मरणीय परम पूज्य

संत श्री आसारामजी बापू

के सत्संग प्रवचनों में से नवनीत

ईश्वर की ओर

ईश्वर की ओर

मोहनिशा से जागो

केवल निधि

ज्ञानयोग

ज्ञानगोष्ठी

दत्त और सिद्ध का संवाद

चिन्तन कणिका

प्रार्थना

ईश्वर की ओर

(मार्च 1982, में आश्रम में चेटिचंड, चैत शुक्ल दूज का ध्यान योग शिविर चल रहा है । प्रात: काल में साधक भाई बहन पूज्य श्री के मधुर और पावन सान्निध्य में ध्यान कर रहे हैं । पूज्य श्री उन्हें ध्यान द्वारा जीवन और मृत्यु की गहरी सतहों में उतार रहें हैं |जीवन के गुप्त रहस्यों का अनुभव करा रहे हैं । साधक लोग ध्यान में पूज्यश्री की धीर, गम्भीर, मधुर वाणी के तंतु के सहारे अपने अन्तर में उतरते जा रहे हैं । पूज्य श्री कह रहे हैं:)

इन्द्रियार्थेषु वैराग्यं अनहंकार एव च ।

जन्ममृत्युजराव्याधिदु:खदोषानुदर्शन्म्॥

'इन्द्रिय विषयों में विरक्त, अहंकार का अभाव, जन्म, मृत्यु, जरा और रोग आदि में दु:ख और दोषों को देखना (यह ज्ञान है) ।'

आज तक कई जन्मों के कुटुम्ब और परिवार तुमने सजाये धजाये । मृत्यु के एक झटके से वे सब छुट गये । अत: अभी से कुटुम्ब का मोह मन ही मन हटा दो ।

यदि शरीर की इज्ज्त आबरु की इच्छा है, शरीर के मान मरतबे की इच्छा है तो वह आध्यात्मिक राह में बड़ी रुकावट हो जायेगी । फेंक दो शरीर की ममता को । निर्दोष बालक जैसे हो जाओ ।

इस शरीर को बहुत सँभाला । कई बार इसको नहलाया, कई बार खिलाया पिलाया, कई बार घुमाया, लेकिन... लेकिन यह शरीर सदा फरियाद करता ही रहा । कभी बीमारी कभी अनिद्रा कभी जोड़ों में दर्द कभी सिर में दर्द, कभी पचना कभी न पचना । शरीर की गुलामी बहुत कर ली ।

मन ही मन अब शरीर की यात्रा कर लो पूरी । शरीर को कब तक मैं मानते रहोगे बाबा...!

अब दृढ़तापूर्वक मन से ही अनुभव करते चलो कि तुम्हारा शरीर दरिया के किनारे घूमने गया । बेंच पर बैठा । सागर के सौन्दर्य को निहार रहा है । आ गया कोई आखिरी झटका । तुम्हारी गरदन झुक गयी । तुम मर गये...

घर पर ही सिरदर्द हुआ या पेट में कुछ गड़बड़ हुई, बुखार आया और तुम मर गये...

तुम लिखते-लिखते अचानक हक्के बक्के हो गये । हो गया हार्टफेल । तुम मर गये...

तुम पूजा करते करते, अगरबत्ती करते करते एकदम सो गये । आवाज लगायी मित्रों को , कुटुम्बियों को, पत्नी को । वे लोग आये । पूछा: क्या हुआ... क्या हुआ? कुछ ही मिन्टों में तुम चल बसे...

तुम रास्ते पर चल रहे थे । अचानक कोई घटना घटी, दुर्घटना हुई और तुम मर गये...

निश्चित ही कुछ न कुछ निमित्त बन जायेगा तुम्हारी मौत का । तुमको पता भी न चलेगा । अत: चलने से पहले एक बार चलकर देखो । मरने से पहले एक बार मरकर देखो । बिखरने से पहले एक बार बिखरकर देखो ।

दृढ़तापूर्वक निश्चय करो कि तुम्हारी जो विशाल काया है, जिसे तुम नाम और रुप से 'मैं' करके सँभाल रहे हो उस काया का, अपने देह का अध्यास आज तोड़ना है । साधना के आखिरी शिखर पर पँहुचने के लिए यह आखिरी अड़चन है । इस देह की ममता से पार होना पड़ेगा । जब तक यह देह की ममता रहेगी तब तक किये हुए कर्म तुम्हारे लिए बंधन बने रहेंगे । जब तक देह में

आसक्ति बनी रहेगी तब तक विकार तुम्हारा पीछा न छोड़ेगा । चाहे तुम लाख उपाय कर लो लेकिन जब तक देहाध्यास बना रहेगा तब तक प्रभु के गीत नहीं गूँज पायेंगे । जब तक तुम अपने को देह मानते रहोगे तब तक ब्रह्म-साक्षात्कार न हो पायेगा । तुम अपने को हड्डी, मांस, त्वचा, रक्त, मलमूत्र, विष्टा का थैला मानते रहोगे तब तक दुर्भाग्य से पिण्ड न छूटेगा । बड़े से बड़ा दुर्भाग्य है जन्म लेना और मरना । हजार हजार सुविधाओं के बीच कोई जन्म ले, फर्क क्या पड़ता है? दु:ख झेलने ही पड़ते हैं उस बेचारे को ।

हृदयपूर्वक ईमानदारी से प्रभु को प्रार्थना करो कि:

'हे प्रभु ! हे दया के सागर ! तेरे द्वार पर आये हैं । तेरे पास कोई कमी नहीं । तू हमें बल दे, तू हमें हिम्मत दे कि तेरे मार्ग पर कदम रखे हैं तो पँहुचकर ही रहें । हे मेरे प्रभु ! देह की ममता को तोड़कर तेरे साथ अपने दिल को जोड़ लें ।'

आज तक अगले कई जन्मों में तुम्हारे कई पिता रहे होंगे, माताएँ रही होंगी, कई नाते रिश्तेवाले रहे होंगे । उसके पहले भी कोई रहे होंगे । तुम्हारा लगाव देह के साथ जितना प्रगाढ़ होगा उतना ये नाते रिश्तों का बोझ तुम्हारे पर बना रहेगा । देह का लगाव जितना कम होगा उतना बोझ हल्का होगा । भीतर से देह की अहंता टूटी तो बाहर की ममता तुम्हें फँसाने में समर्थ नहीं हो सकती ।

भीतर से देह की आसाक्ति टूट गयी तो बाहर की ममता तुम्हारे लिए खेल बन जायेगी । तुम्हारे जीवन से फिर जीवनमुक्ति के गीत निकलेंगे ।

जीवन्मुक्त पुरुष सबमें होते हुए, सब करते हुए भी सुखपूर्वक जीते हैं, सुखपूर्वक खाते पीते हैं, सुखपूर्वक आते जाते हैं, सुखपूर्वक स्वस्वरुप में समाते हैं ।

केवल ममता हटाना है । देहाध्यास हट गया तो ममता भी हट गई । देह की अहंता को हटाने के लिए आज स्मशानयात्रा कर लो । जीते जी मर लो जरा सा । डरना मत । आज मौत को बुलाओ: 'हे मौत ! तू इस शरीर पर आज उतर ।'

कल्पना करो कि तुम्हारे शरीर पर आज मौत उतर रही है । तुम्हारा शरीर ढीला हो गया । किसी निमित्त से तुम्हारे प्राण निकल गये । तुम्हारा शव पड़ा है । लोग जिसको आज तक 'फलाना भाई... फलाना सेठ... फलाना साहब ...' कहते थे, उसके प्राण पखेरु आज उड़ गये । अब वह लोगों की नजरों में मुर्दा होकर पड़ा है । हकीम डॉक्टरों ने हाथ धो लिये हैं । जिसको तुम इतना पालते पोसते थे, जिसकी इज्जत आबरु को सँबालने में व्यस्त थे, वह शरीर आज मरा पड़ा है सामने । तुम उसे देख रहे हो । भीड़ इकठ्ठी हो गयी । कोई सचमुच में आँसू बहा रहा है, कोई झूठमूठ का रो रहा है ।

तुम चल बसे । शव पड़ा है । लोग आये, मित्र आये, पड़ोसी आये, साथी आये, स्नेही आये, टेलिफोन की घण्टियाँ खटख़टायी जा रही हैं, टेलिग्राम दिये जा रहे हैं । मृत्यु होने पर जो होना चाहिए वह सब किया जा रहा है ।

यह आखिरी ममता है देह की, जिसको पार किए बिना कोई योगी सिद्ध नहीं बन सकता, कोई साधक ठीक से साधना नहीं कर सकता, ठीक से सौभाग्य को उपलब्ध नहीं हो सकता । यह अंतिम अड़चन है । उसे हटाओ ।

मैं अरु मोर तोर की माया ।

बश कर दीन्हीं जीवन काया॥

तुम्हारा शरीर गिर गया, ढह गया । हो गया 'रामनाम सत है' । तुम मर गये । लोग इकट्ठे हो गये । अर्थी के लिए बाँस मँगवाये जा रहे हैं । तुम्हें नहलाने के लिए घर के अंदर ले जा रहे हैं । लोगो ने उठाया । तुम्हारी गरदन झुक गयी । हाथ पैर लथड़ रहे हैं । लोग तुम्हें सँभालकर ले

जा रहे हैं । एक बड़े थाल में शव को नहलाते हैं । लेकिन ...

लेकिन वह चमत्कार कहाँ... ? वह प्रकाश कहाँ... ? वह चेतना कहाँ... ?

जिस शरीर ने कितना कितना कमाया, कितना कितना खाया, जिसको कितना कितना सजाया, कितना कितना दिखाया, वह शरीर आज शव हो गया । एक श्वास लेना आज उसके बस की बात नहीं । मित्र को धन्यवाद देना उसके हाथ की बात नहीं । एक संत फकीर को हाथ जोड़ना उसके बस की बात नहीं ।

आज वह पराश्रित शरीर बेचारा, शव बेचारा चला कूच करके इस जँहा से । जिस पर इतने 'टेन्शन (तनाव) थे, जिस जीवन के लिए इतना खिंचाव तनाव था उस जीवन की यह हालत ? जिस शरीर के लिए इतने पाप और सन्ताप सहे वह शरीर आज इस परिस्थिति में पड़ा है ! देख लो जरा मन की आँख से अपने शरीर की हालत । लाचार पड़ा है । आज तक जो 'मैं ... मैं ...' कर रहा था, अपने को उचित समझ रहा था, सयाना समझ रहा था, चतुर समझ रहा था, देख लो उस चतुर की हालत । पूरी चतुराई खाक में मिल गई । पूरा **known unknown**(ज्ञात अज्ञात) हो गया । पूरा ज्ञान एक झटके में समाप्त हो गया। सब नाते और रिश्ते टूट गये । धन और परिवार पराया हो गया ।

जिनके लिए तुम रात्रियाँ जगे थे, जिनके लिए तुमने मस्तक पर बोझ उठाया था वे सब अब पराये हो गये बाबा... ! जिनके लिए तुमने पीड़ाएँ सहीं , वे सब तुम्हारे कुछ नहीं रहे । तुम्हारे इस प्यारे शरीर की यह हालत ...!!

मित्रों के हाथ से तुम नहलाये जा रहे हो । शरीर पोंछा न पोंछा , तौलिया घुमाया न घुमाया और तुम्हें वस्त्र पहना दिये । फिर उसे उठाकर बाँसों पर सुलाते हैं । अब तुम्हारे शरीर की यह हालत ! जिसके लिए तुमने बड़ी बड़ी कमाइयाँ कीं, बड़ी बड़ी विधाएँ पढ़ीं, कई जगह लाचारियाँ कीं, तुच्छ जीवन के लिए गुलामी की, कईयों को समझाया, सँभाला, वह लाचार शरीर, प्राण पखेरु के निकल जाने से पड़ा है अर्थी पर ।

जीते जी मरने का अनुभव कर लो । तुम्हारा शरीर वैसे भी तो मरा हुआ है । इसमें रखा भी क्या है ?

अर्थी पर पड़े हुए शव पर लाल कपड़ा बाँधा जा रहा है । गिरती हुई गरदन को सँभाला जा रहा है । पैरों को अच्छी तरह रस्सी बाँधी जा रही है, कहीं रास्ते में मुर्दा गिर न जाए । गरदन के इर्दगिर्द भी रस्सी के चक्कर लगाये जा रहे हैं । पूरा शरीर लपेटा जा रहा है । अर्थी बनानेवाला बोल रहा है: 'तू उधर से खींच' दूसरा बोलता है : 'मैने खींचा है, तू गाँठ मार ।'

लेकिन यह गाँठ भी कब तक रहेगी ? रस्सियाँ भी कब तक रहेंगी ? अभी जल जाएँगी... और रस्सियों से बाँधा हुआ शव भी जलने को ही जा रहा है बाबा !

धिक्कार है इस नश्वर जीवन को ... ! धिक्कार है इस नश्वर देह की ममता को... ! धिक्कार है इस शरीर के अध्यास और अभिमान को...!

अर्थी को कसकर बाँधा जा रहा है । आज तक तुम्हारा नाम सेठ, साहब की लिस्ट (सूची) में था । अब वह मुर्दे की लिस्ट में आ गया । लोग कहते हैं : 'मुर्दे को बाँधो जल्दी से ।' अब ऐसा नहीं कहेंगे कि 'सेठ को, साहब को, मुनीम को, नौकर को, संत को, असंत को बाँधो...' पर कहेंगे, 'मुर्दे को बाँधो । '

हो गया तुम्हारे पूरे जीवन की उपलब्धियों का अंत । आज तक तुमने जो कमाया था वह तुम्हारा न रहा । आज तक तुमने जो जाना था वह मृत्यु के एक झटके में छूट गया । तुम्हारे 'इन्कमटेक्स' (आयकर) के कागजातों को, तुम्हारे प्रमोशन और रिटायरमेन्ट की बातों को, तुम्हारी उपलब्धि और अनुपलब्धियों को सदा के लिए अलविदा होना पड़ा ।

हाय रे हाय मनुष्य तेरा श्वास ! हाय रे हाय तेरी कल्पनाएँ ! हाय रे हाय तेरी नश्वरता ! हाय रे

हाय मनुष्य तेरी वासनाएँ ! आज तक इच्छाएँ कर रहा था कि इतना पाया है और इतना पाँऊगा, इतना जाना है और इतना जानूँगा, इतना को अपना बनाया है और इतनों को अपना बनाँऊगा, इतनों को सुधारा है, औरों को सुधारुँगा ।

अरे! तू अपने को मौत से तो बचा ! अपने को जन्म मरण से तो बचा ! देखें तेरी ताकत । देखें तेरी कारीगरी बाबा !

तुम्हारा शव बाँधा जा रहा है । तुम अर्थी के साथ एक हो गये हो । स्मशानयात्रा की तैयारी हो रही है । लोग रो रहे हैं । चार लोगों ने तुम्हें उठाया और घर के बाहर तुम्हें ले जा रहे हैं । पीछे-पीछे अन्य सब लोग चल रहे हैं ।

कोई स्नेहपूर्वक आया है, कोई मात्र दिखावा करने आये है । कोई निभाने आये हैं कि समाज में बैठे हैं तो...

दस पाँच आदमी सेवा के हेतु आये हैं । उन लोगों को पता नहीं के बेटे ! तुम्हारी भी यही हालत होगी । अपने को कब तक अच्छा दिखाओगे ? अपने को समाज में कब तक 'सेट' करते रहोगे ? सेट करना ही है तो अपने को परमात्मा में 'सेट' क्यों नहीं करते भैया ?

दूसरों की शवयात्राओं में जाने का नाटक करते हो ? ईमानदारी से शवयात्राओं में जाया करो । अपने मन को समझाया करो कि तेरी भी यही हालत होनेवाली है । तू भी इसी प्रकार उठनेवाला है, इसीप्रकार जलनेवाला है । बेईमान मन ! तू अर्थी में भी ईमानदारी नहीं रखता ? जल्दी करवा रहा है ? घड़ी देख रहा है ? 'आफिस जाना है... दुकान पर जाना है...' अरे ! आखिर में तो स्मशान में जाना है ऐसा भी तू समझ ले । आफिस जा, दुकान पर जा, सिनेमा में जा, कहीं भी जा लेकिन आखिर तो स्मशान में ही जाना है । तू बाहर कितना जाएगा ?

ऐ पागल इन्सान ! ऐ माया के खिलौने ! सदियों से माया तुझे नचाती आयी है । अगर तू ईश्वर के लिए न नाचा, परमात्मा के लिए न नाचा तो माया तेरे को नचाती रहेगी । तू प्रभुप्राप्ति के लिए न नाचा तो माया तुझे न जाने कैसी कैसी योनियों में नचायेगी ! कहीं बन्दर का शरीर मिल जायगा तो कहीं रीछ का, कहीं गंधर्व का शरीर मिल जाएगा तो कहीं किन्नर का । फिर उन शरीरों को तू अपना मानेगा । किसी को अपनी माँ मानेगा तो किसी को बाप, किसी को बेटा मानेगा तो किसी को बेटी, किसी को चाचा मानेगा तो किसी को चाची, उन सबको अपना बनायेगा । फिर वहाँ भी एक झटका आयेगा मौत का... और उन सबको भी छोड़ना पड़ेगा, पराया बनना पड़ेगा । तू ऐसी यात्राएँ कितने युगों से करता आया है रे ? ऐसे नाते रिश्ते तू कितने समय से बनाता आया है ?

'मेरे पुत्र की शादी हो जाय... बहू मेरे कहने में चले... मेरा नौकर वफादार रहे... दोस्तों का प्यार बना रहे...' यह सब ऐसा हो भी गया तो आखिर कब तक ?' प्रमोशन हो जाए... हो गया । फिर क्या ? शादी हो जाए... हो गई शादी । फिर क्या ? बच्चे हो जायें ... हो गये बच्चे भी । फिर क्या करोगे ? आखिर में तुम भी इसी प्रकार अर्थी में बाँधे जाओगे । इसी प्रकार कन्धों पर उठाये जाओगे । तुम्हारे देह की हालत जो सचमुच होनेवाली है उसे देख लो । इस सनातन सत्य से कोई बच नहीं सकता । तुम्हारे लाखों रुपये तुम्हारी सहायता नहीं कर सकते । तुम्हारे लाखों परिचय तुम्हें बचा नहीं सकते । इस घटना से तुम्हें गुजरना ही होगा । अन्य सब घटनाओं से तुम बच सकते हो लेकिन इस घटना से बचानेवाला आज तक पृथ्वी पर न कोई है, न हो पाएगा । अत: इस अनिवार्य मौत को तुम अभी से ज्ञान की आँख द्वारा जरा निहार लो ।

तुम्हारी प्राणहीन देह को अर्थी में बाँधकर लोग ले जा रहे हैं स्मशान की ओर । लोगों की आँखो में आँसू हैं । लेकिन आँसू बहानेवाले भी सब इसी प्रकार जानेवाले हैं । आँसू बहाने से जान न छूटेगी । आँसू रोकने से भी जान न छूटेगी । शव को देखकर भाग जाने से भी जान न छूटेगी । शव को लिपट जाने से भी जान न छूटेगी । जान तो तुम्हारी तब छूटेगी जब तुम्हें आत्म साक्षात्कार होगा । जान तो तुम्हारी तब छूटेगी जब संत का कृपा प्रसाद तुम्हें पच जाएगा । जान तुम्हारी तब छूटेगी जब ईश्वर के साथ तुम्हारी एकता हो जाएगी ।

भैया ! तुम इस मौत की दुर्घटना से कभी नहीं बच सकते । इस कमनसीबी से आज तक कोई

नहीं बच सका ।

आया है सो जाएगा राजा रंक फकीर ।

किसीकी अर्थी के साथ 50 आदमी हों या 500 आदमी हों, किसीकी अर्थी के साथ 5000 आदमी हो या मात्र मात्रात्मक आदमी हों, इससे फर्क क्या पड़ता है ? आखिर तो वह अर्थी अर्थी है, शव शव ही हैं ।

तुम्हारा शव उठाया जा रहा है । किसीने उस पर गुलाल छिड़का है, किसीने गेंदे के फूल रख दिये हैं । किसीने उसे मालाँए पहना दी हैं । कोई तुमसे बहुत निभा रहा है तो तुम पर इत्र छिड़क रहा है, स्प्रे कर रहा है । परन्तु अब क्या फर्क पड़ता है इत्र से ? स्प्रे तुम्हें क्या काम देगी बाबा... ?

शव पर चाहे ईंट पत्थर डाल दो चाहे सुवर्ण की इमारत खड़ी कर दो, चाहे फूल चढ़ा दो, चाहे हीरे जवाहरात न्योछावर कर दो, फर्क क्या पड़ता है ?

घर से बाहर अर्थी जा रही है । लोगों ने अर्थी को घेरा है । चार लोगों ने उठाया है, चार लोग साथ में है । राम... बोलो भाई राम ... । तुम्हारी यात्रा हो रही है । उस घर से तुम विदा हो रहे हो जिसके लिए तुमने कितने कितने प्लान बनाये थे । उस द्वार से तुम सदा के लिए जा रहे हो बाबा ... ! जिस घर को बनाने के लिए तुमने ईश्वरीय घर का त्याग कर रखा था, जिस घर को निभाने के लिए तुमने अपने प्यारे के घर का तिरस्कार कर रखा था उस घर से तुम मुर्दे के रुप में सदा के लिए विदा हो रहे हो । घर की दीवारें चाहे रो रही हों चाहे हँस रही हों, लेकिन तुमको तो जाना ही पड़ता है ।

समझदार लोग कह रहे हैं कि शव को जल्दी ले जाओ । रात का मरा हुआ है ... इसे जल्दी ले

जाओ, नहीं तो इसके 'वायब्रेशन' ... इसके 'बैक्टीरिया' फैल जायेंगे, दूसरों को बीमारी हो जायेगी । अब तुम्हें घड़ीभर रखने की किसीमें हिम्मत नहीं । चार दिन सँभालने का किसीमें साहस नहीं । सब अपना अपना जीवन जीना चाहते हैं । तुम्हे निकालने के लिए उत्सुक हैं समझदार लोग । जल्दी करो । समय हो गया । कब पँहुचोगे ? जल्दी करो, जल्दी करो भाई... !

तुम घर से कब तक चिपके रहोगे ? आखिर तो लोग तुम्हें बाँध बूँधकर जल्दी से स्मशान ले जायेंगे ।

देह की ममता तोड़नी पड़ेगी । इस ममता के कारण तुम जकड़े गये हो पाश में । इस ममता के कारण तुम जन्म मरण के चक्कर में फँसे हो । यह ममता तुम्हें तोड़नी पड़ेगी । चाहे आज तोड़ो चाहे एक जन्म के बाद तोड़ो, चाहे एक हजार जन्मो के बाद तोड़ो ।

लोग तुम्हें कन्धे पर उठाये ले जा रहे हैं । तुमने खूब मक्खन घी खाया है, चरबी ज्यादा है तो लोगों को परिश्रम ज्यादा है । चरबी कम है तो लोगों को परिश्रम कम है । कुछ भी हो, तुम अब अर्थी पर आरुढ़ हो गये हो ।

यारों ! हम बेवफाई करेंगे।

तुम पैदल होगे हम कंधे चलेंगे ॥

हम पड़े रहेंगे तुम धकेलते चलोगे ।

यारों ! हम बेवफाई करेंगे ॥

तुम कन्धों पर चढ़कर जा रहे हो जँहा सभी को अवश्य जाना है । राम ... बोलो भाई ... राम । राम ...बोलो भाई ... राम । राम ... बोलो भाई राम ... ।

अर्थीवाले तेजी से भागे जा रहे हैं । पीछे 50-100 आदमी जा रहे हैं । वे आपस में बातचीत कर रहे हैं कि: 'भाई अच्छे थे, मालदार थे, सुखी थे ।' (अथवा) 'गरीब थे, दु:खी थे... बेचारे चल बसे... ।'

उन मूर्खों को पता नहीं कि वे भी ऐसे ही जायेंगे । वे तुम पर दया कर रहे हैं और अपने को शाश्वत् समझ रहे हैं नादान !

अर्थी सड़क पर आगे बढ़ रही है । बाजार के लोग बाजार की तरफ भागे जा रहे हैं । नौकरीवाले नौकरी की तरफ भागे जा रहे हैं । तुम्हारे शव पर किसीकी नजर पड़ती है वह 'ओ ... हो ...' करके फिर अपने काम की तरफ , अपने व्यवहार की तरफ भागा जा रहा है । उसको याद भी नहीं आती कि मैं भी इसी प्रकार जानेवाला हूँ, मैं भी मौत को उपलब्ध होनेवाला हूँ । साइकिल, स्कूटर, मोटर पर सवार लोग शवयात्रा को देखकर ' आहा... उहू...' करते आगे भागे जा रहे हैं, उस व्यवहार को सँभालने के लिए जिसे छोड़कर मरना है उन मूर्खो को । फिर भी सब उधर ही जा रहे हैं ।

अब तुम घर और स्मशान के बीच के रास्ते में हो । घर दूर सरकता जा रहा है... स्मशान पास आ रहा है । अर्थी स्मशान के नजदीक पहुँची । एक आदमी स्कूटर पर भागा और स्मशान में लकड़ियों के इन्तजाम में लगा । स्मशानवाले से कह रहा है: 'लकड़ी 8 मन तौलो, 10 मन तौलो, 16 मन तौलो । आदमी अच्छे थे इसलिए लकड़ी ज्यादा खर्च हो जाए तो कोई बात नहीं ।'

जैसी जिनकी हैसियत होती है वैसी लकड़ियाँ खरीदी जाती हैं, लेकिन अब शव 8 मन में जले या 16 मन में , इससे क्या फर्क पड़ता है ? धन ज्यादा है तो 10 मन लकड़ी ज्यादा आ जाएगी, धन कम है तो दो-पाँच मन लकड़ी कम आ जाएगी, क्या फर्क पड़ता है इससे ? तुम तो बाबा हो गये पराये ।

अब स्मशान बिल्कुल नजदीक आ गया है । शकुन करने के लिए वहाँ बच्चों के बाल बिखेरे जा रहे हैं । लड्डू लाये थे साथ में, वे कुत्तों को खिलाये जा रहे हैं ।

जिसको बहुत जल्दी है वे लोग वहीं से खिसक रहे हैं । बाकी के लोग तुम्हें वहाँ ले जाते हैं जहाँ सभी को जाना होता है ।

लकड़ियाँ जमानेवाले लकड़ियाँ जमा रहे हैं । दो-पाँच मन लकड़ियाँ बिछा दी गयीं । अब तुम्हारी अर्थी को वे उन लकड़ियों पर उतार रहे हैं । बोझा कंधों से उतरकर अब लकड़ियों पर पड़ रहा है । लेकिन वह बोझा भी कितनी देर वहाँ रहेगा ?

घास की गड्डियाँ, नारियल की जटायें, माचिस, घी और बत्ती सँभाली जा रही है । तुम्हारा अंतिम स्वागत करने के लिए ये चीजें यहाँ लायी गयी हैं । अंतिम अलविदा...

अपने शरीर को तुमने हलवा-पूरी खिलाकर पाला या रुखी सूखी रोटी खिलाकर टिकाया इससे अब क्या फर्क पड़ता है ? गहने पहनकर जिये या बिना गहनों के जिये, इससे क्या फर्क पड़ता है ? आखिर तो वह अग्नि के द्वारा ही सँभाला जायेगा । माचिस से तुम्हारा स्वागत होगा ।

इसी शरीर के लिए तुमने ताप संताप सहे । इसी शरीर के लिए तुमने लोगों के दिल दु:खाये । इसी शरीर के लिए तुमने लोकेश्वर से सम्बन्ध तोड़ा । लो, देखो, अब क्या हो रहा है ? चिता पर पड़ा है वह शरीर । उसके ऊपर बड़े बड़े लक्कड़ जमाये जा रहे हैं । जल्दी जल जाय इसलिए छोटी लकड़ियाँ साथ में रखी जा रहीं हैं ।

सब लकड़ियाँ रख दी गयीं । बीच में घास भी मिलाया गया है, ताकि कोई हिस्सा कच्चा न रह जाय । एक भी मांस की लोथ बच न जाय । एक आदमी देख रेख करता है, 'मैनेजमेन्ट' कर रहा है । वहाँ भी नेतागिरी नहीं छूटती । नेतागिरी की खोपड़ी उसकी चालू है । 'ऐसा करो ... वैसा करो ... ' वह सूचनायें दिये जा रहा है ।

ऐ चतुराई दिखानेवाले ! तुमको भी यही होनेवाला है । समझ लो भैया मेरे ! शव को जलाने में

भी अगवानी चाहिए ? कुछ मुख्य विशेषताँए चाहिए वहाँ भी ? वाह ...वाह ... !

हे अज्ञानी मनुष्य ! तू क्या क्या चाहता है ? हे नादान मनुष्य ! तूने क्या क्या किया है ? ईश्वर के सिवाय तूने कितने नाटक किये ? ईश्वर को छोड़कर तूने बहुत कुछ पकड़ा, मगर आज तक मृत्यु के एक झटके से सब कुछ हर बार छूटता आया है । हजारों बार तुझसे छुड़वाया गया है और इस जन्म में भी छुड़वाया जायेगा । तू जरा सावधान हो जा मेरे भैया !

अर्थी के ऊपर लकड़े 'फिट' हो गये हैं । तुम्हारे पुत्र, तुम्हारे स्नेही मन में कुछ भाव लाकर आँसू बहा रहे हैं । कुछ स्नेहियों के आँसू नहीं आते हैं इसलिए वे शरमिंदा हो रहे हैं । बाकी के लोग गपशप लगाने बैठ गये हैं । कोई बीड़ी पीने लगा है कोई स्नान करने बैठ गया है, कोई स्कूटर की सफाई कर रहा है । कोई अपने कपड़े बदलने में व्यस्त है । कोई दुकान जाने की चिन्ता में है, कोई बाहरगाँव जाने की चिन्ता में है । तुम्हारी चिन्ता कौन करता है ? कब तक करेंगे लोग तुम्हारी चिन्ता ? तुम्हें स्मशान तक पँहुचा दिया, चित्ता पर सुला दिया, दीया-सलाई दान में दी, बात पूरी हो गयी ।

लोग अब जाने को आतुर हैं । 'अब चिता को आग लगाओ । बहुत देर हो गई । जल्दी करो... जल्दी करो...' इशारे हो रहे हैं । वे ही तो मित्र थे जो तुमसे कह रहे थे : 'बैठे रहो, तुम मेरे साथ रहो, तुम्हारे बिना चैन नहीं पड़ता ।' अब वे ही कह रहे हैं : 'जल्दी करो... आग लगाओ... हम जायें... जान छोड़ो हमारी...'

वाह रे वाह संसार के मित्रों ! वाह रे वाह संसार के रिश्ते नाते । धन्यवाद... धन्यवाद... तुम्हारा पोल देख लिया ।

प्रभु को मित्र न बनाया तो यही हाल होनेवाला है । आज तक जो लोग तुम्हें सेठ, साहब कहते थे, जो तुम्हारे लंगोटिया यार थे वे ही जल्दी कर रहे हैं । उन लोगों को भूख लगी है । खुलकर तो नहीं बोलते लेकिन भीतर ही भीतर कह रहे हैं कि अब देर नहीं करो । जल्दी स्वर्ग पँहुचाओ

। सिर की ओर से आग लगाओ ताकि जल्दी स्वर्ग में जाय ।

वह तो क्या स्वर्ग में जाएगा ! उसके कर्म और मान्यताँए जैसी होंगी ऐसे स्वर्ग में वह जायेगा लेकिन तुम रोटी रुप स्वर्ग में जाओगे । तुमको यहाँ से छुट्टी मिल जायेगी ।

नारियल की जटाओं में घी डालते हैं । ज्योति जलाते हैं, तुम्हारे बुझे हुए जीवन को सदा के लिए नष्ट करने के हेतु ज्योति जलायी जा रही है । यह ब्रह्मज्ञानी गुरु की ज्योति नहीं है, यह सदगुरु की ज्योति नहीं है । यह तुम्हारे मित्रों की ज्योति है ।

जिनके लिए पूरा जीवन तुम खो रहे थे वे लोग तुम्हें यह ज्योति देंगे । जिनके पास जाने के लिए तुम्हारे पास समय न था उन सदगुरु की ज्योति तुमने देखी भी नहीं हैं बाबा !

लोग ज्योति जलाते हैं । सिर की तरफ लकड़ियों के बीच जो घास है उसे ज्योति का स्पर्श कराते हैं । घास की गड्डी को आग ने घेर लिया है । पैरों की तरफ भी एक आदमी आग लगा रहा है । भुभुक ... भुभुक ... अग्नि शुरु हो गयी । तुम्हारे ऊपर ढँके हुए कपड़े तक आग पँहुच गयी है । लकड़े धीरे धीरे आग पकड़ रहे हैं । अब तुम्हारे बस की बात नहीं कि आग बुझा लो । तुम्हारे मित्रों को जरुरत नहीं कि फायर ब्रिगेड बुला लें । अब डॉक्टर हकीमों को बुलाने का मौका नहीं है । जरुरत भी नहीं है । अब सबको घर जाना है, तुमको छोड़कर विदा होना है ।

धुआँ निकल रहा है । आग की ज्वालाएँ निकल रही हैं । जो ज्यादा स्नेही और साथी थे, वे भी आग की तपन से दूर भाग रहे हैं । चारों और अग्नि के बीच तुम्हें अकेला जलना पड़ रहा है । मित्र , स्नेही , सम्बन्धी बचपन के दोस्त सब दूर खिसक रहे हैं ।

अब ... कोई ... किसीका... नहीं । सारे सम्बन्ध ... ममता के सम्बन्ध । ममता में जरा सी आँच सहने की ताकत कहाँ है ? तुम्हारे नाते रिश्तों में मौत की एक चिनगारी सहने की ताकत कहाँ

है ? फिर भी तुम संबंध को पक्के किये जा रहे हो । तुम कितने भोले महेश्वर हो ! तुम कितने नादान हो ! अब देख लो जरा सा !

अर्थी को आग ने घेरा है । लोगों को भूख ने घेरा है । कुछ लोग वहाँ से खिसक गये । कुछ लोग बचे हैं । चिमटा लिए हुए स्मशान का एक नौकर भी है । वह सँभाल करता है कि लक्कड़ इधर उधर न चला जाए । लक्कड़ गिरता है तो फिर चढ़ाता है तुम्हारे सिर पर । अब आग ने ठीक से घेर लिया है । चारों तरफ भुभुक ... भुभुक ... आग जल रही है । सिर की तरफ आग ... पैरों की तरफ आग ... बाल तो ऐसे जले मानो घास जला । मुंडी को भी आग ने घेर लिया है । मुँह में घी डाला हुआ था, बत्ती डाली हुई थी, आँखों पर घी लगाया हुआ था ।

मत कर रे भाया गरव गुमान गुलाबी रंग उड़ी जावेलो ।

मत कर रे भाया गरव गुमान जवानीरो रंग उड़ी जावेलो ।

उड़ी जावेलो रे फीको पड़ी जावेलो रे काले मर जावेलो,

पाछो नहीं आवेलो... मत कर रे गरव ...

जोर रे जवानी थारी फिर को नी रे वेला...

इणने जातां नहीं लागे वार गुलाबी रंग उड़ी जावेलो॥

पतंगी रंग उड़ी जावेलो... मत कर रे गरव ॥

धन रे दौलत थारा माल खजाना रे...

छोड़ी जावेलो रे पलमां उड़ी जावेलो॥

पाछो नहीं आवेलो... मत कर रे गरव ।

कंई रे लायो ने कंई ले जावेलो भाया...

कंई कोनी हाले थारे साथ गुलाबी रंग उड़ी जावेलो॥

पतंगी रंग उड़ी जावेलो... मत कर रे गरव ॥

तुम्हारे सारे शरीर को स्मशान की आग ने घेर लिया है । एक ही क्षण में उसने अपने भोग का स्वीकार कर लिया है । सारा शरीर काला पड़ गया । कपड़े जल गये, कफन जल गया, चमड़ी जल गई । पैरों का हिस्सा नीचे लथड़ रहा है, गिर रहा है । चरबी को आग स्वाहा कर रही है । मांस के टुकड़े जलकर नीचे गिर रहे हैं । हाथ के पंजे और हड्डियाँ गिर रही हैं । खोपड़ी तड़ाका देने को उत्सुक हो रही हैं । उसको भी आग ने तपाया है । शव में फैले हुए 'बैक्टीरिया' तथा बचा हुआ गैस था वह सब जल गया ।

ऐ गाफिल ! न समझा था , मिला था तन रतन तुझको ।

मिलाया खाक में तुने, ऐ सजन ! क्या कहूँ तुझको ?

अपनी वजूदी हस्ती में तू इतना भूल मस्ताना ...

अपनी अहंता की मस्ती में तू इतना भूल मस्ताना ...

करना था किया वो न, लगी उल्टी लगन तुझको ॥

ऐ गाफिल .....।

जिन्होंके प्यार में हरदम मुस्तके दीवाना था...

जिन्होंके संग और साथ में भैया ! तू सदा विमोहित था...

आखिर वे ही जलाते हैं करेंगे या दफन तुझको ॥

ऐ गाफिल ...॥

शाही और गदाही क्या ? कफन किस्मत में आखिर ।

मिले या ना खबर पुख्ता ऐ कफन और वतन तुझको ॥

ऐ गाफिल .....।

पहनी हुई टेरीकोटन, पहने हुए गहने तेरे काम न आए । तेरे वे हाथ, तेरे वे पैर सदा के लिए अग्नि के ग्रास हो रहे हैं । लक्कड़ों के बीच से चरबी गिर रही है । वहाँ भी आग की लपटें उसे भस्म कर रही हैं । तुम्हारे पेट की चरबी सब जल गई । अब हड्डियाँ पसलियाँ एक एक होकर जुदा हो रही हैं ।

ओ... हो... कितना सँभाला था इस शरीर को ! कितना प्यारा था वह ! जरा सी किडनी बिगड़ गई तो अमेरिका तक की दौड़ थी । अब तो पूरी देह बिगड़ी जा रही है। कहाँ तक दौड़ोगे ? कब तक दौड़ोगे ? जरा सा पैर दुखता था, हाथ में चोट लगती थी तो स्पेश्यलिस्टों से घेरे जाते थे । अब कौन सा स्पेश्यलिस्ट यहाँ काम देगा ? ईश्वर के सिवाय कोई यहाँ सहाय न कर सकेगा । आत्मज्ञान के सिवाय इस मौत की आग से तुम्हें सदा के लिए बचाने का सामर्थ्य डॉक्टरों स्पेश्यलिस्टों के पास कहाँ है ? वे लोग खुद भी इस अवस्था में आनेवाले हैं । भले थोकबन्ध फीस ले लें, पर कब तक रखेंगे ? भले जाँच पड़ताल मात्र के लिये थप्पीबंद नोटों के बंडल ले लें, पर लेकर जायेंगे कहाँ ? उन्हें भी इसी अवस्था से गुजरना होगा ।

शाही और गदाही क्या? कफन किस्मत में आखिर ...

कर लो इकट्ठा । ले लो लम्बी चौड़ी फीस । लेकिन याद रखो : यह क्रूर मौत तुम्हें साम्यवादी बनाकर छोड़ देगी । सबको एक ही तरह से गुजारने का सामर्थ्य यदि किसीमें है तो मौत में है । मौत सबसे बड़ी साम्यवादी है । प्रकृति सच्ची साम्यवादी है ।

तुम्हारे शरीर का हाड़पिंजर भी अब बिखर रहा है । खोपड़ी टूटी । उसके पाँच सात टुकड़े हो गये । गिर रहे हैं इधर उधर । आ... हा... हा...हड्डी के टुकड़े किसके थे ? कोई साहब के थे या चपरासी के थे ? सेठ के थे या नौकर के थे ? सुखी आदमी के थे या दु:खी आदमी के थे ? भाई के थे या माई के थे ? कुछ पता नहीं चलता ।

अब आग धीरे-धीरे शमन को जा रही है । अधिकांश मित्र स्नान में लगे हैं । तैयारियाँ कर रहे हैं जाने की । कितने ही लोग बिखर गये । बाकी के लोग अब तुम्हारी आखिरी इजाजत ले रहे हैं । आग को जल की अंजलि देकर, आँखों में आँसू लेकर विदा हो रहे हैं ।

कह रहा है आसमाँ यह समाँ कुछ भी नहीं ।

रोती है शबनम कि नैरंगे जहाँ कुछ भी नहीं ॥

जिनके महलों में हजारों रंग के जलते थे फानूस ।

झाड़ उनकी कब्र पर है और निशाँ कुछ भी नहीं ॥

जिनकी नौबत से सदा गूँजते थे आसमाँ ।

दम बखुद है कब्र में अब हूँ न हाँ कुछ भी नहीं ॥

तख्तवालों का पता देते हैं तख्ते गौर के ।

खोज मिलता तक नहीं वादे अजां कुछ भी नहीं ॥

स्मशान में अब केवल अंगारों का ढेर बचा । तुम आज तक जो थे वह समाप्त हो गये । अब हड्डियों से मालूम करना असंभव है कि वे किसकी हैं । केवल अंगारे रह गये हैं । तुम्हारी मौत हो गई । हड्डियाँ और खोपड़ी बिखर गयी । तुम्हारे नाते और रिश्ते टूट गये । अपने और पराये के सम्बन्ध कट गये । तुम्हारे शरीर की जाति और सांप्रदायिक सम्बन्ध टूट गये । शरीर का कालापन और गोरापन समाप्त हो गया । तुम्हारी तन्दुरुस्ती और बीमारी अग्नि ने एक कर दी ।

ऐ गाफिल ! न समझा था ...

आग अब धीरे धीरे शांत हो रही है क्योंकि जलने की कोई चीज बची नहीं । कुटुम्बी, स्नेही,

मित्र, पड़ोसी सब जा रहे हैं । स्मशान के नौकर से कह रहे हैं : 'हम परसों आयेंगे फूल चुनने के लिए । देखना, किसी दूसरे के फूल मिश्रित न हो जाए ।' कइयों के फूल वहाँ पड़े भी रह जाते हैं । मित्र अपनेवालों के फूल समझकर उठा लेते हैं ।

कौन अपना कौन पराया ? क्या फूल और क्या बेफूल ? 'फूल' जो था वह तो अलविदा हो गया । अब हड्डियों को फूल कहकर भी क्या खुशी मनाओगे? फूलों का फूल तो तुम्हारा चैतन्य था । उस चैतन्य से सम्बन्ध कर लेते तो तुम फूल ही फूल थे ।

सब लोग घर गये । एक दिन बीता । दूसरा दिन बीता । तीसरे दिन वे लोग पहुँचे स्मशान में । चिमटे से इधर उधर ढूँढ़कर अस्थियाँ इकट्ठी कर लीं । डाल रहे हैं तुम्हें एक डिब्बे में बाबा ! खोपड़ी के कुछ टुकड़े, जोड़ों की कुछ हड्डियाँ मिल गईं । जो पक्की पक्की थीं वे मिलीं, बाकी सब भस्म हो गईं ।

करीब एकाध किलो फूल मिल गये । उन्हें डिब्बे में डालकर मित्र घर ले आए हैं । समझानेवालों ने कहा : 'हड्डियाँ घर में न लाओ । बाहर रखो, दूर कहीं । किसी पेड़ की डाली पर बाँध दो । जब हरिद्वार जायेंगे तब वहाँ से लेकर जायेंगे। उसे घर में न लाओ, अपशकुन है ।'

अब तुम्हारी हड्डियाँ अपशकुन हैं । घर में आना अमंगल है। वाह रे वाह संसार ! तेरे लिए पूरा जीवन खर्च किया था । इन हड्डियों को कई वर्ष बनाने में और सँभालने में लगे । अब अपशकुन हो रहा है ? बोलते हैं : इस डिब्बे को बाहर रखो । पड़ोसी के घर ले जाते हैं तो पड़ोसी नाराज होता है कि यह क्या कर रहे हो ? तुम्हारे जिगरी दोस्त के घर ले जाते हैं तो वह इन्कार कर देता है कि इधर नहीं ... दूर ... दूर ...दूर ...

तुम्हारी हड्डियाँ किसीके घर में रहने लायक नहीं हैं, किसीके मंदिर में रहने लायक नहीं हैं । लोग बड़े चतुर हैं । सोचते हैं : अब इससे क्या मतलब है ? दुनियाँ के लोग तुम्हारे साथ नाता और रिश्ता तब तक सँभालेंगे जब तक तुमसे उनको कुछ मिलेगा । हड्डियों से मिलना क्या है?

दुनियाँ के लोग तुम्हें बुलायेंगे कुछ लेने के लिए । तुम्हारे पास अब देने के लिए बचा भी क्या है ? वे लोग दोस्ती करेंगे कुछ लेने के लिए । सदगुरु तुम्हें प्यार करेंगे ... प्रभु देने के लिए । दुनियाँ के लोग तुम्हें नश्वर देकर अपनी सुविधा खड़ी करेंगे, लेकिन सदगुरू तुम्हें शाश्वत् देकर अपनी सुविधा की परवाह नहीं करेंगे । ॐ... ॐ ... ॐ ...

जिसमें चॉकलेट पड़ी थी, बिस्किट पड़े थे उस छोटे से डिब्बे में तुम्हारी अस्थियाँ पड़ी हैं । तुम्हारे सब पद और प्रतिष्ठा इस छोटे से डिब्बे में पराश्रित होकर, अति तुच्छ होकर पेड़ पर लटकाये जा रहे हैं । जब कुटुम्बियों को मौका मिलेगा तब जाकर गंगा में प्रवाहित कर देंगे ।

देख लो अपने कीमती जीवन की हालत !

जब बिल्ली दिखती है तब कबूतर आँखे बंद करके मौत से बचना चाहता है लेकिन बिल्ली उसे चट कर देती है । इसी प्रकार तुम यदि इस ठोस सत्य से बचना चाहोगे, 'मेरी मौत न होगी' ऐसा विचार करोगे अथवा इस सत्संग को भूल जाओगे फिर भी मौत छोड़ेगी नहीं ।

इस सत्संग को याद रखना बाबा ! मौत से पार कराने की कुंजी वह देता है तुम्हें । तुम्हारी अहंता और ममता तोड़ने के लिये युक्ति दिखाता है , ताकि तुम साधना में लग जाओ । इस राह पर कदम रख ही दिये हैं तो मंजिल तक पँहुच जाओ । कब तक रुके रहोगे ? हजार-हजार रिश्ते और नाते तुम जोड़ते आये हो । हजार हजार संबंधियों को तुम रिझाते आये हो । अब तुम्हारी अस्थियाँ गंगा में पड़े उससे पहले अपना जीवन ज्ञान की गंगा में बहा देना । तुम्हारी अस्थियाँ पेड़ पर टँगें उससे पहले तुम अपने अहंकार को टाँग देना परमात्मा की अनुकंपा में । परमात्मारुपी पेड़ पर अपना अहंकार लटका देना । फिर जैसी उस प्यारे की मर्जी हो... नचा ले, जैसी उसकी मर्जी हो... दौड़ा ले ।

तेरी मर्जी पूरन हो...

ऐसा करके अपने अहंकार को परमात्मारुपी पेड़ तक पँहुचा दो ।

तीसरा दिन मनाने के लिए लोग इकट्ठे हुए हैं । हँसनेवाले शत्रुओं ने घर बैठे थोड़ा हँस लिया । रोनेवाले स्नेहियों ने थोड़ा रो लिया । दिखावा करनेवालों ने औपचारिकताएँ पूरी कर लीं ।

सभा में आए हुए लोग तुम्हारी मौत के बारे में कानाफूसी कर रहे हैं:

मौत कैसे हुई? सिर दुखता था । पानी माँगा । पानी दिया और पीते पीते चल बसे ।

चक्कर आये और गिर पड़े । वापस नहीं उठे ।

पेट दुखने लगा और वे मर गये ।

सुबह तो घूमकर आये । खूब खुश थे । फिर जरा सा कुछ हुआ । बोले : 'मुझे कुछ हो रहा है, डॉक्टर को बुलाओ ।' हम बुलाने गये और पीछे यह हो गया।

हॉस्पिटल में खुब उपचार किये, बचाने के लिए डॉक्टरों ने खूब प्रयत्न किये लेकिन मर गये । रास्ते पर चलते चलते सिधार गये। कुछ न कुछ निमित्त बन ही गया।

तीसरा दिन मनाते वक्त तुम्हारी मौत के बारे में बातें हो गई थोड़ी देर । फिर समय हो गया : पाँच से छः । उठकर सब चल दिये । कब तक याद करते रहेंगे ? लोग लग गये अपने-अपने काम धन्धे में ।

अस्थियों का डिब्बा पेड़ पर लटक रहा है । दिन बीत रहे हैं । मौका आया । वह डिब्बा अब हरिद्वार ले जाया जा रहा है । एक थैली में डिब्बा डालकर ट्रेन की सीट के नीचे रखते हैं । लोग पूछते हैं: 'इसमें क्या है?' तुम्हारे मित्र बताते हैं : 'नहीं नहीं, कुछ नहीं । सब ऐसे ही है । अस्थियाँ हैं इसमें...' ऐसा कहकर वे पैर से डिब्बे को धक्का लगाते हैं । लोग चिल्लाते हैं:

'यहाँ नहीं... यहाँ नहीं ... उधर रखो ।'

वाह रे वाह संसार ! तुम्हारी अस्थियाँ जिस डिब्बे में हैं वह डिब्बा ट्रेन में सीट के नीचे रखने के लायक नहीं रहा । वाह रे प्यारा शरीर ! तेरे लिए हमने क्या क्या किया था ? तुझे सँभालने के लिए हमने क्या क्या नहीं किया ? ॐ ... ॐ ... ॐ ... !!

मित्र हरिद्वार पहुँचे हैं । पण्डे लोगों ने उन्हें घेर लिया । मित्र आखिरी विधि करवा रहे हैं । अस्थियाँ डाल दीं गंगा में, प्रवाहित हो गयीं । पण्डे को दक्षिणा मिल गई । मित्रों को आँसू बहाने थे, दो चार बहा लिये । अब उन्हें भी भूख लगी है । अब वे भी अपनी हड्डियाँ सँभालेंगे, क्योंकि उन्हें तो सदा रखनी हैं। वे खाते हैं, पीते हैं, गाड़ी का समय पूछते हैं ।

जल्दी वापस लौटना है क्योंकि आफिस में हाजिर होना है, दुकान सँभालनी है। वे सोचते हैं: 'वह तो मर गया । उसे विदा दे दी । मैं मरनेवाला थोड़े हूँ ।'

मित्र भोजन में जुट गये हैं।

आज तुमने अपनी मौत की यात्रा देखी । अपने शव की, अपनी हड्डियों की स्थिति देख ली । तुम एक ऐसी चेतना हो कि तुम्हारी मौत होने पर भी तुम उस मौत के साक्षी हो । तुम्हारी हड्डियाँ जलने पर भी तुम उससे पृथक् रहनेवाली ज्योति हो ।

तुम्हारी अर्थी जलने के बाद भी तुम अर्थी से पृथक् चेतना हो । तुम साक्षी हो, आत्मा हो । तुमने आज अपनी मौत को भी साक्षी होकर देख लिया । आज तक तुम हजारों-हजारों मौत की यात्राओं को देखते आये हो ।

जो मौत की यात्रा के साक्षी बन जाते हैं उनके लिये यात्रा यात्रा रह जाती है, साक्षी उससे परे हो जाता है ।

मौत के बाद अपने सब पराये हो गये । तुम्हारा शरीर भी पराया हो गया । लेकिन तुम्हारी आत्मा आज तक परायी नहीं हुई ।

हजारों मित्रों ने तुमको छोड़ दिया, लाखों कुटुम्बियों ने तुमको छोड़ दिया, करोड़ों-करोड़ों शरीरों ने तुमको छोड़ दिया, अरबों-अरबों कर्मों ने तुमको छोड़ दिया लेकिन तुम्हारा आत्मदेव तुमको कभी नहीं छोड़ता ।

शरीर की स्मशानयात्रा हो गयी लेकिन तुम उससे अलग साक्षी चैतन्य हो । तुमने अब जान लिया कि:

'मैं इस शरीर की अंतिम यात्रा के बाद भी बचता हूँ, अर्थी के बाद भी बचता हूँ, जन्म से पहले भी बचता हूँ और मौत के बाद भी बचता हूँ । मैं चिदाकाश ... ज्ञानस्वरुप आत्मा हूँ । मैंने छोड़ दिया मोह ममता को । तोड़ दिया सब प्रपंच ।'

इस अभ्यास को बढ़ाते रहना । शरीर की अहंता और ममता, जो आखिरी विघ्न है, उसे इस प्रकार तोड़ते रहना । मौका मिले तो स्मशान में जाना । दिखाना अपनेको वह दृश्य ।

मैं भी जब घर में था, तब स्मशान में जाया करता था । कभी-कभी दिखाता था अपने मन को कि, 'देख ! तेरी हालत भी ऐसी होगी ।'

स्मशान में विवेक और वैराग्य होता है । बिना विवेक और वैराग्य के तुम्हें ब्रह्माजी का उपदेश भी काम न आयेगा । बिना विवेक और वैराग्य के तुम्हें साक्षात्कारी पूर्ण सदगुरु मिल जायँ फिर भी तुम्हें इतनी गति न करवा पायेंगे । तुम्हारा विवेक और वैराग्य न जगा हो तो गुरु भी क्या करें ?

विवेक और वैराग्य जगाने के लिए कभी कभी स्मशान में जाते रहना । कभी घर में बैठे ही मन को स्मशान की यात्रा करवा लेना ।

मरो मरो सब कोई कहे मरना न जाने कोय ।

एक बार ऐसा मरो कि फिर मरना न होय ॥

ज्ञान की ज्योति जगने दो । इस शरीर की ममता को टूटने दो । शरीर की ममता टूटेगी तो अन्य नाते रिश्ते सब भीतर से ढीले हो जायेंगे । अहंता ममता टूटने पर तुम्हारा व्यवहार प्रभु का व्यवहार हो जाएगा । तुम्हारा बोलना प्रभु का बोलना हो जाएगा । तुम्हारा देखना प्रभु का देखना हो जाएगा । तुम्हारा जीना प्रभु का जीना हो जाएगा ।

केवल भीतर की अहंता तोड़ देना । बाहर की ममता में तो रखा भी क्या है ?

देहाभिमाने गलिते विज्ञाते परमात्मनि।

यत्र यत्र मनो याति तत्र तत्र समाधय: ॥

देह छतां जेनी दशा वर्ते देहातीत ।

ते ज्ञानीना चरणमां हो वन्दन अगणित ॥

भीतर ही भीतर अपने आपसे पूछो कि:

'मेरे ऐसे दिन कब आयेंगे कि देह होते हुए भी मैं अपने को देह से पृथक् अनुभव करुँगा ? मेरे ऐसे दिन कब आयेंगे कि एकांत में बैठा बैठा मैं अपने मन बुद्धि को पृथक् देखते-देखते अपनी आत्मा में तृप्त होऊँगा ? मेरे ऐसे दिन कब आयेंगे कि मैं आत्मानन्द में मस्त रहकर संसार के व्यवहार में निश्चिन्त रहूँगा ? मेरे ऐसे दिन कब आयेंगे कि शत्रु और मित्र के व्यवहार को मैं खेल समझूँगा ?'

ऐसा न सोचो कि वे दिन कब आयेंगे कि मेरा प्रमोशन हो जाएगा... मैं प्रेसिडेन्ट हो जाऊँगा ... मैं प्राइम मिनिस्टर हो जाऊँगा ?

आग लगे ऐसे पदों की वासना को ! ऐसा सोचो कि मैं कब आत्मपद पाऊँगा ? कब प्रभु के साथ एक होऊँगा ?

अमेरिका के प्रेसिडेन्ट मि कूलिज व्हाइट हाउस में रहते थे । एक बार वे बगीचे में घूम रहे थे । किसी आगन्तुक ने पूछा : 'यहाँ कौन रहता है ?'

कूलिज ने कहा : 'यहाँ कोई रहता नहीं है। यह सराय है, धर्मशाला है। यहाँ कई आ आकर चले गये, कोई रहता नहीं ।'

रहने को तुम थोड़े ही आये हो ! तुम यहाँ से गुजरने को आये हो, पसार होने को आये हो । यह जगत तुम्हारा घर नहीं है । घर तो तुम्हारा आत्मदेव है । फकीरों का जो घर है वही तुम्हारा घर है। जहाँ फकीरों ने डेरा डाला है वहीं तुम्हारा डेरा सदा के लिए टिक सकता है, अन्यत्र नहीं । अन्य कोई भी महल, चाहे कैसा भी मजबूत हो, तुम्हें सदा के लिए रख नहीं सकता ।

संसार तेरा घर नहीं, दो चार दिन रहना यहाँ ।

कर याद अपने राज्य की, स्वराज्य निष्कंटक जहाँ ॥

कूलिज से पूछा गया : ' I have come to know that Mr. Coolidge, President of America lives here. '

('मुझे पता चला है कि अमेरिका के राष्ट्रपति श्री कूलिज यहाँ रहते हैं ।')

कूलिज ने कहा : 'No, Coolidge doesnot live here. Nobody lives here. Everybody is passing through.' ('नहीं, कूलिज यहाँ नहीं रहता । कोई भी नहीं रहता । सब यहाँ से गुजर रहे हैं। ')

चार साल पूरे हुए । मित्रों ने कहा : 'फिर से चुनाव लड़ो । समाज में बड़ा प्रभाव है अपका । फिर से चुने जाओगे ।'

कूलिज बोला : 'चार साल मैंने व्हाइट हाउस में रहकर देख लिया । प्रेसिडेन्ट का पद सँभालकर देख लिया । कोई सार नहीं । अपने आपसे धोखा करना है, समय बरबाद करना है। **I have no time to waste.** अब मेरे पास बरबाद करने के लिए समय नहीं है ।'

ये सारे पद और प्रतिष्ठा समय बरबाद कर रहे हैं तुम्हारा । बड़े बड़े नाते रिश्ते तुम्हारा समय बरबाद कर रहे हैं । स्वामी रामतीर्थ प्रार्थना किया करते थे :

'हे प्रभु ! मुझे मित्रों से बचाओ, मुझे सुखों से बचाओ'

सरदार पूरनसिंह ने पूछा : 'क्या कह रहे हैं स्वामीजी ? शत्रुओं से बचना होगा, मित्रों से क्या बचना है ?'

रामतीर्थ : 'नहीं, शत्रुओं से मैं निपट लूँगा, दु:खों से मैं निपट लूँगा । दु:ख में कभी आसक्ति नहीं होती, ममता नहीं होती । ममता, आसक्ति जब हुई है तब सुख में हुई है, मित्रों में हुई है, स्नेहियों में हुई है ।'

मित्र हमारा समय खा जाते हैं, सुख हमारा समय खा जाता है । वे हमें बेहोशी में रखते हैं । जो करना है वह रह जाता है । जो नहीं करना है उसे सँभालने में ही जीवन खप जाता है ।

तथाकथित मित्रों से हमारा समय बच जाए, तथाकथित सुखों से हमारी आसक्ति हट जाए । सुख में होते हुए भी परमात्मा में रह सको, मित्रों के बीच रहते हुए भी ईश्वर में रह सको - ऐसी समझ की एक आँख रखना अपने पास ।

ॐ शांति : शांति : शांति : ! ॐ ... ॐ ... ॐ ... !!

तुम्हारे शरीर की यात्रा हो गई पूरी । मौत को भी तुमने देखा । मौत को देखनेवाले तुम दृष्टा कैसे मर सकते हो ? तुम साक्षात् चैतन्य हो । तुम आत्मा हो । तुम निर्भय हो । तुम नि:शंक हो । मौत कई बार आकर शरीर को झपट गई । तुम्हारी कभी मृत्यु नहीं हुई । केवल शरीर बदलते आये, एक योनि से दूसरी योनि में यात्रा करते आये ।

तुम निर्भयतापूर्वक अनुभव करो कि मैं आत्मा हूँ । मैं अपनेको ममता से बचाऊँगा । बेकार के नाते और रिश्तों में बहते हुए अपने जीवन को बचाऊँगा । पराई आशा से अपने चित्त को बचाऊँगा । आशाओं का दास नहीं लेकिन आशाओं का राम होकर रहूँगा ।

ॐ ... ॐ ... ॐ ...

मैं निर्भय रहूँगा । मैं बेपरवाह रहूँगा जगत के सुख दुःख में । मैं संसार की हर परिस्थिति में निश्चिन्त रहूँगा, क्योंकि मैं आत्मा हूँ । ऐ मौत ! तू शरीरों को बिगाड़ सकती है, मेरा कुछ नहीं कर सकती । तू क्या डराती है मुझे ?

ऐ दुनियाँ की रंगीनियाँ ! ऐ संसार के प्रलोभन ! तुम मुझे अब क्या फँसाओगे ! तुम्हारी पोल मैंने जान ली है । हे समाज के रीति रिवाज ! तुम कब तक बाँधोगे मुझे ? हे सुख और दुःख ! तुम कब तक नचाओगे मुझे ? अब मैं मोहनिशा से जाग गया हूँ ।

निर्भयतापूर्वक, दृढ़तापूर्वक, ईमानदारी और निःशंकता से अपनी असली चेतना को जगाओ । कब तक तुम शरीर में सोते रहोगे ?

साधना के रास्ते पर हजार हजार विघ्न होंगे, लाख लाख काँटे होंगे । उन सबके ऊपर निर्भयतापूर्वक पैर रखेंगे ।

वे काँटे फूल न बन जाँए तो हमारा नाम 'साधक' कैसे ?

ॐ ... ॐ ... ॐ ...

हजारों हजारों उत्थान और पतन के प्रसंगो में हम अपनी ज्ञान की आँख खोले रहेंगे । हो होकर

क्या होगा ? इस मुर्दे शरीर का ही तो उत्थान और पतन गिना जाता है । हम तो अपनी आत्मा मस्ती में मस्त है।

बिगड़े तब जब हो कोई बिगड़नेवाली शय ।

अकाल अछेघ अभेघ को कौन वस्तु का भय ॥

मुझ चैतन्य को, मुझ आत्मा को क्या बिगड़ना है और क्या मिलना है ? बिगड़ बिगड़कर किसका बिगड़ेगा ? इस मुर्दे शरीर का ही न ? मिल मिलकर भी क्या मिलेगा ? इस मुर्दे शरीर को ही मिलेगा न ? इसको तो मैं जलाकर आया हूँ ज्ञान की आग में । अब सिकुड़ने की क्या जरुरत है ? बाहर के दु:खों के सामने, प्रलोभनों के सामने झुकने की क्या जरुरत है ?

अब मैं सम्राट की नाईं जिऊँगा ... बेपरवाह होकर जिऊँगा । साधना के मार्ग पर कदम रखा है तो अब चलकर ही रहूँगा । ॐ ... ॐ ... ॐ ... ऐसे व्यक्ति के लिए सब संभव है ।

एक मरणियो सोने भारे ।

आखिर तो मरना ही है, तो अभी से मौत को निमंत्रण दे दो । साधक वह है कि जो हजार विघ्न आयें तो भी न रुके , लाख प्रलोभन आएँ तो भी न फँसे । हजार भय के प्रसंग आएँ तो भी भयभीत न हो और लाख धन्यवाद मिले तो भी अहंकारी न हो । उसका नाम साधक है । साधक का अनुभव होना चाहिए कि:

हमें रोक सके ये जमाने में दम नहीं ।

हम से जमाना है जमाने से हम नहीं ॥

प्रहलाद के पिता ने रोका तो प्रहलाद ने पिता की बात को ठुकरा दी । वह भगवान के रास्ते चल पड़ा । मीरा को पति और परिवार ने रोका तो मीरा ने उनकी बात को ठुकरा दिया । राजा बलि को तथाकथित गुरु ने रोका तो राजा बलि ने उनकी बात को सुनी अनसुनी कर दी ।

ईश्वर के रास्ते पर चलने में यदि गुरु भी रोकता है तो गुरु की बात को भी ठुकरा देना, पर ईश्वर को नहीं छोड़ना ।

ऐसा कौन गुरु है जो भगवान के रास्ते चलने से रोकेगा ? वह निगुरा गुरु है । ईश्वर के रास्ते चलने में यदि कोई गुरु रोके तो तुम बलि राजा को याद करके कदम आगे रखना । यदि पत्नी रोके तो राजा भरतृहरी को याद करके पत्नी की ममता को ढकेल देना । यदि पुत्र और परिवार रोकता है तो उन्हें ममता की जाल समझकर काट देना ज्ञान की कैंची से । ईश्वर के रास्ते, आत्म-साक्षात्कार के रास्ते चलने में दुनियाँ का अच्छे से अच्छा व्यक्ति भी आड़े आता हो तो ... आहा ! तुलसीदासजी ने कितना सुन्दर कहा है !

जाके प्रिय न राम वैदेही,

तजिए ताहि कोटि वैरी सम , यद्यपि परम सनेही ।

ऐसे प्रसंग में परम स्नेही को भी वैरी की तरह त्याग दो । अन्दर की चेतना का सहारा लो और ॐ की गर्जना करो ।

दु:ख और चिन्ता, हताशा और परेशानी, असफलता और दरिद्रता भीतर की चीजें होती हैं, बाहर की नहीं । जब भीतर तुम अपने को असफल मानते हो तब बाहर तुम्हें असफलता दिखती है ।

भीतर से तुम दीन हीन मत होना । घबराहट पैदा करनेवाली परिस्थितियों के आगे भीतर से

झुकना मत । ॐकार का सहारा लेना । मौत भी आ जाए तो एक बार मौत के सिर पर भी पैर रखने की ताकत पैदा करना । कब तक डरते रहोगे ? कब तक मनौतियाँ मनाते रहोगे ? कब तक नेताओं को, साहबों को, सेठों को, नौकरों को रिझाते रहोगे ? तुम अपने आपको रिझा लो एक बार । अपने आपसे दोस्ती कर लो एक बार । बाहर के दोस्त कब तक बनाओगे ?

कबीरा इह जग आय के, बहुत से कीने मीत ।

जिन दिल बाँधा एक से, वे सोये निश्चिंत ॥

बहुत सारे मित्र किये लेकिन जिसने एक से दिल बाँधा वह धन्य हो गया । अपने आपसे दिल बाँधना है । यह 'एक' कोई आकाश पाताल में नहीं बैठा है । कहीं टेलिफोन के खम्भे नहीं डालने हैं, वायरिंग नहीं जोड़नी है । वह 'एक' तो तुम्हारा अपना आपा है । वह 'एक' तुम्हीं हो । नाहक सिकुड़ रहे हो । 'यह मिलेगा तो सुखी होऊँगा, वह मिलेगा तो सुखी होऊँगा ...'

अरे ! सब चला जाए तो भी ठीक है, सब आ जाए तो भी ठीक है । आखिर यह संसार सपना है । गुजरने दो सपने को । हो होकर क्या होगा ? क्या नौकरी नहीं मिलेगी ? खाना नहीं मिलेगा ? कोई बात नहीं । आखिर तो मरना है इस शरीर को । ईश्वर के मार्ग पर चलते हुए बहुत बहुत तो भूख प्यास से पीड़ित हो मर जायेंगे । वैसे भी खा खाकर लोग मरते ही हैं न ! वास्तव में होता तो यह है कि प्रभु प्राप्ति के मार्ग पर चलनेवाले भक्त की रक्षा ईश्वर स्वयं करते हैं । तुम जब निश्चिंत हो जाओगे तो तुम्हारे लिए ईश्वर चिन्तित होगा कि कहीं भूखा न रह जाए ब्रह्मवेत्ता ।

सोचा मैं न कहीं जाऊँगा यहीं बैठकर अब खाऊँगा ।

जिसको गरज होगी आयेगा सृष्टिकर्त्ता खुद लायेगा ॥

सृष्टिकर्त्ता खुद भी आ सकता है। सृष्टि चलाने की और सँभालने की उसकी जिम्मेदारी है । तुम यदि सत्य में जुट जाते हो तो धिक्कार है उन देवी देवताओं को जो तुम्हारी सेवा के लिए लोगों को प्रेरणा न दें । तुम यदि अपने आपमें आत्मारामी हो तो धिक्कार है उन किन्नरों और गंधर्वों को जो तुम्हारा यशोगान न करें !

नाहक तुम देवी देवताओं के आगे सिकुड़ते रहते हो कि 'आशीर्वाद दो... कृपा करो ...' तुम अपनी आत्मा का घात करके, अपनी शक्तियों का अनादर करके कब तक भीख माँगते रहोगे ? अब तुम्हें जागना होगा । इस द्वार पर आये हो तो सोये सोये काम न चलेगा ।

हजार तुम यज्ञ करो, लाख तुम मंत्र करो लेकिन तुमने मूर्खता नहीं छोड़ी तब तक तुम्हारा भला न होगा । 33 करोड़ देवता तो क्या, 33 करोड़ कृष्ण आ जायें, लेकिन जब तक तत्त्वज्ञान को व्यवहार में उतारा नहीं तब तक अर्जुन की तरह तुम्हें रोना पड़ेगा । **Let the lion of vedant roar in your life.** वेदान्तरुपी सिंह को अपने जीवन में गर्जने दो । टँकार कर दो ॐ कार का । फिर देखो, दुःख चिन्ताएँ कहाँ रहते हैं ।

चाचा मिटकर भतीजे क्यों होते हो ? आत्मा होकर शरीर क्यों बन जाते हो ? कब तक इस जलनेवाले को 'मैं' मानते रहोगे ? कब तक इसकी अनुकूलता में सुख, प्रतिकूलता में दुःख महसूस करते रहोगे ? अरे सुविधा के साधन तुम्हें पाकर धनभागी हो जायें, तुम्हारे कदम पड़ते ही असुविधा सुविधा में बदल जाए -ऐसा तुम्हारा जीवन हो ।

घने जंगल में चले जाओ । वहाँ भी सुविधा उपलब्ध हो जाए । न भी हो तो अपनी मौज, अपना आत्मानंद भंग न हो । भिक्षा मिले तो खा लो । न भी मिले तो वाह वाह ! आज उपवास हो गया ।

राजी हैं उसमें जिसमें तेरी रजा है ।

हमारी न आरजू है न जूस्तजू है ॥

खाना या नहीं खाना यह मुर्दे के लिए है । जिसकी अस्थियाँ भी ठुकराई जाती हैं उसकी चिन्ता ? भगवान का प्यारा होकर टुकड़ों की चिन्ता ? संतो का प्यारा होकर कपड़ों की चिन्ता ? फकीरों का प्यारा होकर रुपयों की चिन्ता ? सिद्धों का प्यारा होकर नाते रिश्तों की चिन्ता ?

चिन्ता के बहुत बोझे उठाये । अब निश्चिन्त हो जाओ । फकीरों के संग आये हो तो अब फक्कड़ हो जाओ । साधना में जुट जाओ ।

फकीर का मतलब भिखारी नहीं । फकीर का मतलब लाचार नहीं । फकीर वह है जो भगवान की छाती पर खेलने का सामर्थ्य रखता हो । ईश्वर की छाती पर लात मारने की शक्ति जिसमें है वह फकीर । भृगु ने भगवान की छाती पर लात मार दी और भगवान पैरचंपी कर रहे हैं । भृगु फकीर थे । भिखमंगो को थोड़े ही फकीर कहते हैं ? तृष्णावान् को थोड़े ही फकीर कहते हैं ?

भृगु को भगवान के प्रति द्वेष न था । उनकी समता निहारने के लिए लगा दी लात । भगवान विष्णु ने क्या किया ? कोप किया ? नहीं । भृगु के पैर पकड़कर चंपी की कि हे मुनि ! तुम्हें चोट तो नहीं लगी ?

फकीर ऐसे होते हैं । उनके संग में आकर भी लोग रोते हैं : 'कंकड़ दो... पत्थर दो... मेरा क्या होगा ...? बच्चो का क्या होगा ? कुटुम्ब का क्या होगा ?

सब ठीक हो जायेगा । पहले तुम अपनी महिमा में आ जाओ । अपने आपमें आ जाओ ।

न्यायाधीश कोर्ट में झाड़ू लगाने थोड़े ही जाता है ? वादी प्रतिवादी को, असील वकील को बुलाने

थोड़ी ही जाता है ? वह तो कोर्ट में आकर विराजमान होता है अपनी कुर्सी पर । बाकी के सब काम अपने आप होने लगते हैं । न्यायाधीश अपनी कुर्सी छोड़कर पानी भरने लग जाए, झाड़ू लगाने लग जाए, वादी प्रतिवादी को पुकारने लग जाए तो वह क्या न्याय करेगा ?

तुम न्यायाधीशों के भी न्यायाधीश हो । अपनी कुर्सी पर बैठ जाओ । अपनी आत्मचेतना में जग जाओ ।

छोटी बड़ी पूजाएँ बहुत की । अब आत्मपूजा में आ जाओ ।

देखा अपने आपको, मेरा दिल दीवाना हो गया ।

ना छेड़ो मुझे यारों ! मैं खुद पे मस्ताना हो गया ॥

ऐसे गीत निकलेंगे तुम्हारे भीतर से । तुम अपनी महिमा में आओ । तुम कितने बड़े हो ! इन्द्रपद तुम्हारे आगे तुच्छ है, अति तुच्छ है । इतने तुम बड़े हो, फिर सिकुड़ रहे हो ! धक्का मुक्का कर रहे हो । 'दया कर दो ... जरा सा प्रमोशन दे दो... अवल कारकुन में से तहसीलदार बना दो ... तहसीलदार में से कलेक्टर बना दो ... कलेक्टर में से सचिव बना दो ...'

लेकिन ... **जो तुमको यह सब बनायेंगे वे तुमसे बड़े बन जायेंगे । तुम छोटे ही रह जाओगे** । बनती हुई चीज से बनानेवाला बड़ा होता है । अपने से किसको बड़ा रखोगे ? मुर्दों को क्या बड़ा रखना ? अपनी आत्मा को ही सबसे बड़ी जान लो, भैया ! यहाँ तक कि तुम अपने से इन्द्र को भी बड़ा न मानो।

फकीर तो और आगे की बात कहेंगे । वे कहते हैं 'ब्रह्मा, विष्णु और महेश भी अपने से बढ़कर नहीं होते, एक ऐसी अवस्था आती है । यह है आत्म साक्षात्कार ।'

ब्रह्मा, विष्णु और महेश भी तत्त्ववेत्ता से आलिंगन करके मिलते हैं कि यह जीव अब शिवस्वरुप हुआ । ऐसे ज्ञान में जगने के लिए तुम्हारा मनुष्य जन्म हुआ है । ... और तुम सिकुड़ते रहते हो ? 'मुझे नौकर बनाओ, चाकर रखो ।' अरे, तुम्हारी यदि तैयारी है तो अपनी महिमा में जगना कोई कठिन बात नहीं है ।

यह कौन सा उकदा है जो हो नहीं सकता ।

तेरा जी न चाहे तो हो नहीं सकता ॥

छोटा सा कीड़ा पत्थर में घर करे ।

और इन्सान क्या दिले दिलबर में घर न करे ॥

तुम्हारे सब पुण्य, कर्म, धर्माचरण और देव दर्शन का यह फल है कि तुम्हें आत्मज्ञान में रुचि हुई । ब्रह्मवेत्ताओं के शरीर की मुलाकात तो कई नास्तिकों को भी हो जाती है, अभागों को भी हो जाती है । श्रद्धा जब होती है तब शरीर के पार जो बैठा है उसे पहचानने के काबिल तुम बन जाओगे । ॐ ... ॐ ... ॐ ...

जो तत्त्ववेत्ताओं की वाणी से दूर है उसे इस संसार में भटकना ही पड़ेगा । जन्म मरण लेना ही पड़ेगा । चाहे वह कृष्ण के साथ हो जाए चाहे अम्बाजी के साथ हो जाए लेकिन जब तक तत्त्वज्ञान नहीं हुआ तब तक तो बाबा ...

गुजराती भक्त कवि नरसिंह मेहता कहते हैं :

आत्मतत्त्व चीन्या विना सर्व साधना झूठी ।

सर्व साधनाओं के बाद नरसिंह मेहता यह कहते हैं ।

तुम कितनी साधना करोगे ?

पहले मैंने भी खूब पूजा उपासना की थी । भगवान शिव की पूजा के बिना कुछ खाता पीता नहीं था । प. पू. सदगुरुदेव श्री लीलाशाहजी बापू के पास गया तब भी भगवान शंकर का बाण और पूजा की सामग्री साथ में लेकर गया था । मैं लकड़ियाँ भी धोकर जलाऊँ, ऐसी पवित्रता को माननेवाला था । फिर भी जब तक परम पवित्र आत्मज्ञान नहीं हुआ तब तक यह सब पवित्रता बस उपाधि थी । अब तो ... अब क्या कहूँ ?

नैनीताल में 15 डोटियाल (कुली) रहने के लिए एक मकान किराये पर ले रहे थे । किराया 32 रुपये था और वे लोग 15 थे । लीलाशाहजी बापू ने दो रुपये देते हुए कहा:

"मुझे भी एक 'मेम्बर' बना लो । 32 रुपये किराया है, हम 16 किरायेदार हो जायेंगे ।"

ये अनन्त ब्रह्माण्डों के शहेनशाह उन डोटियालों के साथ वर्षों तक रहे । वे तो महा पवित्र हो गये थे । उन्हें कोई अपवित्रता छू नहीं सकती थी ।

एक बार जो परम पवित्रता को उपलब्ध हो गया उसे क्या होगा ? लोहे का टुकड़ा मिट्टी में पड़ा है तो उसे जंग लगेगा । उसे सँभालकर आलमारी में रखोगे तो भी हवाँए वहाँ जंग चढ़ा देंगी । उसी लोहे के टुकड़े को पारस का स्पर्श करा दो, एक बार सोना बना दो, फिर चाहे आलमारी में रखो चाहे कीचड़ में डाल दो, उसे जंग नहीं लगेगा ।

ऐसे ही हमारे मन को एक बार आत्मस्वरुप का साक्षात्कार हो जाय । फिर उसे चाहे समाधि में बिठाओ, पवित्रता में बिठाओ चाहे नरक में ले जाओ । वह जहाँ होगा, अपने आपमें पूर्ण होगा । उसीको ज्ञानी कहते हैं । ऐसा ज्ञान जब तक नहीं मिलेगा तब तक रिद्धि सिद्धि आ जाए, मुर्दे को फूँक मारकर उठाने की शक्ति आ जाए फिर भी उस आत्मज्ञान के बिना सब व्यर्थ है । वाक् सिद्धि या संकल्पसिद्धि ये कोई मंजिल नहीं है । साधनामार्ग में ये बीच के पड़ाव हो सकते हैं

। यह ज्ञान का फल नहीं है । ज्ञान का फल तो यह है कि ब्रह्मा और महेश का ऐश्वर्य भी तुम्हें अपने निजस्वरुप में भासित हो, छोटा सा लगे । ऐसा तुम्हारा आत्म परमात्मस्वरुप है। उसमें तुम जागो । ॐ ... ॐ ... ॐ ...

मोहनिशा से जागो

आँखों के द्वारा, कानों के द्वारा दुनियाँ भीतर घुसती है और चित्त को चंचल करती है । जप, ध्यान, स्मरण, शुभ कर्म करने से बुद्धि स्वच्छ होती है । स्वच्छ बुद्धि परमात्मा में शांत होती है और मलिन बुद्धि जगत में उलझती है । बुद्धि जितनी जितनी पवित्र होती है उतनी उतनी परम शांति से भर जाती है । बुद्धि जितनी जितनी मलिन होती है, उतनी संसार की वासनाओं में, विचारों में भटकती है ।

आज तक जो भी सुना है, देखा है, उसमें बुद्धि गई लेकिन मिला क्या? आज के बाद जो देखेंगे, सुनेंगे उसमें बुद्धि को दौड़ायेंगे लेकिन अन्त में मिलेगा क्या? श्रीकृष्ण कहते हैं :

यदा ते मोहकलिलं बुद्धिर्व्यतितरिष्यति ।

तदा गन्तासि निर्वेदं श्रोतव्यस्य श्रुतस्य च ॥

'जिस काल में तेरी बुद्धि मोहरुप दलदल को भलीभाँति पार कर जाएगी, उस समय तू सुने हुए और सुनने में आनेवाले इस लोक और परलोक सम्बन्धी सभी भोगों से वैराग्य को प्राप्त हो जायेगा ।' (भगवदगीता:2.52)

दलदल में पहले आदमी का पैर धँस जाता है । फिर घुटने, फिर जाँघें, फिर नाभि, फिर छाती, फिर पूरा शरीर धँस जाता है । ऐसे ही संसार के दलदल में आदमी धँसता है । 'थोड़ा सा यह कर लूँ, थोड़ा सा यह देख लूँ, थोड़ा सा यह खा लूँ, थोड़ा सा यह सुन लूँ ।' प्रारम्भ में बीड़ी पीनेवाला जरा सी फूँक मारता है, फिर व्यसन में पूरा बँधता है । शराब पीनेवाला पहले जरा सा घूँट पीता है, फिर पूरा शराबी हो जाता है ।

ऐसे ही ममता के बन्धनवाले ममता में फँस जाते हैं । 'जरा शरीर का ख्याल करें, जरा कुटुम्बियों का ख्याल करें ... ।' 'जरा ... जरा ...' करते करते बुद्धि संसार के ख्यालों से भर जाती है । जिस बुद्धि में परमात्मा का ज्ञान होना चाहिए, जिस बुद्धि में परमात्मशांति भरनी चाहिए उस बुद्धि में संसार का कचरा भरा हुआ है । सोते हैं तो भी संसार याद आता है, चलते हैं तो भी संसार याद आता है, जीते हैं तो संसार याद आता है और मरते... हैं ... तो ... भी ... संसार... ही... याद... आता... है ।

सुना हुआ है स्वर्ग के बारे में, सुना हुआ है नरक के बारे में, सुना हुआ है भगवान के बारे में । यदि बुद्धि में से मोह हट जाए तो स्वर्ग नरक का मोह नहीं होगा, सुने हुए भोग्य पदार्थों का मोह नहीं होगा । मोह की निवृत्ति होने पर बुद्धि परमात्मा के सिवाय किसी में भी नहीं ठहरेगी । परमात्मा के सिवाय कहीं भी बुद्धि ठहरती है तो समझ लेना कि अभी अज्ञान जारी है । अमदावादवाला कहता है कि मुंबई में सुख है । मुंबईवाला कहता है कि कलकत्ते में सुख है । कलकत्तेवाला कहता है कि कश्मीर में सुख है । कश्मीरवाला कहता है कि मंगणी में सुख है । मंगणीवाला कहता हैं कि शादी में सुख है । शादीवाला कहता है कि बाल बच्चों में सुख है । बाल बच्चोंवाला कहता है कि निवृत्ति में सुख है । निवृत्तिवाला कहता है कि प्रवृत्ति में सुख है । मोह से भरी हुई बुद्धि अनेक रंग बदलती है । अनेक रंग बदलने के साथ अनेक अनेक जन्मों में भी ले जाती है ।

यदा ते मोहकलिलं बुद्धिर्व्यति ...

'जिस काल में तेरी बुद्धि मोहरुपी दलदल को भलीभाँति पार कर जाएगी, उसी समय तू सुने हुए और सुनने में आनेवाले इस लोक और परलोक संबंधी सभी भोगों से वैराग्य को प्राप्त हो जायेगा ।'

इस लोक और परलोक...

सात लोक ऊपर हैं : भूः, भुवः, स्वः, जनः, तपः, महः और सत्य ।

सात लोक नीचे हैं : तल, अतल, वितल, तलातल, महातल, रसातल और पाताल ।

इस प्रकार सात लोक उपर , सात लोक निचे है...जब बुध्दि में मोह होता है तो किसी न किसी लोक में आदमी यात्रा करते है ।

वशिष्ठजी महाराज के पास एक ऐसी विद्याधरी आयी जिसका मनोबल धारणाशक्ति से अत्यन्त पुष्ट हुआ था, इच्छाशक्ति प्रबल थी । उसने वशिष्ठजी से कहा :

"हे मुनीश्वर ! मैं तुम्हारी शरण आई हूँ । मैं एक निराली सृष्टि में रहनेवाली हूँ । उस सृष्टि का रचयिता मेरे पति हैं । उनकी बुद्धि में स्त्री भोगने की इच्छा हुई इसलिए उन्होंने मेरा सृजन किया । मेरी उत्पत्ति के बाद उनको ध्यान में, आत्मा में अधिक आनंद आने लगा, इसलिए वे मुझसे विरक्त हो गये । अब मेरी ओर आँख उठाकर देखते तक नहीं । अब मेरी यौवन अवस्था है । मेरे अंग सुंदर और सुकोमल हैं । मैं भर्ता के बिना नहीं रह सकती । आप कृपा करके चलिये । मेरे पति को समझाइए ।''

साधु पुरुष परोपकार के लिए सम्मत हो जाते हैं । वशिष्ठजी महाराज उस भद्र महिला के साथ उसके पति के यहाँ जाने को तैयार हुए । वशिष्ठजी भी योगी थे, वह महिला भी धारणाशक्ति में विकसित थी । दोनों उड़तें उड़तें इस सृष्टि को लाँघते गये । एक नये ब्रह्माण्ड में प्रविष्ट हो गये । वहाँ वह विद्याधरी एक बड़ी शिला में प्रविष्ट हो गयी । वशिष्ठजी बाहर रुक गये । वह स्त्री वापस बाहर आई तो वशिष्ठजी बोले: ''तेरी सृष्टि में हम प्रविष्ट नहीं हो सकते ।''

तब उस विद्याधरी ने कहा : ''आप मेरी चित्तवृत्ति के साथ अपनी चित्तवृत्ति मिलाइए । आप भी मेरे साथ साथ प्रविष्ट हो सकेंगे ।''

एक आदमी स्वप्न देख रहा है । उसके स्वप्न में दूसरा आदमी प्रविष्ट नहीं हो सकता । दूसरा तब प्रविष्ट हो सकेगा कि जब उन दोनों के सुने हुये संस्कार एक जैसे हों । एक आदमी सोया है । आप उसके पास खड़े हैं । आप बार बार सघनता से ख्याल करो, उसी ख्याल का बार बार पुनरावर्तन करो कि बारिश हो रही है, ठंड लग रही है । आपके श्वासोच्छ्वास के आंदोलन उस

सोये हुए आदमी पर प्रभाव डालेंगे, उसकी चित्तवृत्ति आपकी चित्तवृत्ति के साथ तादात्म्य करेगी और उसको स्वप्न आयेगा कि खूब बारिश हो रही है और मैं भीग गया ।

मूर्ख आदमियों के साथ हम लोग जीते हैं । संसार के दलदल में फँसे हुए, पैसों के गुलाम, इन्द्रियों के गुलाम ऐसे लोगों के बीच यदि साधक भी जाता है तो वह भी सोचता है कि चलो, थोड़े रुपये इकट्ठे कर लूँ । नोटों की थोड़ी सी थप्पी तो बना लूँ क्योंकि मेरे बाप के बाप तो ले गये हैं, मेरे बाप भी ले गये हैं और अब मेरेको भी ले जाना है ।

मोह के दलदल में आदमी फँस जाता है । कीचड़ में धँसे हुए व्यक्ति के साथ यदि तुम तादात्म्य करते हो तो तुम भी डूबने लगते हो । तुमको लगता है कि ये डूबे हैं, हम नहीं डूबते । मगर तुम ऐसा कहते भी जाते हो और डूबते भी जाते हो । बुद्धि में एक ऐसा विचित्र भ्रम घुस जाता है ।

जैसे तैसे साधक को ही नहीं, अर्जुन जैसे को भी यह भ्रम हो गया था । अर्जुन को आत्म साक्षात्कार नहीं हुआ और वह बोलता है कि: ''भगवन् ! तुम्हारे प्रसाद से अब मैं सब समझ गया हूँ । अब मैं ठीक हो गया हूँ ।''

भगवान कहते हैं : ''अच्छा, ठीक है । समझ रहा है फिर भी दु:खी सुखी होता है, भीतर मोह ममता है ।''

ग्यारहवें अध्याय में अर्जुन ने कहा कि मुझे ज्ञान हो गया है, मैं सब समझ गया । मेरा मोह नष्ट हो गया । फिर सात अध्याय और चले हैं । उसको पता ही नहीं कि आत्म साक्षात्कार क्या होता है ।

एक तुष्टि नाम की भूमिका आती है जो जीव का स्वभाव होता है । जीव में थोड़ी सी शांति,

थोड़ा सा सामर्थ्य, थोड़ा सा हर्ष आ जाता है तो समझ लेता है मैंने बहुत कुछ पा लिया । जरा सा आभास होता है, झलक आती है तो उसीको लोग आत्म साक्षात्कार मान लेते हैं ।

जब मोहकलिल को बुद्धि पार कर जायेगी तब सुना हुआ और देखा हुआ जो कुछ होगा उससे तुम्हारा वैराग्य हो जायेगा । इन्द्र आकर हाथ जोड़कर खड़ा हो जाए, कुबेर तुम्हारे लिए खजाने की कुंजियाँ लेकर खड़ा रहे, ब्रह्माजी कमण्डल लेकर खड़े रहें और बोलें कि: 'चलिए, ब्रह्मपुरी का सुख लीजिये ...' फिर भी तुम्हारे चित्त में उन पदार्थों का आकर्षण नहीं होगा । तब समझना कि आत्म साक्षात्कार हो गया ।

बच्चों का खेल नहीं मैदाने मुहब्बत ।

यहाँ जो भी आया सिर पर कफन बाँधकर आया ॥

जीव का स्वभाव है भोग । शिव का स्वभाव भोग नहीं है । जीव का स्वभाव है वासना, जीव का स्वभाव है सुख के लिए दौड़ना । ब्रह्माजी आयेंगे तो सुख देने की ही बात करेंगे न ? सुख के लिए यदि तुम भागते हो तो पता चलता है कि सुख का दरिया तुम्हारे भीतर पूरा उमड़ा नहीं है । सुख की कमी होगी तब सुख लेने को कहीं और जाओगे । सुख लेना जीव का स्वभाव होता है । आत्म साक्षात्कार के बाद जीव बाधित हो जाता है । जीव का जीवपना नहीं रहता । वह शिवत्व में प्रगट हो जाता है।

कामदेव रति को साथ लेकर शिवजी के आगे कितने ही नखरे करने लगा लेकिन शिवजी को प्रभावित न कर सका । शिवजी इतने आत्मारामी हैं, उनमें इतना आत्मानंद है कि उनके आगे काम का सुख अति नीचा है, अति तुच्छ है । शिवजी काम से प्रभावित नहीं हुए ।

योगी लोग, संत लोग जब साधना करते हैं तब अप्सराएँ आती हैं, नखरे करती हैं । जो उनके नखरे से आकर्षित हो जाते हैं वे आत्मनिष्ठा नहीं पा सकते हैं, आत्मानंद के खजाने को नहीं पा सकते हैं । इसीलिए साधकों को चेतावनी दी जाती है कि किसी रिद्धि सिद्धि में, किसी प्रलोभन

में मत फँसना ।

तुम मन और इन्द्रियों का थोड़ा सा संयम करोगे तो तुम्हारी वाणी में सामर्थ्य आ जाएगा । तुम्हारे संकल्प में बल आ जाएगा, तुम्हारे द्वारा चमत्कार होने लगेंगे ।

चमत्कार होना आत्म साक्षात्कार नहीं है । चमत्कार होना शरीर और इन्द्रियों के संयम का फल है । आत्म साक्षात्कारी महापुरुष के द्वारा भी चमत्कार हो जाते हैं । वे चमत्कार करते नहीं हैं, हो जाते हैं । उनके लिए यह कोई बड़ी बात नहीं है । वाणी और संकल्प में सामर्थ्य यह इच्छाशक्ति का ही एक हिस्सा है । तुम जो संकल्प करो उसमें डटे रहो । तुम जो विचार करते हो उन विचारों को काटने का दूसरा विचार न उठने दो, तो तुम्हारे विचारों में बल आ जाएगा ।

शरीर को, इन्द्रियों को संयत करके जप, तप, मौन, एकाग्रता करो तो अंत:करण शुद्ध होगा । शुद्ध अंत:करण का संकल्प जल्दी फलता है । लेकिन यह आखिरी मंजिल नहीं है । शुद्ध अंत:करण फिर अशुद्ध भी हो सकता है ।

15-16 साल पहले वाराही में मेरे पास एक साधु आया और बहुत रोया । मैंने पूछा :''क्या बात है ?''

वह बोला : '' मेरा सब कुछ चला गया । बाबाजी ! लोग मुझे भगवान जैसा मानते थे । अब मेरे सामने आँख उठाकर कोई नहीं देखता है ।'' वह और रोने लगा । मैंने सांत्वना देकर ज्यादा पूछा तो उसने बताया:

''बाबाजी ! क्या बताऊँ ? मैं पानी में निहारकर वह पानी दे देता तो रोता हुआ आदमी हँसने लगता था । बीमार आदमी ठीक हो जाता था । लेकिन बाबाजी ! अब मेरी वह शक्ति न जाने कहाँ चली गई ? अब मुझे कोई पूछता नहीं ।''

बुद्धि का मोह पूरा गया नहीं था । बुद्धि का तमस् थोड़ा गया, बुद्धि का रजस् थोड़ा गया लेकिन बुद्धि पूरी परमात्मा में ठहरी नहीं थी । पूरी परमात्मा में नहीं ठहरी तो प्रतिष्ठा में ठहरी । प्रतिष्ठा थी तो बुद्धि प्रसन्न हुई और 'मैं भगवान हूँ...' ऐसा मानकर खुश रहने लगी । जब बुद्धि की शुद्धि चली गई, एकाग्रता नष्ट हुई तो संकल्प का सामर्थ्य चला गया । लोगों ने देखना बंद कर दिया तो बोलता है : 'बाबाजी ! मैं परेशान हूँ ।'

ज्ञानी शूली पर चढ़े तो भी परेशान नहीं होते । प्रसिद्धि के बदले कुप्रसिद्धि हो जाए, जहर दिया जाए, शूली पर चढ़ा दिया जाए फिर भी ज्ञानी अन्दर से दुःखी नहीं होते, क्योंकि उन्होंने जान लिया कि संसार में जो भी सुना हुआ, देखा हुआ, जो कुछ भी है, नहीं के बराबर है, सब स्वप्न है । भगवान शंकर कहते हैं :

उमा कहउँ मैं अनुभव अपना ।

सत्य हरिभजन जगत सब सपना ॥

तस्य प्रज्ञा प्रतिष्ठिता । उसकी प्रज्ञा ब्रह्म में प्रतिष्ठित हो जाती है।

उस साधु के लिए थोड़ी देर मैं शांत हो गया और फिर उससे बोला : ''तुमने त्राटक सिद्ध किया हुआ था ।''

वह बोला : ''हाँ बाबाजी ! आपको कैसे पता चला गया ?''

मैंने कहा : ''ऐसे ही पता चल गया ।''

आपका हृदय स्थिर है तो दूसरों की चित्तवृत्ति के साथ आपका तादात्म्य हो जाता है । कोई कठिन बात नहीं है । अपने लिए वह चमत्कार लगता है, संतो के लिए यह कोई चमत्कार नहीं

है ।

तुम्हारा रेडियो यदि ठीक है तो वायुमण्डल में बहता हुआ गाना तुम्हें सुनाई पड़ता है । ऐसे ही यदि तुम्हारा अंत:करण शांत होता है, बुद्धि स्थिर होती है तो घटित घटना या भविष्य की घटना का पता चल जाता है । यही कारण है कि वाल्मीकि ऋषि ने सौ साल पहले रामायण रच लिया, रामजी से या विष्णुजी से पूछने नहीं गये कि तुम क्या करोगे ? अथवा, किसी ज्योतिष का हिसाब लगाने नहीं गये थे । बुद्धि इतनी शुद्ध होती है कि भूत और भविष्य की कल्पनाएँ नहीं रहती हैं । ज्ञानी के लिए सदा वर्त्तमान रहता है । इसलिए भूत भविष्य की खबर पड़ जाती है । उनकी बुद्धि विचलित नहीं होती है ।

उस साधु ने त्राटक सिद्ध किया हुआ था । त्राटक से एकाग्रता होती है और एकाग्रता से इच्छाशक्ति विकसित होती है, सामर्थ्य बढ़ जाता है । उसी इच्छाशक्ति को यदि आत्मज्ञान में नहीं मोड़ा तो वह इच्छाशक्ति फिर संसार की तरफ ले जाती है ।

एकाग्रता के लिए त्राटक की विधि इस प्रकार है:

एक फुट के चौरस गत्ते पर एक सफेद कागज लगा दो । उसके केन्द्र में एक रुपये के सिक्के के बराबर एक गोलाकार चिह्न बनाओ । इस गोलाकार चिह्न के केन्द्र में एक तिलभर बिन्दु छोड़कर बाकी के भाग में काला रंग भर दो । बीचवाले बिन्दु में पीला रंग भर दो ।

अब उस गत्ते को ऐसे रखो कि वह गोलाकार चिह्न आपकी आँखो की सीधी रेखा में रहे । हररोज एक ही स्थान में कोई एक निश्चित समय में उस गत्ते के सामने बैठ जाओ । पलकें गिराये बिना अपनी दृष्टि उस गोलाकार चिह्न के पीले केन्द्र पर टिकाओ । आँखे पूरी खुली या पूरी बंद न हों।

आँखे बन्द होती हैं तो तुम्हारी शक्ति मनोराज में क्षीण होती है। आँखे यदि पूरी खुली होती हैं तो उसके द्वारा तुम्हारी शक्ति की रश्मियाँ बाहर बहकर क्षीण होती है, आत्मिक शक्ति क्षीण

होती है । इसी कारण ट्रेन, बस या मोटरकार की मुसाफिरी में खिड़की से बाहर झाँकते हो तो थोड़ी ही देर में थककर झपकियाँ लेने लगते हो । जीवनशक्ति खर्च हो जाती है ।

उस पीले बिन्दु पर दृष्टि एकाग्र करने से आँखो द्वारा बिखरती हुई जीवनशक्ति बचेगी और संकल्प की परंपरा टूटने लगेगी । संकल्प विकल्प कम होने से आध्यात्मिक बल जगेगा । पहले 5 मिनट, 10 मिनट, 15 मिनट बैठो । प्रारंभ में आँखे जलती हुई मालूम पड़ेंगी । आँखों में से पानी गिरेगा । रोज आधा घण्टा बैठने का अभ्यास करो । फिर तो तुम ऐसे ऐसे चमत्कार कर लोगे कि भगवान की तरह पूजे जाओगे । **उसके साथ यदि आत्मज्ञान नहीं होगा तो वह भगवान अंत में रोता हुआ भगवान होगा, मुक्त भगवान नहीं होगा ।**

एकाग्रता सब तपस्याओं का माई बाप है ।

भक्ति परंपरा में पूज्यपाद माधवाचार्य प्रसिद्ध संत हो गये । उन्होने कहा था :"हे प्रभु ! हम तेरे प्यार में अब इतने गर्क हो गये हैं कि हमसे अब न यज्ञ होता है न तीर्थ होता है, न संध्या होती है, न तर्पण होता है, न मृगछाला बिछती है न माला घूमती है । हम तेरे प्यार में ही बिक गये ।"

जब प्रेमाभक्ति प्रगट होने लगती है तब कुटुम्बियों का, संसारियों का, समाज का मोह तो हट जाता है लेकिन फिर कर्मकाण्ड का मोह भी टूट जाता है । कर्मकाण्ड का मोह तब तक है जब तक देह में आत्मबुद्धि होती है । संसार में आसक्ति होती है तब तक कर्मकाण्ड में प्रीति होती है । संसार की आसक्ति हट जाए, कृष्ण में प्रेम हो जाए, राम में प्रेम हो जाए तो फिर कर्मकाण्ड की नीची साधना करने को जी नहीं चाहता है। कृष्ण का अर्थ है आकर्षनेवाला, आनंदस्वरुप आत्मा । राम का अर्थ है सबमें रमनेवाला, चैतन्य आत्मा ।

कुछ संप्रदायवाले त्राटक सिद्ध करके अपनी शक्ति का दुरुपयोग करते हैं । चमगादड़ मारकर, उसका काजल बनाकर उस काजल को आँखों में लगाकर किसीसे अपनी आँख के सामने निहारने

और ध्यान करने को कहते हैं । ध्यान करनेवाले व्यक्ति की बुद्धि वश हो जाए, ऐसा संकल्प करके त्राटक करते हैं तो अच्छे अच्छे लोग उनके वश में हो जाते हैं ।

इसमें उनकी अपनी भी हानि है और सामनेवाले व्यक्ति की भी हानि है । एकाग्रता तो ठीक है लेकिन अगर एकाग्रता का उपयोग संसार है, एकाग्रता का उपयोग भोग है तो वह एकाग्रता साधक को मार डालती हैं । एकाग्रता का उपयोग एक परमात्मा की प्राप्ति के लिए होना चाहिए ।

रुपयों में पाप नहीं लेकिन रुपयों से भोग भोगना पाप है । सत्ता में पाप नहीं लेकिन सत्ता से अहंकार बढ़ाना पाप है । अक्लमंद होने में पाप नहीं लेकिन उस अक्ल से दूसरों को गिराना और अपने अहं को पोषित करना पाप है।

कई लोग परेशान रहते हैं । मूढ़ लोग, अधार्मिक लोग परेशान रहते हैं इसमें कोई आश्चर्य नहीं लेकिन भगत लोग भी परेशान रहते हैं । भगत सोचता है कि 'मेरा मन स्थिर हो जाए... मेरी इन्द्रियाँ शांत हो जाएँ...' भैया मेरे ! मन शांत हो जाएगा, इन्द्रियाँ शांत हो जाएँगी तो 'रामनाम सत् है...' हो जाएगा । तन, मन, इन्द्रियों का तो स्वभाव है हरकत करना, चेष्टा करना । लेकिन वह चेष्टा सुयोग्य हो । मन का स्वभाव है संकल्प करना, लेकिन ऐसा संकल्प करें कि अपना बन्धन कटे । बुद्धि का स्वभाव है निर्णय करना ।

लोग इच्छा करते हैं: ''मैं शांत हो जाऊँ पत्थर की तरह ... मेरा ध्यान लग जाए ...'' जिनका ध्यान लगता है वे परेशान हैं और जिनका ध्यान नहीं लगता है वे भी परेशान हैं । ध्यान के रास्ते नहीं आए वे भी परेशान हैं ही । उनकी वृत्तियाँ पल पल में उद्विग्न होती हैं । रजो तमोगुण बढ़ जाता है ।

योग में बताया गया है कि चित्त की पाँच अवस्थाएँ होती हैं : क्षिप्त, विक्षिप्त, मूढ़, एकाग्र और निरुद्ध । चित्त प्रकृति का बना है । वह सदा एक अवस्था में नहीं रहता । सदा एकाग्र भी नहीं

रह सकता और सदा चंचल भी नहीं रह सकता । कितना भी चंचल आदमी हो लेकिन रात को वह शांत हो जाएगा । कितना भी शांत व्यक्ति हो लेकिन उसका चित्त चेष्टा करेगा ही ।

भगवान शंकर जैसी समाधि तो किसीकी लगी नहीं । फिर भी शंकरजी समाधि से उठते हैं तो डमरु लेकर नाचते हैं । शरीर, मन और संसार सदा बदलता रहता है । सुख दु:ख सदा आता जाता है । दु:ख में तो पकड़ नहीं होती लेकिन सुख में पकड़ रहती है कि यह सदा बना रहे । सुख में, धन में, स्वर्ग में यदि पकड़ है तो समझो कि बुद्धि का मोह अभी नहीं गया । ज्ञानी को किसीमें पकड़ नहीं होती । भगवान कृष्ण जी कहते हैं :

यदा ते मोहकलिलम्

मोह दलदल है । दलदल में आदमी थोड़ा धँसते धँसते पूरा नष्ट हो जाता है ।

लालजी महाराज एक सरल संत हैं। उनके पास एक साधु आये । जवान थे, देखने में ठीक ठाक थे ।

एक बार एक नववधू शादी के बाद तुरंत बाबाजी के दर्शन करने आयी । बाबाजी ने कहा: " भगवान के दर्शन कर लो ।" वह दर्शन करने गई तो उस साधु की आँख उस नववधू की ओर घूमती रही । उसके जाने के बाद लालजी महाराज ने साधु से कहा: 'महाराज ! आप संन्यासी ठहरे । गृहस्थ साधक भी अपने को बचाता है और आप ...? यह ठीक नहीं लगता है कि कोई युवती आयी और ... इन्द्रियों को जरा बचाना चाहिए ।"

कान से और आँख से संसार अपने अन्दर घुस जाता है । वह साधु चिढ़ गया । उसे अहंकार था कि मैं साधु हूँ । मैंने गेरुए कपड़े पहने हैं ।

घर छोड़ना बड़ी बात नहीं लेकिन अहंकार छोड़ना बड़ी बात है । किन्हीं पादरियों के संग से प्रभावित और उनकी बुद्धि से रंगे हुए उस युवान साधु ने रुठकर कहा: ''भगवान ने आँखें दी हैं देखने के लिए, सौन्दर्य दिया है तो देखने के लिए । केवल देखने में क्या जाता है ? मैंने उससे बातें नहीं की, स्पर्श नहीं किया ।'' आदमी तर्क देना चाहे तो कैसे भी दे सकता है ।

अरे भाई ! पहले पहले तो ऐसा ही होता है कि देखने में क्या जाता है ? शराब की एक प्याली पी लेने में क्या जाता हैं ? लेकिन यह मोहकलिल ऐसा विचित्र दलदल है कि उसमें एक बार पैर पड़ गया तो फिर ज्यों ज्यों समय बीतता जाएगा त्यों त्यों ज्यादा धँसते जाओगे ।

वह साधु उस समय तो रुठकर चला गया लेकिन वक्त बादशाह है । घूमते घामते छः आठ महीने के बाद वह साधु दुबला पतला, चेहरे पर गड्ढे, दीन हीन हालत में लालजी महाराज के पास आया । उन्होंने तो पहचाना भी नहीं । पहले स्वामी होकर आता था । अब वह भिखारी की तरह पूछ रहा है :

''मैं आ सकता हूँ ?''

लालजी महाराज : ''आओ ।''

''मेरे साथ तीन मूर्तियाँ और भी हैं ।''

''उनको भी बुलाओ ।''

एक संन्यासिनी जैसी स्त्री और दो बच्चे भी आये । साधु ने अपनी पहचान दी तो लालजी महाराज बोले :

''फिर ये कौन हैं ?''

साधु बोला: ''यह विधवा माई थी । बेचारी दुःखी थी । बच्चे भी थे । उसे देखकर मुझे दया आ गई । आजीविका का कोई साधन उसके पास नहीं था इसलिए माई को शिष्या बना लिया । बच्चों को पढ़ाता हूँ ।''

बाद में मालूम करने पर पता चला कि साधु ने उस स्त्री को पत्नी बनाया है और कमाता नहीं है इसलिए गेरुए कपड़े पहनाकर घुमाता रहता है ।

क्या तेजस्वी साधु था ! स्त्री की ओर जरा सा देखा केवल, और कुछ नहीं । आँख से इधर उधर कुछ देखते हो या कान से सुनते हो तो बुद्धि में जरा सा भी यदि मोह है तो वह बढ़ता जायेगा । आत्मज्ञान नहीं हुआ हो तो जब तक शरीर रहे, तब तक भगवान से प्रार्थना करना कि: 'हे प्रभु ! बचाते रहना इस दलदल से'

कईयों को भ्रांति हो जाती है कि : "मुझे आत्म साक्षात्कार हो गया ... मुझे आत्मशांति मिल गई ..."

भावनगर से करीब 15-20 कि. मी. दूर गौतमेश्वर नामक जगह है । वहाँ एक साधु थे । बहुत त्यागी थे । लोगों की भीड़ को देखते तो वे एकान्त में भाग जाते । संसार से विरक्त । कुछ साथ में नहीं रखते थे । एकाध कपड़ा पहनते थे । त्यागी थे । नारायण उनका नाम था और नारायण के भक्त थे । बाद में वे दु:खी होकर मरे ।

मैंने कहा : 'त्यागी हैं, भगवान के भक्त हैं तो दु:खी होकर नहीं मरते । लोग उन्हें दु:ख दे सकें, मगर वे दु:खी होते नहीं ।'

तब लोगों ने बताया : "घूमते घूमते वे गिरनार चले गये थे । वहाँ देखा किसी अघोरी को । सोचा, जरा सा सुल्फा पीने में क्या जाता है ? एक फूँक लेने में क्या जाता है ? जरा सा चरस खींचने में क्या जाता है ? उन्होंने सुल्फा भी पिया, भाँग भी पी, चरस भी पिया, सिगरेट भी पीने लगे । फिर अशांत होकर आये, विक्षिप्त होकर आये और आत्मघात करके मर गये ।"

शामलाजी आदिवासी क्षेत्र में मुझे समाज के लोगों ने आकर कहा कि यहाँ के पादरी लोग बोतल खुली रखकर उसमें से प्यालियाँ पीते पीते लोगों को लेक्चर देते हैं, आशीर्वचन देते हैं । ऐसे शराबी लोग धर्मगुरु होकर लोगों के सिर पर हाथ रखते हैं । वे गरीब आदिवासी बेचारे

धर्मपरिवर्तन के बहाने धर्मभ्रष्ट होते हैं । जिस कुल में जन्म लिया हो उस कुल के मुताबिक अगर सत्कर्म करें तो उस पुण्य के प्रभाव से उनके पूर्वजों को भी सदगति मिल जाये । यहा तो शराबी लोग थोड़े से रुपयों की लालच देकर भोले भाले बेचारे आदिवासियों को धर्मभ्रष्ट कर रहे हैं ।

पीत्वा मोहमयीं मदिरां संसार भूतो उन्मत : ।

दुर्जन तो दु:खी होते ही हैं लेकिन सज्जन भी सच्ची समझ के बिना परेशान हो जाते हैं । एक पिता फरियाद करता है कि : "मैं सुबह जल्दी उठता हूँ । पूजा पाठ करता हूँ । कुटुम्ब के अन्य लोग भी जल्दी उठते हैं लेकिन एक नवजवान बेटा दुष्ट है । वह सबेरे जल्दी नहीं उठता ।"

यह मोह है । 'मेरा' बेटा जल्दी उठे । कईयों के बेटे नहीं उठते तो कोई हर्ज नहीं लेकिन 'मेरा' बेटा जल्दी उठे । मैं धार्मिक हूँ तो 'मेरे' बेटे को भी धार्मिक होना चाहिए ।

अपने बेटे में इतनी ममता होने के कारण ही दु:ख होता है । भगवान के जो प्यारे भक्त हैं, भगवत तत्व को कुछ समझ रहे हैं उनको आग्रह नहीं होता । बड़े बेटे को जल्दी उठाने का प्रयत्न करते हैं लेकिन बेटा नहीं उठता है तो चित्त में विक्षिप्त नहीं होते ।

किसीका विरक्ति प्रधान प्रारब्ध होता है, किसीका व्यवहार प्रधान प्रारब्ध होता है । ज्ञान होने के बाद ज्ञानी का जीवन स्वाभाविक चलता है । लेकिन धार्मिक लोगों को इतनी चिंता परेशानी होती है कि : 'अरे ! शुकदेवजी को लंगोटी का भी पता नहीं रहता था, इतने आत्मानंद में डूबे रहते थे । हमारा ध्यान तो ऐसा नहीं लगता । शुकदेवजी जैसा हमारा ध्यान लगे ।'

हजारों वर्ष पहले का मनुष्य, हजारों वर्ष पहले का वातावरण और कई जन्मों के संस्कार थे । उनको ऐसा हुआ । उनको लक्ष्य बनाकर चलते तो जाओ लेकिन लक्ष्य बनाकर विक्षिप्त नहीं

होना । हो गया तो हो गया, नहीं हुआ तो नहीं हुआ, लेकिन चित्त को सदा प्रसन्नता से महकता हुआ रखो । ऐसा ध्यान हो गया तो भी स्वप्न, न हुआ तो भी स्वप्न । जिस परमात्मा में शुकदेवजी आकर चले गये, वशिष्ठजी आकर चले गये, श्रीराम आकर चले गये, श्रीकृष्ण आकर चले गये वह परमात्मा अभी तुम्हारा आत्मा है । ऐसा ज्ञान जब तक नहीं होता है तब तक मोह नहीं जाता है ।

तुलसीदासजी ने कहा है :

मोह सकल ब्याधिन्ह कर मूला । तिन्ह ते पुनि उपजहिं बहु सूला ॥

मोह सब व्याधियों का मूल है । उससे भव का शूल फिर पैदा होता है । इसीलिए किसी भी वस्तु में ममता हुई, आसक्ति हुई, मोह हुआ तो समझो कि मरे । किसी भी परिस्थिति में मोह ममता नहीं होनी चाहिए ।

'आज आरती की घण्टी बजाई, प्रार्थना की तो बहुत मजा आया । अहा ... ! रोज ऐसे आरतियाँ करें, घण्टियाँ बजायें और मजा आता रहे ...' तो हररोज ऐसा होगा नहीं । जिस समय सुषुम्णा का द्वार खुला है, मुहूर्त अच्छा है, बुद्धि में सात्त्विकता है उस समय आरती करते हो तो मजा आता है । जिस समय शरीर में रजो तमोगुण है, कुछ खाया पिया है, शरीर भारी है, प्राण नीचे हैं उस समय आरती करोगे तो मजा नहीं आयेगा ।

मजा आना और न आना आत्मा का स्वभाव नहीं, चिदाभास का स्वभाव है, जीव का स्वभाव है । मजा जीव को आता है । ज्ञानी को मजा और बेमजा नहीं आता । वे तो मस्तराम हैं ।

संसारी आदमी द्वेषी होता है । पामर आदमी को जितना राग होता है, उतना द्वेष होता है । भक्त होता है रागी । भगवान में राग करता है, आरती पूजा में राग करता है, मंदिर मूर्ति में राग करता है । जिज्ञासु में होती है जिज्ञासा । ज्ञानी में कुछ नहीं होता है । ज्ञानी गुणातीत होते हैं । मजे की बात है कि ज्ञानी में सब दिखेगा लेकिन ज्ञानी में कुछ होता नहीं । ज्ञानी से सब

गुजर जाता है ।

बुद्धि को शुद्ध करने के लिए आत्मविचार की जरुरत है, ध्यान की जरुरत है, जप की जरुरत है । बुद्धि शुद्ध हो तो जैसे दूसरे शरीर को अपनेसे पृथक् देखते हैं वैसे ही अपने शरीर को भी आप अपनेसे अलग देखेंगे । ऐसा अनुभव जब तक नहीं होता, तब तक बुद्धि में मोह होने की संभावना रहती है ।

थोड़ा सा मोह हट जाता है तब लगता है कि मेरे को रुपयों में मोह नहीं है, स्त्री में मोह नहीं है, मकान में मोह नहीं है, आश्रम में मोह नहीं है । ठीक है । लेकिन प्रतिष्ठा में मोह है कि नहीं है, इसे जरा ढूँढ़ो । देह में मोह है कि नहीं है, जरा ढूँढ़ो । और मोह टूट जाते हैं लेकिन देह का मोह जल्दी नहीं टूटता, लोकेषण (वाहवाही) का मोह जल्दी नहीं टूटता , धन का मोह भी जल्दी से नहीं टूटता ।

'रुपये सूद पर दिये हुए हैं । कथा में जाना है । गुरुदेव बाहर जानेवाले हैं । क्या करें ? सूद पर पैसे जिनको दिये हुए हैं वे कहीं भाग गये तो ?' अरे, वह क्या भागेगा ? भाग भागकर कहाँ तक जायेगा ? स्मशान में ही न ? ... और तुम कितना भी इकठ्ठा करोगे तो भी आखिर स्मशान में ही जाना है । कोई खाकर नहीं भागता, कोई लेकर नहीं भागता । सब यहीं का यहीं पड़ा रह जाता है । केवल बुद्धि में ममता है कि ये मेरे पैसे हैं, ये मेरे कर्जदार हैं । यह केवल बुद्धि का खिलवाड़ है । बुद्धि के ये खिलौने तब तक अच्छे लगते हैं जब तक परमात्मा का ठीक से अनुभव नहीं हुआ है ।

पक्षियों से जरा सीख लो । उनको आज खाने को है, कल का कोई पता नहीं फिर भी पेड़ की डाली पर गुनगुना लेते हैं, कोलाहल कर लेते हैं । कब कहाँ जायेंगे, कोई पता नहीं फिर भी निश्चिंतता से जी लेते हैं ।

हमारे पास रहने को घर है, खाने को अन्न है - महीने भर का, साल भर का । फिर भी दे

धमाधम ! सामान सौ साल का, पता पल का नहीं ।

जिनको बैठने का ठिकाना नहीं, डाल पर बैठ लेते हैं, दूसरे पल कौन सी डाल पर जाना है, कोई पता नहीं, ऐसे पक्षी भी आनंद से जी लेते हैं । क्या खायेंगे, कहाँ खायेंगे, कोई पता नहीं। उनका कोई कार्यक्रम नहीं होता कि आज वहाँ 'डिनर' (भोज) है । फिर भी जी लेते हैं । भूख के कारण नहीं मरते, रहने का स्थान नहीं मिलता इसके कारण नहीं मरते । मौत जब आती है तब मरते हैं ।

मुर्दे को प्रभु देत है, कपड़ा लकड़ा आग ।

जिन्दा नर चिन्ता करे, ता के बड़े अभाग ॥

चिन्ता यदि करनी है तो इस बात की करो कि पाँच वर्ष के ध्रुव को वैराग्य हुआ, प्रहलाद को वैराग्य हुआ, पर मुझे क्यों नहीं होता ? रामतीर्थ को 22 साल की उम्र में वैराग्य हुआ और परमात्मा को पा लिया । मुझे 25 साल हो गये, 40 साल हो गये, 45 साल हो गये फिर भी वैराग्य नहीं होता ?

संसार की चाह अभी भी करते हो ! संसार के नश्वर धन की वसूली करना चाहते हो !

ऐसा धन पा लो कि ब्रह्माजी का पद, कुबेर का धन, इन्द्र का ऐश्वर्य तुम्हारे आगे तुच्छ दिखे । तुममें इतना सामर्थ्य है ।

वह विद्याधरी शिला से वापस बाहर आकर वशिष्ठजी से कह रही है कि : "महाराज ! आइए ।"

वशिष्ठजी बोले : "मैं तो नहीं आ सकता हूँ।"

जिसकी धारणाशक्ति सिद्ध हो गई है वह अंतवाहक शरीर से दीवार के भीतर प्रवेश कर लेगा । अंतवाहक शरीर की साधना न की हो तो भले सिर फूट जाये लेकिन दीवार के भीतर से न जा सकेगा । सुरंग बनाये बिना आदमी योग की कला से पहाड़ में से आर पार गुजर सकता है । ऐसी शक्ति तुम्हारे सबके भीतर छुपी हुई है । वह शक्ति विकसित नहीं हुई । स्थूल शरीर के साथ जुड़ गये इसलिए वह शक्ति स्थूलरुप हो गई है ।

पानी भाप बन जाता है तो बारीक से बारीक छेद में से निकल जाता है लेकिन वह पानी यदि ठण्डा होकर बर्फ बन जाता है तो छोटी बड़ी खिड़की से भी नहीं निकल पाता । ऐसे ही तुम्हारी चित्तवृत्ति यदि स्थूल होती है तो गति नहीं होती है और सूक्ष्म हो जाती है तो गति होती है ।

वशिष्ठजी महाराज ने उस विद्याधरी की चित्तवृत्ति से अपनी चित्तवृत्ति मिला दी और शिला में प्रविष्ट हो गये । इस सृष्टि से एक नयी सृष्टि में पहुँच गये । वहाँ उस महिला ने एक समाधिस्थ योगी को दिखाते हुए कहा कि :"वे मेरे पति हैं। उनको संसार से वैरागय हो गया है । अब मेरी तरफ आँख उठाकर देखते तक नहीं हैं।"

जब योगी ने आँखें खोलीं तो विघाधरी ने कहा:

"ये वशिष्ठजी महाराज हैं। दूसरी सृष्टि से आये हैं । श्रीराम के गुरु हैं । महापुरुषों का स्वागत करना सत्पुरुषों का स्वभाव है । इनका अर्ध्य पाद्य से स्वागत कीजिये ।"

उस योगी ने वशिष्ठजी का स्वागत किया और कहा:

"हे ब्राह्मण ! यह सृष्टि मैंने इच्छाशक्ति से बनायी थी । पत्नी की इच्छा हुई तो संकल्प से पत्नी भी बना ली । फिर देखा कि जिस परमात्मा की सत्ता से संकल्प द्वारा इतनी घटना घट सकती है उस परमात्मा में ही क्यों न ठहर जायें ? अत: मैं अपनी चित्तवृत्ति को समेटकर, परमानंद में मग्न होकर आत्मशांति में ले आया । अब कोई भोग भोगने की मेरी इच्छा नहीं है और इस सृष्टि को चलाने की भी मेरी इच्छा नहीं है ।

मेरी सेवा करते करते इस स्त्री में भी धारणाशक्ति सिद्ध हो गई है, इच्छाशक्ति के अनुसार घटनाएँ घटने लग जाती हैं लेकिन इसकी बुद्धि में से मोह अभी गया नहीं है । इसको भोग की इच्छा है । भोग हमेशा अपना नाश करने में संलग्न होता है । आप इसको आशीर्वाद दें कि इसकी भोग की इच्छा निवृत्त हो जाये और परमात्मा में चित्तवृत्ति लग जाये । और ... अब मैं इस सृष्टि को धारण करने का संकल्प समेट रहा हूँ । आप जल्दी से जल्दी इस सृष्टि से बाहर पधारें । मेरे संकल्प में यह सृष्टि ठहरी है । संकल्प समेटते ही इसका प्रलय हो जायेगा ।"

वशिष्ठजी कहते हैं : "मैं उस सृष्टि से रवाना हुआ और मेरे देखते देखते उस ब्रह्माजी ने संकल्प समेटा तो सृष्टि का प्रलय होने लगा । सूर्य तपने लगा, प्रलयकाल की वायु चलने लगी । पहाड़ टूटने लगे, लोग मरने लगे, वृक्ष सूखने लगे । पक्षी गिरने लगे ।"

तुम्हारे अंदर वही परमात्मशक्ति इतनी है कि यदि वह विकसित हो जाये तो तुम इच्छाशक्ति से नयी सृष्टि बना सकते हो । हर इन्सान में ऐसी ताकत है । लेकिन मोह के कारण, भोगवासना के कारण नयी सृष्टि तो क्या, मामूली घर बनाते हैं तो भी 'लोन' (उधार) लेना पड़ता है ... वह भी मिलता नहीं और धक्के खाने पड़ते हैं ।

केवल निधि

जिसको केवली कुम्भक सिद्ध हो जाता है, वह पूजने योग्य बन जाता है । यह योग की एक ऐसी कुंजी है कि छः महीने के दृढ़ अभ्यास से साधक फिर वह नहीं रहता जो पहले था । उसकी मनोकामनाएँ तो पूर्ण हो ही जाती हैं, उसका पूजन करके भी लोग अपनी मनोकामना सिद्ध करने लगते हैं ।

जो साधक पूर्ण एकाग्रता से इस पुरुषार्थ को साधेगा, उसके भाग्य का तो कहना ही क्या ? उसकी व्यापकता बढ़ती जायेगी । महानता का अनुभव होगा । वह अपना पूरा जीवन बदला हुआ पायेगा ।

बहुत तो क्या, तीन ही दिनों के अभ्यास से चमत्कार घटेगा । तुम, जैसे पहले थे वैसे अब न रहोगे । काम, क्रोध, लोभ, मोह आदि षडविकार पर विजय प्राप्त करोगे।

काकभुशुण्डिजी कहते हैं कि : "मेरे चिरजीवन और आत्मलाभ का कारण प्राणकला ही है ।"

प्राणायाम की विधि इस प्रकार है:

स्नान शौचादि से निपटकर एक स्वच्छ आसन पर पद्मासन लगाकर सीधे बैठ जाओ । मस्तक, ग्रीवा और छाती एक ही सीधी रेखा में रहें । अब दाहिने हाथ के अँगूठे से दायाँ नथुना बन्द करके बाँयें नथुने से श्वास लो । प्रणव का मानसिक जप जारी रखो । यह पूरक हुआ । अब जितने समय में श्वास लिया उससे चार गुना समय श्वास भीतर ही रोके रखो । हाथ के अँगूठे और उँगलियों से दोनों नथुने बन्द कर लो । यह आभ्यांतर कुम्भक हुआ । अंत में हाथ का अँगूठा हटाकर दायें नथुने से श्वास धीरे धीरे छोड़ो । यह रेचक हुआ । श्वास लेने में (पूरक में)

जितना समय लगाओ उससे दुगुना समय श्वास छोड़ने में (रेचक में) लगाओ और चार गुना समय कुम्भक में लगाओ । पूरक कुम्भक रेचक के समय का प्रमाण इस प्रकार होगा 1:4:2

दायें नथुने से श्वास पूरा बाहर निकाल दो, खाली हो जाओ । अंगूठे और उँगलियों से दोनों नथुने बन्द कर लो । यह हुआ बहिर्कुम्भक । फिर दायें नथुने से श्वास लेकर, कुम्भक करके बाँयें नथुने से बाहर निकालो । यह हुआ एक प्राणायम ।

पूरक ... कुम्भक ... रेचक ... कुम्भक ... पूरक ... कुम्भक ... रेचक ।

इस समग्र प्रक्रिया के दौरान प्रणव का मानसिक जप जारी रखो ।

एक खास महत्व की बात तो यह है कि श्वास लेने से पहले गुदा के स्थान को अन्दर सिकोड़ लो यानी ऊपर खींच लो। यह है मूलबन्ध ।

अब नाभि के स्थान को भी अन्दर सिकोड़ लो । यह हुआ उड्डियान बन्ध ।

तीसरी बात यह है कि जब श्वास पूरा भर लो तब ठोंड़ी को, गले के बीच में जो खड्डा है- कंठकूप, उसमें दबा दो । इसको जालन्धर बन्ध कहते हैं।

इस त्रिबंध के साथ यदि प्राणायाम होगा तो वह पूरा लाभदायी सिद्ध होगा एवं प्राय: चमत्कारपूर्ण परिणाम दिखायेगा ।

पूरक करके अर्थात् श्वास को अंदर भरकर रोक लेना इसको आभ्यांतर कुम्भक कहते हैं । रेचक

करके अर्थात् श्वास को पूर्णतया बाहर निकाल दिया गया हो, शरीर में बिलकुल श्वास न हो, तब दोनों नथुनों को बंद करके श्वास को बाहर ही रोक देना इसको बहिर्कुम्भक कहते हैं । पहले आभ्यान्तर कुम्भक और फिर बहिर्कुम्भक करना चाहिए ।

आभ्यान्तर कुम्भक जितना समय करो उससे आधा समय बहिर्कुम्भक करना चाहिए । प्राणायाम का फल है बहिर्कुम्भक । वह जितना बढ़ेगा उतना ही तुम्हारा जीवन चमकेगा । तन मन में स्फूर्ति और ताजगी बढ़ेगी । मनोराज्य न होगा ।

इस त्रिबन्धयुक्त प्राणायाम की प्रक्रिया में एक सहायक एवं अति आवश्यक बात यह है कि आँख की पलकें न गिरें । आँख की पुतली एकटक रहे । आँखें खुली रखने से शक्ति बाहर बहकर क्षीण होती है और आँखे बन्द रखने से मनोराज्य होता है । इसलिए इस प्राणायम के समय आँखे अर्द्धोन्मीलित रहें आधी खुली, आधी बन्द । वह अधिक लाभ करती है ।

एकाग्रता का दूसरा प्रयोग है जिह्वा को बीच में रखने का । जिह्वा तालू में न लगे और नीचे भी न छुए । बीच में स्थिर रहे । मन उसमें लगा रहेगा और मनोराज्य न होगा । परंतु इससे भी अर्द्धोन्मीलित नेत्र ज्यादा लाभ करते हैं ।

प्राणायाम के समय भगवान या गुरु का ध्यान भी एकाग्रता को बढ़ाने में अधिक फलदायी सिद्ध होता है । प्राणायाम के बाद त्राटक की क्रिया करने से भी एकाग्रता बढ़ती है, चंचलता कम होती है, मन शांत होता है ।

प्राणायाम करके आधा घण्टा या एक घण्टा ध्यान करो तो वह बड़ा लाभदायक सिद्ध होगा ।

एकाग्रता बड़ा तप है। रातभर के किए हुए पाप सुबह के प्राणायाम से नष्ट होते हैं । साधक निष्पाप हो जाता है । प्रसन्नता छलकने लगती है ।

जप स्वाभाविक होता रहे यह अति उत्तम है । जप के अर्थ में डूबे रहना, मंत्र का जप करते समय उसके अर्थ की भावना रखना । कभी तो जप करने के भी साक्षी बन जाओ । 'वाणी, प्राण जप करते हैं । मैं चैतन्य, शांत, शाश्वत् हूँ ।' खाना पीना, सोना जगना, सबके साक्षी बन जाओ । यह अभ्यास बढ़ता रहेगा तो केवली कुम्भक होगा । तुमने अगर केवली कुम्भक सिद्ध किया हो और कोई तुम्हारी पूजा करे तो उसकी भी मनोकामना पूरी होगी ।

प्राणायाम करते करते सिद्धि होने पर मन शांत हो जाता है । मन की शांति और इन्द्रियों की निश्चलता होने पर बिना किये भी कुम्भक होने लगता है । प्राण अपने आप ही बाहर या अंदर स्थिर हो जाता है और कलना का उपशम हो जाता है । यह केवल, बिना प्रयत्न के कुम्भक हो जाने पर केवली कुम्भक की स्थिति मानी गई है। केवली कुम्भक सद्गुरु के प्रत्यक्ष मार्गदर्शन में करना सुरक्षापूर्ण है।

मन आत्मा में लीन हो जाने पर शक्ति बढ़ती है क्योंकि उसको पूरा विश्राम मिलता है । मनोराज्य होने पर बाह्म क्रिया तो बन्द होती है लेकिन अंदर का क्रियाकलाप रुकता नहीं । इसीसे मन श्रमित होकर थक जाता है ।

ध्यान के प्रारंभिक काल में चेहरे पर सौम्यता, आँखों में तेज, चित्त में प्रसन्नता, स्वर में माधुर्य आदि प्रगट होने लगते हैं । ध्यान करनेवाले को आकाश में श्वेत त्रसरेणु (श्वेत कण) दिखते हैं । यह त्रसरेणु बड़े होते जाते हैं । जब ऐसा दिखने लगे तब समझो कि ध्यान में सच्ची प्रगति हो रही है ।

केवली कुम्भक सिद्ध करने का एक तरीका और भी है । रात्रि के समय चाँद की तरफ दृष्टि एकाग्र करके, एकटक देखते रहो । अथवा, आकाश में जितनी दूर दृष्टि जाती हो, स्थिर दृष्टि करके, अपलक नेत्र करके बैठे रहो । अडोल रहना । सिर नीचे झुकाकर खुर्राटे लेना शुरु मत करना । सजग रहकर, एकाग्रता से चाँद पर या आकाश में दूर दूर दृष्टि को स्थिर करो ।

जो योगसाधना नहीं करता वह अभागा है । योगी तो संकल्प से सृष्टि बना देता है और दूसरों को भी दिखा सकता है । चाणाक्य बड़े कूटनीतिज्ञ थे । उनका संकल्प बड़ा जोरदार था । उनके राजा के दरबार में कुमागिरि नामक एक योगी आये । उन्होंने चुनौती के उत्तर में कहा :"मैं सबको भगवान का दर्शन करा सकता हूँ ।"

राजा ने कहा : "कराइए ।"

उस योगी ने अपने संकल्पबल से सृष्टि बनाई और उसमें विराटरुप भगवान का दर्शन सब सभासदों को कराया । वहाँ चित्रलेखा नामक राजनर्तकी थी । उसने कहा : "मुझे कोई दर्शन नहीं हुए।"

योगी: "तू स्त्री है इससे तुझे दर्शन नहीं हुए ।"

तब चाणक्य ने कहा : "मुझे भी दर्शन नहीं हुए ।"

वह नर्तकी भले नाचगान करती थी फिर भी वह एक प्रतिभासंपन्न नारी थी । उसका मनोबल दृढ़ था । चाणक्य भी बड़े संकल्पवान थे । इससे इन दोनों पर योगी के संकल्प का प्रभाव नहीं पड़ा । योगबल से अपने मन की कल्पना दूसरों को दिखाई जा सकती है । मनुष्य के अलावा जड़ के ऊपर भी संकल्प का प्रभाव पड़ सकता है। खट्टे आम का पेड़ हाफुस आम दिखाई देने लगे, यह संकल्प से हो सकता है ।

मनोबल बढ़ाकर आत्मा में बैठे जाओ, आप ही ब्रह्म बन जाओ । यही संकल्पबल की आखिरी उपलब्धि है ।

निद्रा, तन्द्रा, मनोराज्य, कब्जी, स्वप्नदोष, यह सब योग के विघ्न हैं । उनको जीतने के लिए संकल्प काम देता है । योग का सबसे बड़ा विघ्न है वाणी । मौन से योग की रक्षा होती है । नियम से और रुचिपूर्वक किया हुआ योगसाधन सफलता देता है । निष्काम सेवा भी बड़ा साधन

है किन्तु सतत बहिर्मुखता के कारण निष्काम सेवा भी सकाम हो जाती है । देह में जब तक आत्म सिद्धि है तब तक पूर्ण निष्काम होना असंभव है ।

हम अभी गुरुओं का कर्जा चढ़ा रहे हैं । उनके वचनों को सुनकर अगर उन पर अमल नहीं करते तो उनका समय बरबाद करना है । यह कर्जा चुकाना हमारे लिए भारी है । ... लेकिन संसारी सेठ के कर्जदार होने के बजाय संतो के कर्जदार होना अच्छा है और उनके कर्जदार होने के बजाय साक्षात्कार करना श्रेष्ठ है । उपदेश सुनकर मनन, निदिध्यासन करें तो हम उस कर्जे को चुकाने के लायक होते हैं ।

ज्ञानयोग

1) जिसको जीव और जगत मिथ्या लगता है उसके लिए ज्ञानमार्ग है, जिसको सत्य लगता है उसके लिए योगमार्ग और भक्तिमार्ग है ।

2) जिसको अंत:करण में राग द्वेष हैं वह चाहे आत्मा अनात्मा का विवेक करे चाहे चित्त का निरोध करे, उसको ज्ञाननिष्ठा नहीं होती है ।

3) स्थूल कामनाओं का नाश एकांतसेवन से होता है । स्वप्न में जो सूक्ष्म कामनाएँ दिखती हैं उनका नाश भगवद्ध्यान से और सत्वासना के अभ्यास से होता है ।

4) विक्षेप उत्पन्न करनेवाले कर्म का त्याग संन्यास है । गेरुए वस्त्र पहननेमात्र से कोई संन्यासी नहीं होता । गार्गी, व्याध, वशिष्ठजी इत्यादि ने संन्यासी के वस्त्र धारण नहीं किये थे फिर भी वे ज्ञानी थे ।

5) व्युत्थान दशा में भगवद् भजन के आनंद में जो निमग्न रहता है उसको द्वैत का संताप नहीं लगता।

6) पराभक्ति का अर्थ है द्वैतदृष्टिरहित भावना ।

7) जिस धृति में से चित्त का निरोध होता हो और एकाग्र अवस्था आती हो उसे सात्त्विक धृति कहते हैं।

8) सात्त्विक संन्यास वैराग्यपूर्वक लिया जाता है, राजसिक संन्यास कायाक्लेश और भय से लिया जाता है तथा तामसिक संन्यास मूढ़ता से लिया जाता है ।

9) जैसे दीपक जलाने के लिए तेल, बत्ती आवश्यक हैं वैसे ही '**तत्त्वमसि**' महावाक्य से उत्पन्न होनेवाली ब्रह्माकार वृत्ति के लिए श्रवण, मनन, ध्यान, शम, दम आदि आवश्यक हैं । एक बार वह ब्रह्माकार वृत्ति उत्पन्न हो जाए तो वह अज्ञान का नाश कर देती है । ब्रह्माकार वृत्ति अपने विषय को प्रकाशित करने के लिए किसी कर्म या अभ्यास की अपेक्षा नहीं करती । एक बार घट का ज्ञान हो जाए तो उसको दृढ़ करने के लिए घट के आकार की पुनरावृत्ति या कर्म की आवश्यकता नहीं है ।

10) मृगजल देखने का आनंद नष्ट हो जाए तो तत्त्वज्ञानी पुरुष उसके लिए शोक नहीं करते । जगत का कोई भाव तत्त्वज्ञ के चित्त पर प्रभाव नहीं रखता ।

11) आत्मा नित्य होने से वह घट की तरह या कीट भ्रमर की तरह उत्पन्न नहीं होता । नदी को सागर प्राप्त होती है ऐसे आत्मा प्राप्त नहीं होती, क्योंकि वह सर्वगत है । दूध में विकार होकर दही बनता है वैसे आत्मा में विकार नहीं होता, क्योंकि वह स्थाणु है । सुवर्ण की

शुद्धि की तरह आत्मा कोई संस्कार की अपेक्षा नहीं करता क्योंकि वह अचल है । उत्पत्ति, प्राप्ति, विकृति और संस्कृति ये चारों धर्म कर्म के हैं ।

12) जैसे घटाकाश महाकाश के रुप में नित्य है वैसे आत्मा परमात्मा के रुप में नित्य है । कंठ में मणि नित्य प्राप्त है फिर भी विस्मरण हो जाने से वह अप्राप्त सा लगता है । स्मरण आ जाने मात्र से वह मणि प्राप्त हो जाता है । उसी प्रकार अज्ञान का आवरण भंग होनेमात्र से आत्मा की प्राप्ति हो जाती है, वह नित्य प्राप्त ही था ऐसा ज्ञान हो जाता है ।

13) अज्ञान दशा उपाधि को उत्पन्न करती है और ज्ञानदशा उपाधि का ग्रास करती है ।

14) अध्यस्त के विकारी धर्म से अधिष्ठान में विकार पैदा नहीं होता । मृगजल से मरुभूमि कभी गीली नहीं होती ।

15) आत्मा का सुख अपनी बुद्धि का प्रसाद मिलने से, बुद्धि निर्मल होने से, रजो तमोगुण के मल से रहित होने से उत्पन्न होता है । आत्मा का सुख विषयों के संग से उत्पन्न नहीं होता और निद्रा या आलस्य से नहीं मिलता ।

16) जिसका मन सर्व भूतों में समान ब्रह्मभाव से स्थित और निश्चल हुआ है उसने इस जन्म को जीत लिया है ।

17) ब्रह्मज्ञानी सर्व ब्रह्मरुप देखते हुए व्युत्थान अवस्था में भी ब्रह्म में स्थित रहते हैं।

18) भगवान कहते हैं कि : 'सतत मेरा भजन करनेवाले को मैं बुद्धियोग देता हूँ।' यहाँ बुद्धियोग का अर्थ है ज्ञाननिष्ठा । ऐसी निष्ठा जब आती है तब जैसे नदियाँ अपना नाम रुप छोड़कर सागर में प्रवेश करती हैं वैसे ही भक्त भगवत्स्वरुप में प्रवेश करते हैं।

19) अग्नि का स्फुलिंग अग्निरुप ही है, अग्नि का अंश नहीं है। उसी प्रकार जीव भी ब्रह्म ही है, ब्रह्म का अंश नहीं है । निरंश स्वरुप में अंश अंशी की कल्पना बनती नहीं। अंश भाव कल्पित उपाधि के स्वीकार करने के कारण उपचार से बोला जाता है ।

20) देह के उपादानभूत अविधा का नाश होने के बाद भी कुछ काल तक ज्ञानी को देहादि का भान रहता है । इस जीवन्मुक्तावस्था को ध्यान में लेकर भगवान ने कहा है कि ज्ञानी और तत्त्वदर्शी पुरुष जिज्ञासुओं को ज्ञान देते हैं।

21) सोये हुए आदमी को उसको नाम लेकर कोई पुकारता है तो वह जाग जाता है । उसको जगाने के लिए अन्य किसी क्रिया की आवश्यकता नहीं है। उसी प्रकार अज्ञान में सोया हुआ जीव अपने निज आत्मस्वरुप का गुणगान सुनकर जाग जाता है ।

22) आत्म प्राप्ति के राही के लिए महापुरुषों की सेवा अत्यंत कल्याणकारी है। बिना सेवा के ब्रह्मविधा मिलती या फलीभूत नहीं होती । ब्रह्मविधा के ठहराव के लिए शुद्ध अंत करण की आवश्यकता है । सेवा से अंत करण शुद्ध होता है, नम्रता आदि सद्गुण आते हैं। शाखाओं का झुकना फलयुक्त होने का चिह्न है, इसी तरह नम्र तथा शुद्ध अंत करण में ज्ञान का प्रादुर्भाव होता है । यही ब्रह्मविधा की पहचान है।

23) जप पूर्ण भावसहित करना चाहिए । ह्रदय में सत् चित् आनंदस्वरुप विभु की टंकार होनी चाहिए । इस समय अपने कानों को भी अपने श्वासों के चलने की आवाज न आए । लक्ष्य हमेशा यह रहे : **सोऽहम् ।** मैं वही हूँ । इस स्मरण से अभय हो जाना चाहिए।

24) निरीक्षण करो कि किन किन कारणों से उन्नति नहीं हो रही है । उन्हें दूर करो । बार बार उन्हीं दोषों की पुनरावृत्ति करना उचित नहीं। अगर देखभाल नहीं करोगे तो उम्र यूँ ही बीत जायेगी परंतु बननेवाली बात नहीं बनेगी। जितना चलना चाहिए उतना चलना होगा, जितना चल सकते हो उतना नहीं। आशिक नींद में ग्रस्त नहीं होते। व्याकुल ह्रदय से तड़पते हुए प्रतिक्षा करते हैं। सदा जागृत रहते हैं। सदा ही सावधान रहा करते हैं।

25) आप लोगों की प्राण संगली उसी तरह चलनी चाहिए जैसे तेल की अटूट धारा । गुरुमंत्ररुपी छड़ी को हमेशा अपने साथ रखो ताकि जब भी जरुरत पड़े संसार के काम क्रोधादि कुत्तों को उससे मारकर भगा सको।

26) मानव आते हुए भी रोता है और जाते हुए भी रोता है । जो वक्त रोने का नहीं तब भी रोता है । केवल एक पूर्ण सद्गुरु में ही ऐसा सामर्थ्य है जो इस जन्म मरण के मूल कारण

अज्ञान को काटकर मनुष्य को रोने से बचा सकते हैं। केवल गुरु ही आवागमन के चक्कर से, काल की महान ठोकरों से बचाकर शिष्य को संसार के दुःखों से ऊपर उठा देते हैं। शिष्य के चिल्लाने पर भी वे ध्यान नहीं देते । गुरु के बराबर हितैषी संसार में कोई भी नहीं हो सकता।

27) त्रिशिखी ब्राह्मण के पूछने पर आदित्य ने कहा: "कुंभ के समान देह में भरे हुए वायु को रोकने से अर्थात् कुम्भक करने से सब नाड़ियाँ वायु से भर जाती हैं। ऐसा करने से देश वायु चलने लगते हैं। हृदयकमल का विकास होता है । वहाँ पापरहित वासुदेव परमात्मा को देखें। सुबह, दोपहर, शाम और आधी रात को चार बार अस्सी अस्सी कुम्भक करें तो अनुपम लाभ होता है। मात्र एक दिन करने से ही साधक सब पापों से छूट जाता है । इस प्रकार प्राणायामपरायण मनुष्य तीन साल में सिद्ध योगी बन जाता है । वायु को जीतनेवाला जितेन्द्रिय, थोड़ा भोजन करनेवाला, थोड़ा सोनेवाला, तेजस्वी और बलवान् हो जाता है तथा अकाल मृत्यु का उल्लंघन करके दीर्ध आयु को प्राप्त होता है ।

प्राणायाम तीन कोटि के होते हैं : उत्तम, मध्यम और अधम । पसीना उत्पन्न करनेवाला प्राणायाम अधम है। जिस प्राणायाम में शरीर काँपता है वह मध्यम है । जिसमें शरीर उठ जाता है वह प्राणायाम उत्तम कहा गया है।

अधम प्राणायाम में व्याधि और पापों का नाश होता है । मध्यम में पाप, रोग और महा व्याधि का नाश होता है। उत्तम में मल मूत्र अल्प हो जाते हैं, भोजन थोड़ा होता है, इन्द्रियाँ और बुद्धि तीव्र हो जाती हैं। वह योगी तीनों काल को जाननेवाला हो जाता है ।

रेचक और पूरक को छोड़कर जो कुम्भक ही करता है उसको तीनों कालों में कुछ भी दुर्लभ नहीं है।

प्राणायाम का अभ्यास करनेवाला योगी नाभिकंद में, नासिका के अग्र भाग में और पैर के अँगूठे में सदा अथवा संध्याकाल में प्राण को धारण करे तो वह योगी सब रोगों से मुक्त होकर अशांतिरहित जीवन जीता है ।

नाभिकंद में प्राण धारण करने से कुक्षि के रोग नष्ट होते हैं। नासा के अग्र भाग में प्राण धारण करने से दीर्धायु होता है और देह हल्का होता है । ब्रह्ममुहूर्त में वायु को जिहा से खींचकर तीन मास तक पिये तो महान् वाक्सिद्धि होती है । छः मास के अभ्यास से महा रोग का नाश होता है।

रोगादि से दूषित जिस जिस अंग में वायु धारण किया जाता है वह अंग रोग से मुक्त हो जाता

है।” (त्रिशिखि ब्राह्मण उपनिषद्)

28) प्राण सब प्रकार के सामर्थ्य का अधिष्ठान होने से प्राणायाम सिद्ध होने पर अनंतशक्ति भंडार के द्वार खुल जाते हैं। अगर कोई साधक प्राणतत्त्व का ज्ञान प्राप्त कर उस पर अपना अधिकार प्राप्त कर ले तो जगत में ऐसी कोई शक्ति नहीं है जिसे वह अपने अधिकार में न कर ले। वह अपनी इच्छानुसार सूर्य और चन्द्र को भी गेंद की तरह उनकी कक्षा में से विचलित कर सकता है। अणु से लेकर सूर्य तक जगत की तमाम चीजों को अपनी मर्जी अनुसार संचालित कर सकता है । योगाभ्यास पूर्ण होने पर योगी समस्त विश्व पर अपना प्रभुत्व स्थापित कर सकता है। उसके संकल्प बल से मृत प्राणी जिन्दे हो सकते हैं। जिन्दे उसकी आज्ञानुसार कार्य करने को बाध्य हो जाते हैं। देवता और पितृलोकवासी जीवात्मा उसके हुक्म को पाते ही हाथ जोड़कर उसके आगे खड़े हो जाते हैं। तमाम रिद्धि सिद्धियाँ उसकी दासी बन जाती हैं। प्रकृति की समग्र शक्तियों का वह स्वामी बन जाता है क्योंकि उस योगी ने प्राणायाम सिद्ध करके समष्टि प्राण को अपने काबू में किया है ।

जो प्रतिभावान युगप्रवर्तक अद्भुत शक्ति का संचार कर मानव समाज को ऊँची स्थिति पर ले जाते हैं, वे अपने प्राण में ऐसे उच्च और सूक्ष्म आन्दोलन उत्पन्न कर सकते हैं कि अन्य के मन पर उनका प्रगाढ़ प्रभाव होता है । हजारों मनुष्यों का दिल उनकी और आकर्षित होता है । लाखों करोड़ों लोग उनके उपदेश ग्रहण कर लेते हैं। विश्व में जो भी महापुरुष हो गये हैं उन्होंने किसी भी रीति से प्राणशक्ति को नियंत्रित करके अलौकिक शक्ति प्राप्त की होती है। किसी भी क्षेत्र में समर्थ व्यक्ति का प्रभाव प्राण के संयम से ही उत्पन्न हुआ है ।

29) यदि पर्वत के समान अनेक योजन विस्तारवाले पाप हों तो भी ध्यानयोग से छेदन हो जाते हैं। इसके सिवाय दूसरे किसी भी उपाय से कभी भी उनका छेदन नहीं होता ।

(ध्यान बिन्दु उपनिषद्)

ज्ञानगोष्ठी

प्र० : त्याग, वैराग्य और उपरति में क्या भेद है?

उ० : विषय को सामने न आने देना त्याग है । विषय सामने रहते हुए उसमें प्रेम न होना वैराग्य है। वस्तु सामने रहते हुए भी उसमें न तो भोगबुद्धि हो और न द्वेष हो यह उपरति है ।

प्र० : वैराग्य कितने प्रकार का होता है ?

उ० : सामान्यतया गुण- भेद से वैराग्य तीन प्रकार के हैं ।

1) जो वैराग्य संसार से ग्लानि और भगवान से प्रेम होने पर होता है, वह सात्त्विक है ।

2) जो प्रसिद्धि या प्रतिष्ठा की दृष्टि से विरक्त होता है, वह राजस है ।

3) जो सबको नीची दृष्टि से देखता है तथा अपनेको बड़ा समझता है वह तामस वैराग्य है ।

योगदर्शन में पर और अपर भेद से दो प्रकार के वैराग्य बतलाये गये हैं । इनमें अपर वैराग्य चार प्रकार के हैं:

1) यतमान : जिसमें विषयों को छोड़ने का प्रयत्न तो रहता है, किन्तु छोड़ नहीं पाता यह यतमान वैराग्य है ।

2) व्यतिरेकी : शब्दादि विषयों में से कुछ का राग तो हट जाये किन्तु कुछ का न हटे तब व्यतिरेकी वैराग्य समझना चाहिए ।

3) एकेन्द्रिय : मन भी एक इन्द्रिय है । जब इन्द्रियों के विषयों का आकर्षण तो न रहे, किन्तु मन में उनका चिन्तन हो तब एकेन्द्रिय वैराग्य होता है । इस अवस्था में प्रतिज्ञा के बल से ही मन और इन्द्रियों का निग्रह होता है ।

4) वशीकार : वशीकार वैराग्य होने पर मन और इन्द्रियाँ अपने अधीन हो जाती हैं तथा अनेक प्रकार के चमत्कार भी होने लगते हैं। यहाँ तक तो 'अपर वैराग्य' हुआ ।

जब गुणों का कोई आकर्षण नहीं रहता, सर्वज्ञता और चमत्कारों से भी वैराग्य होकर स्वरुप में स्थिति रहती है तब 'पर वैराग्य' होता है अथवा एकाग्रता से जो सुख होता है उसको भी त्याग देना, गुणातीत हो जाना ही 'पर वैराग्य' है।

वैराग्य के दो भेद हैं : देह से वैराग्य और गेह से वैराग्य ।

शरीर से वैराग्य होना प्रथम कोटि का वैराग्य है तथा अहंता ममता से ऊपर उठ जाना दूसरे प्रकार का वैराग्य है ।

लोगों को घर से तो वैराग्य हो जाता है, परंतु शरीर से वैराग्य होना कठिन है। इससे भी कठिन है शरीर का अत्यन्त अभाव अनुभव करना। यह तो सद्गुरु की विशेष कृपा से किसी किसीको ही होता है

बालक जन्मे तो वह पढ़ेगा या नहीं, विवाह करेगा या नहीं, नौकरी धंधा करेगा या नहीं इसमें शंका है परंतु वह मरेगा या नहीं इसमें कोई शंका है? हम भी इन्हीं बालकों में हैं ।

हम धनवान् होंगे या नहीं होंगे, यशस्वी होंगे या नहीं, चुनाव जीतेंगे या नहीं इसमें शंका हो सकती है परंतु भैया ! हम मरेंगे या नहीं, इसमें कोई शंका है?

विमान उड़ने का समय निश्चित होता है, बस चलने का समय निश्चित होता है, गाड़ी छूटने का समय निश्चित होता है परन्तु इस जीवन की गाड़ी के छूटने का कोई निश्चित समय है?

हम कहाँ रहते हैं? मृत्युलोक में। यहाँ जो भी आता है वह मरनेवाला आता है । मरनेवालों के साथ का सम्बन्ध कब तक ...?

मृत्यु अनिवार्य है, बिल्कुल निश्चित है । इसके लिए आप कुछ तैयारी करते हैं या नहीं ? करते हैं तो दृढ़तापूर्वक करें और नहीं करते हैं तो आज से ही शुरु कर दें ।

आत्म साक्षात्कार में, ईश्वर साक्षात्कार में तीन इच्छाएँ हमें ईश्वर से अलग रखती हैं । हम यदि

ये तीन इच्छाएँ न करें तो तुरंत अलौकिक साम्राज्य का स्वर हमें सुनाई पड़ेगा । वे तीन इच्छाएँ हैं : 1) जीने की इच्छा 2) करने की इच्छा 3) जानने की इच्छा ।

जीने की इच्छा न करें तो भी यह देह तो जियेगी ही । कुछ करने की इच्छा न करें तो भी सहज, प्रारब्धवेग से कर्म हो ही जायेगा । जानने की इच्छा न करें तो जिससे सब जाना जाता है ऐसा अपना स्वभाव प्रगट होने लगेगा ।

ये तीन इच्छाएँ ईश्वर साक्षात्कार में बाधक बनती हैं। भैया ! साहस करो । जिन्होंने इच्छा छोड़ी है वे धन्य हो गये हैं। अपने को दुर्बल मानना छोड़ दो । आपमें ईश्वरीय स्वर, ईश्वरीय आनंद भरपूर है । भैया ! आप स्वयं ही वह हैं, केवल इन तीन बातों से सावधान रहो ।

ईश्वर के मार्ग पर चलनेवाले सौभाग्यशाली भक्तों को ये छः बातें जीवन में अपना लेनी चाहिए:

1) ईश्वर को अपना मानो । 'ईश्वर मेरा है । मैं ईश्वर का हूँ।'

2) जप, ध्यान, पूजा, सेवा खूब प्रेम से करो।

3) जप, ध्यान, भजन, साधना को जितना हो सके उतना गुप्त रखो।

4) जीवन को ऐसा बनाओ कि लोगों में आपकी माँग हुआ करे। उन्हें आपकी अनुपस्थिति चुभे। कार्य में कुशलता और चतुराई बढ़ाये । प्रत्येक क्रिया कलाप, बोल चाल सुचारु रुप से करें। कम समय में, कम खर्च में सुन्दर कार्य करें। अपनी आजीविका के लिए, जीवननिर्वाह के लिए जो कार्य करें उसे कुशलतापूर्वक करें, रसपूर्वक करें। इससे शक्तियों का विकास होगा । फिर वह कार्य भले ही नौकरी हो। कुशलतापूर्वक करने से कोई विशेष बाह्म लाभ न होता हो फिर भी इससे आपकी योग्यता बढ़ेगी, यही आपकी पूँजी बन जाएगी । नौकरी चली जाए तो भी यह पूँजी आपसे कोई छीन नहीं सकता । नौकरी भी इस प्रकार करो कि स्वामी प्रसन्न हो जाये । यह सब रुपयों पैसों के लिए, मान बड़ाई के लिए, वाहवाही के लिए नहीं परंतु अपने अंत : करण को निर्मल करने के लिए करें जिससे परमात्मा के लिए आपका प्रेम बढ़े । ईश्वरानुराग बढ़ाने के

लिए ही प्रेम से सेवा करें, उत्साह से काम धंधा करें।

5) व्यक्तिगत खर्च कम करें। जीवन में संतोष लाएँ।

6) सदैव श्रेष्ठ कार्य में लगे रहें। समय बहुत ही मूल्यवान् है। समय के बराबर मूल्यवान् अन्य कोई वस्तु नहीं है। समय देने से सब मिलता है

परंतु सब कुछ देने से भी समय नहीं मिलता । धन तिजोरी में संग्रहीत कर सकते हैं परंतु समय तिजोरी में नहीं संजोया जा सकता । ऐसे अमुल्य समय को श्रेष्ठ कार्यों में लगाकर सार्थक करें। सबसे श्रेष्ठ कार्य है सत्पुरुषों का संग, सत्संग ।

भागवत में आता है:

"भगवान के प्रेमी पुरुष का निमेषमात्र का संग उत्तम है। इसके साथ स्वर्ग की या मुक्ति की समानता नहीं की जा सकती।" (1.18.13)

तुलसीदासजी कहते हैं:

तात स्वर्ग अपवर्ग सुख धरिए तुला एक अंग ।

तूल न ताहि सकल मिलि जो सुख लव सत्संग ॥

समय को उत्तम कार्य में लगाएँ । निरन्तर सावधान रहने से ही समय सार्थक होगा, नहीं तो यह निरर्थक बीत जायेगा । जिन्होंने समय का आदर किया है वे श्रेष्ठ पुरुष बने हैं, अच्छे महात्मा बने हैं। संसार के भोगों से विमुख होकर, भगवच्चरणों में, परमात्म तत्त्व जानने में उन्होंने समय लगाया है ।

दत्त और सिद्ध का संवाद

[अनुभवप्रकाश]

एक राजा कपिल मुनि का दर्शन, सत्संग किया करता था । एक बार कपिल के आश्रम पर राजा के पहुँचने के उपरान्त विचरते हुए दत्त, स्कन्द, लोमश तथा कुछ सिद्ध भी पहुँचे । वहाँ इन संतजनों के बीच ज्ञानगोष्ठी होने लगी । एक कुमार सिद्ध बोला: "जब मैं योग करता हूँ तब अपने स्वरुप को देखता हूँ।"

दत्त: "जब तू स्वरुप का देखनेवाला हुआ तब स्वरुप तुझसे भिन्न हुआ । योग में तू जो कुछ देखता है सो दृश्य को ही देखता है। इससे तेरा योग दृश्य और तू दृष्टा है। अध्यात्म में तू अभी बालक है। सत्संग कर जिससे तेरी बुद्धि निर्मल होवे।"

कुमार: "ठीक कहा आपने । मैं बालक हूँ क्योंकि मन, वाणी, शरीर में सर्व लीला करता हुआ भी मैं असंग चैतन्य, हर्ष शोक को नहीं प्राप्त होता इसलिए बालक हूँ। परंतु योग के बल से यदि मैं चाहूँ तो इस शरीर को त्याग कर अन्य शरीर में प्रवेश कर लूँ । किसीको शाप या वरदान दे सकता हूँ। आयु को न्यून अधिक कर सकता हूँ। इस प्रकार योग में सब सामर्थ्य आता है । ज्ञान से क्या प्राप्ति होती है ?"

दत्त: "अरे नादान ! सभा में यह बात कहते हुए तुझको संकोच नहीं होता ? योगी एक शरीर को त्यागकर अन्य शरीर को ग्रहण करता है और अनेक प्रकार के कष्ट पाता है । ज्ञानी इसी शरीर में स्थित हुआ सुखपूर्वक ब्रह्मा से लेकर चींटी पर्यंत को अपना आपा जानकर पूर्णता में प्रतिष्ठित होता है । वह एक काल में ही सर्व का भोक्ता होता है, सर्व जगत पर आज्ञा चलानेवाला चैतन्यस्वरुप होता है । सर्वरुप भी आप होता है और सर्व से अतीत भी आप होता है । वह सर्वशक्तिमान होता है और सर्व अशक्तिरुप भी आप होता है । सर्व व्यवहार करता हुआ भी स्वयं को अकर्त्ता जानता है।

सम्यक् अपरोक्ष आत्मबोध प्राप्त ज्ञानी जिस अवस्था को पाता है उस अवस्था को वरदान, शाप आदि सामर्थ्य से संपन्न योगी स्वप्न में भी नहीं जानता ।"

कुमार: "योग के बल से चाहूँ तो आकाश में उड़ सकता हूँ।"

दत्त: "पक्षी आकाश में उड़ते फिरते हैं, इससे तुम्हारी क्या सिद्धि है?"

कुमार: "योगी एक एक श्वास में अमृतपान करता है, 'सोऽहं' जाप करता है, सुख पाता है।"

दत्त: "हे बालक ! अपने सुखस्वरुप आत्मा से भिन्न योग आदि से सुख चाहता है? गुड़ को भ्रांति होवे तो अपने से पृथ्क् चणकादिकों से मधुरता लेने जाय । चित्त की एकाग्रतारुपी योग से तू स्वयं को सुखी मानता है और योग के बिना दु:खी मानता है? ज्ञानी योग अयोग दोनों को अपने दृश्य मानता है। योग अयोग सब मन के ख्याल हैं। योगरुप मन के ख्याल से मैं चैतन्य पहले से ही सुखरुप सिद्ध हूँ। जैसे, अपने शरीर की प्राप्ति के लिए कोई योग नहीं करता क्योंकि योग करने से पहले ही शरीर है, उसी प्रकार सुख के लिए मुझे योग क्यों करना पड़े ? मैं स्वयं सुखस्वरुप हूँ।"

कुमार: "योग का अर्थ है जुड़ना । यह जो सनकादिक ब्रह्मादिक स्वरुप में लीन होते हैं सो योग से स्वरुप को प्राप्त होते हैं।"

दत्त: "जिस स्वरुप में ब्रह्मादिक लीन होते हैं उस स्वरुप को ज्ञानी अपना आत्मा जानता है । हे सिद्ध ! मिथ्या मत कहो । ज्ञान और योग का क्या संयोग है ? योग साधनारुप है और ज्ञान उसका फलरुप है । ज्ञान में मिलना बिछुड़ना दोनों नहीं । योग कर्त्ता के अधीन है और क्रियारुप है।"

कपिल: "आत्मा के सम्यक् अपरोक्ष ज्ञानरुपी योग सर्व पदार्थों का जानना रुप योग हो जाता है।

केवल क्रियारुप योग से सर्व पदार्थों का जानना नहीं होता, क्योंकि अधिष्ठान के ज्ञान से ही सर्व कल्पित पदार्थों का ज्ञान होता है ।

आत्म अधिष्ठान में योग खुद कल्पित है । कल्पित के ज्ञान में अन्य कल्पित का ज्ञान होता है । स्वप्नपदार्थ के ज्ञान से अन्य स्वप्नपदार्थों का ज्ञान नहीं परंतु स्वप्नदृष्टा के ज्ञान से ही सर्व स्वप्नपदार्थों का ज्ञान होता है ।

अत: अपनेको इस संसाररुपी स्वप्न के अधिष्ठानरुप स्वप्नदृष्टा जानो।"

सिद्धों ने कहा : "तुम कौन हो?"

दत्त: "तुम्हारे ध्यान अध्यान का, तुम्हारी सिद्धि असिद्धि का मैं दृष्टा हूँ।"

राजा: "हे दत्त ! ऐसे अपने स्वरुप को पाना चाहें तो कैसे पावें?"

दत्त: "प्रथम निष्काम कर्म से अंत: करण की शुद्धि करो। फिर सगुण या निर्गुण उपासनादि करके अंत: करण की चंचलता दूर करो । वैराग्य आदि साधनों से संपन्न होकर शास्त्रोक्त रीति से सद्गुरु के शरण जाओ । उनके उपदेशामृत से अपने आत्मा को ब्रह्मरुप और ब्रह्म को अपना आत्मारुप जानो । सम्यक् अपरोक्ष आत्मज्ञान को प्राप्त करो ।

हे राजन् ! अपने स्वरुप को पाने में देहाभिमान ही आवरण है। जैसे सूर्य के दर्शन में बादल ही आवरण है। जाग्रत स्वप्न सुषुप्ति में, भुत भविष्य वर्तमान काल में, मन वाणीसहित जितना प्रपंच है वह तुझ चैतन्य का दृश्य है । तुम उसके दृष्टा हो । उस प्रपंच के प्रकाशक चिद्घन देव हो ।"

अपने देवत्व में जागो । कब तक शरीर, मन और अंत : करण से सम्बन्ध जोड़े रखोगे ? एक ही मन, शरीर, अंत : करण को अपना कब तक माने रहोअगे? अनंत अनंत अंत : करण, अनंत अनंत शरीर जिस चिदानन्द में प्रतिबिम्बित हो रहे हैं वह शिवस्वरुप तुम हो । फूलों में सुगन्ध तुम्हीं हो । वृक्षों में रस तुम्हीं हो । पक्षियों में गीत तुम्हीं हो । सूर्य और चाँद में चमक तुम्हारी है । अपने "सर्वाSहम्" स्वरुप को पहचानकर खुली आँख समाधिस्थ हो जाओ । देर न करो । काल कराल सिर पर है ।

ऐ इन्सान ! अभी तुम चाहो तो सूर्य ढलने से पहले अपने जीवनतत्त्व को जान सकते हो । हिम्मत करो ... हिम्मत करो ...।

ॐ ॐ ॐ

बार बार इस पुस्तक को पढ़कर ज्ञान वैराग्य बढ़ाते रहना । जब तक आत्म साक्षात्कार न हो, तब तक आदरसहित इस पुस्तक को विचारते रहना |

चिन्तन कणिका

अशोभन स्त्री आदि में शोभनबुद्धि, असत्य प्रपंच में सत्य का अध्यास, सत्य आत्मा में असत्य का अध्यास इत्यादि विपरीत भावना से सृष्टि का यथार्थ ज्ञान प्रतिबद्ध हो जाता है ।

अग्नि में राग द्वेष नहीं है । उसके पास जो जाता है उसकी ठंड दूर होती है, अन्य की नहीं । इसी प्रकार जो ईश्वर के शरण जाता है उसका बन्धन कटता है, अन्य का नहीं। जिसके चित्त में राग द्वेष है, उसमें ईश्वर की विशेषता अभिव्यक्त नहीं होती ।

जिसको वैराग्य न हो, श्रद्धा न हो वह यदि कर्म का त्याग करे तो विक्षेपरहित नहीं हो सकता । जैसे प्रमादी, बहिर्मुख, पशु समान लोग लड़ाई झगड़े में राजी रहते हैं वैसे संन्यासी भी कर्मदोषवाले देखे जाते हैं। इसलिए बिना वैराग्य के संन्यास से निष्काम कर्म का आचरण श्रेष्ठ है । बिना श्रद्धा और परमात्मतत्त्व चिन्तन के लिया हुआ संन्यास ब्रह्मपद की प्राप्ति नहीं कराता।

मरुभूमि का जल धीरे धीरे नहीं सूखता है, उसी प्रकार माया भी धीरे धीरे नष्ट नहीं होती । मरुभूमि के जल को 'मरुभूमि का जल' जानने मात्र से उसका अभाव हो जाता है उसी प्रकार माया का स्वरुप जानने मात्र से माया का अभाव हो जाता है ।

संसार की सब चीजें बदल रहीं हैं, भूतकाल की ओर भाग रहीं है और आप उन्हें वर्त्तमान में टिकाये रखना चाहते हैं? यही जीवन के दु:खों की मूल ग्रंथि है । आप चेतन होने पर भी जड़ वस्तु को छोड़ने से इन्कार करते हैं? दृष्टा होने पर भी दृश्य में उलझे हुए हैं?

जब आप चाहते हैं कि 'हमें अमुक वस्तु अवश्य मिले अथवा हमारे पास जो है वह कभी बिगड़े नहीं, तभी हम सुखी होंगे' तो आप अपने स्वरुप चेतन को कहीं न कहीं बाँध रखना चाहते हैं।

साधना के मार्ग में, परम लक्ष्य की प्राप्ति में साधक के लिए देहात्मबुद्धि, देह में आसक्ति एक बड़ी ग्रंथि है । इस ग्रंथि को काटे बिना, मोहकलिल को पार किये बिना कोई साधक सिद्ध नहीं बन सकता । सदगुरु के बिना यह ग्रंथि काटने में साधक समर्थ नहीं हो सकता ।

वेदान्त शास्त्र यह नहीं कहता कि 'अपने आपको जानो ।' अपने आपको सभी जानते हैं । कोई अपने को निर्धन जानकर धनी होने का प्रयत्न करता है, कोई अपनेको रोगी जानकर निरोग होने को इच्छुक है । कोई अपनेको नाटा जानकर लम्बा होने के लिए कसरत करता है तो कोई अपनेको काला जानकर गोरा होने के लिए भिन्न भिन्न नुस्खे आजमाता है ।

नहीं, वेदान्त यह नहीं कहता । वह तो कहता है : 'अपने आपको ब्रह्म जानो ।' जीवन में अनर्थ का मूल सामान्य अज्ञान नहीं अपितु अपनी आत्मा के ब्रह्मत्व का अज्ञान है । देह और सांसारिक व्यवहार के ज्ञान अज्ञान से कोई खास लाभ हानि नहीं है परंतु अपने ब्रह्मत्व के अज्ञान से घोर हानि है और उसके ज्ञान से परम लाभ है ।

प्रार्थना

हे मेरे प्रभु ... !

तुम दया करना । मेरा मन ... मेरा चित्त तुममें ही लगा रहे ।

अब ... मैं कब तक संसारी बोझों को ढोता फिरुँगा ... ? मेरा मन अब तुम्हारी यात्रा के लिए ऊर्ध्वगामी हो जाये ... ऐसा सुअवसर प्राप्त करा दो मेरे स्वामी ... !

हे मेरे अंतर्यामी ! अब मेरी ओर जरा कृपादृष्टि करो ... । बरसती हुई आपकी अमृतवर्षा में मैं भी पूरा भीग जाऊँ ...। मेरा मन मयूर अब एक आत्मदेव के सिवाय किसीके प्रति टहुँकार न करे ।

हे प्रभु ! हमें विकारों से, मोह ममता से, साथियों से बचाओ ...अपने आपमें जगाओ ।

हे मेरे मालिक ! अब ... कब तक ... मैं भटकता रहूँगा ? मेरी सारी उमरिया बिती जा रही है ... कुछ तो रहमत करो कि अब ... आपके चरणों का अनुरागी होकर मैं आत्मानन्द के महासागर में गोता लगाऊँ ।

ॐ शांति ! ॐ आनंद !!

सोऽहम् सोऽहम् सोऽहम्

आखिर यह सब कब तक ... ? मेरा जीवन परमात्मा की प्राप्ति के लिए है, यह क्यों भूल जाता हूँ ?

मुझे ... अब ... आपके लिए ही प्यास रहे प्रभु ... !

अब प्रभु कृपा करौं एहि भाँति ।

सब तजि भजन करौं दिन राती ।।

श्रीगुरुगीता

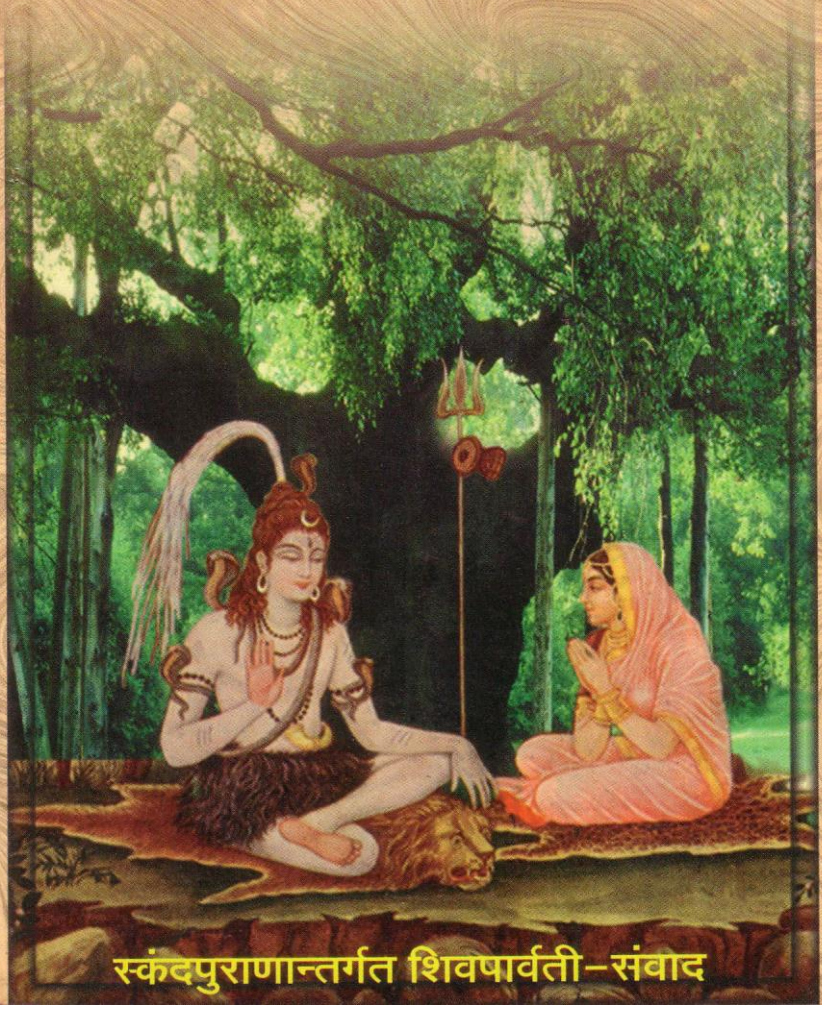

स्कंदपुराणान्तर्गत शिवपार्वती-संवाद

श्री गुरुगीता

अनुक्रम

प्रास्ताविक

विनियोग – न्यासादि

पहला अध्याय

दूसरा अध्याय

तीसरा अध्याय

प्रास्ताविक

भगवान शंकर और देवी पार्वती के संवाद में प्रकट हुई यह 'श्रीगुरुगीता' समग्र 'स्कन्दपुराण' का निष्कर्ष है। इसके हर एक श्लोक में सूत जी का सचोट अनुभव व्यक्त होता है जैसेः

मुखस्तम्भकरं चैव गुणानां च विवर्धनम्।

दुष्कर्मनाशनं चैव तथा सत्कर्मसिद्धिदम्।।

"इस श्री गुरुगीता का पाठ शत्रु का मुख बन्द करने वाला है, गुणों की वृद्धि करने वाला है, दुष्कृत्यों का नाश करने वाला और सत्कर्म में सिद्धि देने वाला है।"

गुरुगीताक्षरैकेकं मंत्रराजमिदं प्रिये।

अन्ये च विविधा मंत्राः कलां नार्हन्तिषोडशीम्।।

"हे प्रिये ! श्रीगुरुगीता का एक एक अक्षर मंत्रराज है। अन्य जो विविध मंत्र हैं वे इसका सोलहवाँ भाग भी नहीं।"

अकालमृत्युहंत्री च सर्व संकटनाशिनी।

यक्षराक्षसभूतादि चोरव्याघ्रविघातिनी।।

"श्रीगुरुगीता अकाल मृत्यु को रोकती है, सब संकटों का नाश करती है, यक्ष, राक्षस, भूत, चोर और शेर आदि का घात करती है।"

शुचिभूता ज्ञानवंतो गुरुगीतां जपन्ति ये।

तेषां दर्शनसंस्पर्शात् पुनर्जन्म न विद्यते।।

"जो पवित्र ज्ञानवान पुरुष इस श्रीगुरुगीता का जप-पाठ करते हैं उनके दर्शन और स्पर्श से पुनर्जन्म नहीं होता।"

इस श्रीगुरुगीता के श्लोक भवरोग-निवारण के लिए अमोघ औषधि हैं। साधकों के लिए परम अमृत है। स्वर्ग का अमृत पीने से पुण्य क्षीण होते हैं जबकि इस गीता का अमृत पीने से पाप नष्ट होकर परम शांति मिलती है, स्वस्वरूप का भान होता है।

तुलसीदास जी ने ठीक ही कहा हैः

गुरु बिन भवनिधि तरहिं न कोई।

जो बिरंचि संकर सम होई।।

आत्मदेव को जानने के लिए यह श्रीगुरुगीता आपके करकमलों में रखते हुए.....

ॐ....ॐ.....ॐ.....

परम शांति !!!

विनियोग – न्यासादि

ॐ अस्य श्रीगुरुगीतास्तोत्रमालामंत्रस्य भगवान सदाशिवः ऋषि। विराट् छन्दः। श्री गुरुपरमात्मा देवता। हं बीजम्। सः शक्तिः। सोऽहम् कीलकम्। श्रीगुरुकृपाप्रसादसिद्ध्यर्थे जपे विनियोगः।।

।। अथ करन्यासः।।

ॐ हं सां सूर्यात्मने अंगुष्ठाभ्यां नमः।

ॐ हं सीं सोमात्मने तर्जनीभ्यां नमः।

ॐ हं सूं निरंजनात्मने मध्यमाभ्यां नमः।

ॐ हं सैं निराभासात्मने अनामिकाभ्यां नमः।

ॐ हं सौं अतनुसूक्ष्मात्मने कनिष्ठिकाभ्यां नमः।

ॐ हं सः अव्यक्तात्मने करतलकरपृष्ठाभ्यां नमः।

।। इति करन्यासः।।

।। अथ हृदयादिन्यासः।।

ॐ हं सां सूर्यात्मने हृदयाय नमः।

ॐ हं सीं सोमात्मने शिरसे स्वाहा।

ॐ हं सूं निरंजनात्मने शिखायै वषट्।

ॐ हं सैं निराभासात्मने कवचाय हुम्।

ॐ हं सौं अतनुसक्षमात्मने नेत्रत्रयाय वौषट्।

ॐ हं सः अव्यक्तात्मने अस्त्राय फट्।

।। इति हृदयादिन्यासः।।

।। अथ ध्यानम्।।

नमामि सदगुरुं शान्तं प्रत्यक्षं शिवरूपिणम्।

शिरसा योगपीठस्थं मुक्तिकामर्थासिद्धिदम्।। 1 ।।

प्रातः शिरसि शुक्लाब्जो द्विनेत्रं द्विभुजं गुरुम्।

वराभयकरं शान्तं स्मरेत्तन्नामपूर्वकम्।। 2 ।।

प्रसन्नवदनाक्षं च सर्वदेवस्वरूपिणम्।

तत्पादोदकजा धारा निपतन्ति स्वमूर्धनि।। 3 ।।

तया संक्षालयेद् देहे ह्यान्तर्बाह्यगतं मलम्।

तत्क्षणाद्विरजो भूत्वा जायते स्फटिकोपमः।। 4 ।।

तीर्थानि दक्षिणे पादे वेदास्तन्मुखरक्षिताः।

पूजयेदर्चितं तं तु तदमिध्यानपूर्वकम्।। 5 ।।

।। इति ध्यानम् ।।

।। मानसोपचारैः श्रीगुरुं पूजयित्वा ।।

लं पृथिव्यात्मने गंधतन्मात्रा प्रकृत्यानन्दात्मने श्रीगुरुदेवाय नमः पृथिव्यापकं गंधं समर्पयामि।। हं आकाशात्मने शब्दतन्मात्राप्रकृत्यानन्दात्मने श्रीगुरुदेवाय नमः आकाशात्मकं पुष्पं समर्पयामि।। यं वाप्वात्मने स्पर्शतन्मात्राप्रकृत्यानन्दात्मने श्रीगुरुदेवाय नमः वाप्वात्मकं धूपं आघ्रापयामि।। रं तेजात्मने रूपतन्मात्राप्रकृत्यानन्दात्मने श्रीगुरुदेवाय नमः तेजात्मकं दीपं दर्शयामि।। वं अपात्मने रसतन्मात्राप्रकृत्यानन्दात्मने श्रीगुरुदेवाय नमः अपात्मकं नैवेद्यकं निवेदयामि।। सं सर्वात्मने सर्वतन्मात्राप्रकृत्यानन्दात्मने श्रीगुरुदेवाय नमः सर्वात्मकान् सर्वोपचारान् समर्पयामि।।

।। इति मानसपूजा ।।

ॐॐॐॐॐॐॐॐॐॐॐॐॐॐ

|| अथ प्रथमोऽध्यायः||

अचिन्त्याव्यक्तरूपाय निर्गुणाय गुणात्मने |

समस्त जगदाधारमूर्तये ब्रह्मणे नमः ||

पहला अध्याय

जो ब्रह्म अचिन्त्य, अव्यक्त, तीनों गुणों से रहित (फिर भी देखनेवालों के अज्ञान की उपाधि से) त्रिगुणात्मक और समस्त जगत का अधिष्ठान रूप है ऐसे ब्रह्म को नमस्कार हो | (1)

ऋषयः ऊचुः

सूत सूत महाप्राज्ञ निगमागमपारग |

गुरुस्वरूपमस्माकं ब्रूहि सर्वमलापहम् ||

ऋषियों ने कहा : हे महाज्ञानी, हे वेद-वेदांगों के निष्णात ! प्यारे सूत जी ! सर्व पापों का नाश करनेवाले गुरु का स्वरूप हमें सुनाओ | (2)

यस्य श्रवणमात्रेण देही दुःखाद्विमुच्यते |

येन मार्गेण मुनयः सर्वज्ञत्वं प्रपेदिरे ||

यत्प्राप्य न पुनर्याति नरः संसारबन्धनम् |

तथाविधं परं तत्वं वक्तव्यमधुना त्वया ||

जिसको सुनने मात्र से मनुष्य दुःख से विमुक्त हो जाता है | जिस उपाय से मुनियों ने सर्वज्ञता प्राप्त की है, जिसको प्राप्त करके मनुष्य फ़िर से संसार बन्धन में बँधता नहीं है ऐसे परम तत्व का कथन आप करें | (3, 4)

गुह्यादगुह्यतमं सारं गुरुगीता विशेषतः |

त्वत्प्रसादाच्च श्रोतव्या तत्सर्वं ब्रूहि सूत नः ||

जो तत्व परम रहस्यमय एवं श्रेष्ठ सारभूत है और विशेष कर जो गुरुगीता है वह आपकी कृपा से हम सुनना चाहते हैं | प्यारे सूतजी ! वे सब हमें सुनाइये | (5)

इति संप्राथितः सूतो मुनिसंघैर्मुहुर्मुहुः |

कुतूहलेन महता प्रोवाच मधुरं वचः ||

इस प्रकार बार-बार प्रर्थना किये जाने पर सूतजी बहुत प्रसन्न होकर मुनियों के समूह से मधुर वचन बोले | (6)

सूत उवाच

श्रृणुध्वं मुनयः सर्वे श्रद्धया परया मुदा |

वदामि भवरोगघ्नीं गीता मातृस्वरूपिणीम् ||

सूतजी ने कहा : हे सर्व मुनियों ! संसाररूपी रोग का नाश करनेवाली, मातृस्वरूपिणी (माता के समान ध्यान रखने वाली) गुरुगीता कहता हूँ | उसको आप अत्यंत श्रद्धा और प्रसन्नता से सुनिये | (7)

पुरा कैलासशिखरे सिद्धगन्धर्वसेविते|

तत्र कल्पलतापुष्पमन्दिरेऽत्यन्तसुन्दरे ||

व्याघ्राजिने समासिनं शुकादिमुनिवन्दितम् |

बोधयन्तं परं तत्वं मध्येमुनिगणंक्वचित् ||

प्रणम्रवदना शश्वन्नमस्कुर्वन्तमादरात् |

दृष्ट्वा विस्मयमापन्ना पार्वती परिपृच्छति ||

प्राचीन काल में सिद्धों और गन्धर्वों के आवास रूप कैलास पर्वत के शिखर पर कल्पवृक्ष के फूलों से बने हुए अत्यंत सुन्दर मंदिर में, मुनियों के बीच व्याघ्रचर्म पर बैठे हुए, शुक आदि मुनियों द्वारा वन्दन किये जानेवाले और परम तत्व का बोध देते हुए भगवान शंकर को बार-बार नमस्कार करते देखकर, अतिशय नम्र मुखवाली पार्वति ने आश्चर्यचकित होकर पूछा |

पार्वत्युवाच

ॐ नमो देव देवेश परात्पर जगदगुरो |

त्वां नमस्कुर्वते भक्त्या सुरासुरनराः सदा ||

पार्वती ने कहा: हे ॐकार के अर्थस्वरूप, देवों के देव, श्रेष्ठों के श्रेष्ठ, हे जगदगुरो! आपको प्रणाम हो | देव दानव और मानव सब आपको सदा भक्तिपूर्वक प्रणाम करते हैं | (11)

विधिविष्णुमहेन्द्राद्यैर्वन्द्यः खलु सदा भवान् ।

नमस्करोषि कस्मै त्वं नमस्काराश्रयः किलः ।।

आप ब्रह्मा, विष्णु, इन्द्र आदि के नमस्कार के योग्य हैं | ऐसे नमस्कार के आश्रयरूप होने पर भी आप किसको नमस्कार करते हैं | (12)

भगवन् सर्वधर्मज्ञ व्रतानां व्रतनायकम् ।

ब्रूहि मे कृपया शम्भो गुरुमाहात्म्यमुत्तमम् ।।

हे भगवान् ! हे सर्व धर्मों के ज्ञाता ! हे शम्भो ! जो व्रत सब व्रतों में श्रेष्ठ है ऐसा उत्तम गुरु-माहात्म्य कृपा करके मुझे कहें | (13)

इति संप्रार्थितः शश्वन्महादेवो महेश्वरः ।

आनंदभरितः स्वान्ते पार्वतीमिदमब्रवीत् ।।

इस प्रकार (पार्वती देवी द्वारा) बार-बार प्रार्थना किये जाने पर महादेव ने अंतर से खूब प्रसन्न होते हुए पार्वती से इस प्रकार कहा | (14)

महादेव उवाच

न वक्तव्यमिदं देवि रहस्यातिरहस्यकम् ।

न कस्यापि पुरा प्रोक्तं त्वद्भक्त्यर्थं वदामि तत् ।।

श्री महादेव जी ने कहा: हे देवी ! यह तत्व रहस्यों का भी रहस्य है इसलिए कहना उचित नहीं | पहले किसी से भी नहीं कहा | फिर भी तुम्हारी भक्ति देखकर वह रहस्य कहता हूँ |

मम् रूपासि देवि त्वमतस्तत्कथयामि ते |

लोकोपकारकः प्रश्नो न केनापि कृतः पुरा ||

हे देवी ! तुम मेरा ही स्वरूप हो इसलिए (यह रहस्य) तुमको कहता हूँ | तुम्हारा यह प्रश्न लोक का कल्याणकारक है | ऐसा प्रश्न पहले कभी किसीने नहीं किया |

यस्य देवे परा भक्ति, यथा देवे तथा गुरौ |

त्स्यैते कथिता ह्यर्थाः प्रकाशन्ते महात्मनः ||

जिसको ईश्वर में उत्तम भक्ति होती है, जैसी ईश्वर में वैसी ही भक्ति जिसको गुरु में होती है ऐसे महात्माओं को ही यहाँ कही हुई बात समझ में आयेगी |

यो गुरु स शिवः प्रोक्तो, यः शिवः स गुरुस्मृतः |

विकल्पं यस्तु कुर्वीत स नरो गुरुतल्पगः ||

जो गुरु हैं वे ही शिव हैं, जो शिव हैं वे ही गुरु हैं | दोनों में जो अन्तर मानता है वह गुरुपत्नीगमन करनेवाले के समान पापी है |

वेद्शास्त्रपुराणानि चेतिहासादिकानि च |

मंत्रयंत्रविद्यादिनिमोहनोच्चाटनादिकम् ||

शैवशाक्तागमादिनि ह्यन्ये च बहवो मताः |

अपभ्रंशाः समस्तानां जीवानां भ्रांतचेतसाम् ||

जपस्तपोव्रतं तीर्थं यज्ञो दानं तथैव च |

गुरु तत्वं अविज्ञाय सर्वं व्यर्थं भवेत् प्रिये ||

हे प्रिये ! वेद, शास्त्र, पुराण, इतिहास आदि मंत्र, यंत्र, मोहन, उच्चाट्न आदि विद्या शैव, शाक्त आगम और अन्य सर्व मत मतान्तर, ये सब बातें गुरुतत्व को जाने बिना भ्रान्त चित्तवाले जीवों को पथभ्रष्ट करनेवाली हैं और जप, तप व्रत तीर्थ, यज्ञ, दान, ये सब व्यर्थ हो जाते हैं | (19, 20, 21)

गुरुबुध्यात्मनो नान्यत् सत्यं सत्यं वरानने |

तल्लभार्थं प्रयत्नस्तु कर्त्तवयशच मनीषिभिः ||

हे सुमुखी ! आत्मा में गुरु बुद्धि के सिवा अन्य कुछ भी सत्य नहीं है सत्य नहीं है | इसलिये इस आत्मज्ञान को प्राप्त करने के लिये बुद्धिमानों को प्रयत्न करना चाहिये | (22)

गूढाविद्या जगन्माया देहशचाज्ञानसम्भवः |

विज्ञानं यत्प्रसादेन गुरुशब्देन कथयते ||

जगत गूढ़ अविद्यात्मक मायारूप है और शरीर अज्ञान से उत्पन्न हुआ है | इनका विश्लेषणात्मक ज्ञान जिनकी कृपा से होता है उस ज्ञान को गुरु कहते हैं |

देही ब्रह्म भवेद्यस्मात् त्वत्कृपार्थंवदामि तत् |

सर्वपापविशुद्धात्मा श्रीगुरोः पादसेवनात् ||

जिस गुरुदेव के पादसेवन से मनुष्य सर्व पापों से विशुद्धात्मा होकर ब्रह्मरूप हो जाता है वह तुम पर कृपा करने के लिये कहता हूँ | (24)

शोषणं पापपंकस्य दीपनं ज्ञानतेजसः |

गुरोः पादोदकं सम्यक् संसारार्णवतारकम् ||

श्री गुरुदेव का चरणामृत पापरूपी कीचड़ का सम्यक् शोषक है, ज्ञानतेज का सम्यक् उद्दीपक है और संसारसागर का सम्यक तारक है | (25)

अज्ञानमूलहरणं जन्मकर्मनिवारकम् |

ज्ञानवैराग्यसिद्ध्यर्थं गुरुपादोदकं पिबेत् ||

अज्ञान की जड़ को उखाड़नेवाले, अनेक जन्मों के कर्मों को निवारनेवाले, ज्ञान और वैराग्य को सिद्ध करनेवाले श्रीगुरुदेव के चरणामृत का पान करना चाहिये | (26)

स्वदेशिकस्यैव च नामकीर्तनम्

भवेदनन्तस्यशिवस्य कीर्तनम् |

स्वदेशिकस्यैव च नामचिन्तनम्

भवेदनन्तस्यशिवस्य नामचिन्तनम् ||

अपने गुरुदेव के नाम का कीर्तन अनंत स्वरूप भगवान शिव का ही कीर्तन है | अपने गुरुदेव के नाम का चिंतन अनंत स्वरूप भगवान शिव का ही चिंतन है | (27)

काशीक्षेत्रं निवासश्च जाह्नवी चरणोदकम् ।

गुरुर्विश्वेश्वरः साक्षात् तारकं ब्रह्मनिश्चयः ।।

गुरुदेव का निवासस्थान काशी क्षेत्र है | श्री गुरुदेव का पादोदक गंगाजी है | गुरुदेव भगवान विश्वनाथ और निश्चय ही साक्षात् तारक ब्रह्म हैं | (28)

गुरुसेवा गया प्रोक्ता देहः स्यादक्षयो वटः ।

तत्पादं विष्णुपादं स्यात् तत्रदत्तमनस्ततम् ।।

गुरुदेव की सेवा ही तीर्थराज गया है | गुरुदेव का शरीर अक्षय वटवृक्ष है | गुरुदेव के श्रीचरण भगवान विष्णु के श्रीचरण हैं | वहाँ लगाया हुआ मन तदाकार हो जाता है | (29)

गुरुवक्त्रे स्थितं ब्रह्म प्राप्यते तत्प्रसादतः ।

गुरोर्ध्यानं सदा कुर्यात् पुरूषं स्वैरिणी यथा ।।

ब्रह्म श्रीगुरुदेव के मुखारविन्द (वचनामृत) में स्थित है | वह ब्रह्म उनकी कृपा से प्राप्त हो जाता है | इसलिये जिस प्रकार स्वेच्छाचारी स्त्री अपने प्रेमी पुरुष का सदा चिंतन करती है उसी प्रकार सदा गुरुदेव का ध्यान करना चाहिये | (30)

स्वाश्रमं च स्वजातिं च स्वकीर्तिं पुष्टिवर्धनम् ।

एतत्सर्वं परित्यज्य गुरुमेव समाश्रयेत् ।।

अपने आश्रम (ब्रह्मचर्याश्रमादि) जाति, कीर्ति (पदप्रतिष्ठा), पालन-पोषण, ये सब छोड़ कर गुरुदेव का

ही सम्यक् आश्रय लेना चाहिये | (31)

गुरुवक्त्रे स्थिता विद्या गुरुभक्त्या च लभ्यते |

त्रैलोक्ये स्फुटवक्तारो देवर्षिपितृमानवाः ||

विद्या गुरुदेव के मुख में रहती है और वह गुरुदेव की भक्ति से ही प्राप्त होती है | यह बात तीनों लोकों में देव, ऋषि, पितृ और मानवों द्वारा स्पष्ट रूप से कही गई है | (32)

गुकारश्चान्धकारो हि रुकारस्तेज उच्यते ।

अज्ञानग्रासकं ब्रह्म गुरुरेव न संशयः ।।

'गु' शब्द का अर्थ है अंधकार (अज्ञान) और 'रु' शब्द का अर्थ है प्रकाश (ज्ञान) | अज्ञान को नष्ट करनेवाल जो ब्रह्मरूप प्रकाश है वह गुरु है | इसमें कोई संशय नहीं है | (33)

गुकारश्चान्धकारस्तु रुकारस्तन्निरोधकृत् ।

अन्धकारविनाशित्वात् गुरुरित्यभिधीयते ।।

'गु' कार अंधकार है और उसको दूर करनेवाल 'रु' कार है | अज्ञानरूपी अन्धकार को नष्ट करने के कारण ही गुरु कहलाते हैं | (34)

गुकारश्च गुणातीतो रूपातीतो रुकारकः ।

गुणरूपविहीनत्वात् गुरुरित्यभिधीयते ।।

'गु' कार से गुणातीत कहा जता है, 'रु' कार से रूपातीत कहा जता है | गुण और रूप से पर होने के कारण ही गुरु कहलाते हैं | (35)

गुकारः प्रथमो वर्णो मायादि गुणभासकः ।

रुकारोऽस्ति परं ब्रह्म मायाभ्रान्तिविमोचकम् ।।

गुरु शब्द का प्रथम अक्षर गु माया आदि गुणों का प्रकाशक है और दूसरा अक्षर रु कार माया की भ्रान्ति से मुक्ति देनेवाला परब्रह्म है | (36)

सर्वश्रुतिशिरोरत्नविराजितपदांबुजम् ।

वेदान्तार्थप्रवक्तारं तस्मात्संपूजयेद् गुरुम् ।।

गुरु सर्व श्रुतिरूप श्रेष्ठ रत्नों से सुशोभित चरणकमलवाले हैं और वेदान्त के अर्थ के प्रवक्ता हैं । इसलिये श्री गुरुदेव की पूजा करनी चाहिये । (37)

यस्यस्मरणमात्रेण ज्ञानमुत्पद्यते स्वयम् ।

सः एव सर्वसम्पत्तिः तस्मात्संपूजयेद् गुरुम् ।।

जिनके स्मरण मात्र से ज्ञान अपने आप प्रकट होने लगता है और वे ही सर्व (शमदमदि) सम्पदारूप हैं । अतः श्री गुरुदेव की पूजा करनी चाहिये । (38)

संसारवृक्षमारूढ़ाः पतन्ति नरकार्णवे ।

यस्तानुद्धरते सर्वान् तस्मै श्रीगुरवे नमः ।।

संसाररूपी वृक्ष पर चढ़े हुए लोग नरकरूपी सागर में गिरते हैं । उन सबका उद्धार करनेवाले श्री गुरुदेव को नमस्कार हो । (39)

एक एव परो बन्धुर्विषमे समुपस्थिते ।

गुरुः सकलधर्मात्मा तस्मै श्रीगुरवे नमः ।।

जब विकट परिस्थिति उपस्थित होती है तब वे ही एकमात्र परम बांधव हैं और सब धर्मों के आत्मस्वरूप हैं । ऐसे श्रीगुरुदेव को नमस्कार हो । (40)

भवारण्यप्रविष्टस्य दिङ्मोहभ्रान्तचेतसः ।

येन सन्दर्शितः पन्थाः तस्मै श्रीगुरवे नमः ।।

संसार रूपी अरण्य में प्रवेश करने के बाद दिग्मूढ़ की स्थिति में (जब कोई मार्ग नहीं दिखाई देता है), चित्त भ्रमित हो जाता है , उस समय जिसने मार्ग दिखाया उन श्री गुरुदेव को नमस्कार हो | (41)

तापत्रयाग्नितप्तानां अशान्तप्राणीनां भुवि ।

गुरुरेव परा गंगा तस्मै श्रीगुरुवे नमः ।।

इस पृथ्वी पर त्रिविध ताप (आधि-व्याधि-उपाधि) रूपी अग्नी से जलने के कारण अशांत हुए प्राणियों के लिए गुरुदेव ही एकमात्र उत्तम गंगाजी हैं | ऐसे श्री गुरुदेवजी को नमस्कार हो | (42)

सप्तसागरपर्यन्तं तीर्थस्नानफलं तु यत् ।

गुरुपादपयोबिन्दोः सहस्रांशेन तत्फलम् ।।

सात समुद्र पर्यन्त के सर्व तीर्थों में स्नान करने से जितना फल मिलता है वह फल श्रीगुरुदेव के चरणामृत के एक बिन्दु के फल का हजारवाँ हिस्सा है | (43)

शिवे रुष्टे गुरुस्त्राता गुरौ रुष्टे न कश्चन |

लब्ध्वा कुलगुरुं सम्यग्गुरुमेव समाश्रयेत् ||

यदि शिवजी नारज़ हो जायें तो गुरुदेव बचानेवाले हैं, किन्तु यदि गुरुदेव नाराज़ हो जायें तो बचानेवाला कोई नहीं | अतः गुरुदेव को संप्राप्त करके सदा उनकी शरण में रेहना चाहिए | (44)

गुकारं च गुणातीतं रुकारं रुपवर्जितम् |

गुणातीतमरूपं च यो दद्यात् स गुरुः स्मृतः ||

गुरु शब्द का गु अक्षर गुणातीत अर्थ का बोधक है और रु अक्षर रूपरहित स्थिति का बोधक है | ये दोनों (गुणातीत और रूपातीत) स्थितियाँ जो देते हैं उनको गुरु कहते हैं | (45)

अत्रिनेत्रः शिवः साक्षात् द्विबाहुश्च हरिः स्मृतः |

योऽचतुर्वदनो ब्रह्मा श्रीगुरुः कथितः प्रिये ||

हे प्रिये ! गुरु ही त्रिनेत्ररहित (दो नेत्र वाले) साक्षात् शिव हैं, दो हाथ वाले भगवान विष्णु हैं और एक मुखवाले ब्रह्माजी हैं | (46)

देवकिन्नरगन्धर्वाः पितृयक्षास्तु तुम्बुरुः |

मुनयोऽपि न जानन्ति गुरुशुश्रूषणे विधिम् ||

देव, किन्नर, गंधर्व, पितृ, यक्ष, तुम्बुरु (गंधर्व का एक प्रकार) और मुनि लोग भी गुरुसेवा की विधि नहीं जानते | (47)

तार्किकाश्छान्दसाश्चैव देवज्ञाः कर्मठः प्रिये ।

लौकिकास्ते न जानन्ति गुरुतत्वं निराकुलम् ।।

हे प्रिये ! तार्किक, वैदिक, ज्योतिषि, कर्मकांडी तथा लोकिकजन निर्मल गुरुतत्व को नहीं जानते । (48)

यज्ञिनोऽपि न मुक्ताः स्युः न मुक्ताः योगिनस्तथा ।

तापसा अपि नो मुक्त गुरुतत्वात्पराङ्मुखाः ।।

यदि गुरुतत्व से प्राङ्मुख हो जाये तो याज्ञिक मुक्ति नहीं पा सकते, योगी मुक्त नहीं हो सकते और तपस्वी भी मुक्त नहीं हो सकते । (49)

न मुक्तास्तु गन्धर्वः पितृयक्षास्तु चारणाः ।

ऋष्यः सिद्धदेवाद्याः गुरुसेवापराङ्मुखाः ।।

गुरुसेवा से विमुख गंधर्व, पितृ, यक्ष, चारण, ऋषि, सिद्ध और देवता आदि भी मुक्त नहीं होंगे ।

।। इति श्री स्कान्दोत्तरखण्डे उमामहेश्वरसंवादे श्री गुरुगीतायां प्रथमोऽध्यायः ।।

|| अथ द्वितीयोऽध्यायः ||

ब्रह्मानन्दं परमसुखदं केवलं ज्ञानमूर्तिं

द्वन्द्वातीतं गगनसदृशं तत्वमस्यादिलक्ष्यम् |

एकं नित्यं विमलमचलं सर्वधीसाक्षिभूतम्

भावतीतं त्रिगुणरहितं सदगुरुं तं नमामि ||

दूसरा अध्याय

जो ब्रह्मानंदस्वरूप हैं, परम सुख देनेवाले हैं जो केवल ज्ञानस्वरूप हैं, (सुख, दुःख, शीत-उष्ण आदि) द्वन्द्वों से रहित हैं, आकाश के समान सूक्ष्म और सर्वव्यापक हैं, तत्वमसि आदि महावाक्यों के लक्ष्यार्थ हैं, एक हैं, नित्य हैं, मलरहित हैं, अचल हैं, सर्व बुद्धियों के साक्षी हैं, भावना से परे हैं, सत्व, रज और तम तीनों गुणों से रहित हैं ऐसे श्री सदगुरुदेव को मैं नमस्कार करता हूँ | (52)

गुरुपदिष्टमार्गेण मनः शिद्धिं तु कारयेत् |

अनित्यं खण्डयेत्सर्वं यत्किंचिदात्मगोचरम् ||

श्री गुरुदेव के द्वारा उपदिष्ट मार्ग से मन की शुद्धि करनी चाहिए | जो कुछ भी अनित्य वस्तु अपनी इन्द्रियों की विषय हो जायें उनका खण्डन (निराकरण) करना चाहिए | (53)

किमत्रं बहुनोक्तेन शास्त्रकोटिशतैरपि |

दुर्लभा चित्तविश्रान्तिः विना गुरुकृपां पराम् ||

यहाँ ज्यादा कहने से क्या लाभ ? श्री गुरुदेव की परम कृपा के बिना करोड़ों शास्त्रों से भी चित्त की विश्रांति दुर्लभ है | (54)

करुणाखड्गपातेन छित्त्वा पाशाष्टकं शिशोः |

सम्यगानन्दजनकः सदगुरु सोऽभिधीयते ||

एवं श्रुत्वा महादेवि गुरुनिन्दा करोति यः |

स याति नरकान् घोरान् यावच्चन्द्रदिवाकरौ ||

करुणारूपी तलवार के प्रहार से शिष्य के आठों पाशों (संशय, दया, भय, संकोच, निन्दा, प्रतिष्ठा, कुलाभिमान और संपत्ति) को काटकर निर्मल आनंद देनेवाले को सदगुरु कहते हैं | ऐसा सुनने पर भी जो मनुष्य गुरुनिन्दा करता है, वह (मनुष्य) जब तक सूर्यचन्द्र का अस्तित्व रहता है तब तक घोर नरक में रहता है | (55, 56)

यावत्कल्पान्तको देहस्तावद्देवि गुरुं स्मरेत् |

गुरुलोपो न कर्त्तव्यः स्वच्छन्दो यदि वा भवेत् ||

हे देवी ! देह कल्प के अन्त तक रहे तब तक श्री गुरुदेव का स्मरण करना चाहिए और आत्मज्ञानी होने के बाद भी (स्वच्छन्द अर्थात् स्वरूप का छन्द मिलने पर भी) शिष्य को गुरुदेव की शरण नहीं छोड़नी चाहिए | (57)

हुंकारेण न वक्तव्यं प्राज्ञशिष्यै कदाचन |

गुरुराग्रे न वक्तव्यमसत्यं तु कदाचन ||

श्री गुरुदेव के समक्ष प्रज्ञावान् शिष्य को कभी हुँकार शब्द से (मैने ऐसे किया... वैसा किया) नहीं बोलना चाहिए और कभी असत्य नहीं बोलना चाहिए | (58)

गुरुं त्वंकृत्य हुंकृत्य गुरुसान्निध्यभाषणः |

अरण्ये निर्जले देशे संभवेद् ब्रह्मराक्षसः ||

गुरुदेव के समक्ष जो हुँकार शब्द से बोलता है अथवा गुरुदेव को तू कहकर जो बोलता है वह निर्जन मरुभूमि में ब्रह्मराक्षस होता है | (59)

अद्वैतं भावयेन्नित्यं सर्वावस्थासु सर्वदा |

कदाचिदपि नो कुर्यादद्वैतं गुरुसन्निधौ ||

सदा और सर्व अवस्थाओं में अद्वैत की भावना करनी चाहिए परन्तु गुरुदेव के साथ अद्वैत की भावना कदापि नहीं करनी चाहिए | (60)

दृश्यविस्मृतिपर्यन्तं कुर्याद् गुरुपदार्चनम् |

तादृशस्यैव कैवल्यं न च तद्व्यतिरेकिणः ||

जब तक दृश्य प्रपंच की विस्मृति न हो जाय तब तक गुरुदेव के पावन चरणारविन्द की पूजा-अर्चना करनी चाहिए | ऐसा करनेवाले को ही कैवल्यपद की प्रप्ति होती है, इसके विपरीत करनेवाले को नहीं होती | (61)

अपि संपूर्णतत्त्वज्ञो गुरुत्यागी भवेद्दृदा |

भवेत्येव हि तस्यान्तकाले विक्षेपमुत्कटम् ।।

संपूर्ण तत्त्वज्ञ भी यदि गुरु का त्याग कर दे तो मृत्यु के समय उसे महान् विक्षेप अवश्य हो जाता है | (62)

गुरौ सति स्वयं देवी परेषां तु कदाचन ।

उपदेशं न वै कुर्यात् तदा चेद्राक्षसो भवेत् ।।

हे देवी ! गुरु के रहने पर अपने आप कभी किसी को उपदेश नहीं देना चाहिए | इस प्रकार उपदेश देनेवाला ब्रह्मराक्षस होता है | (63)

न गुरुराश्रमे कुर्यात् दुष्पानं परिसर्पणम् ।

दीक्षा व्याख्या प्रभुत्वादि गुरोराज्ञां न कारयेत् ।।

गुरु के आश्रम में नशा नहीं करना चाहिए, टहलना नहीं चाहिए | दीक्षा देना, व्याख्यान करना, प्रभुत्व दिखाना और गुरु को आज्ञा करना, ये सब निषिद्ध हैं | (64)

नोपाश्रमं च पर्यंकं न च पादप्रसारणम् ।

नांगभोगादिकं कुर्यान्न लीलामपरामपि ।।

गुरु के आश्रम में अपना छप्पर और पलंग नहीं बनाना चाहिए, (गुरुदेव के सम्मुख) पैर नहीं पसारना, शरीर के भोग नहीं भोगने चाहिए और अन्य लीलाएँ नहीं करनी चाहिए | (65)

गुरुणां सदसद्वापि यदुक्तं तन्न लंघयेत् |

कुर्वन्नाज्ञां दिवारात्रौ दासवन्निवसेद् गुरौ ||

गुरुओं की बात सच्ची हो या झूठी, परन्तु उसका कभी उल्लंघन नहीं करना चाहिए | रात और दिन गुरुदेव की आज्ञा का पालन करते हुए उनके सान्निध्य में दास बन कर रहना चाहिए | (66)

अदत्तं न गुरोर्द्रव्यमुपभुंजीत कहिर्चित् ।

दत्तं च रंकवद् ग्राह्यं प्राणोप्येतेन लभ्यते ।।

जो द्रव्य गुरुदेव ने नहीं दिया हो उसका उपयोग कभी नहीं करना चाहिए | गुरुदेव के दिये हुए द्रव्य को भी गरीब की तरह ग्रहण करना चाहिए | उससे प्राण भी प्राप्त हो सकते हैं | (67)

पादुकासनशय्यादि गुरुणा यदभिष्टितम् ।

नमस्कुर्वीत तत्सर्वं पादाभ्यां न स्पृशेत् क्वचित् ।।

पादुका, आसन, बिस्तर आदि जो कुछ भी गुरुदेव के उपयोग में आते हों उन सर्व को नमस्कार करने चाहिए और उनको पैर से कभी नहीं छूना चाहिए | (68)

गच्छतः पृष्ठतो गच्छेत् गुरुच्छायां न लंघयेत् ।

नोल्बणं धारयेद्वेषं नालंकारास्ततोल्बणान् ।।

चलते हुए गुरुदेव के पीछे चलना चाहिए, उनकी परछाईं का भी उल्लंघन नहीं करना चाहिए | गुरुदेव के समक्ष कीमती वेशभूषा, आभूषण आदि धारण नहीं करने चाहिए | (69)

गुरुनिन्दाकरं दृष्ट्वा धावयेदथ वासयेत् ।

स्थानं वा तत्परित्याज्यं जिह्वाच्छेदाक्षमो यदि ।।

गुरुदेव की निन्दा करनेवाले को देखकर यदि उसकी जिह्वा काट डालने में समर्थ न हो तो उसे अपने स्थान से भगा देना चाहिए | यदि वह ठहरे तो स्वयं उस स्थान का परित्याग करना चाहिए | (70)

मुनिभिः पन्नगैर्वापि सुरैवा शापितो यदि ।

कालमृत्युभयाद्वापि गुरुः संत्राति पार्वति ।।

हे पर्वती ! मुनियों पन्नगों और देवताओं के शाप से तथा यथा काल आये हुए मृत्यु के भय से भी शिष्य को गुरुदेव बचा सकते हैं । (71)

विजानन्ति महावाक्यं गुरोश्चरणसेवया ।

ते वै संन्यासिनः प्रोक्ता इतरे वेषधारिणः ।।

गुरुदेव के श्रीचरणों की सेवा करके महावाक्य के अर्थ को जो समझते हैं वे ही सच्चे संन्यासी हैं, अन्य तो मात्र वेशधारी हैं | (72)

नित्यं ब्रह्म निराकारं निर्गुणं बोधयेत् परम् ।

भासयन् ब्रह्मभावं च दीपो दीपान्तरं यथा ।।

गुरु वे हैं जो नित्य, निर्गुण, निराकार, परम ब्रह्म का बोध देते हुए, जैसे एक दीपक दूसरे दीपक को प्रज्ज्वलित करता है वैसे, शिष्य में ब्रह्मभाव को प्रकटाते हैं | (73)

गुरुप्रादतः स्वात्मन्यात्मारामनिरिक्षणात् ।

समता मुक्तिमर्गेण स्वात्मज्ञानं प्रवर्तते ।।

श्री गुरुदेव की कृपा से अपने भीतर ही आत्मानंद प्राप्त करके समता और मुक्ति के मार्ग द्वार शिष्य आत्मज्ञान को उपलब्ध होता है | (74)

स्फ़टिके स्फ़ाटिकं रूपं दर्पणे दर्पणो यथा ।

तथात्मनि चिदाकारमानन्दं सोऽहमित्युत ।।

जैसे स्फ़टिक मणि में स्फ़टिक मणि तथा दर्पण में दर्पण दिख सकता है उसी प्रकार आत्मा में जो चित् और आनंदमय दिखाई देता है वह मैं हूँ | (75)

अंगुष्ठमात्रं पुरुषं ध्यायेच्च चिन्मयं हृदि ।

तत्र स्फुरति यो भावः श्रुणु तत्कथयामि ते ।।

हृदय में अंगुष्ठ मात्र परिणाम वाले चैतन्य पुरुष का ध्यान करना चाहिए | वहाँ जो भाव स्फुरित होता है वह मैं तुम्हें कहता हूँ, सुनो | (76)

अजोऽहममरोऽहं च ह्यनादिनिधनोह्यहम् ।

अविकारश्चिदानन्दो ह्यणियान् महतो महान् ।।

मैं अजन्मा हूँ, मैं अमर हूँ, मेरा आदि नहीं है, मेरी मृत्यु नहीं है | मैं निर्विकार हूँ, मैं चिदानन्द हूँ, मैं अणु से भी छोटा हूँ और महान् से भी महान् हूँ | (77)

अपूर्वमपरं नित्यं स्वयं ज्योतिर्निरामयम् ।

विरजं परमाकाशं ध्रुवमानन्दमव्ययम् ।।

अगोचरं तथाऽगम्यं नामरूपविवर्जितम् ।

निःशब्दं तु विजानीयात्स्वाभावाद् ब्रह्म पर्वति ।।

हे पर्वती ! ब्रह्म को स्वभाव से ही अपूर्व (जिससे पूर्व कोई नहीं ऐसा), अद्वितीय, नित्य, ज्योतिस्वरूप, निरोग, निर्मल, परम आकाशस्वरूप, अचल, आनन्दस्वरूप, अविनाशी, अगम्य, अगोचर, नाम-रूप से रहित तथा निःशब्द जानना चाहिए | (78, 79)

यथा गन्धस्वभावत्वं कर्पूरकुसुमादिषु ।

शीतोष्णस्वभावत्वं तथा ब्रह्मणि शाश्वतम् ||

जिस प्रकार कपूर, फ़ूल इत्यादि में गन्धत्व, (अग्नि में) उष्णता और (जल में) शीतलता स्वभाव से ही होते हैं उसी प्रकार ब्रह्म में शश्वतता भी स्वभावसिद्ध है | (80)

यथा निजस्वभावेन कुंडलकटकादयः |

सुवर्णत्वेन तिष्ठन्ति तथाऽहं ब्रह्म शाश्वतम् ||

जिस प्रकार कटक, कुण्डल आदि आभूषण स्वभाव से ही सुवर्ण हैं उसी प्रकार मैं स्वभाव से ही शाश्वत ब्रह्म हूँ | (81)

स्वयं तथाविधो भूत्वा स्थातव्यं यत्रकुत्रचित् |

कीटो भृंग इव ध्यानात् यथा भवति तादृशः ||

स्वयं वैसा होकर किसी-न-किसी स्थान में रहना | जैसे कीडा भ्रमर का चिन्तन करते-करते भ्रमर हो जाता है वैसे ही जीव ब्रह्म का धयान करते-करते ब्रह्मस्वरूप हो जाता है | (82)

गुरोर्ध्यानेनैव नित्यं देही ब्रह्ममयो भवेत् |

स्थितश्च यत्रकुत्रापि मुक्तोऽसौ नात्र संशयः ||

सदा गुरुदेव का ध्यान करने से जीव ब्रह्ममय हो जाता है | वह किसी भी स्थान में रहता हो फ़िर भी मुक्त ही है | इसमें कोई संशय नहीं है | (83)

ज्ञानं वैराग्यमैश्वर्यं यशः श्री समुदाहृतम् ।

षड्गुणैश्वर्ययुक्तो हि भगवान् श्री गुरुः प्रिये ।।

हे प्रिये ! भगवत्स्वरूप श्री गुरुदेव ज्ञान, वैराग्य, ऐश्वर्य, यश, लक्ष्मी और मधुरवाणी, ये छः गुणरूप ऐश्वर्य से संपन्न होते हैं | (84)

गुरुः शिवो गुरुर्देवो गुरुर्बन्धुः शरीरिणाम् ।

गुरुरात्मा गुरुर्जीवो गुरोरन्यन्न विद्यते ।।

मनुष्य के लिए गुरु ही शिव हैं, गुरु ही देव हैं, गुरु ही बांधव हैं गुरु ही आत्मा हैं और गुरु ही जीव हैं | (सचमुच) गुरु के सिवा अन्य कुछ भी नहीं है | (85)

एकाकी निस्पृहः शान्तः चिंतासूयादिवर्जितः ।

बाल्यभावेन यो भाति ब्रह्मज्ञानी स उच्यते ।।

अकेला, कामनारहित, शांत, चिन्तारहित, ईर्ष्यारहित और बालक की तरह जो शोभता है वह ब्रह्मज्ञानी कहलाता है | (86)

न सुखं वेदशास्त्रेषु न सुखं मंत्रयंत्रके ।

गुरोः प्रसादादन्यत्र सुखं नास्ति महीतले ।।

वेदों और शास्त्रों में सुख नहीं है, मंत्र और यंत्र में सुख नहीं है |इस पृथ्वी पर गुरुदेव के कृपाप्रसाद के सिवा अन्यत्र कहीं भी सुख नहीं है | (87)

चावार्कवैष्णवमते सुखं प्रभाकरे न हि ।

गुरोः पादान्तिके यद्वत्सुखं वेदान्तसम्मतम् ।।

गुरुदेव के श्री चरणों में जो वेदान्तनिर्दिष्ट सुख है वह सुख न चावार्क मत में, न वैष्णव मत में और न प्रभाकर (सांखय) मत में है । (88)

न तत्सुखं सुरेन्द्रस्य न सुखं चक्रवर्तिनाम् ।

यत्सुखं वीतरागस्य मुनेरेकान्तवासिनः ।।

एकान्तवासी वीतराग मुनि को जो सुख मिलता है वह सुख न इन्द्र को और न चक्रवर्ती राजाओं को मिलता है | (89)

नित्यं ब्रह्मरसं पीत्वा तृप्तो यः परमात्मनि ।

इन्द्रं च मन्यते रंकं नृपाणां तत्र का कथा ।।

हमेशा ब्रह्मरस का पान करके जो परमात्मा में तृप्त हो गया है वह (मुनि) इन्द्र को भी गरीब मानता है तो राजाओं की तो बात ही क्या ? (90)

यतः परमकैवल्यं गुरुमार्गेण वै भवेत् ।

गुरुभक्तिरतिः कार्या सर्वदा मोक्षकांक्षिभिः ।।

मोक्ष की आकांक्षा करनेवालों को गुरुभक्ति खूब करनी चाहिए, क्योंकि गुरुदेव के द्वारा ही परम मोक्ष की प्राप्ति होती है | (91)

एक एवाद्वितीयोऽहं गुरुवाक्येन निश्चितः ।।

एवमभ्यास्ता नित्यं न सेव्यं वै वनान्तरम् ।।

अभ्यासान्निमिषणैव समाधिमधिगच्छति ।

आजन्मजनितं पापं तत्क्षणादेव नश्यति ।।

गुरुदेव के वाक्य की सहायता से जिसने ऐसा निश्चय कर लिया है कि मैं एक और अद्वितीय हूँ और उसी अभ्यास में जो रत है उसके लिए अन्य वनवास का सेवन आवश्यक नहीं है, क्योंकि अभ्यास से ही एक क्षण में समाधि लग जाती है और उसी क्षण इस जन्म तक के सब पाप नष्ट हो जाते हैं | (92, 93)

गुरुर्विष्णुः सत्त्वमयो राजसश्चतुराननः ।

तामसो रूद्ररूपेण सृजत्यवति हन्ति च ।।

गुरुदेव ही सत्वगुणी होकर विष्णुरूप से जगत का पालन करते हैं, रजोगुणी होकर ब्रह्मारूप से जगत का सर्जन करते हैं और तमोगुणी होकर शंकर रूप से जगत का संहार करते हैं | (94)

तस्यावलोकनं प्राप्य सर्वसंगविवर्जितः ।

एकाकी निःस्पृहः शान्तः स्थातव्यं तत्प्रसादतः ।।

उनका (गुरुदेव का) दर्शन पाकर, उनके कृपाप्रसाद से सर्व प्रकार की आसक्ति छोड़कर एकाकी, निःस्पृह और शान्त होकर रहना चाहिए | (95)

सर्वज्ञपदमित्याहुर्देही सर्वमयो भुवि ।

सदाऽनन्दः सदा शान्तो रमते यत्र कुत्रचित् ।।

जो जीव इस जगत में सर्वमय, आनंदमय और शान्त होकर सर्वत्र विचरता है उस जीव को सर्वज्ञ कहते हैं | (96)

यत्रैव तिष्ठते सोऽपि स देशः पुण्यभाजनः ।

मुक्तस्य लक्षणं देवी तवाग्रे कथितं मया ।।

ऐसा पुरुष जहाँ रहता है वह स्थान पुण्यतीर्थ है | हे देवी ! तुम्हारे सामने मैंने मुक्त पुरूष का लक्षण कहा | (97)

यद्यप्यधीता निगमाः षडंगा आगमाः प्रिये ।

आध्यामादिनि शास्त्राणि ज्ञानं नास्ति गुरुं विना ।।

हे प्रिये ! मनुष्य चाहे चारों वेद पढ़ ले, वेद के छः अंग पढ़ ले, आध्यात्मशास्त्र आदि अन्य सर्व शास्त्र पढ़ ले फ़िर भी गुरु के बिना ज्ञान नहीं मिलता । (98)

शिवपूजारतो वापि विष्णुपूजारतोऽथवा |

गुरुतत्वविहीनश्चेत्तत्सर्वं व्यर्थमेव हि ||

शिवजी की पूजा में रत हो या विष्णु की पूजा में रत हो, परन्तु गुरुतत्व के ज्ञान से रहित हो तो वह सब व्यर्थ है | (99)

सर्वं स्यात्सफलं कर्म गुरुदीक्षाप्रभावतः |

गुरुलाभात्सर्वलाभो गुरुहीनस्तु बालिशः ||

गुरुदेव की दीक्षा के प्रभाव से सब कर्म सफल होते हैं | गुरुदेव की संप्राप्ति रूपी परम लाभ से अन्य सर्वलाभ मिलते हैं | जिसका गुरु नहीं वह मूर्ख है | (100)

तस्मात्सर्वप्रयत्नेन सर्वसंगविवर्जितः |

विहाय शास्त्रजालानि गुरुमेव समाश्रयेत् ||

इसलिए सब प्रकार के प्रयत्न से अनासक्त होकर , शास्त्र की मायाजाल छोड़कर गुरुदेव की ही शरण लेनी चाहिए | (101)

ज्ञानहीनो गुरुत्याज्यो मिथ्यावादी विडंबकः |

स्वविश्रान्ति न जानाति परशान्तिं करोति किम् ||

ज्ञानरहित, मिथ्या बोलनेवाले और दिखावट करनेवाले गुरु का त्याग कर देना चाहिए, क्योंकि जो अपनी ही शांति पाना नहीं जानता वह दूसरों को क्या शांति दे सकेगा | (102)

शिलायाः किं परं ज्ञानं शिलासंघप्रतारणे |

स्वयं तर्तुं न जानाति परं निसतारेयेत्कथम् ||

पत्थरों के समूह को तैराने का ज्ञान पत्थर में कहाँ से हो सकता है ? जो खुद तैरना नहीं जानता वह दूसरों को क्या तैरायेगा | (103)

न वन्दनीयास्ते कष्टं दर्शनाद् भ्रान्तिकारकः |

वर्जयेतान् गुरुन् दूरे धीरानेव समाश्रयेत् ||

जो गुरु अपने दर्शन से (दिखावे से) शिष्य को भ्रान्ति में ड़ालता है ऐसे गुरु को प्रणाम नहीं करना चाहिए | इतना ही नहीं दूर से ही उसका त्याग करना चाहिए | ऐसी स्थिति में धैर्यवान् गुरु का ही आश्रय लेना चाहिए | (104)

पाखण्डिनः पापरता नास्तिका भेदबुद्धयः |

स्त्रीलम्पटा दुराचाराः कृतघ्ना बकवृतयः ||

कर्मभ्रष्टाः क्षमानष्टाः निन्द्यतर्कैश्च वादिनः |

कामिनः क्रोधिनश्चैव हिंस्राश्चंड़ाः शठस्तथा ||

ज्ञानलुप्ता न कर्तव्या महापापास्तथा प्रिये |

एभ्यो भिन्नो गुरुः सेव्य एकभक्त्या विचार्य च ||

भेदबुद्धि उत्तन्न करनेवाले, स्त्रीलम्पट, दुराचारी, नमकहराम, बगुले की तरह ठगनेवाले, क्षमा रहित निन्दनीय तर्कों से वितंडावाद करनेवाले, कामी क्रोधी, हिंसक, उग्र, शठ तथा अज्ञानी और महापापी पुरुष को गुरु नहीं करना चाहिए | ऐसा विचार करके ऊपर दिये लक्षणों से भिन्न लक्षणोंवाले गुरु की एकनिष्ठ भक्ति से सेवा करनी चाहिए | (105, 106, 107)

सत्यं सत्यं पुनः सत्यं धर्मसारं मयोदितम् |

गुरुगीता समं स्तोत्रं नास्ति तत्वं गुरोः परम् ||

गुरुगीता के समान अन्य कोई स्तोत्र नहीं है | गुरु के समान अन्य कोई तत्व नहीं है | समग्र धर्म का यह सार मैंने कहा है, यह सत्य है, सत्य है और बार-बार सत्य है | (108)

अनेन यद् भवेद् कार्यं तद्वदामि तव प्रिये ।

लोकोपकारकं देवि लौकिकं तु विवर्जयेत् ।।

हे प्रिये ! इस गुरुगीता का पाठ करने से जो कार्य सिद्ध होता है अब वह कहता हूँ | हे देवी ! लोगों के लिए यह उपकारक है | मात्र लौकिक का त्याग करना चाहिए | (109)

लौकिकाद्धर्मतो याति ज्ञानहीनो भवार्णवे ।

ज्ञानभावे च यत्सर्वं कर्म निष्कर्म शाम्यति ।।

जो कोई इसका उपयोग लौकिक कार्य के लिए करेगा वह ज्ञानहीन होकर संसाररूपी सागर में गिरेगा | ज्ञान भाव से जिस कर्म में इसका उपयोग किया जाएगा वह कर्म निष्कर्म में परिणत होकर शांत हो जाएगा | (110)

इमां तु भक्तिभावेन पठेद्वै शृणुयादपि ।

लिखित्वा यत्प्रसादेन तत्सर्वं फलमश्नुते ।।

भक्ति भाव से इस गुरुगीता का पाठ करने से, सुनने से और लिखने से वह (भक्त) सब फल भोगता है | (111)

गुरुगीतामिमां देवि हृदि नित्यं विभावय ।

महाव्याधिगतैर्दुःखैः सर्वदा प्रजपेन्मुदा ।।

हे देवी ! इस गुरुगीता को नित्य भावपूर्वक हृदय में धारण करो | महाव्याधिवाले दुःखी लोगों को सदा आनंद से इसका जप करना चाहिए | (112)

गुरुगीताक्षरैकैकं मंत्रराजमिदं प्रिये |

अन्ये च विविधा मंत्राः कलां नार्हन्ति षोड्शीम् ||

हे प्रिये ! गुरुगीता का एक-एक अक्षर मंत्रराज है | अन्य जो विविध मंत्र हैं वे इसका सोलहवाँ भाग भी नहीं | (113)

अनन्तफलमाप्नोति गुरुगीताजपेन तु |

सर्वपापहरा देवि सर्वदारिद्रयनाशिनी ||

हे देवी ! गुरुगीता के जप से अनंत फल मिलता है | गुरुगीता सर्व पाप को हरने वाली और सर्व दारिद्रय का नाश करने वाली है | (114)

अकालमृत्युहंत्री च सर्वसंकटनाशिनी |

यक्षराक्षसभूतादिचोरव्याघ्रविघातिनी ||

गुरुगीता अकाल मृत्यु को रोकती है, सब संकटों का नाश करती है, यक्ष राक्षस, भूत, चोर और बाघ आदि का घात करती है | (115)

सर्वोपद्रवकुष्ठदिदुष्टदोषनिवारिणी |

यत्फलं गुरुसान्निध्यात्तत्फलं पठनाद् भवेत् ||

गुरुगीता सब प्रकार के उपद्रवों, कुष्ठ और दुष्ट रोगों और दोषों का निवारण करनेवाली है | श्री गुरुदेव के सान्निध्य से जो फल मिलता है वह फल इस गुरुगीता का पाठ करने से मिलता है | (116)

महाव्याधिहरा सर्वविभूतेः सिद्धिदा भवेत् |

अथवा मोहने वश्ये स्वयमेव जपेत्सदा ||

इस गुरुगीता का पाठ करने से महाव्याधि दूर होती है, सर्व ऐश्वर्य और सिद्धियों की प्राप्ति होती है | मोहन में अथवा वशीकरण में इसका पाठ स्वयं ही करना चाहिए | (117)

मोहनं सर्वभूतानां बन्धमोक्षकरं परम् |

देवराज्ञां प्रियकरं राजानं वश्मानयेत् ||

इस गुरुगीता का पाठ करनेवाले पर सर्व प्राणी मोहित हो जाते हैं बन्धन में से परम मुक्ति मिलती है, देवराज इन्द्र को वह प्रिय होता है और राजा उसके वश होता है | (118)

मुखस्तम्भकरं चैव गुणाणां च विवर्धनम् ।

दुष्कर्मनाश्नं चैव तथा सत्कर्मसिद्धिदम् ।।

इस गुरुगीता का पाठ शत्रु का मुख बन्द करनेवाला है, गुणों की वृद्धि करनेवाला है, दुष्कृत्यों का नाश करनेवाला और सत्कर्म में सिद्धि देनेवाला है । (119)

असिद्धं साधयेत्कार्यं नवग्रहभयापहम् ।

दुःस्वप्ननाशनं चैव सुस्वप्नफलदायकम् ।।

इसका पाठ असाध्य कार्यों की सिद्धि कराता है, नव ग्रहों का भय हरता है, दुःस्वप्न का नाश करता है और सुस्वप्न के फल की प्राप्ति कराता है | (120)

मोहशान्तिकरं चैव बन्धमोक्षकरं परम् ।

स्वरूपज्ञाननिलयं गीतशास्त्रमिदं शिवे ।।

हे शिवे ! यह गुरुगीतारूपी शास्त्र मोह को शान्त करनेवाला, बन्धन में से परम मुक्त करनेवाला और स्वरूपज्ञान का भण्डार है | (121)

यं यं चिन्तयते कामं तं तं प्राप्नोति निश्चयम् ।

नित्यं सौभाग्यदं पुण्यं तापत्रयकुलापहम् ।।

व्यक्ति जो-जो अभिलाषा करके इस गुरुगीता का पठन-चिन्तन करता है उसे वह निश्चय ही प्राप्त होता है | यह गुरुगीता नित्य सौभाग्य और पुण्य प्रदान करनेवाली तथा तीनों तापों (आधि-व्याधि-उपाधि) का शमन करनेवाली है | (122)

सर्वशान्तिकरं नित्यं तथा वन्ध्यासुपुत्रदम् ।

अवैधव्यकरं स्त्रीणां सौभाग्यस्य विवर्धनम् ।।

यह गुरुगीता सब प्रकार की शांति करनेवाली, वन्ध्या स्त्री को सुपुत्र देनेवाली, सधवा स्त्री के वैध्व्य

का निवारण करनेवाली और सौभाग्य की वृद्धि करनेवाली है | (123)

आयुरारोग्मैश्वर्यं पुत्रपौत्रप्रवर्धनम् |

निष्कामजापी विधवा पठेन्मोक्षमवाप्नुयात् ||

यह गुरुगीता आयुष्य, आरोग्य, ऐश्वर्य और पुत्र-पौत्र की वृद्धि करनेवाली है | कोई विधवा निष्काम भाव से इसका जप-पाठ करे तो मोक्ष की प्राप्ति होती है | (124)

अवैधव्यं सकामा तु लभते चान्यजन्मनि ।

सर्वदुःखभयं विघ्नं नाश्येत्तापहारकम् ।।

यदि वह (विधवा) सकाम होकर जप करे तो अगले जन्म में उसको संताप हरनेवाल अवैध्व्य (सौभाग्य) प्राप्त होता है | उसके सब दुःख भय, विघ्न और संताप का नाश होता है | (125)

सर्वपापप्रशमनं धर्मकामार्थमोक्षदम् ।

यं यं चिन्तयते कामं तं तं प्राप्नोति निश्चितम् ।।

इस गुरुगीता का पाठ सब पापों का शमन करता है, धर्म, अर्थ, और मोक्ष की प्राप्ति कराता है | इसके पाठ से जो-जो आकांक्षा की जाती है वह अवश्य सिद्ध होती है | (126)

लिखित्वा पूजयेद्यस्तु मोक्षश्रियम्वाप्नुयात् ।

गुरूभक्तिर्विशेषेण जायते हृदि सर्वदा ।।

यदि कोई इस गुरुगीता को लिखकर उसकी पूजा करे तो उसे लक्ष्मी और मोक्ष की प्राप्ति होती है और विशेष कर उसके हृदय में सर्वदा गुरुभक्ति उत्पन्न होती रहती है | (127)

जपन्ति शाक्ताः सौराश्च गाणपत्याश्च वैष्णवाः ।

शैवाः पाशुपताः सर्वे सत्यं सत्यं न संशयः ।।

शक्ति के, सूर्य के, गणपति के, शिव के और पशुपति के मतवादी इसका (गुरुगीता का) पाठ करते हैं यह सत्य है, सत्य है इसमें कोई संदेह नहीं है | (128)

जपं हीनासनं कुर्वन् हीनकर्माफलप्रदम् ।

गुरुगीतां प्रयाणे वा संग्रामे रिपुसंकटे ।।

जपन् जयमवाप्नोति मरणे मुक्तिदायिका ।

सर्वकमाणि सिद्धयन्ति गुरुपुत्रे न संशयः ।।

बिना आसन किया हुआ जप नीच कर्म हो जाता है और निष्फल हो जाता है | यात्रा में, युद्ध में, शत्रुओं के उपद्रव में गुरुगीता का जप-पाठ करने से विजय मिलता है | मरणकाल में जप करने से मोक्ष मिलता है | गुरुपुत्र के (शिष्य के) सर्व कार्य सिद्ध होते हैं, इसमें संदेह नहीं है | (129, 130)

गुरुमंत्रो मुखे यस्य तस्य सिद्धयन्ति नान्यथा ।

दीक्षया सर्वकर्माणि सिद्धयन्ति गुरुपुत्रके ।।

जिसके मुख में गुरुमंत्र है उसके सब कार्य सिद्ध होते हैं, दूसरे के नहीं | दीक्षा के कारण शिष्य के सर्व कार्य सिद्ध हो जाते हैं | (131)

भवमूलविनाशाय चाष्टपाशनिवृतये ।

गुरुगीताम्भसि स्नानं तत्वज्ञ कुरुते सदा ।।

सर्वशुद्धः पवित्रोऽसौ स्वभावाद्यत्र तिष्ठति ।

तत्र देवगणाः सर्वे क्षेत्रपीठे चरन्ति च ।।

तत्वज्ञ पुरूष संसारूपी वृक्ष की जड़ नष्ट करने के लिए और आठों प्रकार के बन्धन (संशय, दया,

भय, संकोच, निन्दा प्रतिष्ठा, कुलाभिमान और संपत्ति) की निवृति करने के लिए गुरुगीता रूपी गंगा में सदा स्नान करते रहते हैं | स्वभाव से ही सर्वथा शुद्ध और पवित्र ऐसे वे महापुरूष जहाँ रहते हैं उस तीर्थ में देवता विचरण करते हैं | (132, 133)

आसनस्था शयाना वा गच्छन्तष्तिष्ठन्तोऽपि वा |

अश्वरूढ़ा गजारूढ़ा सुषुप्ता जाग्रतोऽपि वा ||

शुचिभूता ज्ञानवन्तो गुरुगीतां जपन्ति ये |

तेषां दर्शनसंस्पर्शात् पुनर्जन्म न विद्यते ||

आसन पर बैठे हुए या लेटे हुए, खड़े रहते या चलते हुए, हाथी या घोड़े पर सवार, जाग्रतवस्था में या सुषुप्तावस्था में , जो पवित्र ज्ञानवान् पुरूष इस गुरुगीता का जप-पाठ करते हैं उनके दर्शन और स्पर्श से पुनर्जन्म नहीं होता | (134, 135)

कुशदुर्वासने देवि ह्यासने शुभ्रकम्बले ।

उपविश्य ततो देवि जपेदेकाग्रमानसः ।।

हे देवी ! कुश और दुर्वा के आसन पर सफ़ेद कम्बल बिछाकर उसके ऊपर बैठकर एकाग्र मन से इसका (गुरुगीता का) जप करना चाहिए (136)

शुक्लं सर्वत्र वै प्रोक्तं वश्ये रक्तासनं प्रिये ।

पद्मासने जपेन्नित्यं शान्तिवश्यकरं परम् ।।

सामन्यतया सफ़ेद आसन उचित है परंतु वशीकरण में लाल आसन आवश्यक है | हे प्रिये ! शांति प्राप्ति के लिए या वशीकरण में नित्य पद्मासन में बैठकर जप करना चाहिए | (137)

वस्त्रासने च दारिद्रयं पाषाणे रोगसंभवः ।

मेदिन्यां दुःखमाप्नोति काष्ठे भवति निष्फलम् ।।

कपड़े के आसन पर बैठकर जप करने से दारिद्रय आता है, पत्थर के आसन पर रोग, भूमि पर बैठकर जप करने से दुःख आता है और लकड़ी के आसन पर किये हुए जप निष्फल होते हैं | (138)

कृष्णाजिने ज्ञानसिद्धिः मोक्षश्री व्याघ्रचर्मणि ।

कुशासने ज्ञानसिद्धिः सर्वसिद्धिस्तु कम्बले ।।

काले मृगचर्म और दर्भासन पर बैठकर जप करने से ज्ञानसिद्धि होती है, व्याग्रचर्म पर जप करने

से मुक्ति प्राप्त होती है, परन्तु कम्बल के आसन पर सर्व सिद्धि प्राप्त होती है | (139)

आग्नेय्यां कर्षणं चैव वयव्यां शत्रुनाशनम् |

नैरृत्यां दर्शनं चैव ईशान्यां ज्ञानमेव च ||

अग्नि कोण की तरफ मुख करके जप-पाठ करने से आकर्षण, वायव्य कोण की तरफ़ शत्रुओं का नाश, नैरृत्य कोण की तरफ दर्शन और ईशान कोण की तरफ मुख करके जप-पाठ करने से ज्ञान की प्रप्ति है | (140)

उदंमुखः शान्तिजाप्ये वश्ये पूर्वमुखतथा |

याम्ये तु मारणं प्रोक्तं पश्चिमे च धनागमः ||

उत्तर दिशा की ओर मुख करके पाठ करने से शांति, पूर्व दिशा की ओर वशीकरण, दक्षिण दिशा की ओर मारण सिद्ध होता है तथा पश्चिम दिशा की ओर मुख करके जप-पाठ करने से धन प्राप्ति होती है | (141)

|| इति श्री स्कान्दोत्तरखण्डे उमामहेश्वरसंवादे श्री गुरुगीतायां द्वितीयोऽध्यायः ||

|| अथ तृतीयोऽध्यायः ||

अथ काम्यजपस्थानं कथयामि वरानने |

सागरान्ते सरित्तीरे तीर्थे हरिहरालये ||

शक्तिदेवालये गोष्ठे सर्वदेवालये शुभे |

वटस्य धात्र्या मूले व मठे वृन्दावने तथा ||

पवित्रे निर्मले देशे नित्यानुष्ठानोऽपि वा |

निर्वेदनेन मौनेन जपमेतत् समारभेत् ||

तीसरा अध्याय

हे सुमुखी ! अब सकामियों के लिए जप करने के स्थानों का वर्णन करता हूँ | सागर या नदी के तट पर, तीर्थ में, शिवालय में, विष्णु के या देवी के मंदिर में, गौशाला में, सभी शुभ देवालयों में, वटवृक्ष के या आँवले के वृक्ष के नीचे, मठ में, तुलसीवन में, पवित्र निर्मल स्थान में, नित्यानुष्ठान के रूप में अनासक्त रहकर मौनपूर्वक इसके जप का आरंभ करना चाहिए |

जाप्येन जयमाप्नोति जपसिद्धिं फलं तथा |

हीनकर्म त्यजेत्सर्वं गर्हितस्थानमेव च ||

जप से जय प्राप्त होता है तथा जप की सिद्धि रूप फल मिलता है | जपानुष्ठान के काल में सब नीच कर्म और निन्दित स्थान का त्याग करना चाहिए | (145)

स्मशाने बिल्वमूले वा वटमूलान्तिके तथा |

सिद्धयन्ति कानके मूले चूतवृक्षस्य सन्निधौ ।।

स्मशान में, बिल्व, वटवृक्ष या कनकवृक्ष के नीचे और आम्रवृक्ष के पास जप करने से से सिद्धि जल्दी होती है | (146)

आकल्पजन्मकोटीनां यज्ञव्रततपः क्रियाः |

ताः सर्वाः सफला देवि गुरुसंतोषमात्रतः ||

हे देवी ! कल्प पर्यन्त के, करोंड़ों जन्मों के यज्ञ, व्रत, तप और शास्त्रोक्त क्रियाएँ, ये सब गुरुदेव के संतोषमात्र से सफल हो जाते हैं | (147)

मंदभाग्या ह्यशक्ताश्च ये जना नानुमन्वते |

गुरुसेवासु विमुखाः पच्यन्ते नरकेऽशुचौ ||

भाग्यहीन, शक्तिहीन और गुरुसेवा से विमुख जो लोग इस उपदेश को नहीं मानते वे घोर नरक में पड़ते हैं | (148)

विद्या धनं बलं चैव तेषां भाग्यं निरर्थकम् |

येषां गुरुकृपा नास्ति अधो गच्छन्ति पार्वति ||

जिसके ऊपर श्री गुरुदेव की कृपा नहीं है उसकी विद्या, धन, बल और भाग्य निरर्थक है| हे पार्वती ! उसका अधःपतन होता है | (149)

धन्या माता पिता धन्यो गोत्रं धन्यं कुलोदभवः|

धन्या च वसुधा देवि यत्र स्याद् गुरुभक्तता ||

जिसके अंदर गुरुभक्ति हो उसकी माता धन्य है, उसका पिता धन्य है, उसका वंश धन्य है, उसके वंश में जन्म लेनेवाले धन्य हैं, समग्र धरती माता धन्य है | (150)

शरीरमिन्द्रियं प्राणच्चार्थः स्वजनबन्धुतां ।

मातृकुलं पितृकुलं गुरुरेव न संशयः ।।

शरीर, इन्द्रियाँ, प्राण, धन, स्वजन, बन्धु-बान्धव, माता का कुल, पिता का कुल ये सब गुरुदेव ही हैं । इसमें संशय नहीं है । (151)

गुरुर्देवो गुरुर्धर्मो गुरौ निष्ठा परं तपः ।

गुरोः परतरं नास्ति त्रिवारं कथयामि ते ।।

गुरु ही देव हैं, गुरु ही धर्म हैं, गुरु में निष्ठा ही परम तप है | गुरु से अधिक और कुछ नहीं है यह मैं तीन बार कहता हूँ | (152)

समुद्रे वै यथा तोयं क्षीरे क्षीरं घृते घृतम् ।

भिन्ने कुंभे यथाऽऽकाशं तथाऽऽत्मा परमात्मनि ।।

जिस प्रकार सागर में पानी, दूध में दूध, घी में घी, अलग-अलग घटों में आकाश एक और अभिन्न है उसी प्रकार परमात्मा में जीवात्मा एक और अभिन्न है | (153)

तथैव ज्ञानवान् जीव परमात्मनि सर्वदा ।

ऐक्येन रमते ज्ञानी यत्र कुत्र दिवानिशम् ।।

इसी प्रकार ज्ञानी सदा परमात्मा के साथ अभिन्न होकर रात-दिन आनंदविभोर होकर सर्वत्र विचरते हैं | (154)

गुरुसन्तोषणादेव मुक्तो भवति पार्वति ।

अणिमादिषु भोक्तृत्वं कृपया देवि जायते ।।

हे पार्वति ! गुरुदेव को संतुष्ट करने से शिष्य मुक्त हो जाता है | हे देवी ! गुरुदेव की कृपा से वह अणिमादि सिद्धियों का भोग प्राप्त करता है| (155)

साम्येन रमते ज्ञानी दिवा वा यदि वा निशि ।

एवं विधौ महामौनी त्रैलोक्यसमतां व्रजेत् ।।

ज्ञानी दिन में या रात में, सदा सर्वदा समत्व में रमण करते हैं । इस प्रकार के महामौनी अर्थात् ब्रह्मनिष्ठ महात्मा तीनों लोकों मे समान भाव से गति करते हैं । (156)

गुरुभावः परं तीर्थमन्यतीर्थं निरर्थकम् |

सर्वतीर्थमयं देवि श्रीगुरोश्चरणाम्बुजम् ||

गुरुभक्ति ही सबसे श्रेष्ठ तीर्थ है | अन्य तीर्थ निरर्थक हैं | हे देवी ! गुरुदेव के चरणकमल सर्वतीर्थमय हैं | (157)

कन्याभोगरतामन्दाः स्वकान्तायाः पराङ्मुखाः |

अतः परं मया देवि कथितन्न मम प्रिये ||

हे देवी ! हे प्रिये ! कन्या के भोग में रत, स्वस्त्री से विमुख (परस्त्रीगामी) ऐसे बुद्धिशून्य लोगों को मेरा यह आत्मप्रिय परमबोध मैंने नहीं कहा | (158)

अभक्ते वंचके धूर्ते पाखंडे नास्तिकादिषु |

मनसाऽपि न वक्तव्या गुरुगीता कदाचन ||

अभक्त, कपटी, धूर्त, पाखण्डी, नास्तिक इत्यादि को यह गुरुगीता कहने का मन में सोचना तक नहीं | (159)

गुरवो बहवः सन्ति शिष्यवित्तापहारकाः |

तमेकं दुर्लभं मन्ये शिष्यह्यत्तापहारकम् ||

शिष्य के धन को अपहरण करनेवाले गुरु तो बहुत हैं लेकिन शिष्य के हृदय का संताप हरनेवाला एक गुरु भी दुर्लभ है ऐसा मैं मानता हूँ | (160)

चातुर्यवान्विवेकी च अध्यात्मज्ञानवान् शुचिः ।

मानसं निर्मलं यस्य गुरुत्वं तस्य शोभते ।।

जो चतुर हों, विवेकी हों, अध्यात्म के ज्ञाता हों, पवित्र हों तथा निर्मल मानसवाले हों उनमें गुरुत्व शोभा पाता है । (161)

गुरवो निर्मलाः शान्ताः साधवो मितभाषिणः ।

कामक्रोधविनिर्मुक्ताः सदाचारा जितेन्द्रियाः ।।

गुरु निर्मल, शांत, साधु स्वभाव के, मितभाषी, काम-क्रोध से अत्यंत रहित, सदाचारी और जितेन्द्रिय होते हैं | (162)

सूचकादि प्रभेदेन गुरवो बहुधा स्मृताः ।

स्वयं समयक् परीक्ष्याथ तत्वनिष्ठं भजेत्सुधीः ।।

सूचक आदि भेद से अनेक गुरु कहे गये हैं | बिद्धिमान् मनुष्य को स्वयं योग्य विचार करके तत्वनिष्ठ सदगुरु की शरण लेनी चाहिए| (163)

वर्णजालमिदं तद्वद्बाह्यशास्त्रं तु लौकिकम् ।

यस्मिन् देवि समभ्यस्तं स गुरुः सूचकः स्मृतः ।।

हे देवी ! वर्ण और अक्षरों से सिद्ध करनेवाले बाह्य लौकिक शास्त्रों का जिसको अभ्यास हो वह गुरु सूचक गुरु कहलाता है| (164)

वर्णाश्रमोचितां विद्यां धर्माधर्मविधायिनीम् ।

प्रवक्तारं गुरुं विद्धि वाचकस्त्वति पार्वति ।।

हे पार्वती ! धर्माधर्म का विधान करनेवाली, वर्ण और आश्रम के अनुसार विद्या का प्रवचन करनेवाले गुरु को तुम वाचक गुरु जानो | (165)

पंचाक्षर्यादिमंत्राणामुपदेष्टा त पार्वति |

स गुरुर्बोधको भूयादुभयोरमुत्तमः ||

पंचाक्षरी आदि मंत्रों का उपदेश देनेवाले गुरु बोधक गुरु कहलाते हैं | हे पार्वती ! प्रथम दो प्रकार के गुरुओं से यह गुरु उत्तम हैं | (166)

मोहमारणवश्यादितुच्छमंत्रोपदर्शिनम् ।

निषिद्धगुरुरित्याहुः पण्डितस्तत्वदर्शिनः ।।

मोहन, मारण, वशीकरण आदि तुच्छ मंत्रों को बतानेवाले गुरु को तत्वदर्शी पंडित निषिद्ध गुरु कहते हैं | (167)

अनित्यमिति निर्दिश्य संसारे संकटालयम् ।

वैराग्यपथदर्शी यः स गुरुर्विहितः प्रिये ।।

हे प्रिये ! संसार अनित्य और दुःखों का घर है ऐसा समझाकर जो गुरु वैराग्य का मार्ग बताते हैं वे विहित गुरु कहलाते हैं | (168)

तत्वमस्यादिवाक्यानामुपदेष्टा तु पार्वति ।

कारणाख्यो गुरुः प्रोक्तो भवरोगनिवारकः ।।

हे पार्वती ! तत्वमसि आदि महावाक्यों का उपदेश देनेवाले तथा संसाररूपी रोगों का निवारण करनेवाले गुरु कारणाख्य गुरु कहलाते हैं | (169)

सर्वसन्देहसन्दोहनिर्मूलनविचक्षणः ।

जन्ममृत्युभयघ्नो यः स गुरुः परमो मतः ।।

सर्व प्रकार के सन्देहों का जड़ से नाश करने में जो चतुर हैं, जन्म, मृत्यु तथा भय का जो विनाश करते हैं वे परम गुरु कहलाते हैं, सदगुरु कहलाते हैं | (170)

बहुजन्मकृतात् पुण्याल्लभ्यतेऽसौ महागुरुः |

लब्ध्वाऽमुं न पुनर्याति शिष्यः संसारबन्धनम् ||

अनेक जन्मों के किये हुए पुण्यों से ऐसे महागुरु प्राप्त होते हैं | उनको प्राप्त कर शिष्य पुनः संसारबन्धन में नहीं बँधता अर्थात् मुक्त हो जाता है | (171)

एवं बहुविधालोके गुरवः सन्ति पार्वति ।

तेषु सर्वप्रत्नेन सेव्यो हि परमो गुरुः ।।

हे पर्वती ! इस प्रकार संसार में अनेक प्रकार के गुरु होते हैं | इन सबमें एक परम गुरु का ही सेवन सर्व प्रयत्नों से करना चाहिए | (172)

पार्वत्युवाच

स्वयं मूढा मृत्युभीताः सुकृताद्विरतिं गताः ।

दैवन्निषिद्धगुरुगा यदि तेषां तु का गतिः ।।

पर्वती ने कहा

प्रकृति से ही मूढ, मृत्यु से भयभीत, सत्कर्म से विमुख लोग यदि दैवयोग से निषिद्ध गुरु का सेवन करें तो उनकी क्या गति होती है | (173)

श्रीमहादेव उवाच

निषिद्धगुरुशिष्यस्तु दुष्टसंकल्पदूषितः ।

ब्रह्मप्रलयपर्यन्तं न पुनर्याति मृत्यताम् ।।

श्री महादेवजी बोले

निषिद्ध गुरु का शिष्य दुष्ट संकल्पों से दूषित होने के कारण ब्रह्मप्रलय तक मनुष्य नहीं होता, पशुयोनि में ही रहता है | (174)

श्रृणु तत्वमिदं देवि यदा स्याद्विरतो नरः |

तदाऽसावधिकारीति प्रोच्यते श्रुतमस्तकैः ||

हे देवी ! इस तत्व को ध्यान से सुनो | मनुष्य जब विरक्त होता है तभी वह अधिकारी कहलाता है, ऐसा उपनिषद कहते हैं | अर्थात् दैव योग से गुरु प्राप्त होने की बात अलग है और विचार से गुरु चुनने की बात अलग है | (175)

अखण्डैकरसं ब्रह्म नित्यमुक्तं निरामयम् ।

स्वस्मिन संदर्शितं येन स भवेदस्य देशिकः ।।

अखण्ड, एकरस, नित्यमुक्त और निरामय ब्रह्म जो अपने अंदर ही दिखाते हैं वे ही गुरु होने चाहिए | (176)

जलानां सागरो राजा यथा भवति पार्वति ।

गुरुणां तत्र सर्वेषां राजायं परमो गुरुः ।।

हे पार्वती ! जिस प्रकार जलाशयों में सागर राजा है उसी प्रकार सब गुरुओं में से ये परम गुरु राजा हैं | (177)

मोहादिरहितः शान्तो नित्यतृप्तो निराश्रयः ।

तृणीकृतब्रह्मविष्णुवैभवः परमो गुरुः ।।

मोहादि दोषों से रहित, शांत, नित्य तृप्त, किसीके आश्रयरहित अर्थात् स्वाश्रयी, ब्रह्मा और विष्णु के वैभव को भी तृणवत् समझनेवाले गुरु ही परम गुरु हैं | (178)

सर्वकालविदेशेषु स्वतंत्रो निश्चलस्सुखी ।

अखण्डैकरसास्वादतृप्तो हि परमो गुरुः ।।

सर्व काल और देश में स्वतंत्र, निश्चल, सुखी, अखण्ड, एक रस के आनन्द से तृप्त ही सचमुच परम गुरु हैं | (179)

द्वैताद्वैतविनिर्मुक्तः स्वानुभूतिप्रकाशवान् ।

अज्ञानान्धमश्छेत्ता सर्वज्ञ परमो गुरुः ।।

द्वैत और अद्वैत से मुक्त, अपने अनुभुवरूप प्रकाशवाले, अज्ञानरूपी अंधकार को छेदनेवाले और सर्वज्ञ ही परम गुरु हैं | (180)

यस्य दर्शनमात्रेण मनसः स्यात् प्रसन्नता ।

स्वयं भूयात् धृतिश्शान्तिः स भवेत् परमो गुरुः ।।

जिनके दर्शनमात्र से मन प्रसन्न होता है, अपने आप धैर्य और शांति आ जाती है वे परम गुरु हैं । (181)

स्वशरीरं शवं पश्यन् तथा स्वात्मानमद्वयम् ।

यः स्त्रीकनकमोहघ्नः स भवेत् परमो गुरुः ।।

जो अपने शरीर को शव समान समझते हैं अपने आत्मा को अद्वय जानते हैं, जो कामिनी और कंचन के मोह का नाशकर्ता हैं वे परम गुरु हैं । (182)

मौनी वाग्मीति तत्वज्ञो द्विधाभूच्छृणु पार्वति ।

न कश्चिन्मौनिना लाभो लोकेऽस्मिन्भवति प्रिये ।।

वाग्मी तूत्कटसंसारसागरोत्तारणक्षमः ।

यतोऽसौ संशयच्छेत्ता शास्त्रयुक्त्यनुभूतिभिः ।।

हे पार्वती ! सुनो । तत्वज्ञ दो प्रकार के होते हैं । मौनी और वक्ता । हे प्रिये ! इन दोंनों में से मौनी गुरु द्वारा लोगों को कोई लाभ नहीं होता, परन्तु वक्ता गुरु भयंकर संसारसागर को पार कराने में समर्थ होते हैं । क्योंकि शास्त्र, युक्ति (तर्क) और अनुभूति से वे सर्व संशयों का छेदन करते हैं । (183, 184)

गुरुनामजपाद्येवि बहुजन्मार्जितान्यपि ।

पापानि विलयं यान्ति नास्ति सन्देहमण्वपि ।।

हे देवी ! गुरुनाम के जप से अनेक जन्मों के इकठ्ठे हुए पाप भी नष्ट होते हैं, इसमें अणुमात्र संशय नहीं है | (185)

कुलं धनं बलं शास्त्रं बान्धवास्सोदरा इमे ।

मरणे नोपयुज्यन्ते गुरुरेको हि तारकः ।।

अपना कुल, धन, बल, शास्त्र, नाते-रिश्तेदार, भाई, ये सब मृत्यु के अवसर पर काम नहीं आते | एकमात्र गुरुदेव ही उस समय तारणहार हैं | (186)

कुलमेव पवित्रं स्यात् सत्यं स्वगुरुसेवया ।

तृप्ताः स्युस्स्कला देवा ब्रह्माद्या गुरुतर्पणात् ।।

सचमुच, अपने गुरुदेव की सेवा करने से अपना कुल भी पवित्र होता है | गुरुदेव के तर्पण से ब्रह्मा आदि सब देव तृप्त होते हैं | (187)

स्वरूपज्ञानशून्येन कृतमप्यकृतं भवेत् ।

तपो जपादिकं देवि सकलं बालजल्पवत् ।।

हे देवी ! स्वरूप के ज्ञान के बिना किये हुए जप-तपादि सब कुछ नहीं किये हुए के बराबर हैं, बालक के बकवाद के समान (व्यर्थ) हैं | (188)

न जानन्ति परं तत्वं गुरुदीक्षापराङ्मुखाः ।

भ्रान्ताः पशुसमा ह्येते स्वपरिज्ञानवर्जिताः ।।

गुरुदीक्षा से विमुख रहे हुए लोग भ्रांत हैं, अपने वास्तविक ज्ञान से रहित हैं | वे सचमुच पशु के समान हैं | परम तत्व को वे नहीं जानते | (189)

तस्मात्कैवल्यसिद्धयर्थं गुरुमेव भजेत्प्रिये ।

गुरुं विना न जानन्ति मूढास्तत्परमं पदम् ।।

इसलिये हे प्रिये ! कैवल्य की सिद्धि के लिए गुरु का ही भजन करना चाहिए । गुरु के बिना मूढ लोग उस परम पद को नहीं जान सकते । (190)

भिद्यते हृदयग्रन्थिश्छिद्यन्ते सर्वसंशयाः ।

क्षीयन्ते सर्वकर्माणि गुरोः करुणया शिवे ।।

हे शिवे ! गुरुदेव की कृपा से हृदय की ग्रन्थि छिन्न हो जाती है, सब संशय कट जाते हैं और सर्व कर्म नष्ट हो जाते हैं | (191)

कृताया गुरुभक्तेस्तु वेदशास्त्रनुसारतः ।

मुच्यते पातकाद् घोराद् गुरुभक्तो विशेषतः ।।

वेद और शास्त्र के अनुसार विशेष रूप से गुरु की भक्ति करने से गुरुभक्त घोर पाप से भी मुक्त हो जाता है | (192)

दुःसंगं च परित्यज्य पापकर्म परित्यजेत् ।

चित्तचिह्नमिदं यस्य तस्य दीक्षा विधीयते ।।

दुर्जनों का संग त्यागकर पापकर्म छोड़ देने चाहिए | जिसके चित्त में ऐसा चिह्न देखा जाता है उसके लिए गुरुदीक्षा का विधान है | (193)

चित्तत्यागनियुक्तश्च क्रोधगर्वविवर्जितः ।

द्वैतभावपरित्यागी तस्य दीक्षा विधीयते ।।

चित्त का त्याग करने में जो प्रयत्नशील है, क्रोध और गर्व से रहित है, द्वैतभाव का जिसने त्याग किया है उसके लिए गुरुदीक्षा का विधान है | (194)

एतल्लक्षणसंयुक्तं सर्वभूतहिते रतम् ।

निर्मलं जीवितं यस्य तस्य दीक्षा विधीयते ।।

जिसका जीवन इन लक्षणों से युक्त हो, निर्मल हो, जो सब जीवों के कल्याण में रत हो उसके लिए गुरुदीक्षा का विधान है । (195)

अत्यन्तचित्तपक्वस्य श्रद्धाभक्तियुतस्य च ।

प्रवक्तव्यमिदं देवि ममात्मप्रीतये सदा ।।

हे देवी ! जिसका चित्त अत्यन्त परिपक्व हो, श्रद्धा और भक्ति से युक्त हो उसे यह तत्व सदा मेरी प्रसन्नता के लिए कहना चाहिए | (196)

सत्कर्मपरिपाकाच्च चित्तशुद्धस्य धीमतः ।

साधकस्यैव वक्तव्या गुरुगीता प्रयत्नतः ।।

सत्कर्म के परिपाक से शुद्ध हुए चित्तवाले बुद्धिमान् साधक को ही गुरुगीता प्रयत्नपूर्वक कहनी चाहिए | (197)

नास्तिकाय कृतघ्नाय दांभिकाय शठाय च ।

अभक्ताय विभक्ताय न वाच्येयं कदाचन ।।

नास्तिक, कृतघ्न, दंभी, शठ, अभक्त और विरोधी को यह गुरुगीता कदापि नहीं कहनी चाहिए | (198)

स्त्रीलोलुपाय मूर्खाय कामोपहतचेतसे ।

निन्दकाय न वक्तव्या गुरुगीतास्वभावतः ।।

स्त्रीलम्पट, मूर्ख, कामवासना से ग्रस्त चित्तवाले तथा निंदक को गुरुगीता बिलकुल नहीं कहनी चाहिए | (199)

एकाक्षरप्रदातारं यो गुरुर्नैव मन्यते |

श्वनयोनिशतं गत्वा चाण्डालेष्वपि जायते ||

एकाक्षर मंत्र का उपदेश करनेवाले को जो गुरु नहीं मानता वह सौ जन्मों में कुत्ता होकर फिर चाण्डाल की योनि में जन्म लेता है | (200)

गुरुत्यागाद् भवेन्मृत्युर्मन्त्रत्यागाद्यरिद्रता |

गुरुमंत्रपरित्यागी रौरवं नरकं व्रजेत् ||

गुरु का त्याग करने से मृत्यु होती है | मंत्र को छोड़ने से दरिद्रता आती है और गुरु एवं मंत्र दोनों का त्याग करने से रौरव नरक मिलता है | (201)

शिवक्रोधाद् गुरुस्त्राता गुरुक्रोधाच्छिवो न हि |

तस्मात्सर्वप्रयत्नेन गुरोराज्ञां न लंघयेत् ||

शिव के क्रोध से गुरुदेव रक्षण करते हैं लेकिन गुरुदेव के क्रोध से शिवजी रक्षण नहीं करते | अतः सब प्रयत्न से गुरुदेव की आज्ञा का उल्लंघन नहीं करना चाहिए | (202)

सप्तकोटिमहामंत्राश्चित्तविभ्रंशकारकाः |

एक एव महामंत्रो गुरुरित्यक्षरद्वयम् ||

सात करोड़ महामंत्र विद्यमान हैं | वे सब चित्त को भ्रमित करनेवाले हैं | गुरु नाम का दो अक्षरवाला मंत्र एक ही महामंत्र है | (203)

न मृषा स्यादियं देवि मदुक्तिः सत्यरूपिणि |

गुरुगीतासमं स्तोत्रं नास्ति नास्ति महीतले ||

हे देवी ! मेरा यह कथन कभी मिथ्या नहीं होगा | वह सत्यस्वरूप है | इस पृथ्वी पर गुरुगीता के समान अन्य कोई स्तोत्र नहीं है | (204)

गुरुगीतामिमां देवि भवदुःखविनाशिनीम् |

गुरुदीक्षाविहीनस्य पुरतो न पठेत्क्वचित् ||

भवदुःख का नाश करनेवाली इस गुरुगीता का पाठ गुरुदीक्षाविहीन मनुष्य के आगे कभी नहीं करना चाहिए | (205)

रहस्यमत्यन्तरहस्यमेतन्न पापिना लभ्यमिदं महेश्वरि |

अनेकजन्मार्जितपुण्यपाकाद् गुरोस्तु तत्वं लभते मनुष्यः ||

हे महेश्वरी ! यह रहस्य अत्यंत गुप्त रहस्य है | पापियों को वह नहीं मिलता | अनेक जन्मों के किये हुए पुण्य के परिपाक से ही मनुष्य गुरुतत्व को प्राप्त कर सकता है | (206)

सर्वतीर्थवगाहस्य संप्राप्नोति फलं नरः |

गुरोः पादोदकं पीत्वा शेषं शिरसि धारयन् ||

श्री सदगुरु के चरणामृत का पान करने से और उसे मस्तक पर धारण करने से मनुष्य सर्व तीर्थों में स्नान करने का फल प्राप्त करता है | (207)

गुरुपादोदकं पानं गुरोरुच्छिष्टभोजनम् |

गुरुर्मूर्ते सदा ध्यानं गुरोर्नाम्नः सदा जपः ||

गुरुदेव के चरणामृत का पान करना चाहिए, गुरुदेव के भोजन में से बचा हुआ खाना, गुरुदेव की मूर्ति का ध्यान करना और गुरुनाम का जप करना चाहिए | (208)

गुरुरेको जगत्सर्वं ब्रह्मविष्णुशिवात्मकम् |

गुरोः परतरं नास्ति तस्मात्संपूजयेद् गुरुम् ||

ब्रह्मा, विष्णु, शिव सहित समग्र जगत गुरुदेव में समाविष्ट है | गुरुदेव से अधिक और कुछ भी नहीं है, इसलिए गुरुदेव की पूजा करनी चाहिए | (209)

ज्ञानं विना मुक्तिपदं लभ्यते गुरुभक्तितः ।

गुरोः समानतो नान्यत् साधनं गुरुमार्गिणाम् ।।

गुरुदेव के प्रति (अनन्य) भक्ति से ज्ञान के बिना भी मोक्षपद मिलता है । गुरु के मार्ग पर चलनेवालों के लिए गुरुदेव के समान अन्य कोई साधन नहीं है । (210)

गुरोः कृपाप्रसादेन ब्रह्मविष्णुशिवादयः |

सामर्थ्यमभजन् सर्वे सृष्टिस्थित्यंतकर्मणि ||

गुरु के कृपाप्रसाद से ही ब्रह्मा, विष्णु और शिव यथाक्रम जगत की सृष्टि, स्थिति और लय करने का सामर्थ्य प्राप्त करते हैं | (211)

मंत्रराजमिदं देवि गुरुरित्यक्षरद्वयम् |

स्मृतिवेदपुराणानां सारमेव न संशयः ||

हे देवी ! गुरु यह दो अक्षरवाला मंत्र सब मंत्रों में राजा है, श्रेष्ठ है | स्मृतियाँ, वेद और पुराणों का वह सार ही है, इसमें संशय नहीं है | (212)

यस्य प्रसादादहमेव सर्वं मय्येव सर्वं परिकल्पितं च |

इत्थं विजानामि सदात्मरूपं त्स्यांघ्रिपद्मं प्रणतोऽस्मि नित्यम् ||

मैं ही सब हूँ, मुझमें ही सब कल्पित है, ऐसा ज्ञान जिनकी कृपा से हुआ है ऐसे आत्मस्वरूप श्री सद्गुरुदेव के चरणकमलों में मैं नित्य प्रणाम करता हूँ | (213)

अज्ञानतिमिरान्धस्य विषयाक्रान्तचेतसः |

ज्ञानप्रभाप्रदानेन प्रसादं कुरु मे प्रभो ||

हे प्रभो ! अज्ञानरूपी अंधकार में अंध बने हुए और विषयों से आक्रान्त चित्तवाले मुझको ज्ञान का प्रकाश देकर कृपा करो | (214)

।। इति श्री स्कान्दोत्तरखण्डे उमामहेश्वरसंवादे श्री गुरुगीतायां तृतीयोऽध्यायः ।।

प्रातः स्मरणीय परम पूज्य

संत श्री आसारामजी बापू

के सत्संग प्रवचनों में से नवनीत

जीवन-रसायन

प्रस्तावना

जीवन रसायन

गुरु भक्ति एक अमोघ साधना

श्री राम-वशिष्ठ संवाद

आत्मबल का आवाहन

आत्मबल कैसे जगायें ?

प्रस्तावना

इस पुस्तिका का एक-एक वाक्य ऐसा स्फुलिंग है कि वह हजार वर्षों के घनघोर अंधकार को एक पल में ही घास की तरह जला कर भस्म कर सकता है | इसका हर एक वचन आत्मज्ञानी महापुरुषों के अन्तस्तल से प्रकट हुआ है |

सामान्य मनुष्य को ऊपर उठाकर देवत्व की उच्चतम भूमिका में पहुँचाने का सामर्थ्य इसमें निहित है | प्राचीन भारत की आध्यात्मिक परम्परा में पोषित महापुरुषों ने समाधि द्वारा अपने अस्तित्व की गहराईयों में गोते लगाकर जो अगम्य, अगोचर अमृत का खजाना पाया है, उस अमृत के खजाने को इस छोटी सी पुस्तिका में भरने का प्रयास किया गया है | गागर में सागर भरने का यह एक नम्र प्रयास है | उसके एक-एक वचन को सोपान बनाकर आप अपने लक्ष्य तक पहुँच सकते हैं |

इसके सेवन से मुर्दे के दिल में भी प्राण का संचार हो सकता है | हताश, निराश, दुःखी, चिन्तित होकर बैठे हुए मनुष्य के लिये यह पुस्तिका अमृत-संजीवनी के समान है |

इस पुस्तिका को दैनिक 'टॉनिक' समझकर श्रद्धाभाव से, धैर्य से इसका पठन, चिन्तन एवं मनन करने से तो अवश्य लाभ होगा ही, लेकिन किसी आत्मवेत्ता महापुरुष के श्रीचरणों में रहकर इसका श्रवण-चिन्तन एवं मनन करने का सौभाग्य मिल जाये तब तो पूछना(या कहना) ही क्या ?

दैनिक जीवन-व्यवहार की थकान से विश्रांति पाने के लिये, चालू कार्य से दो मिनट उपराम होकर इस पुस्तिका की दो-चार सुवर्ण-कणिकाएँ पढ़कर आत्मस्वरूप में गोता लगाओ, तन-मन-जीवन को आध्यात्मिक तरंगों से झंकृत होने दो, जीवन-सितार के तार पर परमात्मा को खेलने दो | आपके शारीरिक, मानसिक व आध्यात्मिक ताप-संताप शांत होने लगेंगे | जीवन में परम तृप्ति की तरंगें लहरा उठेंगी |

'जीवन रसायन' का यह दिव्य कटोरा आत्मरस के पिपासुओं के हाथ में रखते हुए समिति अत्यन्त आनन्द का अनुभव करती है | विश्वास है की अध्यात्म के जिज्ञासुओं के जीवन को दिव्यामृत से सरोबार करने में यह पुस्तिका उपयोगी सिद्ध होगी |

- श्री योग वेदान्त सेवा समिति

अमदावाद आश्रम

जीवन रसायन

1) जो मनुष्य इसी जन्म में मुक्ति प्राप्त करना चाहता है, उसे एक ही जन्म में हजारों वर्षों का कम कर लेना होगा | उसे इस युग की रफ़्तार से बहुत आगे निकलना होगा | जैसे स्वप्न में मान-अपमान, मेरा-तेरा, अच्छा-बुरा दिखता है और जागने के बाद उसकी सत्यता नहीं रहती वैसे ही इस जाग्रत जगत में भी अनुभव करना होगा | बस...हो गया हजारों वर्षों का काम पूरा | ज्ञान की यह बात हृदय में ठीक से जमा देनेवाले कोई महापुरुष मिल जायें तो हजारों वर्षों के संस्कार, मेरे-तेरे के भ्रम को दो पल में ही निवृत कर दें और कार्य पूरा हो जाये |

2) यदि तू निज स्वरूप का प्रेमी बन जाये तो आजीविका की चिन्ता, रमणियों, श्रवण-मनन और शत्रुओं का दुखद स्मरण यह सब छूट जाये |

उदर-चिन्ता प्रिय चर्चा

विरही को जैसे खले |

निज स्वरूप में निष्ठा हो तो

ये सभी सहज टले ||

3) स्वयं को अन्य लोगों की आँखों से देखना, अपने वास्तविक स्वरूप को न देखकर अपना निरीक्षण अन्य लोगों की दृष्टि से करना, यह जो स्वभाव है वही हमारे सब दुःखों का कारण है | अन्य लोगों की दृष्टि में खूब अच्छा दिखने की इच्छा करना- यही हमारा सामाजिक दोष है |

4) लोग क्यों दुःखी हैं ? क्योंकि अज्ञान के कारण वे अपने सत्यस्वरूप को भूल गये हैं और अन्य लोग जैसा कहते हैं वैसा ही अपने को मान बैठते हैं | यह दुःख तब तक दूर नहीं होगा जब तक मनुष्य आत्म-साक्षात्कार नहीं कर लेगा |

5) शारीरिक, मानसिक, नैतिक व आध्यात्मिक ये सब पीड़ाएँ वेदान्त का अनुभव करने से तुरंत दूर होती हैं और...कोई आत्मनिष्ठ महापुरुष का संग मिल जाये तो वेदान्त का अनुभव करना

कठिन कार्य नहीं है |

6) अपने अन्दर के परमेश्वर को प्रसन्न करने का प्रयास करो | जनता एवं बहुमति को आप किसी प्रकार से संतुष्ट नहीं कर सकते | जब आपके आत्मदेवता प्रसन्न होंगे तो जनता आपसे अवश्य संतुष्ट होगी |

7) सब वस्तुओं में ब्रह्मदर्शन करने में यदि आप सफल न हो सको तो जिनको आप सबसे अधिक प्रेम करते हों ऐसे, कम-से-कम एक व्यक्ति में ब्रह्म परमात्मा का दर्शन करने का प्रयास करो | ऐसे किसी तत्वज्ञानी महापुरुष की शरण पा लो जिनमें ब्रह्मानंद छलकता हो | उनका दृष्टिपात होते ही आपमें भी ब्रह्म का प्रादुर्भाव होने की सम्भावना पनपेगी | जैसे एक्स-रे मशीन की किरण कपड़े, चमड़ी, मांस को चीरकर हड्डियों का फोटो खींच लाती है, वैसे ही ज्ञानी की दृष्टि आपके चित्त में रहने वाली देहाध्यास की परतें चीरकर आपमें ईश्वर को निहारती है | उनकी दृष्टि से चीरी हुई परतों को चीरना अपके लिये भी सरल हो जायेगा | आप भी स्वयं में ईश्वर को देख सकेंगें | अतः अपने चित्त पर ज्ञानी महापुरुष की दृष्टि पड़ने दो | पलकें गिराये बिना, अहोभाव से उनके समक्ष बैठो तो आपके चित्त पर उनकी दृष्टि पड़ेगी |

8) जैसे मछलियाँ जलनिधि में रहती हैं, पक्षी वायुमंडल में ही रहते हैं वैसे आप भी ज्ञानरूप प्रकाशपुंज में ही रहो, प्रकाश में चलो, प्रकाश में विचरो, प्रकाश में ही अपना अस्तित्व रखो | फिर देखो खाने-पीने का मजा, घूमने-फिरने का मजा, जीने-मरने का मजा |

9) ओ तूफान ! उठ ! जोर-शोर से आँधी और पानी की वर्षा कर दे | ओ आनन्द के महासागर ! पृथ्वी और आकाश को तोड़ दे | ओ मानव ! गहरे से गहरा गोता लगा जिससे विचार एवं चिन्ताएँ छिन्न-भिन्न हो जायें | आओ, अपने हृदय से द्वैत की भावना को चुन-चुनकर बाहर निकाल दें, जिससे आनन्द का महासागर प्रत्यक्ष लहराने लगे |

ओ प्रेम की मादकता ! तू जल्दी आ | ओ आत्मध्यान की, आत्मरस की मदिरा ! तू हम पर जल्दी आच्छादित हो जा | हमको तुरन्त डुबो दे | विलम्ब करने का क्या प्रयोजन ? मेरा मन अब एक पल भी दुनियादारी में फँसना नहीं चाहता | अतः इस मन को प्यारे प्रभु में डुबो दे | 'मैं और मेरा ...तू और तेरा' के ढेर को आग लगा दे | आशंका और आशाओं के चीथड़ों को उतार फेंक | टुकड़े-टुकड़े करके पिघला दे | द्वैत की भावना को जड़ से उखाड़ दे | रोटी नहीं मिलेगी ? कोई परवाह नहीं | आश्रय और विश्राम नहीं मिलेगा ? कोई फिकर नहीं | लेकिन मुझे चाहिये प्रेम की, उस दिव्य प्रेम की प्यास और तड़प |

मुझे वेद पुराण कुरान से क्या ?

मुझे सत्य का पाठ पढ़ा दे कोई ||

मुझे मंदिर मस्जिद जाना नहीं |

मुझे प्रेम का रंग चढ़ा दे कोई ||

जहाँ ऊँच या नीच का भेद नहीं |

जहाँ जात या पाँत की बात नहीं ||

न हो मंदिर मस्जिद चर्च जहाँ |

न हो पूजा नमाज़ में फर्क कहीं ||

जहाँ सत्य ही सार हो जीवन का |

रिधवार सिंगार हो त्याग जहाँ ||

जहाँ प्रेम ही प्रेम की सृष्टि मिले |

चलो नाव को ले चलें खे के वहाँ ||

10) स्वप्नावस्था में दृष्टा स्वयं अकेला ही होता है | अपने भीतर की कल्पना के आधार पर सिंह, सियार, भेड़, बकरी, नदी, नगर, बाग-बगीचे की एक पूरी सृष्टि का सर्जन कर लेता है | उस सृष्टि में स्वयं एक जीव बन जाता है और अपने को सबसे अलग मानकर भयभीत होता है | खुद शेर है और खुद ही बकरी है | खुद ही खुद को डराता है | चालू स्वप्न में सत्य का भान न होने से दुःखी होता है | स्वप्न से जाग जाये तो पता चले कि स्वयं के सिवाय और कोई था ही नहीं | सारा प्रपंच कल्पना से रचा गया था | इसी प्रकार यह जगत जाग्रत के द्वारा कल्पित है, वास्तविक नहीं है | यदि जाग्रत का दृष्टा अपने आत्मस्वरूप में जाग जाये तो उसके तमाम दुःख-दारिद्रय पल भर में अदृश्य हो जायें |

11) स्वर्ग का साम्राज्य आपके भीतर ही है | पुस्तकों में, मंदिरों में, तीर्थों में, पहाड़ों में, जंगलों में आनंद की खोज करना व्यर्थ है | खोज करना ही हो तो उस अन्तस्थ आत्मानंद का खजाना खोल देनेवाले किसी तत्ववेत्ता महापुरुष की खोज करो |

12) जब तक आप अपने अंतःकरण के अन्धकार को दूर करने के लिए कटिबद्ध नहीं होंगे तब तक तीन सौ तैंतीस करोड़ कृष्ण अवतार ले लें फिर भी आपको परम लाभ नहीं होगा |

13) शरीर अन्दर के आत्मा का वस्त्र है | वस्त्र को उसके पहनने वाले से अधिक प्यार मत करो |

14) जिस क्षण आप सांसारिक पदार्थों में सुख की खोज करना छोड़ देंगे और स्वाधीन हो जायेंगे, अपने अन्दर की वास्तविकता का अनुभव करेंगे, उसी क्षण आपको ईश्वर के पास जाना नहीं पड़ेगा | ईश्वर स्वयं आपके पास आयेंगे | यही दैवी विधान है |

15) क्रोधी यदि आपको शाप दे और आप समत्व में स्थिर रहो, कुछ न बोलो तो उसका शाप आशीर्वाद में बदल जायेगा |

16) जब हम ईश्वर से विमुख होते हैं तब हमें कोई मार्ग नहीं दिखता और घोर दुःख सहना पड़ता है | जब हम ईश्वर में तन्मय होते हैं तब योग्य उपाय, योग्य प्रवृति, योग्य प्रवाह अपने-आप हमारे हृदय में उठने लगता है |

17) जब तक मनुष्य चिन्ताओं से उद्विग्न रहता है, इच्छा एवं वासना का भूत उसे बैठने नहीं देता तब तक बुद्धि का चमत्कार प्रकट नहीं होता | जंजीरों से जकड़ी हुई बुद्धि हिलडुल नहीं सकती | चिन्ताएँ, इच्छाएँ और वासनाएँ शांत होने से स्वतंत्र वायुमंडल का अविर्भाव होता है | उसमें बुद्धि को विकसित होने का अवकाश मिलता है | पंचभौतिक बन्धन कट जाते हैं और शुद्ध आत्मा अपने पूर्ण प्रकाश में चमकने लगता है |

18) ओ सज़ा के भय से भयभीत होने वाले अपराधी ! न्यायधीश जब तेरी सज़ा का हुक्म लिखने के लिये कलम लेकर तत्पर हो, उस समय यदि एक पल भर भी तू परमानन्द में डूब जाये तो न्यायधीश अपना निर्णय भूले बिना नहीं रह सकता | फ़िर उसकी कलम से वही लिखा जायेगा जो परमात्मा के साथ, तेरी नूतन स्थिति के अनुकूल होगा |

19) पवित्रता और सच्चाई, विश्वास और भलाई से भरा हुआ मनुष्य उन्नति का झण्डा हाथ में लेकर जब आगे बढ़ता है तब किसकी मजाल कि बीच में खड़ा रहे ? यदि आपके दिल में पवित्रता, सच्चाई और विश्वास है तो आपकी दृष्टि लोहे के पर्दे को भी चीर सकेगी | आपके विचारों की ठोकर से पहाड़-के-पहाड़ भी चकनाचूर हो सकेंगे | ओ जगत के बादशाहों ! आगे से हट जाओ | यह दिल का बादशाह पधार रहा है |

20) यदि आप संसार के प्रलोभनों एवं धमकियों से न हिलें तो संसार को अवश्य हिला देंगे | इसमें जो सन्देह करता है वह मंदमति है, मूर्ख है |

21) वेदान्त का यह सिद्धांत है कि हम बद्ध नहीं हैं बल्कि नित्य मुक्त हैं | इतना ही नहीं, 'बद्ध हैं' यह सोचना भी अनिष्टकारी है, भ्रम है | ज्यों ही आपने सोचा कि 'मैं बद्ध हूँ..., दुर्बल हूँ..., असहाय हूँ...' त्यों ही अपना दुर्भाग्य शुरू हुआ समझो | आपने अपने पैरों में एक जंजीर और बाँध दी | अतः सदा मुक्त होने का विचार करो और मुक्ति का अनुभव करो |

22) रास्ते चलते जब किसी प्रतिष्ठित व्यक्ति को देखो, चाहे वह इंग्लैंड़ का सर्वाधीश हो, चाहे अमेरिका का 'प्रेसिड़ेंट' हो, रूस का सर्वेसर्वा हो, चाहे चीन का 'ड़िक्टेटर' हो- तब अपने मन में किसी प्रकार की ईर्ष्या या भय के विचार मत आने दो | उनकी शाही नज़र को अपनी ही नज़र समझकर मज़ा लूटो कि 'मैं ही वह हूँ |' जब आप ऐसा अनुभव करने की चेष्टा करेंगे तब आपका अनुभव ही सिद्ध कर देगा कि सब एक ही है |

23) यदि हमारा मन ईर्ष्या-द्वेष से रहित बिल्कुल शुद्ध हो तो जगत की कोई वस्तु हमें नुक्सान नहीं पहुँचा सकती | आनंद और शांति से भरपूर ऐसे महात्माओं के पास क्रोध की मूर्ति जैसा मनुष्य भी पानी के समान तरल हो जाता है | ऐसे महात्माओं को देख कर जंगल के सिंह और भेड़ भी प्रेमविह्वल हो जाते हैं | सांप-बिच्छू भी अपना दुष्ट स्वभाव भूल जाते हैं |

24) अविश्वास और धोखे से भरा संसार, वास्तव में सदाचारी और सत्यनिष्ठ साधक का कुछ बिगाड़ नहीं सकता |

25) 'सम्पूर्ण विश्व मेरा शरीर है' ऐसा जो कह सकता है वही आवागमन के चक्कर से मुक्त है | वह तो अनन्त है | फ़िर कहाँ से आयेगा और कहाँ जायेगा? सारा ब्रह्माण्ड़ उसी में है |

26) किसी भी प्रसंग को मन में लाकर हर्ष-शोक के वशीभूत नहीं होना | 'मैं अजर हूँ..., अमर हूँ..., मेरा जन्म नहीं..., मेरी मृत्यु नहीं..., मैं निर्लिप्त आत्मा हूँ...,' यह भाव दृढ़ता से हृदय में धारण करके जीवन जीयो | इसी भाव का निरन्तर सेवन करो | इसीमें सदा तल्लीन रहो |

27) बाह्य संदर्भों के बारे में सोचकर अपनी मानसिक शांति को भंग कभी न होने दो |

28) जब इन्द्रियाँ विषयों की ओर जाने के लिये जबरदस्ती करने लगें तब उन्हें लाल आँख दिखाकर चुप कर दो | जो आत्मानंद के आस्वादन की इच्छा से आत्मचिंतन में लगा रहे, वही सच्चा धीर है |

29) किसी भी चीज़ को ईश्वर से अधिक मूल्यवान मत समझो |

30) यदि हम देहाभिमान को त्यागकर साक्षात ईश्वर को अपने शरीर में कार्य करने दें तो भगवान बुद्ध या जीसस क्राईस्ट हो जाना इतना सरल है जितना निर्धन पाल (Poor Paul) होना |

31) मन को वश करने का उपाय : मन को अपना नौकर समझकर स्वयं को उसका प्रभु मानो | हम अपने नौकर मन की उपेक्षा करेंगे तो कुछ ही दिनों में वह हमारे वश में हो जायेगा | मन के चंचल भावों को ना देखकर अपने शान्त स्वरूप की ओर ध्यान देंगे तो कुछ ही दिनों में मन नष्ट होने लगेगा | इस प्रकार साधक अपने आनंदस्वरूप में मग्न हो सकता है |

32) समग्र संसार के तत्वज्ञान, विज्ञान, गणित, काव्य और कला आपकी आत्मा में से निकलते हैं और निकलते रहेंगे |

33) ओ खुदा को खोजनेवाले ! तुमने अपनी खोजबीन में खुदा को लुप्त कर दिया है | प्रयत्नरूपी तरंगों में अनंत सामर्थ्यरूपी समुद्र को छुपा दिया है |

34) परमात्मा की शान्ति को भंग करने का सामर्थ्य भला किसमें है ? यदि आप सचमुच परमात्म-शान्ति में स्थित हो जाओ तो समग्र संसार उलटा होकर टंग जाये फ़िर भी आपकी शान्ति भंग नहीं हो सकती |

35) महात्मा वही है जो चित्त को ड़ांवांड़ोल करनेवाले प्रसंग आयें फ़िर भी चित्त को वश में रखे, क्रोध और शोक को प्रविष्ट न होने दे |

36) वृति यदि आत्मस्वरूप में लीन होती है तो उसे सत्संग, स्वाध्याय या अन्य किसी भी काम के लिये बाहर नहीं लाना चहिये |

37) सुदृढ़ अचल संकल्प शक्ति के आगे मुसीबतें इस प्रकार भागती हैं जैसे आँधी-तूफ़ान से बादल बिखर जाते हैं |

38) सुषुप्ति (गहरी नींद) आपको बलात अनुभव कराती है कि जाग्रत का जगत चाहे कितना ही प्यारा और सुंदर लगता हो, पर उसे भूले बिना शान्ति नहीं मिलती | सुषुप्ति में बलात विस्मरण हो, उसकी सत्यता भूल जाये तो छः घंटे निद्रा की शान्ति मिले | जाग्रत में उसकी सत्यता का अभाव लगने लगे तो परम शान्ति को प्राप्त प्राज्ञ पुरुष बन जाये | निद्रा रोज़ाना सीख देती है कि यह ठोस जगत जो आपके चित्त को भ्रमित कर रहा है, वह समय की धारा में सरकता जा

रहा है | घबराओ नहीं, चिन्तित मत हो ! तुम बातों में चित्त को भ्रमित मत करो | सब कुछ स्वप्न में सरकता जा रहा है | जगत की सत्यता के भ्रम को भगा दो |

ओ शक्तिमान आत्मा ! अपने अंतरतम को निहार ! ॐ का गुंजन कर ! दुर्बल विचारों एवं चिंताओं को कुचल ड़ाल ! दुर्बल एवं तुच्छ विचारों तथा जगत को सत्य मानने के कारण तूने बहुत-बहुत सहन किया है | अब उसका अंत कर दे |

39) ज्ञान के कठिनमार्ग पर चलते वक्त आपके सामने जब भारी कष्ट एवं दुख आयें तब आप उसे सुख समझो क्योंकि इस मार्ग में कष्ट एवं दुख ही नित्यानंद प्राप्त करने में निमित्त बनते है | अतः उन कष्टों, दुखों और आघातों से किसी भी प्रकार साहसहीन मत बनो, निराश मत बनो | सदैव आगे बढ़ते रहो | जब तक अपने सत्यस्वरूप को यथार्थ रूप से न जान लो, तब तक रुको नहीं |

40) स्वपनावस्था में आप शेर को देखते हैं और ड़रते हैं कि वह आपको खा जायेगा | परंतु आप जिसको देखते हैं वह शेर नहीं, आप स्वयं हैं | शेर आपकी कल्पना के अतिरिक्त और कुछ नहीं | इस प्रकार जाग्रतावस्था में भी आपका घोर-से-घोर शत्रु भी स्वयं आप ही हैं, दूसरा कोई नहीं | प्रथकत्व, अलगाव के विचार को अपने हृदय से दूर हटा दो | आपसे भिन्न कोई मित्र या शत्रु होना केवल स्वप्न-भ्रम है |

41) अशुभ का विरोध मत करो | सदा शांत रहो | जो कुछ सामने आये उसका स्वागत करो, चाहे आपकी इच्छा की धारा से विपरीत भी हो | तब आप देखेंगे कि प्रत्यक्ष बुराई, भलाई में बदल जायेगी |

42) रात्रि में निद्राधीन होने से पहले बिस्तर पर सीधे, सुखपूर्वक बैठ जाओ | आँखें बंद करो | नाक से श्वास लेकर फ़ेफ़ड़ों को भरपूर भर दो | फ़िर उच्च स्वर से 'ॐ...' का लंबा उच्चारण करो | फ़िर से गहरा स्वास लेकर 'ॐ...' का लंबा उच्चारण करो | इस प्रकार दस मिनट तक करो | कुछ ही दिनों के नियमित प्रयोग के बाद इसके चमत्कार का अनुभव होगा | रात्रि की नींद साधना में परिणत हो जायेगी | दिल-दिमाग में शांति एवं आनंद की वर्षा होगी | आपकी लौकिक निद्रा योगनिद्रा में बदल जयेगी |

43) हट जाओ, ओ संकल्प और इच्छाओं ! हट जाओ ! तुम संसार की क्षणभंगुर प्रशंसा एवं धन-सम्पत्ति के साथ सम्बंध रखती हो | शरीर चाहे कैसी भी दशा में रहे, उसके साथ मेरा कोई सरोकार नहीं | सब शरीर मेरे ही हैं |

44) किसी भी तरह समय बिताने के लिये मज़दूर की भांति काम मत करो | आनंद के लिये, उपयोगी कसरत समझकर, सुख, क्रीड़ा या मनोरंजक खेल समझकर एक कुलीन राजकुमार की भांति काम करो | दबे हुए, कुचले हुए दिल से कभी कोई काम हाथ में मत लो |

45) समग्र संसार को जो अपना शरीर समझते हैं, प्रत्येक व्यक्ति को जो अपना आत्मस्वरूप समझते हैं, ऐसे ज्ञानी किससे अप्रसन्न होंगे ? उनके लिये विक्षेप कहाँ रहा ?

46) संसार की तमाम वस्तुऐं सुखद हों या भयानक, वास्तव में तो तुम्हारी प्रफुलता और आनंद के लिये ही प्रकृति ने बनाई हैं | उनसे ड़रने से क्या लाभ ? तुम्हारी नादानी ही तुम्हें चक्कर में ड़ालती है | अन्यथा, तुम्हें नीचा दिखाने वाला कोई नहीं | पक्का निश्चय रखो कि यह जगत तुम्हारे किसी शत्रु ने नहीं बनाया | तुम्हारे ही आत्मदेव का यह सब विलास है |

47) महात्मा वे हैं जिनकी विशाल सहानुभूति एवं जिनका मातृवत हृदय सब पापियों को, दीन-दुखियों को प्रेम से अपनी गोद में स्थान देता है |

48) यह नियम है कि भयभीत प्राणी ही दूसरों को भयभीत करता है | भयरहित हुए बिना अभिन्नता आ नहीं सकती, अभिन्नता के बिना वासनाओं का अंत सम्भव नहीं है और निर्वासनिकता के बिना निर्वैरता, समता, मुदिता आदि दिव्य गुण प्रकट नहीं होते | जो बल दूसरों की दुर्बलता को दूर ना कर सके, वह वास्तव में बल नहीं |

49) ध्यान में बैठने से पहले अपना समग्र मानसिक चिंतन तथा बाहर की तमाम सम्पत्ति ईश्वर के या सदगुरु के चरणों में अर्पण करके शांत हो जाओ | इससे आपको कोई हानि नहीं होगी | ईश्वर आपकी सम्पत्ति, देह, प्राण और मन की रक्षा करेंगे | ईश्वर अर्पण बुद्धि से कभी हानि नहीं होती | इतना ही नहीं, देह, प्राण में नवजीवन का सिंचन होता है | इससे आप शांति व आनंद का स्त्रोत बनकर जीवन को सार्थक कर सकेंगे | आपकी और पूरे विश्व की वास्तविक उन्नति होगी |

50) प्रकृति प्रसन्नचित्त एवं उद्योगी कार्यकर्ता को हर प्रकार से सहायता करती है |

51) प्रसन्नमुख रहना यह मोतियों का खज़ाना देने से भी उत्तम है |

52) चाहे करोड़ों सूर्य का प्रलय हो जाये, चाहे असंख्य चन्द्रमा पिघलकर नष्ट हो जायें परंतु ज्ञानी महापुरुष अटल एवं अचल रहते हैं |

53) भौतिक पदार्थों को सत्य समझना, उनमें आसक्ति रखना, दुख-दर्द व चिंताओं को आमंत्रण

देने के समान है | अतः बाह्य नाम-रूप पर अपनी शक्ति व समय को नष्ट करना यह बड़ी गलती है |

54) जब आपने व्यक्तित्व विषयक विचारों का सर्वथा त्याग कर दिया जाता है तब उसके समान अन्य कोई सुख नहीं, उसके समान श्रेष्ठ अन्य कोई अवस्था नहीं |

55) जो लोग आपको सबसे अधिक हानि पहुँचाने का प्रयास करते हैं, उन पर कृपापूर्ण होकर प्रेममय चिंतन करें | वे आपके ही आत्मस्वरूप हैं |

56) संसार में केवल एक ही रोग है | **ब्रह्म सत्यं जगन्मिथ्या** - इस वेदांतिक नियम का भंग ही सर्व व्याधियों का मूल है | वह कभी एक दुख का रूप लेता है तो कभी दूसरे दुख का | इन सर्व व्याधियों की एक ही दवा है : अपने वास्तविक स्वरूप ब्रह्मत्व में जाग जाना |

57) बुद्ध ध्यानस्थ बैठे थे | पहाड़ पर से एक शिलाखंड़ लुढ़कता हुआ आ रहा था | बुद्ध पर गिरे इससे पहले ही वह एक दूसरे शिलाखंड़ के साथ टकराया | भयंकर आवाज़ के साथ उसके दो भाग हो गये | उसने अपना मार्ग बदल लिया | ध्यानस्थ बुद्ध की दोनों तरफ़ से दोनों भाग गुज़र गये | बुद्ध बच गये | केवल एक छोटा सा कंकड़ उनके पैर में लगा | पैर से थोड़ा खून बहा | बुद्ध स्वस्थता से उठ खड़े हुए और शिष्यों से कहा:

“भीक्षुओं ! सम्यक समाधि का यह ज्वलंत प्रमाण है | मैं यदि ध्यान-समाधि में ना होता तो शिलाखंड़ ने मुझे कुचल दिया होता | लेकिन ऐसा ना होकर उसके दो भाग हो गये | उसमें से सिर्फ़ एक छोटा-सा कंकड़ ऊछलकर मेरे पैर में लगा | यह जो छोटा-सा ज़ख्म हुआ है वह ध्यान की पूर्णता में रही हुई कुछ न्यूनता का परिणाम है | यदि ध्यान पूर्ण होता तो इतना भी ना लगता |”

58) कहाँ है वह तलवार जो मुझे मार सके ? कहाँ है वह शस्त्र जो मुझे घायल कर सके ? कहाँ है वह विपत्ति जो मेरी प्रसन्नता को बिगाड़ सके ? कहाँ है वह दुख जो मेरे सुख में विघ्न ड़ाल सके ? मेरे सब भय भाग गये | सब संशय कट गये | मेरा विजय-प्राप्ति का दिन आ पहुँचा है | कोई संसारिक तरंग मेरे निश्छल चित्त को आंदोलित नहीं कर सकती | इन तरंगों से मुझे ना कोई लाभ है ना हानि है | मुझे शत्रु से द्वेष नहीं, मित्र से राग नहीं | मुझे मौत का भय नहीं, नाश का ड़र नहीं, जीने की वासना नहीं, सुख की इच्छा नहीं और दुख से द्वेष नहीं क्योंकि यह सब मन में रहता है और मन मिथ्या कल्पना है |

59) सम्पूर्ण स्वास्थय की अजीब युक्ति: रोज सुबह तुलसी के पाँच पत्ते चबाकर एक ग्लास बासी पानी पी लो | फ़िर जरा घूम लो, दौड़ लो या कमरे में ही पंजों के बल थोड़ा कूद लो | नहा-धोकर स्वस्थ, शान्त होकर एकांत में बैठ जाओ | दस बारह गहरे-गहरे श्वास लो | आगे-पीछे के कर्तव्यों से निश्चिंत हो जाओ | आरोग्यता, आनंद, सुख, शान्ति प्रदान करनेवाली विचारधारा को चित्त में बहने दो | बिमारी के विचार को हटाकर इस प्रकार की भावना पर मन को दृढ़ता से एकाग्र करो कि:

मेरे अंदर आरोग्यता व आनंद का अनंत स्त्रोत प्रवाहित हो रहा है... मेरे अंतराल में दिव्यामृत का महासागर लहरा रहा है | मैं अनुभव कर रहा हूँ कि समग्र सुख, आरोग्यता, शक्ति मेरे भीतर है | मेरे मन में अनन्त शक्ति और सामर्थ्य है | मैं स्वस्थ हूँ | पूर्ण प्रसन्न हूँ | मेरे अंदर-बाहर सर्वत्र परमात्मा का प्रकाश फ़ैला हुआ है | मैं विक्षेप रहित हूँ | सब द्वन्दों से मुक्त हूँ | स्वर्गीय सुख मेरे अंदर है | मेरा हृदय परमात्मा का गुप्त प्रदेश है | फ़िर रोग-शोक वहाँ कैसे रहे सकते हैं ? मैं दैवी ओज के मंड़ल में प्रविष्ट हो चुका हूँ | वह मेरे स्वास्थ्य का प्रदेश है | मैं तेज का पुँज हूँ | आरोग्यता का अवतार हूँ |

याद रखो : आपके अंतःकरण में स्वास्थय, सुख, आनंद और शान्ति ईश्वरीय वरदान के रूप में विद्यमान है | अपने अंतःकरण की आवाज़ सुनकर निशंक जीवन व्यतीत करो | मन में से कल्पित रोग के विचारों को निकाल दो | प्रत्येक विचार, भाव, शब्द और कार्य को ईश्वरीय शक्ति से परिपूर्ण रखो | ॐकार का सतत गुंजन करो |

सुबह-शाम उपरोक्त विचारों का चिंतन-मनन करने से विशेष लाभ होगा | ॐ आनंद... ॐ शांति... पूर्ण स्वस्थ... पूर्ण प्रसन्न...

60) भय केवल अज्ञान की छाया है, दोषों की काया है, मनुष्य को धर्ममार्ग से गिराने वाली आसुरी माया है |

61) याद रखो: चाहे समग्र संसार के तमाम पत्रकार, निन्दक एकत्रित होकर आपके विरुध आलोचन करें फ़िर भी आपका कुछ बिगाड़ नहीं सकते | हे अमर आत्मा ! स्वस्थ रहो |

62) लोग प्रायः जिनसे घृणा करते हैं ऐसे निर्धन, रोगी इत्यादि को साक्षात् ईश्वर समझकर उनकी सेवा करना यह अनन्य भक्ति एवं आत्मज्ञान का वास्तविक स्वरूप है |

63) रोज प्रातः काल उठते ही ॐकार का गान करो | ऐसी भावना से चित्त को सराबोर कर दो कि : 'मैं शरीर नहीं हूँ | सब प्राणी, कीट, पतंग, गन्धर्व में मेरा ही आत्मा विलास कर रहा है | अरे,

उनके रूप में मैं ही विलास कर रहा हूँ |' भैया ! हर रोज ऐसा अभ्यास करने से यह सिद्धांत हृदय में स्थिर हो जायेगा |

64) प्रेमी आगे-पीछे का चिन्तन नहीं करता | वह न तो किसी आशंका से भयभीत होता है और न वर्तमान परिस्थिति में प्रेमास्पद में प्रीति के सिवाय अन्य कहीं आराम पाता है |

65) जैसे बालक प्रतिबिम्ब के आश्रयभूत दर्पण की ओर ध्यान न देकर प्रतिबिम्ब के साथ खेलता है, जैसे पामर लोग यह समग्र स्थूल प्रपंच के आश्रयभूत आकाश की ओर ध्यान न देकर केवल स्थूल प्रपंच की ओर ध्यान देते हैं, वैसे ही नाम-रूप के भक्त, स्थूल दृष्टि के लोग अपने दुर्भाग्य के कारण समग्र संसार के आश्रय सच्चिदानन्द परमात्मा का ध्यान न करके संसार के पीछे पागल होकर भटकते रहते हैं |

66) इस सम्पूर्ण जगत को पानी के बुलबुले की तरह क्षणभंगुर जानकर तुम आत्मा में स्थिर हो जाओ | तुम अद्वैत दृष्टिवाले को शोक और मोह कैसे ?

67) एक आदमी आपको दुर्जन कहकर परिच्छिन्न करता है तो दूसरा आपको सज्जन कहकर भी परिच्छिन्न ही करता है | कोई आपकी स्तुति करके फुला देता है तो कोई निन्दा करके सिकुड़ा देता है | ये दोनों आपको परिच्छिन्न बनाते हैं | भाग्यवान् तो वह पुरूष है जो तमाम बन्धनों के विरूद्ध खड़ा होकर अपने देवत्व की, अपने ईश्वरत्व की घोषणा करता है, अपने आत्मस्वरूप का अनुभव करता है | जो पुरुष ईश्वर के साथ अपनी अभेदता पहचान सकता है और अपने इर्दगिर्द के लोगों के समक्ष, समग्र संसार के समक्ष निडर होकर ईश्वरत्व का निरूपण कर सकता है, उस पुरूष को ईश्वर मानने के लिये सारा संसार बाध्य हो जाता है | पूरी सृष्टि उसे अवश्य परमात्मा मानती है |

68) यह स्थूल भौतिक पदार्थ इन्द्रियों की भ्रांति के सिवाय और कुछ नहीं हैं | जो नाम व रूप पर भरोसा रखता है, उसे सफलता नहीं मिलती | सूक्ष्म सिद्धांत अर्थात् सत्य आत्म-तत्व पर निर्भर रहना ही सफलता की कुंजी है | उसे ग्रहण करो, उसका मनन करो और व्यवहार करो | फिर नाम-रूप आपको खोजते फिरेंगे |

69) सुख का रहस्य यह है : आप ज्यों-ज्यों पदार्थों को खोजते-फिरते हो, त्यों-त्यों उनको खोते जाते हो | आप जितने कामना से परे होते हो, उतने आवश्यकताओं से भी परे हो जाते हो और पदार्थ भी आपका पीछा करते हुए आते हैं |

70) आनन्द से ही सबकी उत्पत्ति, आनन्द में ही सबकी स्थिति एवं आनन्द में ही सबकी लीनता

देखने से आनन्द की पूर्णता का अनुभव होता है |

71) हम बोलना चहते हैं तभी शब्दोच्चारण होता है, बोलना न चाहें तो नहीं होता | हम देखना चाहें तभी बाहर का दृश्य दिखता है, नेत्र बंद कर लें तो नहीं दिखता | हम जानना चाहें तभी पदार्थ का ज्ञान होता है, जानना नहीं चाहें तो ज्ञान नहीं होता | अतः जो कोई पदार्थ देखने, सुनने या जानने में आता है उसको बाधित करके बाधित करनेवाली ज्ञानरूपी बुद्धि की वृत्ति को भी बाधित कर दो | उसके बाद जो शेष रहे वह ज्ञाता है | ज्ञातृत्व धर्मरहित शुद्धस्वरूप ज्ञाता ही नित्य सच्चिदानन्द ब्रह्म है | निरंतर ऐसा विवेक करते हुए ज्ञान व ज्ञेयरहित केवल चिन्मय, नित्य, विज्ञानानन्दघनरूप में स्थिर रहो |

72) यदि आप सर्वांगपूर्ण जीवन का आनन्द लेना चाहते हो तो कल की चिन्ता छोड़ो | अपने चारों ओर जीवन के बीज बोओ | भविष्य में सुनहरे स्वपन साकार होते देखने की आदत बनाओ | सदा के लिये मन में यह बात पक्की बैठा दो कि आपका आनेवाला कल अत्यन्त प्रकाशमय, आनन्दमय एवं मधुर होगा | कल आप अपने को आज से भी अधिक भाग्यवान् पायेंगे | आपका मन सर्जनात्मक शक्ति से भर जायेगा | जीवन ऐश्वर्यपूर्ण हो जायेगा | आपमें इतनी शक्ति है कि विघ्न आपसे भयभीत होकर भाग खड़े होंगे | ऐसी विचारधारा से निश्चित रूप से कल्याण होगा | आपके संशय मिट जायेंगे |

73) ओ मानव ! तू ही अपनी चेतना से सब वस्तुओं को आकर्षक बना देता है | अपनी प्यार भरी दृष्टि उन पर डालता है, तब तेरी ही चमक उन पर चढ़ जाती है और...फिर तू ही उनके प्यार में फ़ँस जाता है |

74) मैंने विचित्र एवं अटपटे मार्गों द्वारा ऐसे तत्वों की खोज की जो मुझे परमात्मा तक पहुँचा सके | लेकिन मैं जिस-जिस नये मार्ग पर चला उन सब मार्गों से पता चला कि मैं परमात्मा से दूर चला गया | फिर मैंने बुद्धिमत्ता एवं विद्या से परमात्मा की खोज की फिर भी परमात्मा से अलग रहा | ग्रन्थालयों एवं विद्यालयों ने मेरे विचारों में उल्टी गड़बड़ कर दी | मैं थककर बैठ गया | निस्तब्ध हो गया | संयोगवश अपने भीतर ही झांका, ध्यान किया तो उस अन्तर्दृष्टि से मुझे सर्वस्व मिला जिसकी खोज मैं बाहर कर रहा था | मेरा आत्मस्वरूप सर्वत्र व्याप्त हो रहा है |

75) जैसे सामान्य मनुष्य को पत्थर, गाय, भैंस स्वाभाविक रीति से दृष्टिगोचर होते हैं, वैसे ही ज्ञानी को निजानन्द का स्वाभाविक अनुभव होता है |

76) वेदान्त का यह अनुभव है कि नीच, नराधम, पिशाच, शत्रु कोई है ही नहीं | पवित्र स्वरूप

ही सर्व रूपों में हर समय शोभायमान है | अपने-आपका कोई अनिष्ट नहीं करता | मेरे सिवा और कुछ है ही नहीं तो मेरा अनिष्ट करने वाला कौन है ? मुझे अपने-आपसे भय कैसा ?

77) यह चराचर सृष्टिरूपी द्वैत तब तक भासता है जब तक उसे देखनेवाला मन बैठा है | मन शांत होते ही द्वैत की गंध तक नहीं रहती |

78) जिस प्रकार एक धागे में उत्तम, मध्यम और कनिष्ठ फूल पिरोये हुए हैं, उसी प्रकार मेरे आत्मस्वरूप में उत्तम, मध्यम और कनिष्ठ शरीर पिरोये हुए हैं | जैसे फूलों की गुणवत्ता का प्रभाव धागे पर नहीं पड़ता, वैसे ही शरीरों की गुणवत्ता का प्रभाव मेरी सर्वव्यापकता नहीं पड़ता | जैसे सब फूलों के विनाश से धागे को कोई हानि नहीं, वैसे शरीरों के विनाश से मुझ सर्वगत आत्मा को कोई हानि नहीं होती |

79) मैं निर्मल, निश्चल, अनन्त, शुद्ध, अजर, अमर हूँ | मैं असत्यस्वरूप देह नहीं | सिद्ध पुरुष इसीको 'ज्ञान' कहते हैं |

80) मैं भी नहीं और मुझसे अलग अन्य भी कुछ नहीं | साक्षात् आनन्द से परिपूर्ण, केवल, निरन्तर और सर्वत्र एक ब्रह्म ही है | उद्वेग छोड़कर केवल यही उपासना सतत करते रहो |

81) जब आप जान लेंगे कि दूसरों का हित अपना ही हित करने के बराबर है और दूसरों का अहित करना अपना ही अहित करने के बराबर है, तब आपको धर्म के स्वरूप का साक्षत्कार हो जायेगा |

82) आप आत्म-प्रतिष्ठा, दलबन्दी और ईर्ष्या को सदा के लिए छोड़ दो | पृथ्वी माता की तरह सहनशील हो जाओ | संसार आपके कदमों में न्योछावर होने का इंतज़ार कर रहा है |

83) मैं निर्गुण, निष्क्रिय, नित्य मुक्त और अच्युत हूँ | मैं असत्यस्वरूप देह नहीं हूँ | सिद्ध पुरुष इसीको 'ज्ञान' कहते हैं |

84) जो दूसरों का सहारा खोजता है, वह सत्यस्वरूप ईश्वर की सेवा नहीं कर सकता |

85) सत्यस्वरूप महापुरुष का प्रेम सुख-दुःख में समान रहता है, सब अवस्थाओं में हमारे अनुकूल रहता है | हृदय का एकमात्र विश्रामस्थल वह प्रेम है | वृद्धावस्था उस आत्मरस को सुखा नहीं सकती | समय बदल जाने से वह बदलता नहीं | कोई विरला भाग्यवान ही ऐसे दिव्य प्रेम का भाजन बन सकता है |

86) शोक और मोह का कारण है प्राणियों में विभिन्न भावों का अध्यारोप करना | मनुष्य जब एक को सुख देनेवाला, प्यारा, सुहृद समझता है और दूसरे को दुःख देनेवाला शत्रु समझकर उससे द्वेष करता है तब उसके हृदय में शोक और मोह का उदय होना अनिवार्य है | वह जब सर्व प्राणियों में एक अखण्ड सत्ता का अनुभव करने लगेगा, प्राणिमात्र को प्रभु का पुत्र समझकर उसे आत्मभाव से प्यार करेगा तब उस साधक के हृदय में शोक और मोह का नामोनिशान नहीं रह जायेगा | वह सदा प्रसन्न रहेगा | संसार में उसके लिये न ही कोई शत्रु रहेगा और न ही कोई मित्र | उसको कोई क्लेश नहीं पहुँचायेगा | उसके सामने विषधर नाग भी अपना स्वभाव भूल जायेगा |

87) जिसको अपने प्राणों की परवाह नहीं, मृत्यु का नाम सुनकर विचलित न होकर उसका स्वागत करने के लिए जो सदा तत्पर है, उसके लिए संसार में कोई कार्य असाध्य नहीं | उसे किसी बाह्य शस्त्रों की जरूरत नहीं, साहस ही उसका शस्त्र है | उस शस्त्र से वह अन्याय का पक्ष लेनेवालों को पराजित कर देता है फिर भी उनके लिए बुरे विचारों का सेवन नहीं करता |

88) चिन्ता ही आनन्द व उल्लास का विध्वंस करनेवाली राक्षसी है |

89) कभी-कभी मध्यरात्रि को जाग जाओ | उस समय इन्द्रियाँ अपने विषयों के प्रति चंचल नहीं रहतीं | बहिर्मुख स्फुरण की गति मन्द होती है | इस अवस्था का लाभ लेकर इन्द्रियातीत अपने चिदाकाश स्वरूप का अनुभव करो | जगत, शरीर व इन्द्रियों के अभाव में भी अपने अखण्ड अस्तित्व को जानो |

90) दृश्य में प्रीति नहीं रहना ही असली वैराग्य है |

91) रोग हमें दबाना चाहता है | उससे हमारे विचार भी मन्द हो जाते हैं | अतः रोग की निवृति करनी चहिए | लेकिन जो विचारवान् पुरुष है, वह केवल रोगनिवृति के पीछे ही नहीं लग जाता | वह तो यह निगरानी रखता है कि भयंकर दुःख के समय भी अपना विचार छूट तो नहीं गया ! ऐसा पुरुष 'हाय-हाय' करके प्राण नहीं त्यागता क्योंकि वह जानता है कि रोग उसका दास है | रोग कैसा भी भय दिखाये लेकिन विचारवान् पुरुष इससे प्रभावित नहीं होता |

92) जिस साधक के पास धारणा की दृढ़ता एवं उद्येश्य की पवित्रता, ये दो गुण होंगे वह अवश्य विजेता होगा | इन दो शास्त्रों से सुसज्जित साधक समस्त विघ्न-बाधाओं का सामना करके आखिर में विजयपताका फहरायेगा |

93) जब तक हमारे मन में इस बात का पक्का निश्चय नहीं होगा कि सृष्टि शुभ है तब तक

मन एकाग्र नहीं होगा | जब तक हम समझते रहेंगे कि सृष्टि बिगड़ी हुई है तब तक मन सशंक दृष्टि से चारों ओर दौड़ता रहेगा | सर्वत्र मंगलमय दृष्टि रखने से मन अपने-आप शांत होने लगेगा |

94) आसन स्थिर करने के लिए संकल्प करें कि जैसे पृथ्वी को धारण करते हुए भी शेषजी बिल्कुल अचल रहते हैं वैसे मैं भी अचल रहूँगा | मैं शरीर और प्राण का दृष्टा हूँ |

95) 'संसार मिथ्या है' - यह मंद ज्ञानी की धारणा है | 'संसार स्वप्नवत् है' - यह मध्यम ज्ञानी की धारणा है | 'संसार का अत्यन्त अभाव है, संसार की उत्पत्ति कभी हुई ही नहीं' - यह उत्तम ज्ञानी की धारणा है |

96) आप यदि भक्तिमार्ग में हों तो सारी सृष्टि भगवान की है इसलिए किसीकी भी निन्दा करना ठीक नहीं | आप यदि ज्ञानमार्ग में हों तो यह सृष्टि अपना ही स्वरूप है | आप अपनी ही निन्दा कैसे कर सकते हैं ? इस प्रकार दोंनो मार्गों में परनिन्दा का अवकाश ही नहीं है |

97) दृश्य में दृष्टा का भान एवं दृष्टा में दृश्य का भान हो रहा है | इस गड़बड़ का नाम ही अविवेक या अज्ञान है | दृष्टा को दृष्टा तथा दृश्य को दृश्य समझना ही विवेक या ज्ञान है |

98) आसन व प्राण स्थिर होने से शरीर में विद्युत पैदा होती है | शरीर के द्वारा जब भी क्रिया की जाती है तब वह विद्युत बाहर निकल जाती है | इस विद्युत को शरीर में रोक लेने से शरीर निरोगी बन जाता है |

99) स्वप्न की सृष्टि अल्पकालीन और विचित्र होती है | मनुष्य जब जागता है तब जानता है कि मैं पलंग पर सोया हूँ | मुझे स्वप्न आया | स्वप्न में पदार्थ, देश काल, क्रिया इत्यादि पूरी सृष्टि का सर्जन हुआ | लेकिन मेरे सिवाय और कुछ भी न था | स्वप्न की सृष्टि झूठी थी | इसी प्रकार तत्वज्ञानी पुरूष अज्ञानरूपी निद्रा से ज्ञानरूपी जाग्रत अवस्था को प्राप्त हुए हैं | वे कहते हैं कि एक ब्रह्म के सिवा अन्य कुछ है ही नहीं | जैसे स्वप्न से जागने के बाद हमें स्वप्न की सृष्टि मिथ्या लगती है, वैसे ही ज्ञानवान को यह जगत मिथ्या लगता है |

100) शारीरिक कष्ट पड़े तब ऐसी भावना हो जाये कि : 'यह कष्ट मेरे प्यारे प्रभु की ओर से है...' तो वह कष्ट तप का फल देता है |

101) चलते-चलते पैर में छाले पड़ गये हों, भूख व्याकुल कर रही हो, बुद्धि विचार करने में शिथिल हो गई हो, किसी पेड़ के नीचे पड़े हों, जीवन असम्भव हो रहा हो, मृत्यु का आगमन

हो रहा हो तब भी अन्दर से वही निर्भय ध्वनि उठे : 'सोऽहम्...सोऽहम्...मुझे भय नहीं...मेरी मृत्यु नहीं...मुझे भूख नहीं...प्यास नहीं... प्रकृति की कोई भी व्यथा मुझे नष्ट नहीं कर सकती...मैं वही हूँ...वही हूँ...'

102) जिनके आगे प्रिय-अप्रिय, अनुकूल-प्रतिकूल, सुख-दुःख और भूत-भविष्य एक समान हैं ऐसे ज्ञानी, आत्मवेत्ता महापुरूष ही सच्चे धनवान हैं |

103) दुःख में दुःखी और सुख में सुखी होने वाले लोहे जैसे होते हैं | दुःख में सुखी रहने वाले सोने जैसे होते हैं | सुख-दुःख में समान रहने वाले रत्न जैसे होते हैं, परन्तु जो सुख-दुःख की भावना से परे रहते हैं वे ही सच्चे सम्राट हैं |

104) स्वप्न से जाग कर जैसे स्वप्न को भूल जाते हैं वैसे जाग्रत से जागकर थोड़ी देर के लिए जाग्रत को भूल जाओ | रोज प्रातः काल में पन्द्रह मिनट इस प्रकार संसार को भूल जाने की आदत डालने से आत्मा का अनुसंधान हो सकेगा | इस प्रयोग से सहजावस्था प्राप्त होगी |

105) त्याग और प्रेम से यथार्थ ज्ञान होता है | दुःखी प्राणी में त्याग व प्रेम विचार से आते हैं | सुखी प्राणी में त्याग व प्रेम सेवा से आते हैं क्योंकि जो स्वयं दुःखी है वह सेवा नहीं कर सकता पर विचार कर सकता है | जो सुखी है वह सुख में आसक्त होने के कारण उसमें विचार का उदय नहीं हो सकता लेकिन वह सेवा कर सकता है |

106) लोगों की पूजा व प्रणाम से जैसी प्रसन्नता होती है वैसी ही प्रसन्नता जब मार पड़े तब भी होती हो तो ही मनुष्य भिक्षान्न ग्रहण करने का सच्चा अधिकारी माना जाता है |

107) हरेक साधक को बिल्कुल नये अनुभव की दिशा में आगे बढ़ना है | इसके लिये ब्रह्मज्ञानी महात्मा की अत्यन्त आवश्यकता होती है | जिसको सच्ची जिज्ञासा हो, उसे ऐसे महात्मा मिल ही जाते हैं | दृढ़ जिज्ञासा से शिष्य को गुरु के पास जाने की इच्छा होती है | योग्य जिज्ञासु को समर्थ गुरु स्वयं दर्शन देते हैं |

108) बीते हुए समय को याद न करना, भविष्य की चिन्ता न करना और वर्त्तमान में प्राप्त सुख-दुःखादि में सम रहना ये जीवनमुक्त पुरुष के लक्षण हैं |

109) जब बुद्धि एवं हृदय एक हो जाते हैं तब सारा जीवन साधना बन जाता है |

110) बुद्धिमान पुरुष संसार की चिन्ता नहीं करते लेकिन अपनी मुक्ति के बारे में सोचते

हैं | मुक्ति का विचार ही त्यागी, दानी, सेवापरायण बनाता है | मोक्ष की इच्छा से सब सदगुण आ जाते हैं | संसार की इच्छा से सब दुर्गुण आ जाते हैं |

111) परिस्थिति जितनी कठिन होती है, वातावरण जितना पीड़ाकारक होता है, उससे गुजरने वाला उतना ही बलवान बन जाता है | अतः बाह्य कष्टों और चिन्ताओं का स्वागत करो | ऐसी परिस्थिति में भी वेदान्त को आचरण में लाओ | जब आप वेदान्ती जीवन व्यतीत करेंगे तब देखेंगे कि समस्त वातावरण और परिस्थितियाँ आपके वश में हो रही हैं, आपके लिये उपयोगी सिद्ध हो रही हैं |

112) हरेक पदार्थ पर से अपने मोह को हटा लो और एक सत्य पर, एक तथ्य पर, अपने ईश्वर पर समग्र ध्यान को केन्द्रित करो | तुरन्त आपको आत्म-साक्षात्कार होगा |

113) जैसे बड़े होते-होते बचपन के खेलकूद छोड़ देते हो, वैसे ही संसार के खेलकूद छोड़कर आत्मानन्द का उपभोग करना चाहिये | जैसे अन्न व जल का सेवन करते हो, वैसे ही आत्म-चिन्तन का निरन्तर सेवन करना चाहिये | भोजन ठीक से होता है तो तृप्ति की डकार आती है वैसे ही यथार्थ आत्मचिन्तन होते ही आत्मानुभव की डकार आयेगी, आत्मानन्द में मस्त होंगे | आत्मज्ञान के सिवा शांति का कोई उपाय नहीं |

114) आत्मज्ञानी के हुक्म से सूर्य प्रकाशता है | उनके लिये इन्द्र पानी बरसाता है | उन्हीं के लिये पवन दूत बनकर गमनागमन करता है | उन्हीं के आगे समुद्र रेत में अपना सिर रगड़ता है |

115) यदि आप अपने आत्मस्वरूप को परमात्मा समझो और अनुभव करो तो आपके सब विचार व मनोरथ सफल होंगे, उसी क्षण पूर्ण होंगे |

116) राजा-महाराजा, देवी-देवता, वेद-पुराण आदि जो कुछ हैं वे आत्मदर्शी के संकल्पमात्र हैं

117) जो लोग प्रतिकूलता को अपनाते हैं, ईश्वर उनके सम्मुख रहते हैं | ईश्वर जिन्हें अपने से दूर रखना चाहते हैं, उन्हें अनुकूल परिस्थितियाँ देते हैं | जिसको सब वस्तुएँ अनुकूल एवं पवित्र, सब घटनाएँ लाभकारी, सब दिन शुभ, सब मनुष्य देवता के रूप में दिखते हैं वही पुरुष तत्वदर्शी है |

118) समता के विचार से चित्त जल्दी वश में होता है, हठ से नहीं |

119) ऐसे लोगों से सम्बन्ध रखो कि जिससे आपकी सहनशक्ति बढ़े, समझ की शक्ति बढ़े, जीवन में आने वाले सुख-दुःख की तरंगों का आपके भीतर शमन करने की ताकत आये, समता बढ़े, जीवन तेजस्वी बने |

120) लोग बोलते हैं कि ध्यान व आत्मचिन्तन के लिए हमें फुरसत नहीं मिलती | लेकिन भले मनुष्य ! जब नींद आती है तब सब महत्वपूर्ण काम भी छोड़कर सो जाना पड़ता है कि नहीं ? जैसे नींद को महत्व देते हो वैसे ही चौबीस घन्टों में से कुछ समय ध्यान व आत्मचिन्तन में भी बिताओ | तभी जीवन सार्थक होगा | अन्यथा कुछ भी हाथ नहीं लगेगा |

121) भूल जाओ कि तुम मनुष्य हो, अमुक जाति हो, अमुक उम्र हो, अमुक ड़िग्रीवाले हो, अमुक धन्धेवाले हो | तुम निर्गुण, निराकार, साक्षीरूप हो ऐसा दृढ़ निश्चय करो | इसीमें तमाम प्रकार की साधनाएँ, क्रियाएँ, योगादि समाविष्ट हो जाते हैं | आप सर्वव्यापक अखण्ड चैतन्य हो | सारे ज्ञान का यह मूल है |

122) दोष तभी दिखता जब हमारे लोचन प्रेम के अभावरूप पीलिया रोग से ग्रस्त होते हैं |

123) साधक यदि अभ्यास के मार्ग पर उसी प्रकार आगे बढ़ता जाये, जिस प्रकार प्रारम्भ में इस मार्ग पर चलने के लिए उत्साहपूर्वक कदम रखा था, तो आयुरूपी सूर्य अस्त होने से पहले जीवनरूपी दिन रहते ही अवश्य 'सोऽहम् सिद्धि' के स्थान तक पहुँच जाये |

124) लोग जल्दी से उन्नति क्यों नहीं करते ? क्योंकि बाहर के अभिप्राय एवं विचारधाराओं का बहुत बड़ा बोझ हिमालय की तरह उनकी पीठ पर लदा हुआ है |

125) अपने प्रति होने वाले अन्याय को सहन करते हुए अन्यायकर्ता को यदि क्षमा कर दिया जाये तो द्वेष प्रेम में परिणत हो जाता है |

126) साधना की शुरुआत श्रद्धा से होती है लेकिन समाप्ति ज्ञान से होनी चाहिये | ज्ञान माने स्वयंसहित सर्व ब्रह्मस्वरूप है ऐसा अपरोक्ष अनुभव |

127) अपने शरीर के रोम-रोम में से ॐ... का उच्चारण करो | पहले धीमे स्वर में प्रारम्भ करो | शुरु में ध्वनि गले से निकलेगी, फिर छाती से, फिर नाभि से और अन्त में रीढ़ की हड्डी के आखिरी छोर से निकलेगी | तब विद्युत के धक्के से सुषुम्ना नाड़ी तुरन्त खुलेगी | सब कीटाणुसहित तमाम रोग भाग खड़े होंगे | निर्भयता, हिम्मत और आनन्द का फव्वारा छूटेगा | हर रोज प्रातःकाल में स्नानादि करके सूर्योदय के समय किसी एक नियत स्थान में आसन पर

पूर्वाभिमुख बैठकर कम-से-कम आधा घन्टा करके तो देखो |

128) आप जगत के प्रभु बनो अन्यथा जगत आप पर प्रभुत्व जमा लेगा | ज्ञान के मुताबिक जीवन बनाओ अन्यथा जीवन के मुताबिक ज्ञान हो जायेगा | फिर युगों की यात्रा से भी दुःखों का अन्त नहीं आयेगा |

129) वास्तविक शिक्षण का प्रारंभ तो तभी होता है जब मनुष्य सब प्रकार की सहायताओं से विमुख होकर अपने भीतर के अनन्त स्रोत की तरफ अग्रसर होता है |

130) दृश्य प्रपंच की निवृति के लिए, अन्तःकरण को आनन्द में सरोबार रखने के लिए कोई भी कार्य करते समय विचार करो : 'मैं कौन हूँ और कार्य कौन कर रहा है ?' भीतर से जवाब मिलेगा : ' मन और शरीर कार्य करते हैं | मैं साक्षीस्वरूप हूँ |' ऐसा करने से कर्तापन का अहं पिघलेगा, सुख-दुःख के आघात मन्द होंगे |

131) राग-द्वेष की निवृति का क्या उपाय है ? उपाय यही है कि सारे जगत-प्रपंच को मनोराज्य समझो | निन्दा-स्तुति से, राग-द्वष से प्रपंच में सत्यता दृढ़ होती है |

132) जब कोई खूनी हाथ आपकी गरदन पकड़ ले, कोई शस्त्रधारी आपको कत्ल करने के लिए तत्पर हो जाये तब यदि आप उसके लिए प्रसन्नता से तैयार रहें, हृदय में किसी प्रकार का भय या विषाद उत्पन्न न हो तो समझना कि आपने राग-द्वेष पर विजय प्राप्त कर लिया है | जब आपकी दृष्टि पड़ते ही सिंहादि हिंसक जीवों की हिंसावृति गायब हो जाय तब समझना कि अब राग-द्वेष का अभाव हुआ है |

133) आत्मा के सिवाय अन्य कुछ भी नहीं है - ऐसी समझ रखना ही आत्मनिष्ठा है |

134) आप स्वप्नदृष्टा हैं और यह जगत आपका ही स्वप्न है | बस, जिस क्षण यह ज्ञान हो जायेगा उसी क्षण आप मुक्त हो जाएँगे |

135) दिन के चौबीसों घण्टों को साधनामय बनाने के लिये निकम्मा होकर व्यर्थ विचार करते हुए मन को बार-बार सावधान करके आत्मचिंतन में लगाओ | संसार में संलग्न मन को वहाँ से उठा कर आत्मा में लगाते रहो |

136) एक बार सागर की एक बड़ी तरंग एक बुलबुले की क्षुद्रता पर हँसने लगी | बुलबुले ने कहा : " ओ तरंग ! मैं तो छोटा हूँ फिर भी बहुत सुखी हूँ | कुछ ही देर में मेरी देह टूट जायेगी,

बिखर जायेगी | मैं जल के साथ जल हो जाऊँगा | वामन मिटकर विराट बन जाऊँगा | मेरी मुक्ति बहुत नजदीक है | मुझे आपकी स्थिति पर दया आती है | आप इतनी बड़ी हुई हो | आपका छुटकारा जल्दी नहीं होगा | आप भाग-भागकर सामनेवाली चट्टान से टकराओगी | अनेक छोटी-छोटी तरंगों में विभक्त हो जाओगी | उन असंख्य तरंगों में से अनन्त-अनन्त बुलबुलों के रूप में परिवर्तित हो जाओगी | ये सब बुलबुले फूटेंगे तब आपका छुटकारा होगा | बड़प्पन का गर्व क्यों करती हो ?" जगत की उपलब्धियों का अभिमान करके परमात्मा से दूर मत जाओ | बुलबुले की तरह सरल रहकर परमात्मा के साथ एकता का अनुभव करो |

137) जब आप ईर्ष्या, द्वेष, छिद्रान्वेषण, दोषारोपण, घृणा और निन्दा के विचार किसीके प्रति भेजते हैं तब साथ-ही-साथ वैसे ही विचारों को आमंत्रित भी करते हैं | जब आप अपने भाई की आँख में तिनका भोंकते हैं तब अपनी आँख में भी आप ताड़ भोंक रहे हैं |

138) शरीर अनेक हैं, आत्मा एक है | वह आत्मा-परमात्मा मुझसे अलग नहीं | मैं ही कर्ता, साक्षी व न्यायधीश हूँ | मैं ही कर्कश आलोचक हूँ और मैं ही मधुर प्रशंसक हूँ | मेरे लिये प्रत्येक व्यक्ति स्वतंत्र व स्वच्छन्द है | बन्धन, परिच्छिन्नता और दोष मेरी दृष्टि में आते ही नहीं | मैं मुक्त हूँ...परम मुक्त हूँ और अन्य लोग भी स्वतंत्र हैं | ईश्वर मैं ही हूँ | आप भी वही हो |

139) जिस प्रकार बालक अपनी परछाईं में बेताल की कल्पना कर भय पाता है, उसी प्रकार जीव अपने ही संकल्प से भयभीत होता है और कष्ट पाता है |

140) कभी-कभी ऐसी भावना करो कि आपके सामने चैतन्य का एक महासागर लहरा रहा है | उसके किनारे खड़े रह कर आप आनंद से उसे देख रहे हैं | आपका शरीर सागर की सतह पर घूमने गया है | आपके देखते ही देखते वह सागर में डूब गया | इस समस्त परिस्थिति को देखने वाले आप, साक्षी आत्मा शेष रहते हैं | इस प्रकार साक्षी रूप में अपना अनुभव करो |

141) यदि हम चाहते हों कि भगवान हमारे सब अपराध माफ करें तो इसके लिए सुगम साधना यही है कि हम भी अपने संबंधित सब लोगों के सब अपराध माफ कर दें | कभी किसी के दोष या अपराध पर दृष्टि न डालें क्योंकि वास्तव में सब रूपों में हमारा प्यारा ईष्टदेव ही क्रीड़ा कर रहा है |

142) पूर्ण पवित्रता का अर्थ है बाह्य प्रभावों से प्रभावित न होना | सांसारिक मनोहरता एवं घृणा से परे रहना, राजी-नाराजगी से अविचल, किसी में भेद न देखना और आत्मानुभव के द्वारा आकर्षणों व त्यागों से अलिप्त रहना | यही वेदान्त का, उपनिषदों का रहस्य है |

143) ईश्वर साक्षात्कार तभी होगा जब संसार की दृष्टि से प्रतीत होने वाले बड़े-से-बड़े वैरियों को भी क्षमा करने का आपका स्वभाव बन जायेगा |

144) चालू व्यवहार में से एकदम उपराम होकर दो मिनट के लिए विराम लो | सोचो कि ' मैं कौन हूँ ? सर्दी-गर्मी शरीर को लगती है | भूख-प्यास प्राणों को लगती है | अनुकूलता-प्रतिकूलता मन को लगती है | शुभ-अशुभ एवं पाप-पुण्य का निर्णय बुद्धि करती है | मैं न शरीर हूँ, न प्राण हूँ, न मन हूँ, न बुद्धि हूँ | मैं तो हूँ इन सबको सत्ता देने वाला, इन सबसे न्यारा निर्लेप आत्मा |'

145) जो मनुष्य निरंतर 'मैं मुक्त हूँ...' ऐसी भावना करता है वह मुक्त ही है और 'मैं बद्ध हूँ...' ऐसी भावना करनेवाला बद्ध ही है |

146) आप निर्भय हैं, निर्भय हैं, निर्भय हैं | भय ही मृत्यु है | भय ही पाप है | भय ही नर्क है | भय ही अधर्म है | भय ही व्यभिचार है | जगत में जितने असत् या मिथ्या भाव हैं वे सब इस भयरूपी शैतान से पैदा हुए हैं |

147) परहित के लिए थोड़ा काम करने से भी भीतर की शक्तियाँ जागृत होती हैं | दूसरों के कल्याण के विचारमात्र से हृदय में एक सिंह के समान बल आ जाता है |

148) हम यदि निर्भय होंगे तो शेर को भी जीतकर उसे पाल सकेंगे | यदि डरेंगे तो कुत्ता भी हमें फ़ाड़ खायेगा |

149) प्रत्येक क्रिया, प्रत्येक व्यवहार, प्रत्येक प्राणी ब्रह्मस्वरूप दिखे, यही सहज समाधि है |

150) जब कठिनाईयाँ आयें तब ऐसा मानना कि मुझ में सहन शक्ति बढ़ाने के लिए ईश्वर ने ये संयोग भेजे हैं | कठिन संयोगों में हिम्मत रहेगी तो संयोग बदलने लगेंगे | विषयों में राग-द्वेष रह गया होगा तो वह विषय कसौटी के रूप में आगे आयेंगे और उनसे पार होना पड़ेगा |

151) तत्वदृष्टि से न तो आपने जन्म लिया, न कभी लेंगे | आप तो अनंत हैं, सर्वव्यापी हैं, नित्यमुक्त, अजर-अमर, अविनाशी हैं | जन्म-मृत्यु का प्रश्न ही गलत है, महा-मूर्खतापूर्ण है | जहाँ जन्म ही नहीं हुआ वहाँ मृत्यु हो ही कैसे सकती है ?

152) आप ही इस जगत के ईश्वर हो | आपको कौन दुर्बल बना सकता है ? जगत में आप ही एकमात्र सत्ता हो | आपको किसका भय ? खड़े हो जाओ | मुक्त हो जाओ | ठीक से समझ

लो कि जो कोई विचार या शब्द आपको दुर्बल बनाता है, वही एकमात्र अशुभ है | मनुष्य को दुर्बल व भयभीत करनेवाला जो कुछ इस संसार में है, वह पाप है |

153) आप अपना कार्य या कर्तव्य करो लेकिन न उसके लिए कोई चिन्ता रहे, न ही कोई इच्छा | अपने कार्य में सुख का अनुभव करो क्योंकि आपका कार्य स्वयं सुख या विश्राम है | आपका कार्य आत्मानुभव का ही दूसरा नाम है | कार्य में लगे रहो | कार्य आपको आत्मानुभव कराता है | किसी अन्य हेतु से कार्य न करो | स्वतंत्र वृत्ति से अपने कार्य पर डटे जाओ | अपने को स्वतंत्र समझो, किसीके कैदी नहीं |

154) यदि आप सत्य के मार्ग से नहीं हटते तो शक्ति का प्रवाह आपके साथ है, समय आपके साथ है, क्षेत्र आपके साथ है | लोगों को उनके भूतकाल की महिमा पर फूलने दो, भविष्यकाल की सम्पूर्ण महिमा आपके हाथ में है |

155) जब आप दिव्य प्रेम के साथ चाण्डाल में, चोर में, पापी में, अभ्यागत में और सबमें प्रभु के दर्शन करेंगे तब आप भगवान श्री कृष्ण के प्रेमपात्र बन जायेंगे |

156) आचार्य गौड़पाद ने स्पष्ट कहा : "आप सब आपस में भले ही लड़ते रहें लेकिन मेरे साथ नहीं लड़ सकेंगे | आप सब लोग मेरे पेट में हैं | मैं आत्मस्वरूप से सर्वव्याप्त हूँ |

157) मनुष्य सभी प्राणियों में श्रेष्ठ है, सब देवताओं से भी श्रेष्ठ है | देवताओं को भी फिर से धरती पर आना पड़ेगा और मनुष्य शरीर प्राप्त करके मुक्ति प्राप्त करनी होगी |

158) निश्चिन्तता के दो सूत्र : जो कार्य करना जरूरी है उसे पूरा कर दो | जो बिनजरूरी है उसे भूल जाओ |

159) सेवा-प्रेम-त्याग ही मनुष्य के विकास का मूल मंत्र है | अगर यह मंत्र आपको जँच जाये तो सभी के प्रति सदभाव रखो और शरीर से किसी-न-किसी व्यक्ति को बिना किसी मतलब के सहयोग देते रहो | यह नहीं कि "जब मेरी बात मानेंगे तब मैं सेवा करूँगा | अगर प्रबन्धक मेरी बात नहीं मानते तो मैं सेवा नहीं करूँगा |"

भाई ! तब तो तुम सेवा नहीं कर पाओगे | तब तो तुम अपनी बात मनवा कर अपने अहं की पूजा ही करोगे |

160) जैसे स्वप्न मिथ्या है वैसे ही यह जाग्रत अवस्था भी स्वप्नवत ही है, मिथ्या है |

हरेक को अपने इस स्वप्न से जागना है | सदगुरु बार-बार जगा रहे हैं लेकिन जाग कर वापस सो न जाएँ ऐसा पुरुषार्थ तो हमें ही करना होगा |

161) सदा प्रसन्नमुख रहो | मुख को कभी मलिन मत करो | निश्चय कर लो कि आपके लिये शोक ने इस जगत में जन्म नहीं लिया है | आनन्दस्वरूप में चिन्ता का स्थान ही कहाँ है ?

162) समग्र ब्रह्माण्ड एक शरीर है | समग्र संसार एक शरीर है | जब तक आप प्रत्येक के साथ एकता का अनुभव करते रहेंगे तब तक सब परिस्थितियाँ और आस-पास की चीज़ें, हवा और समुद्र की लहरें भी आपके पक्ष में रहेंगी |

163) आपको जो कुछ शरीर से, बुद्धि से या आत्मा से कमजोर बनाये, उसको विष की तरह तत्काल त्याग दो | वह कभी सत्य नहीं हो सकता | सत्य तो बलप्रद होता है, पावन होता है, ज्ञानस्वरूप होता है | सत्य वह है जो शक्ति दे |

164) साधना में हमारी अभिरुचि होनी चाहिये, साधना की तीव्र माँग होनी चाहिये |

165) दूसरों के दोषों की चर्चा मत करो, चाहे वे कितने भी बड़े हों | किसी के दोषों की चर्चा करके आप उसका किसी भी प्रकार भला नहीं करते बल्कि उसे आघात पहुँचाते हैं और साथ-ही-साथ अपने आपको भी |

166) इस संसार को सत्य समझना ही मौत है | आपका असली स्वरूप तो आनन्दस्वरूप आत्मा है | आत्मा के सिवा संसार जैसी कोई चीज ही नहीं है | जैसे सोया हुआ मनुष्य स्वप्न में अपनी एकता नहीं जानता अपितु अपने को अनेक करके देखता है वैसे ही आनन्दस्वरूप आत्मा जाग्रत, स्वप्न और सुषुप्ति- इन तीन स्वरूपों को देखते हुए अपनी एकता, अद्वितीयता का अनुभव नहीं करता |

167) मनोजय का उपाय है : अभ्यास और वैराग्य | अभ्यास माने प्रयत्नपूर्वक मन को बार-बार परमात्म-चिंतन में लगाना और वैराग्य माने मन को संसार के पदार्थों की ओर से वापस लौटाना |

168) किसी से कुछ मत माँगो | देने के लिये लोग आपके पीछे-पीछे घूमेंगे | मान नहीं चाहोगे तो मान मिलेगा | स्वर्ग नहीं चाहोगे तो स्वर्ग के दूत आपके लिये विमान लेकर आयेंगे | उसको भी स्वीकार नहीं करोगे तो ईश्वर आपको अपने हृदय से लगायेंगे |

169) कभी-कभी उदय या अस्त होते हुए सूर्य की ओर चलो | नदी, सरोवर या समुद्र के तट पर अकेले घूमने जाओ | ऐसे स्थानों की मुलाकात लो जहाँ शीतल पवन मन्द-मन्द चल रही हो | वहाँ परमात्मा के साथ एकस्वर होने की सम्भावना के द्वार खुलते हैं |

170) आप ज्यों-ही इच्छा से ऊपर उठेते हो, त्यों-ही आपका इच्छित पदार्थ आपको खोजने लगता है | अतः पदार्थ से ऊपर उठो | यही नियम है | ज्यों-ज्यों आप इच्छुक, भिक्षुक, याचक का भाव धारण करते हो, त्यों-त्यों आप ठुकराये जाते हो |

171) प्रकृति के प्रत्येक पदार्थ को देखने के लिये प्रकाश जरूरी है | इसी प्रकार मन, बुद्धि, इन्द्रियों को अपने-अपने कार्य करने के लिये आत्म-प्रकाश की आवश्यकता है क्योंकि बाहर का कोई प्रकाश मन, बुद्धि, इन्द्रिय, प्राणादि को चेतन करने में समर्थ नहीं |

172) जैसे स्वप्नदृष्टा पुरुष को जागने के बाद स्वप्न के सुख-दुःख, जन्म-मरण, पाप-पुण्य, धर्म-अधर्म आदि स्पर्श नहीं करते क्योंकि वह सब खुद ही है | खुद के सिवाय स्वप्न में दूसरा कुछ था ही नहीं | वैसे ही जीवन्मुक्त ज्ञानवान पुरुष को सुख-दुःख, जन्म-मरण, पाप-पुण्य, धर्म-अधर्म स्पर्श नहीं करते क्योंकि वे सब आत्मस्वरूप ही हैं |

173) वही भूमा नामक आत्मज्योति कुत्तों में रह कर भौंक रही है, सुअर में रह कर घूर रही है, गधों में रह कर रेंक रही है लेकिन मूर्ख लोग शरीरों पर ही दृष्टि रखते हैं, चैतन्य तत्व पर नहीं |

174) मनुष्य जिस क्षण भूत-भविष्य की चिन्ता का त्याग कर देता है, देह को सीमित और उत्पत्ति-विनाशशील जानकर देहाभिमान को त्याग देता है, उसी क्षण वह एक उच्चतर अवस्था में पहुँच जाता है | पिंजरे से छूटकर गगनविहार करते हुए पक्षी की तरह मुक्ति का अनुभव करता है |

175) समस्त भय एवं चिन्ताएँ आपकी इच्छाओं का प्रणाम हैं | आपको भय क्यों लगता है ? क्योंकि आपको आशंका रहती है कि अमुक चीज कहीं चली न जाये | लोगों के हास्य से आप डरते हैं क्योंकि आपको यश की अभिलाषा है, कीर्ति में आसक्ति है | इच्छाओं को तिलांजलि दे दो | फिर देखो मजा ! कोई जिम्मेदारी नहीं...कोई भय नहीं |

176) देखने में अत्यंत कुरुप, काला-कलूटा, कुबड़ा और तेज स्वभाव का मनुष्य भी आपका ही स्वरूप है | आप इस तथ्य से मुक्त नहीं | फिर घृणा कैसी ? कोई लावण्यमयी सुंदरी, सृष्टि की शोभा के समान, अति विलासभरी अप्सरा भी आपका ही स्वरूप है | फिर आसक्ति किसकी ?

आपकी ज्ञानेन्द्रियाँ उनको आपसे अलग करके दिखाती हैं | ये इन्द्रियाँ झूठ बोलनेवाली हैं | उनका कभी विश्वास मत करो | अतः सब कुछ आप ही हो |

177) मानव के नाते हम साधक हैं | साधक होने के नाते सत्य को स्वीकर करना हमारा स्वधर्म है | सत्य यही है कि बल दूसरों के लिये है, ज्ञान अपने लिये है और विश्वास परमात्मा से सम्बन्ध जोड़ने के लिये है |

178) अपनी आत्मा में डूब जाना यह सबसे बड़ा परोपकार है |

179) आप सदैव मुक्त हैं, ऐसा विश्वास दृढ़ करो तो आप विश्व के उद्धारक हो जाते हो | आप यदि वेदान्त के स्वर के साथ स्वर मिलाकर निश्चय करो : 'आप कभी शरीर न थे | आप नित्य, शुद्ध, बुद्ध आत्मा हो...' तो अखिल ब्रह्माण्ड के मोक्षदाता हो जाते हो |

180) कृपा करके उन स्वार्थमय उपायों और अभिप्रायों को दूर फेंक दो जो आपको परिच्छिन्न रखते हैं | सब वासनाएँ राग हैं | व्यक्तिगत या शरीरगत प्रेम आसक्ति है | उसे फेंक दो | स्वयं पवित्र हो जाओ | आपका शरीर स्वस्थ और बुद्धि पूर्णस्वरूप हो जायेगी |

181) यदि संसार के सुख व पदार्थ प्राप्त हों तो आपको कहना चाहिये : 'ओ शैतान हट जा मेरे सामने से | तेरे हाथ से मुझे कुछ नहीं चाहिये |' तब देखो कि आप कैसे सुखी हो जाते हो ! परमात्मा-प्राप्त किसी महापुरुष पर विश्वास रखकर अपनी जीवनडोरी निःशंक बन उनके चरणों में सदा के लिये रख दो | निर्भयता आपके चरणों की दासी बन जायेगी |

182) जिसने एक बार ठीक से जान लिया कि जगत मिथ्या है और भ्रान्ति से इसकी प्रतीति हो रही है, उसको कभी दुःख नहीं होता | जगत में कभी आसक्ति नहीं होती | जगत के मिथ्यात्व के निश्चय का नाम ही जगत का नाश है |

183) अपने स्वरूप में लीन होने मात्र से आप संसार के सम्राट बन जायेंगे | यह सम्राटपद केवल इस संसार का ही नहीं, समस्त लोक-परलोक का सम्राटपद होगा |

184) 'हे जनक! चाहे देवाधिदेव महादेव आकर आपको उपदेश दें या भगवान विष्णु आकर उपदेश दें अथवा ब्रह्माजी आकर उपदेश दें लेकिन आपको कदापि सुख न होगा | जब विषयों का त्याग करोगे तभी सच्ची शांति व आनंद प्राप्त होंगे |'

185) जिस प्रभु ने हमें मानव जीवन देकर स्वाधीनता दी कि हम जब चाहें तब धर्मात्मा

होकर, भक्त होकर, जीवन्मुक्त होकर, कृतकृत्य हो सकते हैं- उस प्रभु की महिमा गाओ | गाओ नहीं, तो सुनो | सुनो भी नहीं, गाओ भी नहीं तो स्वीकार कर लो |

186) चाहे समुद्र के गहरे तल में जाना पड़े, साक्षात मृत्यु का मुकाबला करना पड़े, अपने आत्मप्राप्ति के उद्देश्य की पूर्ति के लिये अडिग रहो | उठो, साहसी बनो, शक्तिमान बनो | आपको जो बल व सहायता चाहिये वह आपके भीतर ही है |

187) जब-जब जीवन सम्बन्धी शोक और चिन्ता घेरने लगे तब-तब अपने आनन्दस्वरूप का गान करते-करते उस मोह-माया को भगा दो |

188) जब शरीर में कोई पीड़ा या अंग में जख्म हो तब 'मैं आकाशवत् आकाशरहित चेतन हूँ...' ऐसा दृढ़ निश्चय करके पीड़ा को भूल जाओ |

189) जब दुनिया के किसी चक्कर में फँस जाओ तब 'मैं निर्लेप नित्य मुक्त हूँ...' ऐसा दृढ़ निश्चय करके उस चक्कर से निकल जाओ |

190) जब घर-बार सम्बन्धी कोई कठिन समस्या व्याकुल करे तब उसे मदारी का खेल समझकर, स्वयं को निःसंग जानकर उस बोझ को हल्का कर दो |

191) जब क्रोध के आवेश में आकर कोई अपमानयुक्त वचन कहे तब अपने शांतिमय स्वरूप में स्थिर होकर मन में किसी भी क्षोभ को पैदा न होने दो |

192) उत्तम अधिकारी जिज्ञासु को चाहिये कि वह ब्रह्मवेत्ता सदगुरु के पास जाकर श्रद्धा पूर्वक महावाक्य सुने | उसका मनन व निदिध्यासन करके अपने आत्मस्वरूप को जाने | जब आत्मस्वरूप का साक्षात्कार होता है तब ही परम विश्रान्ति मिल सकती है, अन्यथा नहीं | जब तक ब्रह्मवेत्ता महापुरुष से महावाक्य प्राप्त न हो तब तक वह मन्द अधिकारी है | वह अपने हृदयकमल में परमात्मा का ध्यान करे, स्मरण करे, जप करे | इस ध्यान-जपादि के प्रसाद से उसे ब्रह्मवेत्ता सदगुरु प्राप्त होंगे |

193) मन, बुद्धि, चित्त, अहंकार छाया की तरह जड़ हैं, क्षणभंगुर हैं क्योंकि वे उत्पन्न होते हैं और लीन भी हो जाते हैं | जिस चैतन्य की छाया उसमें पड़ती है वह परम चैतन्य सबका आत्मा है | मन, बुद्धि, चित्त, अहंकार का अभाव हो जाता है लेकिन उसका अनुभव करनेवाले का अभाव कदापि नहीं होता |

194) आप अपनी शक्ति को उच्चातिउच्च विषयों की ओर बहने दो | इससे आपके पास वे बातें सोचने का समय ही नहीं मिलेगा जिससे कामुकता की गंध आती हो |

195) अपराधों के अनेक नाम हैं : बालहत्या, नरहत्या, मातृहत्या, गौहत्या इत्यादि | परन्तु प्रत्येक प्राणी में ईश्वर का अनुभव न करके आप ईश्वरहत्या का सबसे बड़ा अपराध करते हैं |

196) सेवा करने की स्वाधीनता मनुष्यमात्र को प्राप्त है | अगर वह करना ही न चाहे तो अलग बात है | सेवा का अर्थ है : मन-वाणी-कर्म से बुराईरहित हो जाना यह विश्व की सेवा हो गई | यथाशक्ति भलाई कर दो यह समाज की सेवा हो गई | भलाई का फल छोड़ दो यह अपनी सेवा हो गई | प्रभु को अपना मानकर स्मृति और प्रेम जगा लो यह प्रभु की सेवा हो गई | इस प्रकार मनुष्य अपनी सेवा भी कर सकता है, समाज की सेवा भी कर सकता है, विश्व की सेवा भी कर सकता है और विश्वेश्वर की सेवा भी कर सकता है |

197) आत्मा से बाहर मत भटको, अपने केन्द्र में स्थिर रहो, अन्यथा गिर पड़ोगे | अपने-आपमें पूर्ण विश्वास रखो | आत्म-केन्द्र पर अचल रहो | फिर कोई भी चीज आपको विचलित नहीं कर सकती |

198) सदा शांत, निर्विकार और सम रहो | जगत को खेलमात्र समझो | जगत से प्रभावित मत हो | इससे आप हमेशा सुखी रहोगे | फिर कुछ बढ़ाने की इच्छा नहीं होगी और कुछ कम होने से दुःख नहीं होगा |

199) समर्थ सदगुरु के समक्ष सदा फूल के भाँति खिले हुए रहो | इससे उनके अन्दर संकल्प होगा कि, 'यह तो बहुत उत्साही साधक है, सदा प्रसन्न रहता है |' उनके सामर्थ्यवान् संकल्प से आपकी वह कृत्रिम प्रसन्नता भी वास्तविक प्रसन्नता में बदल जायेगी |

200) यदि रोग को भी ईश्वर का दिया मानो तो प्रारब्ध-भोग भी हो जाता है और कष्ट तप का फल देता है | इससे ईश्वर-कृपा की प्राप्ति होती है | व्याकुल मत हो | 'कैप्सूल' और 'इन्जेक्शन' आधीन मत हो |

201) साधक को चाहिये कि अपने लक्ष्य को दृष्टि में रखकर साधना-पथ पर तीर की तरह सीधा चला जाये | न इधर देखे न उधर | दृष्टि यदि इधर-उधर जाती हो तो समझना कि निष्ठा स्थिर नहीं है |

202) आपने अपने जीवन में हजारों स्वप्न देखे होंगे लेकिन वे आपके जीवन के अंश नहीं

बन जाते | इसी प्रकार ये जाग्रत जगत के आडम्बर आपकी आत्मा के समक्ष कोई महत्त्व नहीं रखते |

203) एक आत्मा को ही जानो, अन्य बातों को छोड़ो | धीर साधक को चाहिये कि वह सावधान होकर आत्मनिष्ठा बढ़ाये, अनेक शब्दों का चिन्तन व भाषण न करे क्योंकि वह तो केवल मन-वाणी को परिश्रम देनेवाला है, असली साधना नहीं है |

204) जो पुरुष जन-समूह से ऐसे डरे जैसे साँप से डरता है, सम्मान से ऐसे डरे जैसे नर्क से डरता है, स्त्रियों से ऐसे डरे जैसे मुर्दे से डरता है, उस पुरुष को देवतागण ब्राह्मण मानते हैं |

205) जैसे अपने शरीर के अंगों पर क्रोध नहीं आता वैसे शत्रु, मित्र व अपनी देह में एक ही आत्मा को देखनेवाले विवेकी पुरुष को कदापि क्रोध नहीं आता |

206) 'मैंने तो शरीर को ईश्वरार्पण कर दिया है | अब उसकी भूख-प्यास से मुझे क्या? समर्पित वस्तु में आसक्त होना महा पाप है |'

207) आप यदि दिव्य दृष्टि पाना चहते हो तो आपको इन्द्रियों के क्षेत्र का त्याग करना होगा |

208) प्रलयकाल के मेघ की गर्जना हो, समुद्र उमड़ पडे, बारहों सूर्य तपायमान हो जायें, पहाड़ से पहाड़ टकरा कर भयानक आवाज हो तो भी ज्ञानी के निश्चय में द्वैत नहीं भासता क्योंकि द्वैत है ही नहीं | द्वैत तो अज्ञानी को भासता है |

209) सत्य को स्वीकार करने से शांति मिलेगी | कुछ लोग योग्यता के आधार पर शांति खरीदना चाहते हैं | योग्यता से शांति नहीं मिलेगी, योग्यता के सदुपयोग से शांति मिलेगी | कुछ लोग सम्पत्ति के आधार पर शांति सुरक्षित रखना चाहते हैं | सम्पत्ति से शांति नहीं मिलेगी, सम्पत्ति के सदुपयोग से शांति मिलेगी, वैसे ही विपत्ति के सदुपयोग से शांति मिलेगी |

210) तुच्छ हानि-लाभ पर आपका ध्यान इतना क्यों रहता है जिससे अनंत आनन्दस्वरूप आत्मा पर से ध्यान हट जाता है |

211) अपने अन्दर ही आनन्द प्राप्त करना यद्यपि कठिन है परन्तु बाह्य विषयों से आनन्द प्राप्त करना तो असम्भव ही है |

212) 'मैं संसार का प्रकाश हूँ | प्रकाश के रूप में मैं ही सब वस्तुओं में व्याप्त हूँ |' नित्य

इन विचारों का चिन्तन करते रहो | ये पवित्र विचार आपको परम पवित्र बना देंगे |

213) जो वस्तु कर्म से प्राप्त होती है उसके लिये संसार की सहायता तथा भविष्य की आशा की आवश्यकता होती है परन्तु जो वस्तु त्याग से प्राप्त होती है, उसके लिये न संसार की सहायता चाहिये, न भविष्य की आशा |

214) आपको जब तक बाहर चोर दिखता है तब तक जरूर भीतर चोर है | जब दूसरे लोग ब्रह्म से भिन्न, अयोग्य, खराब, सुधारने योग्य दिखते हैं तब तक ओ सुधार का बीड़ा उठाने वाले ! तू अपनी चिकित्सा कर |

215) सफल वे ही होते हैं जो सदैव नतमस्तक एवं प्रसन्नमुख रहते हैं | चिन्तातुर-शोकातुर लोगों की उन्नति नहीं हो सकती | प्रत्येक कार्य को हिम्मत व शांति से करो | फिर देखो कि : 'यह कार्य शरीर मन और बुद्धि से हुआ | मैं उन सबको सत्ता देनेवाला चैतन्यस्वरूप हूँ |' ॐ... ॐ... का पावन गान करो |

216) किसी भी परिस्थिति में मन को व्यथित न होने दो | आत्मा पर विश्वास करके आत्मनिष्ठ बन जाओ | निर्भयता आपकी दासी बन कर रहेगी |

217) सत्संग से मनुष्य को साधना प्राप्त होती है, चाहे वह शांति के रूप में हो, चाहे मुक्ति के रूप में, चाहे सेवा के रूप में हो, प्रेम के रूप में हो, चाहे त्याग के रूप में हो |

218) भला-बुरा वही देखता है जिसके अन्दर भला-बुरा है | दूसरों के शरीरों को वही देखता है जो खुद को शरीर मानता है |

219) खबरदार ! आपने यदि अपने शरीर के लिये ऐश-आराम की इच्छा की, विलासिता एवं इन्द्रिय-सुख में अपना समय बरबाद किया तो आपकी खैर नहीं | ठीक से कार्य करते रहने की नीति अपनाओ | सफलता का पहला सिद्धांत है कार्य...विश्रामरहित कार्य...साक्षी भाव से कार्य | इस सिद्धांत को जीवन में चरितार्थ करोगे तो पता चलेगा कि छोटा होना जितना सरल है उतना ही बड़ा होना भी सहज है |

220) भूतकाल पर खिन्न हुए बिना, भविष्य की चिन्ता किये बिना वर्त्तमान में कार्य करो | यह भाव आपको हर अवस्था में प्रसन्न रखेगा हमें जो कुछ प्राप्त है उसका सदुपयोग ही अधिक प्रकाश पाने का साधन है |

221) जब आप सफलता की ओर पीठ कर लेते हो, परिणाम की चिन्ता का त्याग कर देते हो, सम्मुख आये हुए कर्त्तव्य पर अपनी उद्योगशक्ति एकाग्र करते हो तब सफलता आपके पीछे-पीछे आ जाती है | अतः सफलता आपको खोजेगी |

222) वृत्ति तब तक एकाग्र नहीं होगी जब तक मन में कभी एक आशा रहेगी तो कभी दूसरी | शांत वही हो सकता है जिसे कोई कर्त्तव्य या आवश्यकता घसीट न रही हो | अतः परम शांति पाने के लिये जीवन की आशा भी त्याग कर मन ब्रह्मानन्द में डुबो दो | आज से समझ लो कि यह शरीर है ही नहीं | केवल ब्रह्मानन्द का सागर लहरा रहा है |

223) जिसकी पक्की निष्ठा है कि 'मैं आत्मा हूँ...' उसके लिये ऐसी कौन सी ग्रंथि है जो खुल न सके? ऐसी कोई ताकत नहीं जो उसके विरुद्ध जा सके |

224) 'मेरे भाग्य में नहीं था...ईश्वर की मर्जी...आजकल सत्संग प्राप्त नहीं होता...जगत खराब है...' ऐसे वचन हमारी कायरता व अन्तःकरण की मलिनता के कारण निकलते हैं | अतः नकारात्मक स्वभाव और दूसरों पर दोषारोपण करने की वृत्ति से बचो |

225) आप जब भीतरवाले से नाराज होते हो तब जगत आपसे नाराज रहता है | जब आप भीतर अन्तर्यामी बन बैठे तो जगतरूपी पुतलीघर में फिर गड़बड़ कैसी ?

226) जिस क्षण हम संसार के सुधारक बन खड़े होते हैं उसी क्षण हम संसार को बिगाड़नेवाले बन जाते हैं | शुद्ध परमात्मा को देखने के बजाय जगत को बिगड़ा हुआ देखने की दृष्टि बनती है | सुधारक लोग मानते हैं कि : 'भगवान ने जो जगत बनाया है वह बिगड़ा हुआ है और हम उसे सुधार रहे हैं |' वाह ! वाह ! धन्यवाद सुधारकों ! अपने दिल को सुधारो पहले | सर्वत्र निरंजन का दीदार करो | तब आपकी उपस्थिति मात्र से, आपकी दृष्टि मात्र से, अरे प्यारे ! आपको छूकर बहती हवा मात्र से अनन्त जीवों को शांति मिलेगी और अनन्त सुधार होगा | नानक, कबीर, महावीर, बुद्ध और लीलाशाह बापू जैसे महापुरुषों ने यही कुंजी अपनायी थी |

227) वेदान्त में हमेशा कर्म का अर्थ होता है वास्तविक आत्मा के साथ एक होकर चेष्टा करना, अखिल विश्व के साथ एकस्वर हो जाना | उस अद्वितीय परम तत्व के साथ निःस्वार्थ संयोग प्राप्त करना ही एकमात्र सच्चा कर्म है, बाकी सब बोझ की गठरियाँ उठाना है |

228) अपनी वर्त्तमान अवस्था चाहे कैसी भी हो, उसको सर्वोच्च मानने से ही आपके हृदय में आत्मज्ञान, ब्रह्मज्ञान का अनायास उदय होने लगेगा | आत्म-साक्षात्कार को मीलों दूर की कोई चीज समझकर उसके पीछे दौड़ना नहीं है, चिन्तित होना नहीं है | चिन्ता की गठरी उठाकर

व्यथित होने की जरूरत नहीं है | जिस क्षण आप निश्चिन्तता में गोता मारोगे, उसी क्षण आपका आत्मस्वरूप प्रगट हो जायेगा | अरे ! प्रगट क्या होगा, आप स्वयं आत्मस्वरूप हो ही | अनात्मा को छोड़ दो तो आत्मस्वरूप तो हो ही |

229) सदा ॐकार का गान करो | जब भय व चिन्ता के विचार आयें तब किसी मस्त संत-फकीर, महात्मा के सान्निध्य का स्मरण करो | जब निन्दा-प्रशंसा के प्रसंग आयें तब महापुरुषों के जीवन का अवलोकन करो |

230) जिनको आप भयानक घटनाएँ एवं भयंकर आघात समझ बैठे हो, वास्तव में वे आपके प्रियतम आत्मदेव की ही करतूत है | समस्त भयजनक तथा प्राणनाशक घटनाओं के नाम-रूप तो विष के हैं लेकिन वे बनी हैं अमृत से |

231) मन में यदि भय न हो तो बाहर चाहे कैसी भी भय की सामग्री उपस्थित हो जाये, आपका कुछ बिगाड़ नहीं सकती | मन में यदि भय होगा तो तुरन्त बाहर भी भयजनक परिस्थियाँ न होते हुए भी उपस्थित हो जायेंगी | वृक्ष के तने में भी भूत दिखने लगेगा |

232) किसी भी परिस्थिति में दिखती हुई कठोरता व भयानकता से भयभीत नहीं होना चाहिए | कष्टों के काले बादलों के पीछे पूर्ण प्रकाशमय एकरस परम सत्ता सूर्य की तरह सदा विद्यमान है |

233) आप अपने पर कदापि अविश्वास मत करो | इस जगत में आप सब कुछ कर सकते हो | अपने को कभी दुर्बल मत मानो | आपके अन्दर तमाम शक्तियाँ छुपी हुई हैं |

234) यदि कोई मनुष्य आपकी कोई चीज़ को चुरा लेता है तो ड़रते क्यों हो ? वह मनुष्य और आप एक हैं | जिस चीज़ को वह चुराता है वह चीज़ आपकी और उसकी दोंनों की है |

235) जो खुद के सिवाय दूसरा कुछ देखता नहीं, सुनता नहीं, जानता नहीं, वह अनन्त है | जब तक खुद के सिवाय और किसी वस्तु का भान होता है, वह वस्तु सच्ची लगती है तब तक आप सीमित व शांत हैं, असीम और अनंत नहीं |

236) संसार मुझे क्या आनंद दे सकता है ? सम्पूर्ण आनंद मेरे भीतर से आया है | मैं ही सम्पूर्ण आनन्द हूँ ... सम्पूर्ण महिमा एवं सम्पूर्ण सुख हूँ |

237) जीवन की समस्त आवश्यकताएँ जीवन में उपस्थित हैं परन्तु जीवन को जब हम

बाह्य रंगों में रंग देते हैं तब जीवन का वास्तविक रूप हम नहीं जान पाते |

238) निन्दकों की निन्दा से मैं क्यों मुरझाऊँ ? प्रशंसकों की प्रशंसा से मैं क्यों फूलूँ ? निन्दा से मैं घटता नहीं और प्रशंसा से मैं बढ़ता नहीं | जैसा हूँ वैसा ही रहता हूँ | फिर निन्दा-स्तुति से खटक कैसी ?

239) संसार व संसार की समस्याओं में जो सबसे अधिक फँसे हुए हैं उन्हीं को वेदान्त की सबसे अधिक आवश्यकता है | बीमार को ही औषधि की ज्यादा आवश्यकता है | क्यों जी, ठीक है न ?

240) जगत के पाप व अत्याचार की बात मत करो लेकिन अब भी आपको जगत में पाप दिखता है इसलिये रोओ |

241) हम यदि जान लें कि जगत में आत्मा के सिवाय दूसरा कुछ है ही नहीं और जो कुछ दिखता है वह स्वप्नमात्र है, तो इस जगत के दुःख-दारिद्रय, पाप-पुण्य कुछ भी हमें अशांत नहीं कर सकते |

242) विद्वानों, दार्शनिकों व आचार्यों की धमकी तथा अनुग्रह, आलोचना या अनुमति ब्रह्मज्ञानी पर कोई प्रभाव नहीं ड़ाल सकती |

243) हे व्यष्टिरूप अनन्त ! आप अपने पैरों पर खड़े रहने का साहस करो, समस्त विश्व का बोझ आप खिलौने की तरह उठा लोगे |

244) सिंह की गर्जना व नरसिंह की ललकार, तलवार की धार व साँप की फुफकार, तपस्वी की धमकी व न्यायधीश की फटकार...इन सबमें आपका ही प्रकाश चमक रहा है | आप इनसे भयभीत क्यों होते हो ? उलझन क्यों महसूस करते हो ? 'मेरी बिल्ली मुझको म्याऊँ' वाली बात क्यों होने देते हो?

245) संसार हमारा सिर्फ़ खिलोना ही है और कुछ नहीं | अबोध बालक ही खिलौनों से भयभीत होता है, आसक्ति करता है, विचारशील व्यक्ति नहीं |

246) जब तक अविद्या दूर नहीं होगी तब तक चोरी, जुआ, दारू, व्यभिचार, कभी बंद न होंगे, चाहे लाख कोशिश करो |

247) आप हमेशा अंदर का ध्यान रखो | पहले हमारा भीतरी पतन होता है | बाह्य पतन

तो इसका परिणाम मात्र है |

248) त्याग से हमेशा आनंद मिलता है | जब तक आपके पास एक भी चीज़ बाकी है तब तक आप उस चीज़ के बंधन में बंधे रहोगे | आघात व प्रत्याघात हमेशा समान विरोधी होते हैं |

249) निश्चिंतता ही आरोग्यता की सबसे बड़ी दवाई है |

250) सुख अपने सिर पर दुख का मुकुट पहन कर आता है | जो सुख को अपनायेगा उसे दुख को भी स्वीकार करना पड़ेगा |

251) मैं (आत्मा) सबका दृष्टा हूँ | मेरा दृष्टा कोई नहीं |

252) हजारों में से कोई एक पुरुष भीतर से शांत चित्तवाला रहकर बाहर से संसारी जैसा व्यवहार कर सकता है |

253) सत्य के लिए यदि शरीर का त्याग करना पड़े तो कर देना | यही आखिरी ममता है जो हमें तोड़नी होगी |

254) भय, चिन्ता, बेचैनी से ऊपर उठो | आपको ज्ञान का अनुभव होगा |

255) आपको कोई भी हानि नहीं पहुँचा सकता | केवल आपके खयालात ही आपके पीछे पड़े हैं |

256) प्रेम का अर्थ है अपने पड़ोसी तथा संपर्क में आनेवालों के साथ अपनी वास्तविक अभेदता का अनुभव करना |

257) ओ प्यारे ! अपने खोये हुए आत्मा को एक बार खोज लो | धरती व आसमान के शासक आप ही हो |

258) सदैव सम और प्रसन्न रहना ईश्वर की सर्वोपरि भक्ति है |

259) जब तक चित्त में दृढ़ता न आ जाये कि शास्त्र की विधियों का पालन छोड़ देने से भी हृदय का यथार्थ भक्तिभाव नष्ट नहीं होगा, तब तक शास्त्र की विधियों को पालते रहो |

गुरु भक्ति एक अमोघ साधना

1. जन्म मरण के विषचक्र से मुक्त होने का कोई मार्ग नहीं है क्या ? सुख-दुःख, हर्ष-शोक, लाभ-हानि मान-अपमान की थप्पड़ों से बचने का कोई उपाय नहीं है क्या ?

है...अवश्य है | हे प्रिये आत्मन ! नाशवान पदार्थों से अपना मन वापिस लाकर सदगुरु के चरणकमलों में लगाओ | गुरुभक्तियोग का आश्रय लो | गुरुसेवा ऐसा अमोघ साधन है जिससे वर्त्तमान जीवन आनन्दमय बनता है और शाश्वत सुख के द्वार खुलते हैं |

गुरु सेवत ते नर धन्य यहाँ |

तिनकुं नहीं दुःख यहाँ न वहाँ ||

2. सच्चे सदगुरु की की हुई भक्ति शिष्य में सांसारिक पदार्थों के वैराग्य एवं अनासक्ति जगाती है, परमात्मा के प्रति प्रेम के पुष्प महकाती है |

3. प्रत्येक शिष्य सदगुरु की सेवा करना चाहता है लेकिन अपने ढंग से | सदगुरु चाहें उस ढंग से सेवा करने को कोई तत्पर नहीं |

जो विरला साधक, गुरु चाहें उस ढ़ंग से सेवा कर सकता है, उसे कोई कमी नहीं रहती | ब्रह्मनिष्ठ सदगुरु की सेवा से उनकी कृपा प्राप्त होती है और उस कृपा से न मिल सके ऐसा तीनों लोकों में कुछ भी नहीं है |

4. गुर शिष्य का सम्बन्ध पवित्रतम सम्बन्ध है | संसार के तमाम बन्धनों से छुड़ाकर वह मुक्ति के मार्ग पर प्रस्थान कराता है | यह सम्बन्ध जीवनपर्यन्त का सम्बन्ध है | यह बात अपने हृदय की डायरी में सुवर्ण-अक्षरों से लिख लो |

5. उल्लू सुर्य के प्रकाश के अस्तित्व को माने या न माने फिर भी सूर्य हमेशा प्रकाशता है | चंचल मन का मनुष्य माने या न माने लेकिन सदगुरु की परमकल्याणकारी कृपा सदैव बरसती ही रहती है |

6. सदगुरु की चरणरज में स्नान किये बिना केवल कठिन तपश्चर्या करने से या वेदों का अध्यन करने से वेदान्त का रहस्य प्रकट नहीं होता, आत्मानंद का अमृत नहीं मिलता |

7. दर्शन शास्त्र के चाहे कितने ग्रन्थ पढ़ो, हजारों वर्षों तक हिमालय की गुफा में तप करो, वर्षों तक प्राणायाम करो, जीवनपर्यन्त शीर्षासन करो, समग्र विश्व में प्रवास करके व्याखान दो फिर भी सदगुरु की कृपा के बिना आत्मज्ञान नहीं होता | अतः निराभिमानी, सरल, निजानन्द में

मस्त, दयालु स्वभाव के आत्म-साक्षात्कारी सदगुरु के चरणों में जाओ | जीवन को धन्य बनाओ |

8. सदगुरु की सेवा किये बिना शास्त्रों का अध्यन करना मुमुक्षु साधक के लिये समय बरबाद करने के बराबर है |

9. जिसको सदगुरु प्राप्त हुए हैं ऐसे शिष्य के लिये इस विश्व में कुछ भी अप्राप्य नहीं है | सदगुरु शिष्य को मिली हुई परमात्मा की अमूल्य भेंट हैं | अरे नहीं...नहीं वे तो शिष्य के समक्ष साकार रूप में प्रकट हुए परमात्मा स्वयं हैं |

10. सदगुरु के साथ एक क्षण किया हुआ सत्संग लाखों वर्षों के तप से अनन्त गुना श्रेष्ठ है | आँख के निमेषमात्र में सदगुरु की अमृतवर्षी दृष्टि शिष्य के जन्म-जन्म के पापों को जला सकती है |

11. सदगुरु जैसा प्रेमपूर्ण, कृपालु, हितचिन्तक, विश्वभर में दूसरा कोई नहीं है |

12. बाढ़ के समय यात्री यदि तूफानी नदी को बिना नाव के पार कर सके तो साधक भी बिना सदगुरु के अपने जीवन के आखिरी लक्ष्य को सिद्ध कर सकता है | यानी ये दोनों बातें सम्भव हैं |

अतः प्यारे साधक ! मनमुखी साधना की जिद्द करना छोड़ दो | गुरुमुखी साधना करने में ही सार है |

13. सदगुरु के चरणकमलों का आश्रय लेने से जिस आनन्द का अनुभव होता है उसके आगे त्रिलोकी का साम्राज्य तुच्छ है |

14. आत्म-साक्षात्कार के मार्ग में सबसे महान शत्रु अहंभाव का नाश करने के लिए सदगुरु की आज्ञा का पालन अमोघ शस्त्र है |

15. रसोई सीखने के लिये कोई सिखानेवाला चाहिये, विज्ञान और गणित सीखने के लिये अध्यापक चाहिये तो क्या ब्रह्मविद्या सदगुरु के बिना ही सीख लोगे ?

16. सदगुरुकृपा की सम्पत्ति जैसा दूसरा कोई खजाना विश्वभर में नहीं |

17. सदगुरु की आज्ञा का उल्लंघन करना यह अपनी कब्र खोदने के बराबर है |

18. सदगुरु के कार्य को शंका की दृष्टि से देखना महापातक है |

19. गुरुभक्ति व गुरुसेवा - यें साधनारूपी नौका की दो पतवारें हैं | उनकी मदद से शिष्य संसारसागर को पार कर सकता है |

20. सदगुरु की कसौटी करना असंभव है | एक विवेकानन्द ही दूसरे विवेकानन्द को पहचाने सकते हैं | बुद्ध को जानने के लिये दूसरे बुद्ध की आवश्यकता रहती है | एक रामतीर्थ का रहस्य दूसरे रामतीर्थ ही पा सकते हैं |

अतः सदगुरु की कसौटी करने की चेष्टा छोड़कर उनको परिपूर्ण परब्रह्म परमात्मा मानो | तभी जीवन में वास्तविक लाभ होगा |

21. गुरुभक्तियोग का आश्रय लेकर आप अपनी खोई हुई दिव्यता को पुनः प्राप्त करो, सुख-दुःख, जन्म-मृत्यु आदि सब द्वन्द्वों से पार हो जाओ |

22. गुरुभक्तियोग माने गुरु की सेवा के द्वारा मन और विकारों पर नियंत्रण एवं पुनः संस्करण |

23. शिष्य अपने गुरु के चरणकमल में प्रणाम करता है | उन पर श्रेष्ठ फूलों की वर्षा करके उनकी स्तुति करता है :

“हे परम पूज्य पवित्र गुरुदेव! मुझे सर्वोच्च सुख प्राप्त हुआ है | मैं ब्रह्मनिष्ठा से जन्म-मृत्यु की परम्परा से मुक्त हुआ हूँ | मैं निर्विकल्प समाधि का शुद्ध सुख भोग रहा हूँ | जगत के किसी भी कोने में मैं मुक्तता से विचरण कर सकता हूँ | सब पर मेरी समदृष्टि है |

मैंने प्राकृत मन का त्याग किया है | मैंने सब संकल्पों एवं रुचि-अरुचि का त्याग किया है | अब मैं अखण्ड शांति में विश्रांति पा रहा हूँ ... आनन्दमय हो रहा हूँ | मैं इस पूर्ण अवस्था का वर्णन नहीं कर पाता |

हे पूज्य गुरुदेव ! मैं आवाक बन गया हूँ | इस दुस्तर भवसागर को पार करने में आपने मुझे सहायता की है | अब तक मुझे केवल अपने शरीर में ही सम्पूर्ण विश्वास था | मैंने विभिन्न योनियों में असंख्य जन्म लिये | ऐसी सर्वोच्च निर्भय अवस्था मुझे कौन से पवित्र कर्मों के कारण प्राप्त हुई है, यह मैं नहीं जानता | सचमुच यह एक दुर्लभ भाग्य है | यह एक महान उत्कृष्ट लाभ है |

अब मैं आनन्द से नाचता हूँ | मेरे सब दुःख नष्ट हो गये | मेरे सब मनोरथ पूर्ण हुए हैं | मेरे कार्य सम्पन्न हुए हैं | मैंने सब वांछित वस्तुएँ प्राप्त की हैं | मेरी इच्छा परिपूर्ण हुई है |

आप मेरे सच्चे माता-पिता हो | मेरी वर्त्तमान स्थिति में मैं दूसरों के समक्ष किस प्रकार प्रकट कर सकूँ ? सर्वत्र सुख और आनन्द का अनन्त सागर मुझे लहराता हुआ दिख रहा है |

मेरे अंतःचक्षु जिससे खुल गये वह महावाक्य **'तत्त्वमसि'** है | उपनिषदों एवं वेदान्तसूत्रों को भी धन्यवाद | जिन्होंने ब्रह्मनिष्ठ गुरु का एवं उपनिषदों के महावाक्यों का रूप धारण किया है | ऐसे श्री व्यासजी को प्रणाम ! श्री शंकराचार्य को प्रणाम !

सांसारिक मनुष्य के सिर पर गुरु के चरणामृत का एक बिन्दु भी गिरे तो भी उसके स्ब दुःखों का नाश होता है | यदि एक ब्रह्मनिष्ठ पुरुष को वस्त्र पहनाये जायें तो सारे विश्व को वस्त्र पहनाने एवं भोजन करवाने के बराबर है क्योंकि ब्रह्मनिष्ठ पुरुष सचराचर विश्व में व्याप्त हैं | सबमें वे ही हैं |"

ॐ... ॐ ... ॐ ...

स्वामी शिवानंद जी

श्री राम-वशिष्ठ संवाद

श्री वशिष्ठ जी कहते हैं :

"हे रघुकुलभूषण श्री राम! अनर्थ स्वरूप जितने सांसारिक पदार्थ हैं वे सब जल में तरंग के समान विविध रूप धारण करके चमत्कार उत्पन्न करते हैं अर्थात ईच्छाएँ उत्पन्न करके जीव को मोह में फँसाते हैं | परंतु जैसे सभी तरंगें जल स्वरूप ही हैं उसी प्रकार सभी पदार्थ वस्तुतः नश्वर स्वभाव वाले हैं |

बालक की कल्पना से आकाश में यक्ष और पिशाच दिखने लगते हैं परन्तु बुद्धिमान मनुष्य के लिए उन यक्षों और पिशाचों का कोई अर्थ नहीं | इसी प्रकार अज्ञानी के चित्त में यह जगत सत्य हो ऐसा लगता है जबकि हमारे जैसे ज्ञानियों के लिये यह जगत कुछ भी नहीं |

यह समग्र विश्व पत्थर पर बनी हुई पुतलियों की सेना की तरह रूपालोक तथा अंतर-बाह्य विषयों से शून्य है | इसमें सत्यता कैसी ? परन्तु अज्ञानियों को यह विश्व सत्य लगता है

|”

वशिष्ठ जी बोले : “श्री राम ! जगत को सत्य स्वरूप में जानना यह भ्रांति है, मूढ़ता है | उसे मिथ्या अर्थात कल्पित समझना यही उचित समझ है |

हे राघव ! त्वत्ता, अहंता आदि सब विभ्रम-विलास शांत, शिवस्वरूप, शुद्ध ब्रह्मस्वरूप ही हैं | इसलिये मुझे तो ब्रह्म के अतिरिक्त और कुछ भी नहीं दिखता | आकाश में जैसे जंगल नहीं वैसे ही ब्रह्म में जगत नहीं है |

हे राम ! प्रारब्ध वश प्राप्त कर्मों से जिस पुरुष की चेष्टा कठपुतली की तरह ईच्छाशून्य और व्याकुलतारहित होती हैं वह शान्त मनवाला पुरुष जीवन्मुक्त मुनि है | ऐसे जीवन्मुक्त ज्ञानी को इस जगत का जीवन बांस की तरह बाहर-भीतर से शून्य, रसहीन और वासना-रहित लगता है |

इस दृश्य प्रपंच में जिसे रुचि नहीं, हृदय में चिन्मात्र अदृश्य ब्रह्म ही अच्छा लगता है ऐसे पुरुष ने भीतर तथा बाहर शान्ति प्राप्त कर ली है और इस भवसागर से पार हो गया है |

रघुनंदन ! शस्त्रवेत्ता कहते हैं कि मन का ईच्छारहित होना यही समाधि है क्योंकि ईच्छाओं का त्याग करने से मन को जैसी शान्ति मिलती है ऐसी शान्ति सैकड़ों उपदेशों से भी नहीं मिलती | ईच्छा की उत्पत्ति से जैसा दुःख प्राप्त होता है ऐसा दुःख तो नरक में भी नहीं | ईच्छाओं की शान्ति से जैसा सुख होता है ऐसा सुख स्वर्ग तो क्या ब्रह्मलोक में भी नहीं होता |

अतः समस्त शास्त्र, तपस्या, यम और नियमों का निचोड़ यही है कि ईच्छामात्र दुःखदायी है और ईच्छा का शमन मोक्ष है |

प्राणी के हृदय में जैसी-जैसी और जितनी-जितनी ईच्छायें उत्पन्न होती हैं उतना ही दुखों से वह ड़रता रहता है | विवेक-विचार द्वारा ईच्छायें जैसे-जैसे शान्त होती जाती हैं वैसे-वैसे दुखरूपी छूत की बीमारी मिटती जाती है |

आसक्ति के कारण सांसारिक विषयों की ईच्छायें ज्यों-ज्यों गहनीभूत होती जाती हैं, त्यों-त्यों दुःखों की विषैली तरंगें बढ़ती जाती हैं | अपने पुरुषार्थ के बल से इस ईच्छारूपी व्याधि का उपचार यदि नहीं किया जाये तो इस व्याधि से छूटने के लिये अन्य कोई औषधि नहीं हैं ऐसा मैं दृढ़तापूर्वक मानता हूँ |

एक साथ सभी ईच्छाओं का सम्पूर्ण त्याग ना हो सके तो थोड़ी-थोड़ी ईच्छाओं का धीरे-धीरे त्याग करना चाहिये परंतु रहना चाहिये ईच्छा के त्याग में रत, क्योंकि सन्मार्ग का पथिक दुखी नहीं

होता |

जो नराधम अपनी वासना और अहंकार को क्षीण करने का प्रयत्न नहीं करता वह दिनों-दिन अपने को रावण की तरह अंधेरे कुँऐं में ढ़केल रहा है |

ईच्छा ही दुखों की जन्मदात्री, इस संसाररूपी बेल का बीज है | यदि इस बीज को आत्मज्ञानरूपी अग्नि से ठीक-ठीक जला दिया तो पुनः यह अंकुरित नहीं होता |

रघुकुलभुषण राम ! ईच्छामात्र संसार है और ईच्छाओं का अभाव ही निर्वाण है | अतः अनेक प्रकार की माथापच्ची में ना पड़कर केवल ऐसा प्रयत्न करना चाहिये कि ईच्छा उत्पन्न ना हो |

अपनी बुद्धि से ईच्छा का विनाश करने को जो तत्पर नहीं, ऐसे अभागे को शास्त्र और गुरु का उपदेश भी क्या करेगा ?

जैसे अपनी जन्मभूमी जंगल में हिरणी की मृत्यु निश्चित है उसी प्रकार अनेकविध दुखों का विस्तार कारनेवाले ईच्छारूपी विषय-विकार से युक्त इस जगत में मनुष्यों की मृत्यु निश्चित है |

यदि मानव ईच्छाओं के कारण बच्चों-सा मूढ़ ना बने तो उसे आत्मज्ञान के लिये अल्प प्रयत्न ही करना पड़े | इसलिये सभी प्रकार से ईच्छाओं को शान्त करना चाहिये |

ईच्छा के शमन से परम पद की प्राप्ति होती है | ईच्छारहित हो जाना यही निर्वाण है और ईच्छायुक्त होना ही बंधन है | अतः यथाशक्ति ईच्छा को जीतना चाहिये | भला इतना करने में क्या कठिनाई है ?

जन्म, जरा, व्याधि और मृत्युरूपी कंटीली झाड़ियों और खैर के वृक्ष - समूहों की जड़ भी ईच्छा ही है | अतः शमरूपी अग्नि से अंदर-ही-अंदर बीज को जला ड़ालना चाहिये| जहाँ ईच्छाओं का अभाव है वहाँ मुक्ति निश्चित है |

विवेक वैराग्य आदि साधनों से ईच्छा का सर्वथा विनाश करना चाहिये | ईच्छा का संबंध जहाँ-जहाँ है वहाँ-वहाँ पाप, पुण्य, दुखराशियाँ और लम्बी पीड़ाओं से युक्त बंधन को हाज़िर ही समझो | पुरुष की आंतरिक ईच्छा ज्यों-ज्यों शान्त होती जाती है, त्यों-त्यों मोक्ष के लिये उसका कल्याणकारक साधन बढ़ता जाता है | विवेकहीन ईच्छा को पोसना, उसे पूर्ण करना यह तो संसाररूपी विष वृक्ष को पानी से सींचने के समान है |"

- श्रीयोगवशिष्ट महारामायण

आत्मबल का आवाहन

क्या आप अपने-आपको दुर्बल मानते हो ? लघुताग्रंथी में उलझ कर परिस्तिथियों से पिस रहे हो ? अपना जीवन दीन-हीन बना बैठे हो ?

...तो अपने भीतर सुषुप्त आत्मबल को जगाओ | शरीर चाहे स्त्री का हो, चाहे पुरुष का, प्रकृति के साम्राज्य में जो जीते हैं वे सब स्त्री हैं और प्रकृति के बन्धन से पार अपने स्वरूप की पहचान जिन्होंने कर ली है, अपने मन की गुलामी की बेड़ियाँ तोड़कर जिन्होंने फेंक दी हैं, वे पुरुष हैं | स्त्री या पुरुष शरीर एवं मान्यताएँ होती हैं | तुम तो तन-मन से पार निर्मल आत्मा हो |

जागो...उठो...अपने भीतर सोये हुये निश्चयबल को जगाओ | सर्वदेश, सर्वकाल में सर्वोत्तम आत्मबल को विकसित करो |

आत्मा में अथाह सामर्थ्य है | अपने को दीन-हीन मान बैठे तो विश्व में ऐसी कोई सत्ता नहीं जो तुम्हें ऊपर उठा सके | अपने आत्मस्वरूप में प्रतिष्ठित हो गये तो त्रिलोकी में ऐसी कोई हस्ती नहीं जो तुम्हें दबा सके |

भौतिक जगत में वाष्प की शक्ति, ईलेक्ट्रोनिक शक्ति, विद्युत की शक्ति, गुरुत्वाकर्षण की शक्ति बड़ी मानी जाती है लेकिन आत्मबल उन सब शक्तियों का संचालक बल है |

आत्मबल के सान्निध्य में आकर पंगु प्रारब्ध को पैर मिल जाते हैं, दैव की दीनता पलायन हो जाती हैं, प्रतिकूल परिस्तिथियाँ अनुकूल हो जाती हैं | आत्मबल सर्व रिद्धि-सिद्धियों का पिता है |

आत्मबल कैसे जगायें ?

हररोज़ प्रतःकाल जल्दी उठकर सूर्योदय से पूर्व स्नानादि से निवृत हो जाओ | स्वच्छ पवित्र स्थान में आसन बिछाकर पूर्वाभिमुख होकर पद्मासन या सुखासन में बैठ जाओ | शान्त और प्रसन्न वृत्ति धारण करो |

मन में दृढ भावना करो कि में प्रकृति-निर्मित इस शरीर के सब अभावों को पार करके, सब

मलिनताओं-दुर्बलताओं से पिण्ड़ छुड़ाकर आत्मा की महिमा में जागकर ही रहूँगा |

आँखें आधी खुली आधी बंद रखो | अब फ़ेफ़ड़ों में खूब श्वास भरो और भावना करो की श्वास के साथ में सूर्य का दिव्य ओज भीतर भर रहा हूँ | श्वास को यथाशक्ति अन्दर टिकाये रखो | फ़िर 'ॐ...' का लम्बा उच्चारण करते हुए श्वास को धीरे-धीरे छोड़ते जाओ | श्वास के खाली होने के बाद तुरंत श्वास ना लो | यथाशक्ति बिना श्वास रहो और भीतर ही भीतर 'हरि: ॐ...' 'हरि: ॐ...' का मानसिक जाप करो | फ़िर से फ़ेफ़ड़ों में श्वास भरो | पूर्वोक्त रीति से श्वास यथाशक्ति अन्दर टिकाकर बाद में धीरे-धीरे छोड़ते हुए 'ॐ...' का गुंजन करो |

दस-पंद्रह मिनट ऐसे प्राणायाम सहित उच्च स्वर से 'ॐ...' की ध्वनि करके शान्त हो जाओ | सब प्रयास छोड़ दो | वृत्तियों को आकाश की ओर फ़ैलने दो |

आकाश के अन्दर पृथ्वी है | पृथ्वी पर अनेक देश, अनेक समुद्र एवं अनेक लोग हैं | उनमें से एक आपका शरीर आसन पर बैठा हुआ है | इस पूरे दृश्य को आप मानसिक आँख से, भावना से देखते रहो |

आप शरीर नहीं हो बल्कि अनेक शरीर, देश, सागर, पृथ्वी, ग्रह, नक्षत्र, सूर्य, चन्द्र एवं पूरे ब्रह्माण्ड़ के दृष्टा हो, साक्षी हो | इस साक्षी भाव में जाग जाओ |

थोड़ी देर के बाद फ़िर से प्राणायाम सहित 'ॐ...' का जाप करो और शान्त होकर अपने विचारों को देखते रहो |

इस अवस्था में दृढ़ निश्चय करो कि : 'मैं जैसा चहता हूँ वैसा होकर रहूँगा |' विषयसुख, सत्ता, धन-दौलत इत्यादि की इच्छा न करो क्योंकि निश्चयबल या आत्मबलरूपी हाथी के पदचिह्न में और सभी के पदचिह्न समाविष्ठ हो ही जायेंगे |

आत्मानंदरूपी सूर्य के उदय होने के बाद मिट्टी के तेल के दीये के प्राकाश रूपी शूद्र सुखाभास की गुलामी कौन करे ?

किसी भी भावना को साकार करने के लिये हृदय को कुरेद ड़ाले ऐसी निश्चयात्मक बलिष्ट वृत्ति होनी आवशयक है | अन्तःकरण के गहरे-से-गहरे प्रदेश में चोट करे ऐसा प्राण भरके निश्चय्बल का आवाहन करो | सीना तानकर खड़े हो जाओ अपने मन की दीन-हीन दुखद मान्यताओं को कुचल ड़ालने के लिये |

सदा स्मरण रहे की इधर-उधर भटकती वृत्तियों के साथ तुम्हारी शक्ति भी बिखरती रहती है | अतः वृत्तियों को बहकाओ नहीं | तमाम वृत्तियों को एकत्रित करके साधनाकाल में आत्मचिन्तन में लगाओ और व्यवहारकाल में जो कार्य करते हो उसमें लगाओ |

दत्तचित्त होकर हरेक कार्य करो | अपने स्वभाव में से आवेश को सर्वथा निर्मूल कर दो | आवेश में आकर कोई निर्णय मत लो, कोई क्रिया मत करो | सदा शान्त वृत्ति धारण करने का अभ्यास करो | विचारशील एवं प्रसन्न रहो | स्वयं अचल रहकर सागर की तरह सब वृत्तियों की तरंगों को अपने भीतर समालो | जीवमात्र को अपना स्वरूप समझो | सबसे स्नेह रखो | दिल को व्यापक रखो | संकुचित्तता का निवारण करते रहो | खण्ड़ातमक वृत्ति का सर्वथा त्याग करो |

जिनको ब्रह्मज्ञानी महापुरुष का सत्संग और अध्यात्मविद्या का लाभ मिल जाता है उसके जीवन से दुःख विदा होने लगते हैं | ॐ आनन्द !

आत्मनिष्ठा में जागे हुए महापुरुषों के सत्संग एवं सत्साहित्य से जीवन को भक्ति और वेदांत से पुष्ट एवं पुलकित करो | कुछ ही दिनों के इस सघन प्रयोग के बाद अनुभव होने लगेगा कि भूतकाल के नकारत्मक स्वभाव, संशयात्मक-हानिकारक कल्पनाओं ने जीवन को कुचल ड़ाला था, विषैला कर दिया था | अब निश्चयबल के चमत्कार का पता चला | अंतर्तम में आविरभूत दिव्य खज़ाना अब मिला | प्रारब्ध की बेड़ियाँ अब टूटने लगी |

ठीक हैं न ? करोगे ना हिम्मत ? पढ़कर रख मत देना इस पुस्तिका को | जीवन में इसको बार-बार पढ़ते रहो | एक दिन में यह पूर्ण ना होगा | बार-बार अभ्यास करो | तुम्हारे लिये यह एक ही पुस्तिका काफ़ी है | अन्य कचरापट्टी ना पड़ोगे तो चलेगा | शाबाश वीर! शाबाश !!

ॐॐॐॐॐॐॐॐॐॐॐॐॐॐॐॐॐॐॐॐॐॐॐॐॐॐॐॐॐॐॐॐॐॐॐ

गुरु भक्ति योग

आकल्पजन्मकोटीनां यज्ञव्रततपः क्रियाः ।
ताः सर्वाः सफला देवि गुरुसंतोषमात्रतः ॥

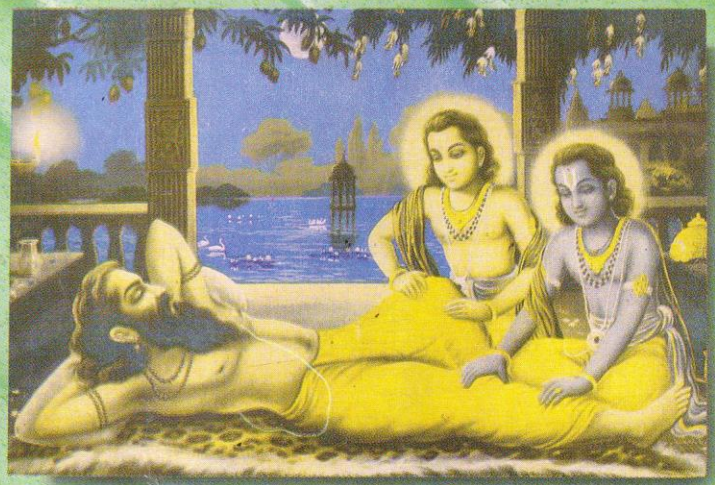

मुनिवर सयन कीन्हीं तब जाई । लगे चरण चापन दोउ भाई ॥

(गुरु विश्वामित्र की सेवा में श्रीराम और लक्ष्मण ।)

श्री योग वेदान्त सेवा समिति

अनुक्रम

गुरू भक्ति योग

(Guru Bhakti Yog)

लेखक

श्री स्वामी शिवानन्द सरस्वती

सम्पादक

श्री स्वामी सच्चिदानंद

ॐॐॐॐॐॐॐॐॐॐॐॐॐॐॐॐॐॐॐॐ

आकल्पजन्मकोटीनां यज्ञव्रततपः क्रियाः।

ताः सर्वाः सफला देवि गुरूसंतोषमात्रतः।।

'हे देवी ! कल्पपर्यन्त के, करोड़ों जन्मों के यज्ञ, व्रत, तप और शास्त्रोक्त क्रियाएँ... ये सब गुरूदेव के संतोष मात्र से सफल हो जाते हैं।'

(भगवान शंकर)

अमानमत्सरो दक्षो निर्ममो दृढ़सौहृदः।

असत्वरोऽर्थ जिज्ञासुः अनसूयुः अमोघवाक्।।

'सत्शिष्य मान और मत्सर से रहित, अपने कार्य में दक्ष, ममता रहित, गुरू में दृढ़ प्रीतिवाला, निश्चलचित्त, परमार्थ का जिज्ञासु, ईर्ष्या से रहित और सत्यवादी होता है।'

ॐॐॐॐॐॐॐॐॐॐॐॐॐॐॐॐॐॐॐॐॐॐॐॐॐॐ

अनुक्रम

निवेदन

आमुख

गुरूभक्तियोग की महत्ता

प.पू. संत श्री आसाराम जी बापू एक अदभुत विभूति

गुरूभक्तियोग

गुरू और शिष्य

गुरूभक्ति का विकास

गुरूभक्ति की शिक्षा

गुरू की महत्ता

गुरूभक्ति का अभ्यास

साधक के सच्चे पथप्रदर्शक

गुरूभक्ति का विवरण

गुरूभक्ति की नींव

गुरूभक्ति का संविधान

गुरू और दीक्षा

मंत्रदीक्षा के नियम

जप के नियम
मनुष्य के चार विभाग
गुरूकृपा हि केवलं.....

ॐॐॐॐॐॐॐॐॐॐॐॐॐॐॐॐॐॐॐॐॐॐॐॐ

निवेदन

गुरू की आवश्यकता, गुरू के प्रति शिष्य की भक्ति कैसी होनी चाहिए एवं गुरू के मार्गदर्शन के द्वारा साधक शिष्य किस प्रकार आत्म-साक्षात्कार कर सकता है, इस विषय में पूज्य श्री स्वामी शिवानन्दजी महाराज ने अपनी कई पुस्तकों में लिखा है। श्री गुरूदेव के अग्रगण्य शिष्य एवं उनके निजी रहस्यमंत्री श्री स्वामी सच्चिदानंदजी ने सोचा कि स्वामी जी महाराज की पुस्तकों में से गुरू एवं गुरूभक्ति के विषय में जो जो लिखा गया है वह सब संकलित करके अलग पुस्तक के रूप में प्रकाशित करना अत्यंत आवश्यक है। अतः उन्होंने यह 'गुरूभक्तियोग' पुस्तक का सम्पादन किया।

आध्यात्मिक मार्ग में विचरने वाले साधकों के लिए यह पुस्तक बहुत ही उपयोगी है, इतना ही नहीं, एक आशीर्वाद के समान है।

सदगुरूदेव के कृपा-प्रसादरूप यह पुस्तक आपको अमरत्व, परम सुख और शान्ति प्रदान करे यही अभ्यर्थना.....

अनुक्रम

ॐॐॐॐॐॐॐॐॐॐॐॐॐॐॐॐॐॐॐॐॐॐॐॐ

आमुख

स्वामी शिवानन्द

कर्म और कर्त्ता, पदार्थ और व्यक्ति के सम्बन्ध से ज्ञान होता है। वह एक प्रक्रिया है, चेतना नहीं है। बाह्य पदार्थ और आन्तरिक स्थिति की प्रतिक्रिया के द्वारा ही सब प्रक्रिया प्रकट होती है। मनुष्य में ज्ञान का उदभव यह ऐसी ही प्रतिक्रिया के द्वारा घटित एक रहस्यमय प्रक्रिया है। मूलतः ज्ञान सार्वत्रिक है और उसके लिए कोई प्रक्रिया आवश्यक नहीं है। परन्तु ज्ञान का उदय माने भावातीत चेतना नहीं अपितु सम्बन्धित व्यक्ति में ज्ञान का उदय। सर्वोच्च ज्ञान को स्वरूपज्ञान..... अपने सत्य अस्तित्व के बोध विषयक ज्ञान कहा जाता है। जीव में इस स्वरूपज्ञान का उदय मन की वृत्तियों के द्वारा अभिव्यक्ति की सापेक्ष प्रक्रिया से होता है। इस प्रकार उदय की प्रक्रिया के दौरान ज्ञान वृत्तिज्ञान के रूप में होता और वृत्तिज्ञान निश्चित रूप से चेतना की देश एवं काल से बद्ध अवस्था है।

मानसशास्त्र जिसे ज्ञान कहता है वह वृत्तिज्ञान है। उसकी प्रबलता, व्यापकता और गहनता अलग-अलग हो सकती है। वृत्तिज्ञान बाह्य कर्म और कर्त्ता, पदार्थ और व्यक्ति के सम्बन्ध के सिवाय उत्पन्न नहीं हो सकता। इस विश्व में कोई भी घटना दो घटना या स्थितियों के संयोग से ही घटित हो सकती है और तभी वृत्तिज्ञान उत्पन्न हो सकता है। आध्यात्मिक ज्ञान के क्रमशः आविष्कार के लिए आध्यात्मिक मार्ग का साधक कर्त्ता या व्यक्ति के रूप में माना जा सकता है। अब दूसरी वस्तु या व्यक्ति कर्म के रूप में आवश्यक है।

जब ऐच्छिक अनुशासन और एकाग्रता के द्वारा अपने मन की निर्मलता बढ़ती है तब भावातीत चेतना के प्रतिबिम्ब के रूप में ज्ञान का आविष्कार होता है। ज्ञान के आविष्कार की मात्रा फर्क मन की निर्मलता के फर्क के कारण होता है। किसी भी प्रकार के ज्ञान के उदभव के लिए

बाह्य साधन, कर्म या क्रिया आवश्यक है। अतः साधक में ज्ञान का आविर्भाव करने के लिए गुरू की आवश्यकता होती है। परस्पर प्रभावित करने की सार्वत्रिक प्रक्रिया के लिए एक दूसरे के पूरक दो भाग के रूप में गुरू-शिष्य हैं। शिष्य में ज्ञान का उदय शिष्य की पात्रता और गुरू की चेतनाशक्ति पर अवलम्बित है। शिष्य की मानसिक स्थिति अगर गुरू की चेतना के आगमन के अनुरूप पर्याप्त मात्रा में तैयार नहीं होती तो ज्ञान का आदान-प्रदान नहीं हो सकता। इस ब्रह्माण्ड मे कोई भी घटना घटित होने के लिए यह पूर्वशर्त है। जब तक सार्वत्रिक प्रक्रिया के एक दूसरे के पूरक ऐसे दो भाग या दो अवस्थाएँ इकट्ठी नहीं होती तब तक कहीं भी, कोई भी घटना घटित नहीं हो सकती।

'आत्म-निरीक्षण के द्वारा ज्ञान का उदय स्वतः हो सकता है और इसलिए बाह्य गुरू की बिल्कुल आवश्यकता नहीं है.....' यह मत सर्वस्वीकृत नहीं बन सकता। इतिहास बताता है कि ज्ञान की हर एक शाखा में शिक्षण की प्रक्रिया के लिए शिक्षक की सघन प्रवृत्ति अत्यंत आवश्यक है। यदि किसी भी व्यक्ति में, किसी भी सहायता के सिवाय, सहज रीति से ज्ञान का उदय संभव होता तो स्कूल, कॉलेज एवं यूनिवर्सिटिंयों की कोई आवश्यकता नहीं रहती। जो लोग 'शिक्षक की सहायता के बिना ही, स्वतंत्र रीति से कोई व्यक्ति कुशल बन सकता है.....' ऐसे गलत मार्ग पर ले जाने वाले मत का प्रचार प्रसार करते हैं वे लोग स्वयं तो किसी शिक्षक के द्वारा ही शिक्षित होते हैं। हाँ, ज्ञान के उदय के लिए शिष्य या विद्यार्थी के प्रयास का महत्त्व कम नहीं है। शिक्षक के उपदेश जितना ही उसका भी महत्त्व है।

इस ब्रह्माण्ड में कर्त्ता एवं कर्म सत्य के एक ही स्तर पर स्थित हैं। क्योंकि इसके सिवाय उनके बीच पारस्परिक आदान-प्रदान संभव नहीं हो

सकता। अलग स्तर पर स्थित चेतना शक्ति के बीच प्रतिक्रिया नहीं हो सकती। हालांकि शिष्य जिस स्तर पर होता है उस स्तर को माध्यम बनाकर गुरू अपनी उच्च चेतना को शिष्य पर केन्द्रित कर सकते हैं। इससे शिष्य के मन का योग्य रूपांतर हो सकता है। गुरू की चेतना के इस कार्य को शक्ति संचार कहा जाता है। इस प्रक्रिया में गुरू की शक्ति शिष्य में प्रविष्ट होती है। ऐसे उदाहरण भी मिल जाते हैं कि शिष्य के बदले में गुरू ने स्वयं ही साधना की हो और उच्च चेतना की प्रत्यक्ष सहायता के द्वारा शिष्य के मन की शुद्धि करके उसका ऊर्ध्वीकरण किया हो।

दोषदृष्टिवाले लोग कहते हैं.... "अन्तरात्मा की सलाह लेकर सत्य-असत्य, अच्छा-बुरा हम पहचान सकते है अतः बाह्य गुरू की आवश्यकता नहीं है।"

किन्तु यह बात ध्यान में रहे कि जब तक साधक शुचि और इच्छा-वासनारहितता के शिखर पर नहीं पहुँच जाता तब तक योग्य निर्णय करने में अन्तरात्मा उसे सहायरूप नहीं बन सकती।

पाशवी अन्तरात्मा किसी व्यक्ति को आध्यात्मिक ज्ञान नहीं दे सकती। मनुष्य के विवेक और बौद्धिक मत है। प्रायः सभी मनुष्यों की बुद्धि सुषुप्त इच्छाओं तथा वासनाओं का एक साधन बन जाती है। मनुष्य की अन्तरात्मा उसके अभिगम, झुकाव, रूचि, शिक्षा, आदत, वृत्तियाँ और अपने समाज के अनुरूप बात ही कहती है। अफ्रीका के जंगली आदिवासी, सुशिक्षित युरोपियन और सदाचार की नींव पर सुविकसित बने हुए योगी की अन्तरात्मा की आवाजें भिन्न-भिन्न होती हैं। बचपन से अलग-अलग ढंग से बड़े हुए दस अलग-अलग व्यक्तियों की दस अलग-अलग अन्तरात्मा होती हैं। विरोचन ने स्वयं ही मनन

किया, अपनी अन्तरात्मा का मार्गदर्शन लिया एवं मैं कौन हूँ ? इस समस्या का आत्मनिरीक्षण किया और निश्चय किया कि यह देह ही मूलभूत तत्त्व है।

याद रखना चाहिए कि मनुष्य की अन्तरात्मा पाशवी वृत्तियों, भावनाओं तथा प्राकृत वासनाओं की जाल में फँसी हुई हैं। मनुष्य के मन की वृत्ति विषय और अहं की ओर ही जायगी, आध्यात्मिक मार्ग में नहीं मुड़ेगी। आत्म-साक्षात्कार की सर्वोच्च भूमिका में स्थित गुरू में शिष्य अगर अपने व्यक्तित्व का सम्पूर्ण समर्पण कर दे तो साधना-मार्ग के ऐसे भयस्थानों से बच सकता है। ऐसा साधक संसार से परे दिव्य प्रकाश को प्राप्त कर सकता है। मनुष्य की बुद्धि एवं अन्तरात्मा को जिस प्रकार निर्मित किया जाता है, अभ्यस्त किया जाता है उसी प्रकार वे कार्य करते हैं। सामान्यतः वे दृश्यमान मायाजगत तथा विषय वस्तु की आकांक्षा एवं अहं की आकांक्षा पूर्ण करने के लिए कार्यरत रहते हैं। सजग प्रयत्न के बिना आध्यात्मिक ज्ञान के उच्च सत्य को प्राप्त करने के लिए कार्यरत नहीं होते।

'गुरू की आवश्यकता नहीं है और हरएक को अपनी विवेक-बुद्धि तथा अन्तरात्मा का अनुसरण करना चाहिए.....' ऐसे मत का प्रचार प्रसार करने वाले भूल जाते हैं कि ऐसे मत का प्रचार करके वे स्वयं गुरू की तरह प्रस्तुत हो रहे हैं। 'किसी की शिक्षक का आवश्यकता नहीं है' ऐसा सिखाने वालों को उनके शिष्य मानपान और भक्तिभाव अर्पित करते हैं। भगवान बुद्ध ने अपने शिष्यों को बोध दिया कि 'तुम स्वयं ही तार्किक विश्लेषण करके मेरे सिद्धान्त की योग्यता-अयोग्यता और सत्यता की जाँच करो। बुद्ध कहते हैं इसलिए सिद्धान्त को सत्य मानकर स्वीकार कर लो ऐसा नहीं।' किसी भी भगवान की पूजा करना,

ऐसा उन्होंने सिखाया लेकिन इसका परिणाम यह आया कि महान गुरू एवं भगवान के रूप में उनकी पूजा शुरू हो गई। इस प्रकार स्वयं ही चिन्तन करना चाहिए और गुरू की आवश्यकता नहीं है' इस मत की शिक्षा से स्वाभाविक ही सीखनेवाले के लिए गुरू की आवश्यकता का इन्कार नहीं हो सकता। मनुष्य के अनुभव कर्त्ता कर्म के परस्पर सम्बन्ध की प्रक्रिया पर आधारित है।

पश्चिम में कुछ लोग मानते हैं कि गुरू पर शिष्य का अवलंबन एक मानसिक बन्धन है। मानस-चिकित्सा के मुताबिक ऐसे बन्धन से मुक्त होना जरूरी है। यहाँ स्पष्टता करना अत्यन्त आवश्यक है कि मानस-चिकित्सा वाले मानसिक परावलम्बन से गुरू-शिष्य का सम्बन्ध बिल्कुल भिन्न है। गुरू की उच्च चेतना के आश्रय में शिष्य अपना व्यक्तित्व समर्पित करता है। गुरू की उच्च चेतना शिष्य की चेतना को आवृत्त कर लेती और उसका ऊर्ध्वीकरण शिष्य का गुरू पर अवलम्बन केवल प्रारंभ में ही होता है। बाद में तो वह परब्रह्म की शरणागति बन जाती है। गुरू सनातन शक्ति के प्रतीक बनते हैं। किसी दर्दी के मानस-चिकित्सक प्रति परावलम्बन का सम्बन्ध तोड़ना अनिवार्य है, क्योंकि यह सम्बन्ध दर्दी का मानसिक तनाव कम करने के लिए अस्थायी सम्बन्ध है। जब चिकित्सा पूरी हो जाती है तब यह परावलम्बन तोड़ दिया जाता है और दर्दी पूर्व की भाँति अलग और स्वतंत्र हो जाता है। किन्तु गुरू-शिष्य के सम्बन्ध में, प्रारंभ में या अन्त में, कभी भी अनिच्छनीय परावलम्बन नहीं होता। यह तो केवल पराशक्ति पर ही अवलम्बन होता है। गुरू को देह स्वरूप में यह एक व्यक्ति के स्वरूप में नहीं माना जाता है। गुरू पर अवलम्बन शिष्य के पक्ष में देखा जाय तो

आत्मशुद्धि की निरंतर प्रक्रिया है जिसके द्वारा शिष्य ईश्वरीय परम तत्त्व का अंतिम लक्ष्य प्राप्त कर सकता है।

कुछ लोग उदाहरण देते हैं कि प्राचीन समय में भी याज्ञवल्क्य ने अपने गुरू वैशंपायन से अलग होकर, किसी भी अन्य गुरू की सहाय के बिना ही, स्वतंत्र रीति से आध्यात्मिक विकास किया था। परन्तु याज्ञवाल्क्य गुरू से अलग हो गये इसका अर्थ यह नहीं है कि वे गुरू के वफादार नहीं थे। गुरू ने क्रोधित होकर कहा था कि उन्होंने दी हुई विद्या लौटाकर आश्रम छोड़कर चले जाओ। फलतः याज्ञवल्क्य में मानव-गुरू के प्रति अश्रद्धा का प्रादुर्भाव हुआ लेकिन उन्होंने गुरू की खोज करना छोड़ नहीं दिया। उन्होंने गुरू की आवश्यकता का अस्वीकार नहीं किया है और आध्यात्मिक मार्ग में स्वतंत्र रीति से आगे बढ़ा जा सकता है ऐसा भी नहीं माना है। उन्होंने उच्चतर गुरू सूर्यनारायण का आश्रय लिया। जब उन्होंने फिर से ज्ञान प्राप्त किया तब सूर्य की कृपा प्राप्त करने के लिए याज्ञवल्क्य के दृढ़ संकल्प बल एवं हिम्मत पर प्रसन्न होकर पुराने गुरू ने अपने अन्य शिष्यों को ज्ञान देने के लिए प्रार्थना की तब याज्ञवल्क्य ने अन्य शिष्यों को भी ज्ञान दिया था।

प्रकृति के विभिन्न स्वरूपों के द्वारा अभिव्यक्त ईश्वर ही सर्वोच्च गुरू है। हमारे इर्दगिर्द जो विश्व है वह हमारे जीवन में बोध देने वाला शिक्षक है। हम अगर प्रकृति की लीला के प्रति सजग रहें तो हमारे समक्ष होने वाली हरएक घटना में गहन रहस्य एवं बोधपाठ मिल जाता है। यह विश्व ईश्वर का साकार स्वरूप है। उसकी लीला गूढ़ और रहस्यमय है। यह लीला आन्तर एवं बाह्य, व्यक्तिलक्षी एवं वस्तुलक्षी, हर प्रकार के जीवन के अनुभवों को समाविष्ट कर लेती है। उसको जानने से, समझने से हमारे अनुभव, भावना एवं समझ का योग्य

विकास होता है। परब्रह्म के प्रति हमारे विकास के लिए परिवर्तन संभव बनता है।

अगर हम प्रकृति की उत्क्रान्ति की प्रक्रिया के साथ व्यक्तिगत विकास को नहीं जोड़ेंगे तो केवल याँत्रिक विकास होगा। उसमें व्यक्ति अनिवार्यतः घसीटा जाता है। उस पर किसी व्यक्ति का नियंत्रण नहीं होता। किन्तु विकास जब परम चेतना के अंश स्वरूप होता है और व्यक्ति की अपनी चेतना में घुलमिल जाता है तब योग की प्रक्रिया घटित होती है। व्यक्ति की चेतना अपने अस्तित्व को आत्मा के साथ पहचानकर, अपने आत्मा में वैश्विक उत्क्रान्ति का अनुभव करे यह प्रक्रिया योग है। अन्य दृष्टि से देखें तो, ब्रह्माण्ड की लीला का लघु स्वरूप में अपनी आत्मा में अनुभव करना योग है। जब यह स्थिति प्राप्त होती है तब व्यक्ति ईश्वरेच्छा को सम्पूर्णतः शरण हो जाता है। अथवा पराशक्ति के नियम उसको इतने तादृश बन जाते हैं कि प्रकृति की घटनाओं एवं मनुष्य की इच्छाओं के बीच संघर्षों का पूर्णतः लोप हो जाता है। उस व्यक्ति की अभिलाषाएँ दैवी इच्छा या प्रकृति की घटनाओं से अभिन्न बन जाती हैं।

गुरू की यह सर्वोच्च विभावना है और हर साधक को यह प्राप्त करना है। व्यक्तिगत गुरू का स्वीकार करना यानी साधक की परब्रह्म में विलीन होने की तैयारी और उस दिशा में एक सोपान। गुरू की विभावना के विकास के लिए तथा व्यक्ति की गुरू के प्रति शरणागति विभिन्न सोपान हैं। फिर भी साधना के किसी भी सोपान पर गुरू की आवश्यकता का इन्कार नहीं हो सकता, क्योंकि आत्म-साक्षात्कार के लिए तड़पते हुए साधक को होने वाली परब्रह्म की अनुभूति का नाम गुरू है।

अनुक्रम

ॐॐॐॐॐॐॐॐॐॐॐॐॐॐॐॐॐॐॐॐॐॐ

गुरूभक्तियोग की महत्ता

ब्रह्मलीन स्वामी शिवानन्दजी

जिस प्रकार शीघ्र ईश्वरदर्शन के लिए कलियुग-साधना के रूप कीर्तन-साधना है उसी प्रकार इस संशय, नास्तिकता, अभिमान और अहंकार के युग में योग की एक नई पद्धति यहाँ प्रस्तुत है....गुरूभक्तियोग। यह योग अदभुत है। इसकी शक्ति असीम है। इसका प्रभाव अमोघ है। इसकी महत्ता अवर्णनीय है। इस युग के लिए उपयोगी इस विशेष योग-पद्धति के द्वारा आप इस हाड़-चाम के पार्थिव देह में रहते हुए ईश्वर के प्रत्यक्ष दर्शन कर सकते हैं। इसी जीवन में आप उन्हें आपके साथ विचरण करते हुए निहार सकते हैं।

साधना का बड़ा दुश्मन रजोगुणी अहंकार है। अभिमान को निर्मूल करने के लिए एवं विषमय अहंकार को पिघलाने के लिए गुरूभक्तियोग उत्तम और सबसे अधिक सचोट साधनमार्ग है। जिस प्रकार किसी रोग के विषाणु निर्मूल करने के लिए कोई विशेष प्रकार की जन्तुनाशक दवाई आवश्यक है उसी प्रकार अविद्या और अहंकार के नाश के लिए गुरूभक्तियोग सबसे अधिक प्रभावशाली, अमूल्य और निश्चित प्रकार का उपचार है। वह सबसे अधिक प्रभावशाली 'मायानाशक' और 'अहंकार नाशक' है। गुरूभक्तियोग की भावना में जो सदभागी शिष्य निष्ठापूर्वक सराबोर होते हैं उन पर माया और अहंकार के रोग की कोई कसर नहीं होती। इस योग का आश्रय लेने वाला व्यक्ति सचमुछ भाग्यशाली है।

क्योंकि वह योग के अन्य प्रकारों में भी सर्वोच्च सफलता हासिल करेगा। उसको कर्म, भक्ति, ध्यान और ज्ञानयोग के फल पूर्णतः प्राप्त होंगे।

इस योग में संलग्न होने के लिए तीन गुणों की आवश्यकता हैः निष्ठा, श्रद्धा और आज्ञापालन। पूर्णता के ध्येय में संनिष्ठ रहो। संशयी और ढीले ढाले मत रहना। अपने स्वीकृत गुरू में सम्पूर्ण श्रद्धा रखो। आपके मन में संशय की छाया को भी फटकने मत देना। एक बार गुरू में सम्पूर्ण श्रद्धा दृढ़ कर लेने के बाद आप समझने लगेंगे कि उनका उपदेश आपकी श्रेष्ठ भलाई के लिए ही होता है। अतः उनके शब्द का अन्तःकरणपूर्वक पालन करो। उनके उपदेश का अक्षरशः अनुसरण करो। आप हृदयपूर्वक इस प्रकार करेंगे तो मैं विश्वास दिलाता हूँ कि आप पूर्णता को प्राप्त करेंगे ही। मैं पुनः दृढ़तापूर्वक विश्वास दिलाता हूँ।

अनुक्रम

ॐॐॐॐॐॐॐॐॐॐॐॐॐॐॐॐॐॐॐॐॐॐॐ

प.पू. संत श्री आसारामजी बापूः
एक अदभुत विभूति

ध्यान और योग के अनुभव कैसे प्राप्त किये जाएँ ? पूजा पाठ, जप-तप ध्यान करने पर भी जीवन में व्याप्त अतृप्ति का कैसे निवारण करें ? ईश्वर में कैसे मन लगायें ? अपने अंदर ही निहित आत्मानंद के खजाने को कैसे खोलें ? व्यावहारिक जीवन में परेशान करने वाले भय, चिन्ता, निराशा, हताशा, आदि को जीवन से दूर कैसे भगायें ? निश्चिंतता, निर्भयता, निरन्तर प्रसन्नता प्राप्त करके जीवन को आनन्द से कैसे महकायें ? अपने प्राचीन शास्त्रों में वर्णित आनन्द-स्वरूप ईश्वर

के अस्तित्व की झाँकी हम अपने हृदय में कैसे पायें ? क्या आज भी यह सब सम्भव है ?

हाँ, सम्भव है, अवश्यमेव। मानव को चिंतित बनाने वाले इन प्रश्नों का समाधान साधना के निश्चित परिणामों के द्वारा कराके पिपासु साधकों के जीवन को ईश्वराभिमुख करके उसे मधुरता प्रदान करने वाले ऋषि-महर्षि और संत-महापुरूष आज भी समाज में वर्तमान है। 'बहुरत्ना वसुन्धरा।' इस संत महापुरूषों की सुगंधित हारमाला में पूज्यपाद संत श्री आसारामजी बापू एक पूर्ण विकसित सुमधुर पुष्प हैं।

अहमदाबाद शहर में, किन्तु शहरी वातावरण से दूर साबरमति की मनमोहक प्राकृतिक गोद में त्वरित गति से विकसित हुए उनके पावन आश्रम के अध्यात्मपोषक वातावरण में आज हजारों साधक जाकर भक्तियोग, नादानुसंधानयोग, ज्ञानयोग एवं कुण्डलिनी योग की शक्तिपात वर्षा का लाभ उठा-उठाकर अपने व्यक्तिगत पारमार्थिक जीवन को अधिकाधिक उन्नत एवं आनन्दमय बना रहे हैं। चित्त में समता का प्रसाद पाकर वे व्यावहारिक जीवन-नौका को बड़े ही उत्साह से खे-खेकर निहाल होते जा रहे हैं।

प्राचीन ऋषि कुलों का स्मरण कराने वाले इस पावन आश्रम में कुण्डलिनी योग की सच्ची अनुभूति कराके आत्मिक प्रेमसागर में डुबकी लगवाकर, मानव समुदाय को ईश्वरीय आनन्द में सराबोर करके अगमनिगम के औलिया, हजारों तप्त हृदयवाले संसारयात्रियों के आश्रयदाता वट-वृक्षतुल्य, प्रेमपूर्ण हृदयवाले, सहज सान्निध्य और सत्संग मात्र से वेदान्त के अमृत-रस का स्वाद चखा रहे हैं।

संत श्री के नाम को सुनकर, उनकी पुस्तकें पढ़कर अनेक सज्जन उनके दर्शन और मुलाकात के लिए कुतूहलवश एक बार उनके आश्रम में

आते है, फिर तो वे नियमित आने वाले साधक बनकर योग और वेदान्त के रसिक बन जाते हैं। वे अपने जीवन-प्रवाह को अमृतमय आनन्द-सिन्धु की तरफ बहते हुए देखकर हृदय में गदगदित हो जाते हैं, आनन्द में सराबोर हो जाते हैं।

एक अजब योगी

आश्रम में जाकर पूज्यश्री के दर्शन और आध्यात्मिक तेज से उद्दीप्त नयनामृत से सिक्त एक सुप्रसिद्ध लेखक, वक्ता, तंत्री सज्जन ने लिखा हैः

"कोई मुझसे पूछे की अहमदाबाद के आसपास कौन सच्चा योगी है ? मैं तुरन्त संत श्री आसारामजी बापू का नाम दूँगा। साबरतट स्थित एक भव्य एवं विशाल आश्रम में विराजमान इन दिव्यात्मा महापुरूष का दर्शन करना, वास्तव में जीवन की एक उपलब्धि है। उनके निकट में पहुँचना, निश्चित ही अहोभाग्य की सीमा पर पहुँचना है।

योगियों की खोज में मैं काफी भटका हूँ, पर्वत और गुफाओं के चक्कर काटने में कभी पीछे मुड़कर देखा तक नहीं। परन्तु प्रभुत्वशाली व्यक्ति के महाधनी ऐसे संत श्री आसारामजी बापू से मिलते ही मेरे अन्तर में प्रतीति सी हो गई कि यहाँ तो शुद्धतम सुवर्ण ही सुवर्ण है।

प्रेम और प्रज्ञा के सागर

संत श्री की आँखों में ऐसा दिव्य तेज जगमगाया करता है कि उनके अन्दर की गहरी अतल दिव्यता में डूब जाने की कामना करने वाला क्षणभर में ही उसमें डूब जाता है। मानो, उन आँखों में प्रेम और प्रकाश का असीम सागर हिलौरें ले रहा है।

वे सरल भी इतने कि छोटे-छोटे बालकों की तरह व्यवहार करने लगें। उनमें ज्ञान भी ऐसा अदभुत कि विकट पहेली को पलभर में

सुलझा कर रख दें। उनकी वाणी की बुनकार ऐसी कि सजगता के तट पर सोनेवाले को क्षणभर में जगाकर ज्ञान-सागर की मस्ती में लीन कर दें।

अनेक शक्तियों के स्वामी

अन्यत्र कहीं देखी न गई हो ऐसी योगसिद्धि मैंने अनेक बार उनमें देखी है। अनेक दरिद्रियों को उन्होंने सुख और समृद्धि के सागर में सैर करने वाले बना दिये हैं। उनके चुम्बकीय शक्ति-सम्पन्न पावन सान्निध्य में असंख्य साधकों द्वारा स्वानुभूत चमत्कारों और दिव्य अनुभवों का आलेखन करने लगूँ तो एक विराट भागवत कथा तैयार हो जाय। आगत व्यक्ति के मन को जान लेने की शक्ति तो उनमें इतनी तीव्रता से सक्रिय रहती है मानो समस्त नभमण्डल को वे अपने हाथों में लेकर देख रहे हों।

ऐसे परम सिद्ध पुरूष के सान्निध्य में, उनकी प्रेरक पावन अमृतवाणी में से तुम्हारी जीवन-समस्याओं का सांगोपांग हल तुम्हें अवश्य मिल जायगा।

साबरतट पर स्थित चैतन्य लोक तुल्य संत श्री आसारामजी आश्रम में प्रविष्ट होते ही एक अदभुत शान्ति की अनुभूति होने लगती है। प्रत्येक रविवार और बुधवार को दोपहर 11 बजे से हररोज शाम 6 बजे से एवं ध्यानयोग शिविरों के दौरान आश्रम में ज्ञानगंगा उमड़ती रहती है। आध्यात्मिक अनुभूतियों के उपवन लहलहाते हैं। आश्रम का सम्पूर्ण वातावरण मानो एक चैतन्य विद्युत्तेज से छलछलाता है। परम चैतन्य मानो स्वयं ही मूर्त्त स्वरूप धारण करके प्रेम और प्रकाश का सागर लहराता है। विद्यार्थियों के लिए आयोजित योग शिविरों में अनेक

विद्यार्थियों के लिए आयोजित योग शिविरों में अनेक विद्यार्थियों एवं अध्यापकों ने अपने जीवन-विकास का अनोखा पथ पा लिया है।

पूज्य बापू का विद्युन्मय व्यक्तितत्व, अन्तस्तल की गहराई में से उमड़ती हुई वाणी की गंगधारा और आश्रम के समग्र वातावरण में फैलती हुई दिव्यता का आस्वाद एक बार भी जिस किसी को मिल जाता है वह कदापि उसे भूल नहीं सकता। जो अपने उर के आँगन में अमृत ग्रहण करने के लिए तत्पर हो, उसे अमृत का आस्वाद अवश्य मिल जाता है।

ब्रह्मनिष्ठ, योगसिद्ध, माधुर्य के महासिन्धु समान संत श्री आसाराम जी बापू का सान्निध्य सेवन करने वाले का और अमृतवर्षा को संग्रहित करने वाले का अल्प पुरूषार्थ भी व्यर्थ नहीं जायगा ऐसा अनेकों का अनुभव बोल रहा है।

गुरूतत्त्व

जिस प्रकार पिता या पितामह की सेवा करने से पुत्र या पौत्र खुश होता है इसी प्रकार गुरू की सेवा करने से मंत्र प्रसन्न होता है। गुरू, मंत्र एवं इष्टदेव में कोई भेद नहीं मानना। गुरू ही ईश्वर हैं। उनको केवल मानव ही नहीं मानना। जिस स्थान में गुरू निवास कर रहे हैं वह स्थान कैलास हैं। जिस घर में वे रहते हैं वह काशी या वाराणसी है। उनके पावन चरणों का पानी गंगाजी स्वयं हैं। उनको पावन मुख से उच्चारित मंत्र रक्षणकर्त्ता ब्रह्मा स्वयं ही हैं।

गुरू की मूर्ति ध्यान का मूल है। गुरू के चरणकमल पूजा का मूल है। गुरू का वचन मोक्ष का मूल है।

गुरू तीर्थस्थान हैं। गुरू अग्नि हैं। गुरू सूर्य हैं। गुरू समस्त जगत हैं। समस्त विश्व के तीर्थधाम गुरू के चरणकमलों में बस रहे हैं। ब्रह्मा,

विष्णु, शिव, पार्वती, इन्द्र आदि सब देव और सब पवित्र नदियाँ शाश्वत काल से गुरू की देह में स्थित हैं। केवल शिव ही गुरू हैं।

गुरू और इष्टदेव में कोई भेद नहीं है। जो साधना एवं योग के विभिन्न प्रकार सिखाते है वे शिक्षागुरू हैं। सबमें सर्वोच्च गुरू वे हैं जिनसे इष्टदेव का मंत्र श्रवण किया जाता है और सीखा जाता है। उनके द्वारा ही सिद्धि प्राप्त की जा सकती है।

अगर गुरू प्रसन्न हों तो भगवान प्रसन्न होते हैं। गुरू नाराज हों तो भगवान नाराज होते हैं। गुरू इष्टदेवता के पितामह हैं।

जो मन, वचन, कर्म से पवित्र हैं, इन्द्रियों पर जिनका संयम है, जिनको शास्त्रों का ज्ञान है, जो सत्यव्रती एवं प्रशांत हैं, जिनको ईश्वर-साक्षात्कार हुआ है वे गुरू हैं।

बुरे चरित्रवाला व्यक्ति गुरू नहीं हो सकता। शक्तिशाली शिष्यों को कभी शक्तिशाली गुरूओं की कमी नहीं रहती। शिष्य को जितनी-जितनी गुरू में श्रद्धा होती है उतने फल की उसे प्राप्ति होती है। किसी आदमी के पास यूनिवर्सिटी की उपाधियाँ हों इससे वह गुरू की कसौटी करने की योग्यतावाला नहीं बन जाता। गुरू के आध्यात्मिक ज्ञान की कसौटी करना यह किसी भी मनुष्य के लिए मूर्खता एवं उद्दण्डता की पराकाष्ठा है। ऐसा व्यक्ति दुन्यावी ज्ञान के मिथ्याभिमान से अन्ध बना हुआ है।

अनुक्रम

ॐॐॐॐॐॐॐॐॐॐॐॐॐॐॐॐॐॐॐॐॐॐ

प्रकरण 1

गुरूभक्तियोग

गुरूभक्तियोग के अंश

गुरूभक्तियोग माना सदगुरू को सम्पूर्ण आत्मसमर्पण करना।

गुरूभक्तियोग के आठ महत्त्वपूर्ण अंग इस प्रकार हैं- (अ) गुरू भक्तियोगके अभ्यास के लिए सच्चे हृदय की स्थिर महेच्छा। (ब) सदगुरू के विचार, वाणी और कार्यों में सम्पूर्ण श्रद्धा। (क) गुरू के नाम का उच्चारण और गुरू को नम्रतापूर्वक साष्टांग प्रणाम। (ड) सम्पूर्ण आज्ञाकारिता के साथ गुरू के आदेशों का पालन। (प) बिना फलप्राप्ति की अपेक्षा सदगुरू की सेवा। (फ) भक्तिभावपूर्वक हररोज सदगुरू के चरणकमलों की पूजा। (भ) सदगुरू के दैवी कार्य के लिए आत्म-समर्पण.... तन, मन, धन समर्पण। (म) गुरू की कल्याणकारी कृपा प्राप्त करने के लिए एवं उनका पवित्र उपदेश सुनकर उसका आचरण करने के लिए सदगुरू के पवित्र चरणों का ध्यान।

गुरूभक्तियोग योग का एक स्वतंत्र प्रकार है।

मुमुक्षु जब तक गुरूभक्तियोग का अभ्यास नहीं करता। तब तक ईश्वर के साथ एकरूपता होने के लिए आध्यात्मिक मार्ग में प्रवेश करना उसके लिए सम्भव नहीं है।

जो व्यक्ति गुरूभक्तियोग की फिलासफी समझता है वही गुरू को बिनशरती आत्म-समर्पण कर सकता है।

जीवन के परम ध्येय अर्थात् आत्म-साक्षात्कार की प्राप्ति गुरूभक्तियोग के अभ्यास द्वारा ही हो सकती है।

गुरूभक्ति का योग सच्चा एवं सुरक्षित योग है, जिसका अभ्यास करने में किसी भी प्रकार का भय नहीं है।

आज्ञाकारी बनकर गुरू के आदेशों का पालन करना, उनके उपदेशों को जीवन में उतारना, यही गुरूभक्तियोग का सार है।

गुरूभक्तियोग का हेतु

मनुष्य को पदार्थ एवं प्रकृति के बन्धनों से मुक्ति दिलाना और गुरू को सम्पूर्ण आत्मसमर्पण करके स्व के अबाध्य स्वतंत्र स्वभाव का भान कराना यह गुरूभक्तियोग का हेतु है।

जो व्यक्ति गुरूभक्तियोग का अभ्यास करता है वह बिना किसी विपत्ति से अहंभाव को निर्मूल कर सकता है, संसार के मलिन जल को बहुत सरलता से पार कर जाता है और अमरत्व एवं शाश्वत सुख प्राप्त करता है।

गुरूभक्तियोग मन को शान्त और निश्चल बनाने वाला है।

गुरूभक्तियोग दिव्य सुख के द्वार खोलने की अमोघ कुँजी है।

गुरूभक्तियोग के द्वारा सदगुरू की कल्याणकारी कृपा प्राप्त करना जीवन का लक्ष्य है।

गुरूभक्तियोग के सिद्धान्त

नम्रतापूर्वक पूज्यश्री सदगुरू के पदारविन्द के पास जाओ। सदगुरू के जीवनदायी चरणों में साष्टांग प्रणाम करो। सदगुरू के चरणकमल की शरण में जाओ। सदगुरू के पावन चरणों की पूजा करो। सदगुरू के पावन चरणों का ध्यान करो। सदगुरू के पावन चरणों में मूल्यवान अर्घ्य अर्पण करो। सदगुरू के यशःकारी चरणों की सेवा में जीवन अर्पण करो। सदगुरू के दैवी चरणों की धूलि बन जाओ। ऐसा गुरूभक्त हठयोगी, लययोगी और राजयोगियों से ज्यादा सरलतापूर्वक एवं सलामत रीति से सत्य स्वरूप का साक्षात्कार करके धन्य हो जाता है।

सदगुरू के दैवी पावन चरणों में आत्मसमर्पण करने वाले को निश्चिन्तता, निर्भयता और आनन्द सहजता से प्राप्त होता है। वह लाभान्वित हो जाता है।

आपको गुरूभक्तियोग के मार्ग द्वारा सच्चे हृदय से, तत्परतापूर्वक प्रयास करना चाहिए।

गुरू के प्रति भक्ति इस योग का सबसे महत्त्वपूर्ण अंग है।

पवित्र शास्त्रों के विशेषज्ञ ब्रह्मनिष्ठ गुरू के विचार, वाणी और कार्यों में सम्पूर्ण श्रद्धा गुरूभक्तियोग का सार है।

गुरूभक्तियोग एक विज्ञान के रूप में

इस युग में आचरण किया जा सके ऐसा, सबसे ऊँचा और सबसे सरल योग गुरूभक्तियोग है।

गुरूभक्तियोग की फिलासफी में सबसे बड़ी बात गुरू को परमेश्वर के साथ एकरूप मानना है।

गुरूभक्तियोग की फिलासफी का व्यावहारिक स्वरूप यह है कि गुरू को अपने इष्टदेवता से अभिन्न मानें।

गुरूभक्तियोग ऐसी फिलासफी नहीं है जो पत्र-व्यवहार या व्याख्यानों के द्वारा सिखाई जा सके। इसमें तो शिष्य को कई वर्ष तक गुरू के पास रहकर शिस्त एवं संयमपूर्ण जीवन बिताना चाहिए, ब्रह्मचर्य का पालन करना चाहिए एवं गहरा ध्यान करना चाहिए।

गुरूभक्तियोग सर्वोत्तम विज्ञान है।

गुरूभक्तियोग का फल

गुरूभक्तियोग अमरत्व, परम सुख, मुक्ति, सम्पूर्णता, शाश्वत आनन्द और चिरंतन शान्ति प्रदान करता है।

गुरूभक्तियोग का अभ्यास सांसारिक पदार्थों के प्रति निःस्पृहता और वैराग्य प्रेरित करता है तथा तृष्णा का छेदन करता है एवं कैवल्य मोक्ष देता है।

गुरूभक्तियोग का अभ्यास भावनाओं एवं तृष्णाओं पर विजय पाने में शिष्य को सहायरूप बनता है, प्रलोभनों के साथ टक्कर लेने में तथा मन को क्षुब्ध करने वाले तत्त्वों का नाश करने में सहाय करता है। अन्धकार को पार करके प्रकाश की ओर ले जाने वाली गुरूकृपा करने के लिए शिष्य को योग्य बनाता है।

गुरूभक्तियोग का अभ्यास आपको भय, अज्ञान, निराशा, संशय, रोग, चिन्ता आदि से मुक्त होने के लिए शक्तिमान बनाता है और मोक्ष, परम शान्ति और शाश्वत आनन्द प्रदान करता है।

गुरूभक्तियोग की साधना

गुरूभक्तियोग का अर्थ है व्यक्तिगत भावनाओं, इच्छाओं, समझ-बुद्धि एवं निश्चयात्मक बुद्धि के परिवर्तन द्वारा अहोभाव को अनंत चेतना स्वरूप में परिणत करना।

गुरूभक्तियोग गुरूकृपा के द्वारा प्राप्त सचोट, सुन्दर अनुशासन का मार्ग है।

गुरूभक्तियोग का महत्त्व

कर्मयोग, भक्तियोग, हठयोग, राजयोग आदि सब योगों की नींव गुरूभक्तियोग है।

जो मनुष्य गुरूभक्तियोग के मार्ग से विमुख है वह अज्ञान, अन्धकार एवं मृत्यु की परम्परा को प्राप्त होता है।

गुरूभक्तियोग का अभ्यास जीवन के परम ध्येय की प्राप्ति का मार्ग दिखाता है।

गुरूभक्तियोग का अभ्यास सबके लिए खुल्ला है। सब महात्मा एवं विद्वान पुरूषों ने गुरूभक्तियोग के अभ्यास द्वारा ही महान कार्य किये

हैं। जैसे एकनाथ महाराज, पूरणपोड़ा, तोटकाचार्य, एकलव्य, शबरी, सहजोबाई आदि।

गुरूभक्तियोग में सब योग समाविष्ट हो जाते है। गुरूभक्तियोग के आश्रय के बिना अन्य कई योग, जिनका आचरण अति कठिन है, उनका सम्पूर्ण अभ्यास किसी से नहीं हो सकता।

गुरूभक्तियोग में आचार्य की उपासना के द्वारा गुरूकृपा की प्राप्ति को खूब महत्त्व दिया जाता है।

गुरूभक्तियोग वेद एवं उपनिषद के समय जितना प्राचीन है।

गुरूभक्तियोग जीवन के सब दुःख एवं दर्दों को दूर करने का मार्ग दिखाता है।

गुरूभक्तियोग का मार्ग केवल योग्य शिष्य को ही तत्काल फल देनेवाला है।

गुरूभक्तियोग अहंभाव के नाश एवं शाश्वत सुख की प्राप्ति में परिणत होता है।

गुरूभक्तियोग सर्वोत्तम योग है।

इस मार्ग के भयस्थान

गुरू के पावन चरणों में साष्टांग प्रणाम करने में संकोच होना यह गुरूभक्तियोग के अभ्यास में बड़ा अवरोध है।

आत्म-बड़प्पन, आत्म-न्यायीपन, मिथ्याभिमान, आत्मंवचना, दर्प, स्वच्छन्दीपना, दीर्घसूत्रता, हठाग्रह, छिद्रन्वेषी, कुसंग, बेईमानी, अभिमान, विषय-वासना, क्रोध, लोभ, अहंभाव .... ये सब गुरूभक्तियोग के मार्ग में आनेवाले विघ्न हैं।

गुरूभक्तियोग के सतत अभ्यास के द्वारा मन की चंचल प्रकृति का नाश करो।

जब मन की बिखरी हुई शक्ति के किरण एकत्रित होते हैं तब चमत्कारिक कार्य कर सकते हैं।

गुरूभक्तियोग का शास्त्र समाधि एवं आत्म-साक्षात्कार करने हेतु हृदयशुद्धि प्राप्त करने के लिए गुरूसेवा पर खूब जोर देता है।

सच्चा शिष्य गुरूभक्तियोग के अभ्यास में लगा रहता है।

पहले गुरूभक्तोयोग की फिलासफी समझो, फिर उसका आचरण करो। आपको सफलता अवश्य मिलेगी।

तमाम दुर्गुणों को निर्मूल करने का एकमात्र असरकारक उपाय है गुरूभक्तियोग का आचरण।

गुरूभक्तियोग के मूल सिद्धान्त

गुरू में अखण्ड श्रद्धा गुरूभक्तियोग रूपी वृक्ष का मूल है।

उत्तरोत्तर वर्धमान भक्तिभावना, नम्रता, आज्ञा-पालन आदि इस वृक्ष की शाखाएँ हैं। सेवा फूल है। गुरू को आत्मसमर्पण करना अमर फल है।

अगर आपको गुरू के जीवनदायक चरणों में दृढ़ श्रद्धा एवं भक्तिभाव हो तो आपको गुरूभक्तियोग के अभ्यास में सफलता अवश्य मिलेगी।

सच्चे हृदयपूर्वक गुरू की शरण में जाना ही गुरूभक्तियोग का सार है।

गुरूभक्तियोग का अभ्यास माने गुरू के प्रति शुद्ध उत्कट प्रेम।

ईमानदारी के सिवाय गुरूभक्तियोग में बिल्कुल प्रगति नहीं हो सकती।

महान योगी गुरू के आश्रय में उच्च आध्यात्मिक स्पन्नदनोंवाले शान्त स्थान में रहो। फिर उनकी निगरानी में गुरूभक्तियोग का अभ्यास करो। तभी आपको गुरूभक्तियोग में सफलता मिलेगी।

गुरूभक्तियोग का मुख्य सिद्धान्त ब्रह्मनिष्ठ गुरू के चरणकमल में बिनशरती आत्मसमर्पण करना ही है।

गुरूभक्तियोग के मुख्य सिद्धान्त

गुरूभक्तियोग की फिलासफी के मुताबिक गुरू एवं ईश्वर एकरूप है। अतः गुरू के प्रति सम्पूर्ण आत्मसमर्पण करना अत्यंत आवश्यक है।

गुरू के प्रति सम्पूर्ण आत्म-समर्पण करना यह गुरूभक्ति का सर्वोच्च सोपान है।

गुरूभक्तियोग के अभ्यास में गुरूसेवा सर्वस्व है।

गुरूकृपा गुरूभक्तियोग का आखिरी ध्येय है।

मोटी बुद्धि का शिष्य गुरूभक्तियोग के अभ्यास में कोई निश्चित प्रगति नहीं कर सकता।

जो शिष्य गुरूभक्तियोग का अभ्यास करना चाहता है उसके लिए कुसंग शत्रु के समान है।

अगर आपको गुरूभक्तियोग का अभ्यास करना हो तो विषयी जीवन का त्याग करो।

शाश्वत सुख का मार्ग

जो व्यक्ति दुःख को पार करके जीवन में सुख एवं आनन्द प्राप्त करना चाहता है उसे अन्तःकरणपूर्वक गुरूभक्तियोग का अभ्यास करना जरूरी है।

सच्चा एवं शाश्वत सुख तो गुरूसेवायोग का आश्रय लेने से ही मिल सकता है, नाशवान पदार्थों से नहीं।

जन्म-मृत्यु के लगातार चलने वाले चक्कर से छूटने का कोई उपाय नहीं है क्या ? सुख-दुःख, हर्ष-शोक के द्वन्द्वों में से मुक्ति नहीं मिल सकती क्या ? सुन, हे शिष्य ! इसका एक निश्चित उपाय है। नाशवान

विषयी पदार्थों में से अपना मन वापस खींच ले और गुरूभक्तियोग का आश्रय ले। इससे तू सुख-दुःख, हर्ष-शोक, जन्म-मृत्यु के द्वन्द्वों से पार हो जायेगा।

मनुष्य जब गुरूभक्तियोग का आश्रय लेता है तभी उसका सच्चा जीवन शुरू होता है जो व्यक्ति गुरूभक्तियोग का अभ्यास करता है उसे इस लोक में एवं परलोक में चिरन्तन सुख प्राप्त होता है।

गुरूभक्तियोग उसके अभ्यास को चिरायु एवं शाश्वत सुख प्रदान करता है।

मन ही इस संसार एवं उसकी प्रक्रिया का मूल है। मन ही बन्धन और मोक्ष, सुख और दुःख का मूल है। इस मन को केवल गुरूभक्तियोग के द्वारा ही संयम में रखा जा सकता है।

गुरूभक्तियोग अमरत्व, शाश्वत सुख, मुक्ति, पूर्णता, अखूट आनन्द और चिरंतन शान्ति देनेवाला है।

गुरूभक्तियोग की महत्ता

परम शान्ति का राजमार्ग गुरूभक्तियोग के अभ्यास से शुरू होता है।

जो जो सिद्धियाँ संन्यास, त्याग, अन्य योग, दान एवं शुभ कार्य आदि से प्राप्त की जा सकती हैं वे सब सिद्धियाँ गुरूभक्तियोग के अभ्यास के शीघ्र प्राप्त हो सकती हैं।

गुरूभक्तियोग एक शुद्ध विज्ञान है, जो निम्न प्रकृति को वश में लाकर परम सुख प्राप्त करने की पद्धति हमें सिखाता है।

कुछ लोग मानते हैं कि गुरूसेवायोग निम्न कोटि का योग है। आध्यात्मिक रहस्य के बारे में यह उनकी बड़ी गलतफहमी है।

गुरूभक्तियोग, गुरूसेवायोग, गुरूशरणयोग आदि समानार्थी शब्द हैं। उनमें कोई अर्थभेद नहीं है।

गुरूभक्तियोग सब योगों का राजा है।

गुरूभक्तियोग ईश्वरज्ञान के लिए सबसे सरल, सबसे निश्चित, सबसे शीघ्रगामी, सबसे सस्ता भयरहित मार्ग है। आप सब इसी जन्म में गुरूभक्तियोग के द्वारा ईश्वरज्ञान प्राप्त करो यही शुभ कामना है।

शिष्य को सूचनाएँ

गुरूभक्तियोग का आश्रय लेकर आप अपनी खोयी हुई दिव्यता को पुनः प्राप्त करो, सुख-दुःख, जन्म-मृत्यु आदि सब द्वन्द्वों से पार हो जाओ।

जंगली बाघ, शेर या हाथी को पालना बहुत सरल है, पानी या आग के ऊपर चलना बहुत सरल है लेकिन जब तक मनुष्य को गुरूभक्तियोग के अभ्यास के लिए हृदय की तमन्ना नहीं जागती तब तक सदगुरू के चरणकमलों की शरण में जाना बहुत मुश्किल है।

गुरूभक्तियोग माने गुरू की सेवा के द्वारा मन और उसके विकारों पर नियंत्रण एवं पुनःसंस्करण।

गुरू को सम्पूर्ण बिनशरती शरणागति करना गुरूभक्ति प्राप्त करने के लिए निश्चित मार्ग है।

गुरूभक्तियोग की नींव गुरू के ऊपर अखण्ड श्रद्धा में निहित है।

अगर आपको सचमुच ईश्वर की आवश्यकता हो तो सांसारिक सुखभोगों से दूर रहो और गुरूभक्तियोग का आश्रय लो।

किसी भी प्रकार की रूकावट के बिना गुरूभक्तियोग का अभ्यास जारी रखो।

गुरूभक्तियोग का अभ्यास ही मनुष्य को जीवन के हर क्षेत्र में निर्भय एवं सदा सुखी बना सकता है।

गुरूभक्तियोग के द्वारा अपने भीतर ही अमर आत्मा की खोज करो।

गुरूभक्तियोग को जीवन का एकमात्र हेतु, उद्देश्य एवं सच्चे रस का विषय बनाओ। इससे आपको परम सुख की प्राप्ति होगी।

गुरूभक्तियोग ज्ञानप्राप्ति में सहायक है।

गुरूभक्तियोग का मुख्य हेतु तुफानी इन्द्रियों पर एवं भटकते हुए मन पर नियंत्रण पाना है।

गुरूभक्तियोग हिन्दू संस्कृति की एक प्राचीन शाखा है जो मनुष्य को शाश्वत सुख के मार्ग में ले जाती है और ईश्वर के साथ सुखद समन्वय करा देती है।

गुरूभक्तियोग आध्यात्मिक और मानसिक आत्म-विकास का शास्त्र है।

गुरूभक्तियोग का हेतु मनुष्य को विषयों के बन्धन से मुक्त करके उसे शाश्वत सुख और दैवी शक्ति की मूल स्थिति की पुनः प्राप्ति कराने का है।

गुरूभक्तियोग मनुष्य को दुःख, जरा और व्याधि से मुक्त करता है, उसे चिरायु बनाता है, शाश्वत सुख प्रदान करता है।

गुरूभक्तियोग में शारीरिक, मानसिक, नैतिक और आध्यात्मिक.... हर प्रकार के अनुशासन का समावेश हो जाता है। इससे मनुष्य आत्पप्रभुत्व एवं आत्म-साक्षात्कार पा सकता है।

गुरूभक्तियोग मन की शक्तियों पर विजय प्राप्त करने के लिए विज्ञान एवं कला है।

अनुक्रम

ॐॐॐॐॐॐॐॐॐॐॐॐॐॐॐॐॐॐॐॐॐॐॐॐॐॐ

प्रकरण-2

गुरू और शिष्य

गुरू की महत्ता

जो आँखें गुरू के चरणकमलों का सौन्दर्य नहीं देख सकतीं वे आँखें सचमुच अन्ध हैं।

जो कान गुरू की लीला की महिमा नहीं सुनते वे कान सचमुच बहरे हैं।

गुरू रहित जीवन मृत्यु के समान है।

गुरू कृपा की सम्पत्ति जैसा और कोई खजाना नहीं है।

भवसागर को पार करने के लिए गुरू के सत्संग जैसी और कोई सुरक्षित नौका नहीं है।

आध्यात्मिक गुरू जैसा और कोई मित्र नहीं है।

गुरू के चरणकमल जैसा और कोई आश्रय नहीं है।

सदैव गुरू की रट लगाओ।

गुरू के प्रति भक्तिभावना

श्रद्धा, भक्ति और तत्परता के फूलों से गुरू की पूजा करो।

आत्म-साक्षात्कार के मन्दिर में गुरू का सत्संग प्रथम स्तम्भ है।

ईश्वरकृपा गुरू का स्वरूप धारण करती है।

गुरू के दर्शन करना ईश्वर के दर्शन करने के बराबर है।

जिसने सदगुरू के दर्शन नहीं किये वह मनुष्य अन्धा ही है।

धर्म केवल एक ही है और वह है गुरू के प्रति भक्ति एवं प्रेम का धर्म।

जब आपको दुन्यावी अपेक्षा नहीं रहती तब गुरू के प्रति भक्तिभाव जागता है।

आत्मवेत्ता गुरू के संग के प्रभाव से आपका जीवनसंग्राम सरल बन जायेगा।

गुरू का आश्रय लो और सत्य का अनुसरण करो।

आपके गुरू की कृपा में श्रद्धा रखो और अपने कर्त्तव्य का पालन करो। गुरू की आज्ञा का अतिक्रमण माने खुद ही अपनी कब्र खोदने के बराबर है। सदगुरू शिष्य पर सतत आशीर्वाद बरसाते हैं। आत्मसाक्षात्कारी गुरू जगदगुरू हैं, परम गुरू हैं।

जगदगुरू का हृदय सौन्दर्य का धाम है।

गुरू की सेवा

जीवन का ध्येय गुरू की सेवा करने का बनाओ।

जीवन का हरएक कटु अनुभव गुरू के प्रति आपकी श्रद्धा की कसौटी है।

शिष्य कार्य की गिनती करता है जबकि गुरू उसके पीछे निहित हेतु और इरादे की तुलना करते हैं।

गुरू के कार्य को सन्देहपूर्वक देखना सबसे बड़ा पाप है।

गुरू के समक्ष अपना दम्भपूर्ण दिखावा करने की कभी कोशिश मत करना।

शिष्य के लिए तो गुरूआज्ञापालन जीवन का कानून है।

आपके दिव्य गुरू की सेवा करने का कोई भी मौका चुकना नहीं।

जब आप अपने दिव्य गुरू की सेवा करो तब एकनिष्ठ और वफादार रहना।

गुरू पर प्रेम रखना, आज्ञापालन करना यानी गुरू की सेवा करना।

गुरू की आज्ञा का पालन करना उनके सम्मान करने से भी बढ़कर है।

गुरू आज्ञा का पालन त्याग से भी बढ़कर है।

हर किसी परिस्थिति में अपने गुरू को तमाम प्रकार से अनुकूल हो जाओ।

अपने गुरू की उपस्थिति में अधिक बातचीत मत करो।

गुरू के प्रति शुद्ध प्रेम यह गुरू आज्ञापालन का सच्चा स्वरूप है।

अपनी उत्तमोत्तम वस्तु प्रथम अपने गुरू को समर्पित करो। इससे आसक्ति सहज में मिटेगी।

शिष्य ईर्ष्या, डाह एवं अभिमान रहित, निःस्पृह और गुरू के प्रति दृढ़ भक्तिभाववाला होना चाहिए। वह धैर्यवान और सत्य को जानने के लिए निश्चयवाला होना चाहिए।

शिष्य को अपने गुरू के दोष नहीं देखना चाहिए।

शिष्य को गुरू के समक्ष अनावश्यक एवं अयोग्य प्रलाप नहीं करना चाहिए।

गुरू के द्वारा जो सदज्ञान प्राप्त होता है वह माया अथवा अध्यास का नाश करता है।

एक ही ईश्वर अनेक रूप में माया के कारण दिखता है ऐसा जिसको गुरूकृपा से ज्ञान होता है वह सत्य को जानता है और वेदों को समझता है।

गुरूसेवा और पूजा के द्वारा प्राप्त निरन्तर भक्ति से तीक्ष्ण धार वाले ज्ञान के कुल्हाड़े से तू धीरे-धीरे पर दृढ़तापूर्वक इस संसार रूपी वृक्ष को काट दे।

गुरू जीवन नौका का सुकान है और ईश्वर उस नौका को चलाने वाला अनुकूल पवन है।

जब मनुष्य को संसार के प्रति घृणा उपजती है, उसे वैराग्य आता है और गुरू के दिये हुए उपदेश का चिन्तन करने के लिए शक्तिमान होता है तब ध्यान में बार-बार अभ्यासके कारण उसके मन की अनिष्ट प्रकृति दूर होती है।

गुरू से भली प्रकार जान लिया जाय तभी मंत्र के द्वारा शुद्ध पैदा होती है।

शिष्यवृत्ति के सिद्धान्त

मनुष्य अनादि काल से अज्ञान के प्रभाव में होने के कारण गुरू के बिना उसे आत्म-साक्षात्कार नहीं हो सकता। जो ब्रह्म को जानता है वही दूसरे को ब्रह्मज्ञान दे सकता है।

सयाने मनुष्य को चाहिए कि वह अपने गुरू को आत्मा-परमात्मारूप जानकर अविरत भक्तिभावपूर्वक उनकी पूजा करे अर्थात् उनके साथ तदाकार बने।

शिष्य को गुरू एवं ईश्वर के प्रति संनिष्ठ भक्तिभाव होना चाहिए।

शिष्य को आज्ञाकारी बनकर, सावधान मन से एवं निष्ठापूर्वक गुरू की सेवा करनी चाहिए और उनसे भगवद भक्त के कर्त्तव्य अथवा भगवद् धर्म जानना चाहिए।

शिष्य को ईश्वर के रूप में गुरू की सेवा करना चाहिए। विश्व के नाथ को प्रसन्न करने का एवं उनकी कृपा के योग्य बनने का सुनिश्चित उपाय है।

शिष्य को वैराग्य का अभ्यास करना चाहिए और अपने आध्यात्मिक गुरू का सत्संग करना चाहिए।

शिष्य को प्रथम तो अपने गुरू की कृपा प्राप्त करना चाहिए और उनके बताये हुए मार्ग में चलना चाहिए।

शिष्य को अपनी इन्द्रियों को संयम में रखकर गुरू के आश्रय में रहना चाहिए..... सेवा, साधना एवं शास्त्राभ्यास करना चाहिए।

शिष्य को गुरू के द्वार से जो कुछ अच्छा या बुरा, कम या ज्यादा, सादा या स्वादु खाना मिले वह गुरूभाई को अनुकूल होकर खाना चाहिए।

गुरू का ध्यान

गुरू के चरणकमलों का ध्यान करना यह मोक्ष एवं शाश्वत सुख की प्राप्ति का केवल एक ही मार्ग है।

जो मनुष्य गुरू के चरणकमलों का ध्यान नहीं करते वे आत्मा का घात करने वाले हैं। वे सचमुच जिन्दे शव के समान कंगले मवाली हैं। वे अति दरिद्र लोग हैं। ऐसे निगुरे लोग बाहर से धनवान दिखते हुए भी आध्यात्मिक जगत में अत्यंत दरिद्र हैं।

सयाने सज्जन अपने गुरू के चरणकमल के निरन्तर ध्यान रूपी रसपान से अपने जीवन को रसमय बनाते है और गुरू के ज्ञान रूपी तलवार को साथ में रखकर मोहमाया के बन्धनों को काट डालते हैं।

गुरू के चरणकमल का ध्यान करना यह शाश्वत सुख के द्वार खोलने के लिए अमोघ चाबी है।

गुरू का ध्यान करना यह आखिरी सत्य की प्राप्ति का केवल एक ही सच्चा राजमार्ग है।

गुरू का ध्यान करने से सब दुःख, दर्द एवं शोक का नाश होता है।

गुरू का ध्यान करने से शोक व दुःख के तमाम कारण नष्ट हो जाते हैं।

गुरू का ध्यान आपके इष्ट देवता के दर्शन कराता है, गुरूत्व में स्थिति कराता है।

गुरू का ध्यान एक प्रकार का वायुयान है, जिसकी सहायता से शिष्य शाश्वत सुख, चिरंतन शान्ति एवं अखूट आनन्द के उच्च लोक में उड़ सकता है।

गुरू का ध्यान दिव्यता की प्राप्ति के लिए राजमार्ग है, जो शिष्य को दिव्य जीवन के ध्येय तक सीधा ले जाता है।

गुरू का ध्यान एक रहस्यमय सीड़ी है, जो शिष्य को पृथ्वी पर से स्वर्ग में ले जाती है।

गुरू के चरणकमल का ध्यान किये बिना शिष्य के लिए आध्यात्मिक प्रगति संभव नहीं है।

गुरू का नियमित ध्यान करने से आत्मज्ञान के प्रदेश खुल जाते हैं, मन शांत, स्वस्थ एवं स्थिर बनता है और अन्तरात्मा जागृत होती है।

सुख की विजय

शिष्य जब गुरू के चरणकमल का ध्यान करता है तब सब संशय अपने आप नष्ट हो जाते हैं।

शिष्य जब गुरू की सुरक्षा में होता है तब कोई भी वस्तु उसके मन को क्षुभित नहीं कर सकती।

आप अगर अपने मन को बाह्य पदार्थों में से खींचकर सतत ध्यान के द्वारा गुरू के चरणकमल में लगाओगे तो आपके तमाम दुःख नष्ट हो जाएँगे।

गुरू का ध्यान करना यह तमाम मानवीय दुःखों का नाश करने का एकमात्र उपाय है।

जो शिष्य अपने गुरू के चरणकमल में अपना चित्त नहीं लगा सकता उसे आत्मज्ञान नहीं मिल सकता।

जो शिष्य गुरू का ध्यान बिल्कुल नहीं करता उसे मन की शान्ति नहीं मिल सकती।

अगर आपको इस संसार के दुःख एवं दर्द दूर करने हों तो आपको आत्म-साक्षात्कारी गुरू का ध्यान करने की आदत डालना चाहिए। ठीक ही कहा हैः

ध्यानमूलं गुरोर्मूर्तिः पूजामूलं गुरोः पदम्।
मंत्रमूलं गुरोर्वाक्यं मोक्षमूलं गुरोः कृपा।।

गुरूकृपा की आवश्यकता

गुरू की सहाय के बिना कोई आत्मज्ञान पा नहीं सकता।

गुरूकृपा के बिना दिव्य जीवन में कोई प्रगति नहीं कर सकता। गुरूकृपा के बिना आप मानसिक विकारों से मुक्त नहीं हो सकते एवं मोक्ष नहीं पा सकते।

अगर आप अपने गुरू की मूर्ति का ध्यान करने की आदत नहीं डालो तो आत्मा का भव्य वैभव एवं सनातन ज्योति आपसे सदा के लिए अदृश्य रहेगी।

गुरू के स्वरूप का नियमित एवं व्यवस्थित ध्यान करने की आदत डालकर आत्मा को ढांकने वाले आवरण को चीर डालो।

गुरू के स्वरूप का ध्यान करना यह तमाम रोगों के लिए शक्तिशाली औषध है।

गुरू का ध्यान करने से अन्तरात्मा के ज्ञान के एवं अन्य कई मूढ़ शक्तियाँ प्राप्त करने के लिए मन के द्वार खुल जाते है।

गुरू का ध्यान करने से जीवन के तमाम दुःख दूर हो जाते हैं।

शान्ति और शक्ति का मार्ग

गुरू के स्वरूप का ध्यान करो, तभी आपको सच्ची शान्ति और आनन्द की प्राप्ति होगी।

आध्यात्मिक गुरू का ध्यान करने से बहुत ही आध्यात्मिक शक्ति, शान्ति, नया जोम और नया बल मिलता है।

पवित्र गुरू का ध्यान करने से शुद्ध शक्तिशाली विचारों का विकास होता है।

गुरू के स्वरूप का नियमित चिन्तन करने से मन इधर उधर भटकना धीरे-धीरे बन्द कर देता है।

गुरू के स्वरूप का ध्यान करने से आध्यात्मिक मार्ग में से तमाम अड़चनें दूर हो जाती हैं।

गुरू का ध्यान करने से मन की उत्तेजना दूर होती है और मन की शान्ति में बहुत ही वृद्धि होती है।

दिव्य गुरू के चरणकमलों का ध्यान करने के लिए ब्राह्ममुहूर्त सबसे ज्यादा अनुकूल समय है। चालू व्यवहार में भी कभी-कभी गुरू का ध्यान करके आप शक्ति, स्फूर्ति और प्रेरणा प्राप्त करते रहो।

आप ज्यों ही बिस्तर में जागो कि तुरन्त गुरूमंत्र का जाप करो। यह बात बहुत ही महत्त्वपूर्ण है।

एकान्त एवं गुरू के स्वरूप का गहरा चिन्तन....ये दो चीजें आत्म-साक्षात्कार के लिए महत्त्वपूर्ण आवश्यकताएँ हैं।

ध्यान के लिए प्राथमिक तैयारियाँ

गुरू का ध्यान करने के लिए हरएक वस्तु को सात्त्विक बनाना चाहिए। स्थान, भोजन, वस्त्र, संग, पुस्तकें आदि सब सात्त्विक होना चाहिए।

गुरू का ध्यान करना किसी भी परिस्थिति में छोड़ना नहीं चाहिए।

केवलल सदाचारी जीवन जीना ही ईश्वर-साक्षात्कार के लिए पर्याप्त नहीं है, गुरू का निरन्तर एवं गहरा ध्यान करना अनिवार्य है।

अगर आपको संसार के दुःख दर्द एवं जन्म-मृत्यु की मुसीबतों से सदा के लिए मुक्त होना हो तो आपको गुरू के स्वरूप का गहरा ध्यान करने की आदत डालना चाहिए।

गुरू का ध्यान करना यह अनन्य अनुभव या सीधे आत्मज्ञान के लिए राजमार्ग है।

अन्न, वस्त्र, निवास आदि शारीरिक आवश्यकताओं के लिए शिष्य को चिन्ता नहीं करना चाहिए। गुरूकृपा से उसके लिये सब चीजों का इन्तजाम हो जाता है।

गुरू का ध्यान शिष्य के लिए एकमात्र मूल्यवान पूँजी है।

भक्तों के लिए भगवान हमेशा गुरू के रूप में पथप्रदर्शक बनते हैं।

मनुष्य को गुरू की सेवा करना चाहिए और गुरू जो जो आज्ञा करें उन सबका पालन करना चाहिए। इसमें उसे बिल्कुल लापरवाही या बड़बड़ नहीं करना चाहिए। अपनी बुद्धि का भी उपयोग नहीं करना चाहिए।

गुरू जब कोई भी चीज करने की आज्ञा करें तब शिष्य को हृदयपूर्वक उनकी आज्ञा का पालन करना चाहिए।

गुरू के प्रति इस प्रकार की आज्ञाकारिता आवश्यक है। यह निष्काम कर्म की भावना है। इस प्रकार का कर्म किसी भी फल की आशा के लिए नहीं किया जाता अपितु गुरू की पवित्र आज्ञा के लिए ही किया जाता है। तभी मन की अशुद्धियाँ, जैसे कि काम, क्रोध और लोभ नष्ट होते हैं।

जो शिष्य चार प्रकार के साधनों से सज्जग है वही ईश्वर से अभिन्न ब्रह्मनिष्ठ गुरू के समक्ष बैठने के एवं उनसे महावाक्य सुनने के लिए लायक है।

चार प्रकार के साधन यानी साधनचतुष्टय इस प्रकार हैं-

विवेक = आत्मा-अनात्मा, नित्य-अनित्य, कर्म-अकर्म आदि का भेद समझने की शक्ति।

वैराग्य = इन्द्रियजन्य सुख और सांसारिक विषयों से विरक्ति।

षट्संपत्ति = शम (वासनाओं एवं कामनाओं से मुक्त निर्मल मन की शान्ति), दम (इन्द्रियों पर काबू), उपरति (विषय-विकारी जीवन से उपरामता), तितिक्षा = हरएक स्थिति में स्थिरता एवं धैर्य के साथ सहनशक्ति), श्रद्धा और समाधान (बाह्य आकर्षणों से अलिप्त मन की एकाग्र स्थिति)।

मुमुक्षत्व = मोक्ष अथवा आत्म-साक्षात्कार के लिए तीव्र आकांक्षा।

अनुक्रम

ॐॐॐॐॐॐॐॐॐॐॐॐॐॐॐॐॐॐॐॐॐॐॐॐॐॐॐॐ

प्रकरणः 3

गुरूभक्ति का विकास

पवित्रता ही पूर्वतैयारी

जिसके मन से तमाम अशुद्धियाँ दूर की गई हों ऐसे शिष्य को ही गुरू के गूढ़ रहस्यों की दीक्षा दी जाय तो उसका मन सम्पूर्ण स्थिरता प्राप्त कर सकेगा और वह निर्विकल्प समाधि की अवस्था में प्रविष्ट हो सकेगा।

जो सिद्ध आत्मयोगी हों ऐसे गुरू की निगरानी के नीचे योग सीखो।

विषयविकार के रंगे हुए आपके मन को एकाग्रता, गुरू के उपदेश एवं उपनिषदों के वाक्यों के मनन, ध्यान एवं जप से पवित्र बनाना होगा।

आपको मार्गदर्शन देने के लिए आत्म-साक्षात्कारी सदगुरू होने चाहिए।

एक ही स्थान, एक ही आध्यात्मिक गुरू और एक ही योग पद्धति में लगे रहो। यही निश्चित सफलता की रीति है।

योग की साधना

गुरू अथवा सिद्ध योगी की निगरानी में ही प्राणायाम का अभ्यास करना चाहिए।

आप अपने गुरू के अथवा किसी भी संत के चित्र पर एकाग्रता कर सकते हैं।

विषयों से मन को वापस खींच लो और अपने गुरू के उपदेश के मुताबिक आगे बढ़ो।

कश्मीर में स्थित साधक (शिष्य) भी अगर हिमालय के उत्तरकाशी में स्थित अपने गुरू का, अपने आध्यात्मिक मार्गदर्शक का ध्यान करे तो भी गुरू एवं शिष्य के बीच एक निश्चित गहरा सम्बन्ध स्थापित होता है। शिष्य के विचारों के प्रत्युत्तर में गुरू शक्ति, शान्ति, आनन्द, सुख के स्पन्दन प्रसारित करते हैं। शिष्य लोहचुम्बक के प्रचण्ड प्रवाह में स्नान करता है। जिस प्रकार एक बर्तन से दूसरे बर्तन में तैल बहता है उसी प्रकार गुरू और शिष्य के बीच आध्यात्मिक विद्युत शक्ति का झरना धीरे-धीरे निरन्तर बहता है। जहाँ जहाँ शिष्य सच्चे हृदय से अपने गुरू का ध्यान करता है वहाँ गुरू को भी मालूम पड़ता है कि अपने शिष्य की ओर से प्रार्थना या उन्नत विचारधारा का प्रवाह बहता है और अपने हृदय

को स्पर्श करता है। जिनके पास आन्तरचक्षु होते हैं वे गुरू-शिष्य के बीच हल्का सा उज्जवल प्रकाश स्पष्टतः देख सकते हैं। चित्तरूपी सागर में सात्त्विक विचारों के स्पन्दन से गति पैदा होती है।

गुरू का स्पर्श

आध्यात्मिक गुरू अपनी आध्यात्मिक शक्ति अपने शिष्य को प्रदान करते हैं। सदगुरू के अमूल्य स्पन्नदन शिष्य के मन की ओर भेजे जाते हैं। श्रीरामकृष्ण परमहंस ने अपनी आध्यात्मिक शक्ति विवेकानन्द को दी थी। यह गुरू का दैवी स्पर्श कहा जाता है। समर्थ रामदास स्वामी के शिष्य ने अपनी ऐसी शक्ति नर्तकी की पुत्री को दी थी जो उसके प्रति अत्यंत कामुक थी। शिष्य ने उसकी ओर दृष्टिपात किया और उसे समाधि प्राप्त कराई। उसकी कामुकता नष्ट हो गई। तब से वह बहुत धार्मिक एवं आध्यात्मिक स्वभाववाली बन गई। मुकुन्दबाई नामक महाराष्ट्र की एक साध्वी ने बादशाह को समाधि प्रदान की थी।

आप जप और ध्यान शुरू करें उससे पहले कुछ दैवी स्तोत्र या मंत्रों का अथवा गुरूस्तोत्र का उच्चारण करो। अथवा बारह दफा ॐ का मंत्रोच्चार करो अथवा पाँच मिनट तक कीर्तन करो।

मन को एक स्थान में, एक साधना में, एक गुरू में और एक ही योगमार्ग में लगाकर उसकी चंचल वृत्ति को वश में करना चाहिए।

योगवाशिष्ठ में गुरू वशिष्ठ जी कहते हैं - "हे राम ! पाव भाग का मन प्रारंभिक ध्यान में लगाओ, पाव भाग का खेलकूद में, पाव भाग का अभ्यास में और पाव भाग का मन गुरूसेवा में लगाओ।"

ईश्वर ने आपको तमाम प्रकार की सुविधाएँ, अच्छा स्वास्थ्य एवं मार्ग दिखाने के लिए गुरू दिये हैं। इससे अधिक और क्या चाहिए ?

अतः विकास करो, उत्क्रान्त बनो, सत्य का साक्षात्कार करो और सर्वत्र उसका प्रचार करो।

गुरू एवं शास्त्र आपको मार्ग दिखा सकते हैं और आपके संशय दूर कर सकते हैं। अपरोक्ष का अनुभव (सीधा आन्तरज्ञान) करना आप पर निर्भर रखा गया है। भूखे व्यक्ति को स्वयं ही खाना चाहिए। जिसको सख्त खुजली आती हो उसे खुद ही खुजलाना चाहिए।

मन को संयम में रखने की रीति

मन के साथ कभी मुठभेड़ मत करो। एकाग्रताके लिए जलद प्रयासों का उपयोग मत करो। सब स्नायु और नस नाड़ियों को शिथिल करो। मस्तिष्क को ढीला छोड़ दो। धीरे-धीरे अपने गुरूमंत्र का उच्चारण करो। खदबदाते हुए मन को स्वस्थ करो। विचारों को शान्त करो।

यदि मन में 'अहं' के सब संकल्प हों तो गुरू से दीक्षा लेने के बाद आत्मा का ध्यान करके एवं वेद का सच्चा रहस्य जानकर मन को विभिन्न दुःखों से वापस खींच सकते हैं और सुखदायक आत्मा में पुनः स्थापित कर सकते हैं।

कुछ वर्ष तक अपने गुरू की प्रत्यक्ष निगरानी में और उनके सीधे एवं निकट के सम्पर्क में रहो। आप धीरी और नियमित प्रगति कर सकेंगे।

चंचल मन एक साधना से दूसरी साधना की ओर, एक गुरू से दूसरे गुरू की ओर, भक्तियोग से वेदान्त की ओर एवं हृषिकेश से वृन्दावन की ओर कूदता है। साधना के लिए यह अत्यन्त हानिकर्त्ता है। एक ही गुरू से, एक ही स्थान से लगे रहो।

आपके लिए किस प्रकार का योगमार्ग योग्य है यह आपको ही खोज लेना होगा। आप अगर यह नहीं कर सको तो जिन्होंने आत्म-

साक्षात्कार किया हो ऐसे गुरू या आचार्य की सलाह आपको लेनी होगी। वे आपके मन की प्रकृति जानकर आपको उचित योग की पद्धति बतायेंगे।

आध्यात्मिक गुरू का सत्संग और अच्छा माहौल मन की उन्नति में प्रचण्ड प्रभाव डालता है। यदि अच्छा सत्संग न मिल सके तो जिन्होंने आत्म-साक्षात्कार किया हो ऐसे महापुरूषों के ग्रन्थों का सत्संग करना चाहिए। उदाहरणार्थः श्री शंकराचार्य के ग्रन्थ, योगवाशिष्ठ, श्री दत्तात्रेय की अवधूत गीता इत्यादि।

आध्यात्मिक मार्ग में प्रगति

आपके हृदय की गुह्म बातें आपके गुरू के समक्ष खुल्ली कर दो। इस प्रकार जितना अधिक करोगे उतनी अधिक सहानुभूति आपको मिलेगी। इससे आपको पाप एवं प्रलोभनों के साथ लड़ने में शक्ति प्राप्त होगी।

मित्र पसंद करने में ध्यान रखें। अनिच्छनीय लोग आपकी श्रद्धा एवं मान्यताओं को सरलता से चलित कर देंगे। आपने शुरू की हुई साधना में एवं अपने गुरू सम्पूर्ण श्रद्धा रखें। अपनी मान्यताओं को कदापि चलित होने मत दें। आपकी साधना उमंग और उत्साह के साथ चालू रखें। आप त्वरित आध्यात्मिक प्रगति कर सकेंगे। आध्यात्मिक सीड़ी के सोपान एक के बाद एक चढ़ते जाएँगे और आखिर आपके ध्येय को हासिल कर लेंगे।

पक्षी, मछली और कछुए की तरह स्पर्श, दृष्टि एवं इच्छा या विचारों के द्वारा गुरू अपनी आध्यात्मिक शक्तियों का प्रसारण कर सकते हैं। कभी कभी गुरू शिष्य के भौतिक शरीर में प्रविष्ट होकर अपनी शक्ति से शिष्य के मन को उन्नत बना सकते हैं।

कभी कभी आध्यात्मिक गुरू को बाह्यतः अपना क्रोध दिखाना पड़ता है किन्तु वह शिष्य की गल्तियाँ दिखाने के लिए ही होता है। यह बात खराब नहीं है।

कुछ लोग कुछ वर्ष तक स्वतंत्र रीति से ध्यान करते हैं किन्तु बाद में उनको गुरू की आवश्यकता महसूस होती है। उनको साधना के मार्ग में अवरोध आते हैं। इन अवरोधों और भयस्थानों को कैसे हटाये जायें यह वे नहीं जानते। तब वे गुरू की खोज करने लगते हैं। छः सात बार आने जाने के बाद भी किसी बड़े शहर में किसी अनजान आदमी को छोटी गली में स्थित अपने निवास स्थान में वापस आने में दिन के समय में भी तकलीफ महसूस होती है। सड़कों और मुहल्लों में मार्ग खोजने में भी तकलीफ होती है तो बन्द आँख से अकेले चलने वाले को उस्तरे की धार जैसे आध्यात्मिकता के मार्ग में आने वाले विघ्नों की तो बात ही क्या ?

परिवर्तन

मन के प्राकृत स्वभाव का सम्पूर्णतः नवसर्जन करना ही चाहिए। साधक अपने गुरू से कहता हैः "मुझे योग का अभ्यास करना है। निर्विकल्प समाधि में प्रविष्ट होने की मेरी आकांक्षा है। मैं आपके चरणों में बैठना चाहता हूँ। मैं आपकी शरण में आया हूँ।" किन्तु वह अपने प्राकृत स्वभाव को, आदतों को, चारित्र्य को, वर्तन को, चालढाल को बदलना नहीं चाहता।

प्राकृत स्वभाव में ऐसा परिवर्तन करना सरल नहीं है। संस्कारों की शक्ति दृढ़ और बलवान होती है। उनके परिवर्तन के लिए काफी मनोबल की आवश्यकता होती है। पुराने संस्कारों की शक्ति के आगे साधक कई बार निरूपाय हो जाता है। उसे नियमित जप, कीर्तन, ध्यान, अथक

निःस्वार्थ सेवा और सत्संग से अपने सत्त्व और संकल्प का असीम विकास करना पड़ेगा। उसे अन्तर्मुख होकर अपनी कमियाँ और दुर्बलताएँ खोज लेनी पड़ेगी। उसे गुरू के मार्गदर्शन में रहना होगा। गुरू उसकी गलतियाँ खोज निकालते हैं और उन्हें दूर करने के लिए योग्य रीति बताते हैं।

आपको मोक्ष के चार साधनों के लिए तैयारी करके ब्रह्मनिष्ठ एवं ब्रह्मश्रोत्रिय गुरू के पास जाना चाहिए। आपको अपने सन्देह दूर करना चाहिए। अपने गुरू से प्राप्त किये हुए आध्यात्मिक प्रकाश की सहायता से आध्यात्मिक मार्ग में चलना चाहिए। आपका ठीक प्रकार जीवन-निर्माण हो जाय तब तक अहं और संसार का आकर्षण छोड़कर आपको गुरू के द्वार पर रहना चाहिए। ठीक ही कहा है किः सम्राट के साथ राज्य करना भी बुरा है.... न जाने कब रूला दे ! गुरू के साथ भीख माँगकर रहना भी अच्छा है.... न जाने कब मिला दे ! आत्म-साक्षात्कार सिद्ध किये हुए पुरुष का व्यक्तिगत सम्पर्क बहुत उन्नति कारक होता है। यदि आप संनिष्ठ एवं उत्सुक होंगे, यदि आपको मोक्ष के लिए तीव्र आकांक्षा होगी, यदि आप अपने गुरू की सूचनाओं का चुस्तता से पालन करेंगे, यदि आप अखण्ड और निरन्तर योग करेंगे तो आप छः महीने में सर्वोच्च लक्ष्य सिद्ध कर सकेंगे। ऐसा ही होगा, यह मेरा वचन है।

जगत प्रलोभनों से भरपूर है। अतः नये साधकों को ध्यानपूर्वक उनसे बचने की आवश्यकता है। जब तक उनकी घड़ाई पूर्ण न हो जाय, तब तक उन्हें गुरू के चरणकमलों में बैठना चाहिए। जो मनमुख साधक प्रारंभ से ही स्वच्छन्दी बनकर बर्ताव करते है, अपने गुरू के वचनों पर ध्यान नहीं देते वे बिल्कुल निष्फल हो जाते हैं। वे लक्ष्यहीन जीवन बिताते हैं। और नदी में तैरते हुए लकड़े की भाँति इधर टकराते हैं।

गुरू के प्रति आध्यात्मिक अभिगम

हे पूज्य गुरू ! हे मेरे अविद्या के विदारक ! आपको मेरे नमस्कार ! आपकी कृपा से मैं ब्रह्म का शाश्वत सुख भोगता हूँ। अब मैं पूर्णतः निर्भय बन चुका हूँ। मेरे सब संशय और भ्रम नष्ट हो गये हैं।

उपरोक्त मंत्र में शिष्य अपने अन्तरात्मा के अनुभव गुरू के समक्ष व्यक्त करता है। शिष्य अपने गुरू के चरणकमल में साष्टांग प्रणाम करता है। उन पर श्रेष्ठ फूलों की वर्षा करके उनकी स्तुति करता है। "हे पूज्य, पवित्र गुरू ! मुझे सर्वोच्च सुख प्राप्त हुआ है। मैं ब्रह्मनिष्ठा से जन्म-मृत्यु की परम्परा से मुक्त हुआ हूँ। मैं निर्विकल्प समाधि का शुद्ध सुख भोग रहा हूँ। जगत के किसी भी कोने में मैं मुक्तता से विचरण कर सकता हूँ। सब मेरी संतुष्टी है। मैंने प्राकृत मन का त्याग किया है। मैंने सब संकल्प एवं रूचि-अरूचि का त्याग किया है। अब मैं अखण्ड शान्ति का अनुभव करता हूँ। मेरे आनन्द के अतिरेक के कारण मैं पूर्ण अवस्था का वर्णन नहीं कर पाता। हे पूज्य गुरूदेव ! मैं अवाक बन गया हूँ। इस दुस्तर भवसागर को पार करने में आपने मुझे सहाय की है।"

"अब तक मुझे केवल मेरे शरीर में ही सम्पूर्ण विश्वास था। मैंने विभिन्न योनियों में असंख्य जन्म लिये। ऐसी सर्वोच्च निर्भय अवस्था मुझे कौन से पवित्र कर्मों के कारण प्राप्त हुई यह मैं नहीं जानता। सचमुच यह एक दुर्लभ भाग्य है। यह एक महान अदृष्ट लाभ है। अब मैं आनन्द से नाचता हूँ। मेरे सब दुःख नष्ट हो गये हैं। मेरे सब मनोरथ पूर्ण हुए हैं। मेरे कार्य सम्पन्न हुए हैं। मैंने सब वांछित वस्तुएँ प्राप्त की हैं। मेरी इच्छा परिपूर्ण हुई है।"

"आप मेरे सच्चे माता-पिता हो। मेरी वर्त्तमान स्थिति मैं दूसरों के समक्ष किस प्रकार प्रकट कर सकूँ ? सर्वत्र सुख और आनन्द का अनन्त सागर लहराता हुआ मुझे दिख रहा है। जिससे मेरे अन्तःचक्षु खुल गये वह महावाक्य 'तत्त्वमसि' है। उपनिषदों, वेदान्तसूत्रों एवं वेदान्तशास्त्रों का भी आभार ! जिन्होंने ब्रह्मनिष्ठ गुरू का एवं उपनिषदों के महावाक्यों का रूप धारण किया है ऐसे श्री व्यास जी को प्रणाम ! श्री शंकराचार्य जी को प्रणाम ! ब्रह्मविद् गुरूओं को प्रणाम ! भगवान शिव को प्रणाम ! भगवान नारायण को प्रणाम ! सांसारिक मनुष्य के सिर पर गुरू के चरणामृत का एक बिन्दू गिरे तो भी उसके सब दुःखों का नाश होता है। यदि एक ब्रह्मनिष्ठ पुरूष को वस्त्र पहनाये जायें तथा भोजन कराया जाय तो सारे विश्व को वस्त्र पहनाने एवं भोजन करवाने के बराबर है। क्योंकि ब्रह्मनिष्ठ पुरूष सचराचर विश्व में व्याप्त है। सबमें वे ही हैं। ॐ.....ॐ.....ॐ.....

दुराग्रही शिष्य

दुराग्रही शिष्य अपनी पुरानी आदतों को चिपका रहता है। वह भगवान की या साकार गुरू की शरण में नहीं जाता।

यदि शिष्य सचमुच अपने आपको सुधारना चाहता है तो उसे अपने आप के साथ निखालिस और गुरू के प्रति ईमानदार बनना चाहिए।

जो आज्ञाकारी नहीं है, जो शिस्त का भंग करता है, जो गुरू के प्रति ईमानदार नहीं है, जो अपने गुरू के समक्ष अपना हृदय खोल नहीं सकता उसे गुरू की सहाय से लाभ नहीं हो सकता। वह अपने द्वारा ही सर्जित कादव कीचड़ में फँसा रहता है। वह अध्यात्म-मार्ग में प्रगति नहीं कर सकता। कैसी दयाजनक स्थिति ! उसका भाग्य सचमुच अत्यंत शोचनीय है।

शिष्य को भगवान अथवा गुरू के प्रति सम्पूर्ण, अखण्ड और संकोचरहित होकर आत्म-समर्पण करना चाहिए।

गुरू तो केवल अपने शिष्य को, सत्य जानने की अथवा जिस रीति से उसकी आत्मा की शक्तियाँ खिल उठे वह रीति बता सकते हैं।

गुरू की आवश्यकता

अध्यात्ममार्ग में हर एक साधक को गुरू की आवश्यकता पड़ती है।

केवल गुरू ही वास्तविक जीवन का अर्थ एवं उसका रहस्य प्रकट कर सकते हैं तथा प्रभु के साक्षात्कार का मार्ग दिखा सकते हैं।

केवल गुरू ही शिष्य को साधना का रहस्य बता सकते हैं।

जिन्होंने प्रभु का साक्षात्कार किया है वे ही आदर्श गुरू हैं।

ऐसे गुरू मन, वचन और कर्म से पवित्र हैं।

ऐसे गुरू अपने मन एवं इन्द्रियों पर प्रभुत्व रखते हैं, वे सब शास्त्रों का रहस्य समझते हैं, वे सरल, दयालु, सत्यप्रिय एवं आत्मारामी होते हैं।

शिष्य के हृदय के अन्तस्तल में सुषुप्त दैवी शक्ति को गुरू जागृत कर सकते हैं।

शिष्य ने अगर पूर्वजन्म में शुभ कर्म किये होंगे, वर्तमान जीवन में भी अगर वह शुभ कर्म करता होगा, अगर वह संनिष्ठ हृदयवाला तथा ईश्वर-प्राप्ति की तड़पवाला होगा तो उसे सदगुरू अवश्य प्राप्त होंगे।

गुरू से पूरा लाभ उठाने के लिए उनके प्रति शिष्य में दृढ़ श्रद्धा एवं सच्ची भक्ति होना चाहिए।

शिष्य गुरू के प्रति जितनी मात्रा में भक्तिभाव होगा उतनी मात्रा में उसे फल की प्राप्ति होगी।

केवल आध्यात्मिक गुरू ही मार्ग दिखाकर शिष्य को प्रभु के प्रति ले जाएँगे।

गुरू मनुष्य के रूप में साक्षात ईश्वर ही हैं।

शिष्य के कर्त्तव्य

शिष्य को गुरू की आज्ञा का पालन अन्तःकरणपूर्वक करना चाहिए।

गुरू के द्वारा निर्दिष्ट पद्धति कभी कभी शिष्य की रूचि को तत्काल अनुकूल न भी हो, फिर भी उसे श्रद्धा रखना चाहिए कि वह उसके हित के लिए ही है, लाभदायक ही है।

गुरू मिलने से जो लाभ होते हैं और जो मानसिक शान्ति का अनुभव होता है वह असीम होता है।

अपनी सर्वोच्च दिव्य प्रकृति का भान होते हुए भी भगवान श्रीकृष्ण ने अपने गुरू सांदीपनी की कैसी सेवा की और उनके पास अभ्यास किया यह तो आप जानते ही हैं।

जिस शिष्य को अपने गुरू में श्रद्धा होती है वह ज्ञान प्राप्त करता है।

पूरे हृदय से संकोचरहित होकर सम्पूर्णतया अपने गुरू की शरण में जाओ।

गुरू पृथ्वी पर साक्षात् ईश्वर हैं अतः उनकी पूजा करो।

गुरूभक्ति एवं गुरूसेवा के फलस्वरूप आखिर आत्म-साक्षात्कार होता है।

शिष्य को गुरू की सेवा करते रहना चाहिए। जब उसका आत्म-समर्पण पूर्णतः हो जायगा तब गुरू उसे सत्य का स्पष्ट दर्शन कराएँगे।

कुछ भ्रांत शिष्य कुछ समय के लिए अपने गुरू की सेवा करते हैं। फिर मैंने चित्तशुद्धि प्राप्त की है ऐसी मूर्ख कल्पना करके गुरू की सेवा छोड़ देते हैं। उनको सर्वोत्तम ज्ञान प्राप्त नहीं होता। उनको ध्येयसिद्धि नहीं होती।

उनको थोड़ा बहुत पुण्य अवश्य मिलता है लेकिन आत्म-साक्षात्कार नहीं होता। सचमुच, यह एक बड़ा नुकसान है। उनकी यह गंभीर भूल है।

गुरूभक्ति और गुरूसेवा

गुरूभक्ति और गुरूसेवा साधना रूपी नौका की दो पतवारें हैं जो शिष्य को संसारसरिता के उस पार ले जाती हैं।

जो गुरू की शरण में गया है, जो सच्चे मन से गुरू की सेवा करता है, जिसकी गुरूभक्ति अदभुत है उसे शोक, विषाद, भय, पीड़ा, दुःख या अज्ञान की असर नहीं होती। उसे तत्काल ईश्वर-साक्षात्कार होता है।

प्रभु और गुरू एक ही हैं अतः गुरू की पूजा करो।

जिन्होंने जानने योग्य जाना है, जिन्होंने प्राप्त करने योग्य प्राप्त किया है, जो मार्ग दिखाने के लिए समर्थ हैं ऐसे गुरू के चरणकमलों का आश्रय लेने वाले शिष्य को यों मानना चाहिए कि मैं तीन गुना कृतार्थ हुआ हूँ।

स्वार्थ का त्याग करना अति कठिन है। यदि शिष्य स्वयं स्वार्थ को निर्मूल करने का दृढ़ निश्चय करे और सतत अभ्यास के द्वारा उसे पुष्ट करे तो गुरूकृपा से स्वार्थ विदा होता है।

शिष्य अगर जितनी संभव हो सके उतनी व्यवहारू रीति से, तत्परता से एवं निश्चयपूर्वक गुरू के आदेशों का पालन करने का प्रयास करेगा तो उसे प्रभु का साक्षात्कार होगा।

शिष्य में जो गुण होने चाहिए उन सबमें गुरू की आज्ञा का पालन सर्वश्रेष्ठ गुण है।

आज्ञापालन का मूल्य

आज्ञापालन अमूल्य गुण है। क्योंकि अगर आप आज्ञापालन का गुण जीवन में लाने का प्रयास करेंगे तो मनमुखता और अहंभाव धीरे धीरे निर्मूल हो जाएँगे।

गुरू की आज्ञा का सम्पूर्णतः पालन करने का कार्य कठिन है किन्तु अन्तःकरण से प्रयत्न किया जाय तो वह सरल हो जाता है। गुरू की आज्ञा का पालन विश्व की तमाम कठिनाइयों पर विजय प्राप्त करने का अमोघ शस्त्र है।

हरएक सामान्य कार्य में बहुत ही परिश्रम की आवश्यकता होती है। अतः सामान्य कार्य में बहुत ही परिश्रम की आवश्यकता होती है। अतः अध्यात्म के मार्ग में मनुष्य को अपने आप पर किसी भी प्रकार का संयम रखने के लिए तैयार रहना चाहिए और गुरू के प्रति आज्ञापालन का भाव जगाना चाहिए।

आन्तरिक भाव की अभिव्यक्ति के रूप में पूजा, पुष्पोपहार और भक्ति एवं पूजा के बाह्योपचार की अपेक्षा गुरू की आज्ञापालन का भाव अधिक महत्त्वपूर्ण है।

समझो, किसी को ऐसा लगे कि अमुक प्रकार से आचरण करने से गुरू को अच्छा नहीं लगेगा, तो उसे ऐसा आचरण नहीं करना चाहिए। यह भी आज्ञापालन ही है।

यदि किसी भी मनुष्य के पास विश्व में अति मूल्यवान मानी जाय ऐसी सब चीजें कों लेकिन उसका मन अगर गुरू के चरणकमल में न लगा हो तो समझो उसके पास कुछ भी नहीं है।

बेशक, सत्य अद्वैत है किन्तु द्वैत के विशाल अनुभव के द्वारा ही मनुष्य को आखिर अद्वैत की उच्चतम चेतना में पहुँचना है। वहाँ

पहुँचने की प्रक्रिया में गुरू के चरणकमलों के प्रति भक्तिभाव सबसे महत्त्वपूर्ण है। वह एक सर्वश्रेष्ठ साधना है।

अपने आपको बार-बार गुरूभक्ति में स्थापित करने के लिए शिष्य को विभिन्न पद्धतियाँ काम में लाने का प्रयत्न करना चाहिए।

हर एक गुरू जिस प्रकार शिष्य ग्रहण कर सके उसी प्रकार उपदेश का औषध देते हैं।

गुरू के चरणकमलों से लगे रहो। उसमें साधना का रहस्य निहित है।

गुरू को अर्घ्य

प्राचीन काल में शिष्य को हाथ में समिध लेकर गुरू के पास जाना होता था। समिध गुरू के चरणकमल को आत्मसमर्पण और शरणागति करने का प्रतीक है।

"यह हमारे कर्मों की गठरी है। आप उसे जला दो।" शिष्य हाथ में समिध लेकर गुरू के पास जाता है। इसका अर्थ यह होता है। इसका बाह्य अर्थ ऐसा है कि ऋषि उस समय अग्निहोत्र करते थे। उनके यज्ञ के लिए काष्ठ लाने के रूप में गुरू की सेवा का यह प्रतीक है।

आध्यात्मिक साक्षात्कार गुरू की परम सेवा का फल है।

मनुस्मृति में कहा गया है कि शिष्यों को सदा वेदाध्ययन में निमग्न रहना चाहिए। परम श्रद्धा एवं भक्तिभावपूर्वक आचार्य की सेवा के दौरान शिष्य को मदिरा, मांस, तेल, इत्र, स्त्री, स्वादु भोजन, चेतन प्राणियों को हानि पहुँचाना, काम, क्रोध, लोभ, नृत्य, गान, क्रीड़ा, वाजिन्त्र बजाना, रंग, गपशप लगाना, निन्दा करना, अति निद्रा लेना आदि से अलिप्त रहना चाहिए। उसे असत्य नहीं बोलना चाहिए।

गुण एवं ज्ञान के भण्डार समान गुरू की निगरानी में शिष्य को अपने चारित्र्य का योग्य निर्माण करना चाहिए।

अनुक्रम

ॐॐॐॐॐॐॐॐॐॐॐॐॐॐॐॐॐॐॐॐॐॐ

प्रकरणः 4

गुरूभक्ति की शिक्षा

भक्ति के नियम

फल की आसक्ति रहित शुद्ध हृदय की गुरूभक्ति से मुक्ति प्राप्त होती है।

शोक एवं भय से मुक्ति हो ऐसे गुरू के चरणकमल के सान्निध्य में जाओ।

अपने दैवी गुरू के चरणकमलों में अपना हृदय रख दो।

अपने गुरूद्वार को, गुरूआश्रम को साफ करके सजाने में अपने हाथ को काम में लगाओ।

गुरू शिष्य के बीच का सम्बन्ध बहुत ही पवित्र है।

जो गुरू की सेवा करता है वह सब गुणों को प्राप्त करता है।

अपनी आँखों का उपयोग अपने दिव्य गुरू की छवी (फोटो) को निहारने में करो।

अपने मस्तक का उपयोग सदगुरू के पावन चरणों में झुकाने के लिए करो।

हे मनुष्य ! गुरू के चरणकमलों का आश्रय ले। काम, आसक्ति, अभिमान आदि को त्याग दे, क्योंकि वे गुरूसेवा में मुख्य विघ्न हैं।

कोई भी तृष्णा से रहित, भक्तिभावपूर्वक गुरू की भक्ति करो तो आपको उनकी कृपा प्राप्त होगी।

अपनी सम्पत्ति, अपने शुभ कर्म, अपना तप आदि अपने पावन गुरू को अर्पण कर दो। तदनन्तर ही उनकी कृपा प्राप्त करने के लिए आपका हृदय शुद्ध होगा।

गुरू एवं संतों के चरणों की धूलि से आपके हृदय को शुद्ध करो। तभी आपका हृदय पवित्र होगा, तभी आप भक्ति कर सकोगे।

प्रेम एवं आदर से अपने गुरू एवं संतों की सेवा करो। उनका साक्षात् प्रभु मानो। तभी आप भक्ति कर सकोगे।

गुरूसेवा का योग

गुरूसेवायोग का अर्थ है गुरू की निःस्वार्थ सेवा।

गुरू की सेवा माने मानव जाति की सेवा।

गुरूसेवा के मन की अशुद्धि नष्ट होती है। गुरूसेवा हृदयशुद्धि के लिए एक बलवान चीज है। अतः भावनापूर्वक गुरू की सेवा करो।

गुरू की सेवा दिव्य प्रकाश, ज्ञान और कृपा को ग्रहण करने के लिए मन को तैयार करती है।

गुरूसेवा हृदय को विशाल बनाती है, सब विघ्नों को हटाती है। गुरूसेवा हृदयशुद्धि के लिए एक असरकारक साधना है।

गुरू के सेवा मन को सदा प्रगतिशील और चपल रखती है।

गुरू की सेवा के कारण दैवी गुण जैसे कि दया, नम्रता, आज्ञापालन, प्रेम, श्रद्धा, भक्ति, धैर्य, आत्मत्याग आदि का विकास होता है।

गुरूसेवा से ईर्ष्या, धिक्कार एवं दूसरों से बड़ा होने का भाव नष्ट होता है।

जो गुरू की सेवा करता है वह अहंभाव और ममता को जीत सकता है।

जो शिष्य गुरू की सेवा करता है वह सचमुच तो अपने आपकी ही सेवा करता है।

गुरूसेवायोग के अभ्यास से अवर्णनीय आनन्द और शान्ति प्राप्त होती है।

शिष्य जब गुरू के घर रहता हो तब उसे संतोषी जीवन बिताना चाहिए। उसे पूर्णतः आत्मसंयम करना चाहिए।

अपने गुरू के समक्ष शिष्य को धीरे से, मधुरता से एवं सत्य बोलना चाहिए। उसे कठोर एवं गलीच शब्दों का उपयोग नहीं करना चाहिए। गुरू के द्वार पर रहकर, गुरू का अन्न खाकर गुरू के समक्ष झूठ बोलना अथवा गुरूभाइयों के साथ वैर रखना यह शिष्य के रूप में असुर होने का चिन्ह है। शिष्य के रूप में निहित ऐसा असुर गुरू-शिष्य परम्परा को कलंकित करता है। गुरू के हृदय को ठेस पहुँचे ऐसा आचरण करने वाला शिष्य अपना ही सत्यानाश करता है। जो गुरू का विरोध करता है वह सचमुच हतभागी है।

कबीरा निन्दक न मिलो पापी मिलो हजार।
एक निन्दक के माथे पर लाख पापीन को भार।।

गुरू की एवं गुरू के कार्य की निन्दा करने वाला निन्दक हजारों जन्मों तक मेंढक होकर पड़ा रहता है।

तुलसीदास जी ने ठीक ही कहा हैः

हरिगुरू निन्दा सुनहिं जे काना।
होवहिं पाप गौघात समाना।।
हरि गुरू निन्दक दादूर होवहिं।
जन्म सहस्र नर पावहिं सो हि।।

गुरूभक्तों को, शिष्यों को एवं सत्शिष्यों को चाहिए कि वे ऐसे आसुरी वृत्तिवाले, श्रद्धा डिगाने वाले अथवा अपने हल्के व्यवहार से गुरू के नाम को, गुरू के धाम को क्षति पहुँचाने वाले असुरों को सावधान कर दें एवं स्वयं भी उनसे सावधान रहें।

प्रसिद्ध गुरू के द्वार पर ऐसे आसुरी वृत्ति के लोग शिष्य के रूप में घुस जाते हैं। शिष्य तो उसे कहा जा सकता है जो अपना हलका स्वभाव छोड़ने के लिए तत्पर हो, गुरू के सिद्धान्त के मुताबिक चलने के लिए सतत सजाग हो। गुरू को या गुरू के द्वार को लांछन लगे ऐसा आचरण कोई भी शिष्य कर ही नहीं सकता। अगर करता हुआ दिखे तो वह शिष्य के रूप में असुर है। सत्शिष्यों को ऐसे कपटी शिष्य से सावधान रहना चाहिए।

शिष्य को अपने गुरू की निन्दा नहीं करना चाहिए।

जो गुरू की निन्दा करता है वह रौरव नर्क में गिरता है।

जो खाने के लिए ही जीता है वह पापी है। जो गुरू की सेवा करने के लिए ही खाता है वह सच्चा शिष्य है।

जो गुरू का ध्यान करता है उसे बहुत कम भोजन की आवश्यकता रह जाती है।

गुरू की कृपा

केवल गुरू की कृपा से ही आप अपने मन को नियंत्रण में रख सकते हैं।

आप गुरू की कृपा से ही समाधि या अतिचेतना में स्थित हो सकते हैं।

विराग, अनासक्ति, इन्द्रिय-विषयक भोगविलासों के प्रति उदासीन हुए बिना किसी को गुरूकृपा नहीं पच सकती।

मन के सहकार के सिवाय इन्द्रियों से कुछ नहीं हो सकता। मन को गुरूकृपा से वश में किया जा सकता है।

शिष्य जब गुरू की निगरानी में रहता है तब उसका मन इन्द्रिय-विषयक भोगविलासों से विमुख बनने लगता है।

गुरूओं एवं संतों के समागम से, धार्मिक ग्रंथों के अभ्यास के, सात्त्विक भोजन से, प्रभु के नाम आदि से सात्त्विक वृत्ति में वृद्धि होती है।

राजसी प्रकृति का मनुष्य अपने पूरे हृदय से एवं अन्तःकरण से गुरू की सेवा नहीं कर सकता।

प्राणायाम और गुरू के नाम का जप करने से मन अन्तर्मुख होता है।

ब्रह्मश्रोत्रिय एवं ब्रह्मनिष्ठ गुरू के पास शास्त्रों का अभ्यास करो, तभी आपको मोक्ष प्राप्त होगा।

ब्रह्मचारी का मुख्य कर्त्तव्य अपने गुरू की सेवा करना है।

गुरू का ध्यान करना चाहिए

प्रातःकाल में 4 से 6 के बीच गुरू के स्वरूप का ध्यान करो तो उनकी कृपा का अनुभव कर सकोगे।

अपने गुरू को फोटो अपने सामने रखो। ध्यान के आसन में बैठो। धीरे-धीरे फोटो पर मन को एकाग्र करो। मन को उनके चरणकमल, हाथ, छाती, गले, सिर, मुख, आँखों आदि पर घुमाओ। आँख की पुतली न हिले इस प्रकार सतत पाँच मिनट तक निहारो। फिर आँखें बन्द करके उसी प्रकार भीतर फोटो को निहारने का प्रयास करो। इस क्रिया का पुनरावर्तन करो। फिर अच्छी तरह ध्यान कर सकोगे।

गुरू के स्वरूप का ध्यान करो। ध्यान के दौरान आपको दिव्य आत्मिक आनन्द, रोमांच, शान्ति आदि का अनुभव होगा। कुण्डलिनी शक्ति जागृत होगी, हृदय भाव-विभोर होगा। रोमांच, शान्ति, आदि का अनुभव होगा। रोमांच, हृदय, रूदन आदि अष्टसात्त्विक भाव में आपका मन विचरण करने लगेगा। शिष्य को गुरूमुखता की यह निशानी है। फिर आपको साधना करनी नहीं पड़ेगी, साधना अपने आप होने लगेगी।

सांसारिक लोगों का संग, अधिक खाना, अभिमानी एवं राजसी प्रकृति, निद्रा, काम, क्रोध, लोभ - ये सब गुरूकृपा करने में विघ्न हैं।

गुरू के स्वरूप का चिन्तन करने में निद्रा, मन की चंचलता, सुषुप्त इच्छाएँ जागना, हवाई किल्ले बाँधना, आलस्य, रोग एवं आध्यात्मिक अभिमान विघ्न हैं।

गुरू सब शुभ गुणों का धाम है।

शिष्य के लिए गुरू जीवन का सर्वस्व हैं।

गुरूभक्ति जन्म, मृत्यु एवं जरा को नष्ट करती है।

गुरूभक्ति ईश्वरकृपा प्राप्त करने का एकमात्र साधन है।

गुरूः एक महान पथप्रदर्शक

जो आत्मज्ञान का मार्ग दिखाते हैं वे पृथ्वी पर के सच्चे देव हैं। गुरू के सिवाय यह मार्ग कौन दिखा सकता है ?

गुरू प्रभु प्राप्ति का मार्ग दिखाते हैं और शिष्य को सदा के लिए सुखी करते हैं।

जो पूर्णता का मार्ग दिखाते हैं वे गुरू हैं।

संस्कृत में 'गु' शब्द का अर्थ अन्धकार या अज्ञान है और 'रू' का अर्थ दूर करने वाला है। अन्धकार या आवरणरूपी अज्ञान का नाश करने के कारण वे गुरू कहलाते हैं।

आध्यात्मिक गुरू निरन्तर उपदेश से साधक को तालीम देते हैं।

गुरू सच्चे शिष्य को प्रभु की ओर से प्राप्त भेंट हैं।

तमाम शास्त्र जोर देकर गुरू की आवश्यकता मानते हैं।

श्रीराम जैसे दैवी अवतार ने भी श्री वशिष्ठजी को अपने गुरू माने थे और उनकी आज्ञाओं का पालन किया था।

शिष्य दुन्यावी दृष्टि से चाहे कितना भी महान हो, फिर भी गुरू की सहाय के बिना वह निर्वाणसुख का स्वाद नहीं चख सकता।

गुरू के चरणकमल की धूलि में स्नान किये बिना केवल तपश्चर्या करने से या दान से या वेदों के अध्ययन से ज्ञान प्राप्त नहीं हो सकता।

शिष्य को सदा अपने गुरू की मूर्ति का पूजन करना चाहिए और उनके पवित्र नाम का जप करना चाहिए।

साधक को अपने गुरू का या किसी भी संतों का बुरा बोलना या चाहना नहीं चाहिए।

साधक चाहे कितना भी महान हो फिर भी उसे गुरू के समक्ष फिजूल बातें नहीं करना चाहिए।

गुरू पृथ्वी पर देवदूत हैं, नहीं नहीं, देव ही हैं।

गुरू को शिष्य की सेवा या सहाय का आवश्यकता नहीं है किन्तु सेवा के द्वारा विकास करने के लिए वे शिष्य को एक मौका देते हैं।

महापुरूषों का मार्ग

कितने भी महान होने के बजाय भी तमाम संतों, ऋषियों, पयगम्बरों, जगदगुरूओं, अवतारों एवं महापुरूषों को अपने गुरू थे।

गुरू सब सदगुण एवं शुभ वस्तुओं की खान हैं।

गुरू के सान्निध्य से सब संशय, भय, चिन्ता और दुःख का नाश होता है।

गुरू में अचल श्रद्धा और गुरू के प्रति दृढ़ भक्तिभाव से शिष्य सब कार्यों में सिद्धि एवं भौतिक आबादी प्राप्त कर सकता है।

भवसागर में डूबते हुए शिष्य के लिए गुरू जीवन संरक्षक नौका है।

अगर आपको कोई भी कला सीखना हो तो उस कला के विशेषज्ञ गुरू के पास जाना चाहिए।

साधारण प्रकार के भौतिक ज्ञान की बाबत में अगर ऐसा हो तो आध्यात्मिक मार्ग में गुरू की आवश्यकता कितनी सारी होनी चाहिए ?

गुरू की सहाय के बिना मन को संयम में लाने की कोशिश जो करते हैं वे ऐसे व्यापारी जैसे हैं जिनको अपने जहाज के लिए अच्छा संचालक नहीं मिला है।

अध्यात्ममार्ग काँटोवाला और सीधी चड़ाई वाला मार्ग है। प्रलोभन आपके ऊपर हमला करेंगे। उसमें पतन की संभावना है। अतः ऐसे गुरू के पास जायें जो इस मार्ग के जानकार हों।

गुरू का चिन्तन करने से सुख, भीतरी शक्ति, मन की शान्ति एवं आनन्द प्राप्त होता है। गुरूचिन्तन से, गुरूचर्चा से उनके दैवी स्वभाव का संचार हमारे जीवन में होता है।

गुरू की प्रशस्ति माने ईश्वर की प्रशस्ति।

गुरू से हमारा सम्बन्ध

इस कलियुग में आत्म-साक्षात्कारी सदगुरू की भक्ति के द्वारा ही ईश्वर-साक्षात्कार करना है। सत्यस्वरूप ईश्वर का साक्षात्कार किये हुए गुरू कलियुग में तारणहार हैं।

गुरू से दीक्षा प्राप्त हो जाये यह बड़े भाग्य की बात है।

मंत्रचैतन्य याने मंत्र की गूढ़ शक्ति गुरू की दीक्षा के द्वारा ही जागृत होती है।

आज से ही सम्पूर्ण भक्तिभावपूर्वक गुरू की सेवा करने का निश्चय करो।

आध्यात्मिकता की खान के समान गुरू की सहाय के बिना आध्यात्मिक प्रगति संभव नहीं है।

गुरू साधकों के आगे से माया का आवरण एवं अन्य विक्षेप दूर करते हैं और उनके मार्ग में प्रकाश करते हैं।

माता को देव समान जानो, पिता को देव समान जानो, गुरू को देव समान जानो, अतिथि को देव समान जानो।

गुरू की सेवा के बिना पवित्र शास्त्रों का अध्ययन करना यह समय का दुर्व्यय है।

गुरूदक्षिणा दिये बिना गुरू के पास पवित्र शास्त्रों का अध्ययन करना यह समय का दुर्व्यय है।

गुरू की इच्छाओं को परिपूर्ण किये बिना वेदान्त के पुस्तकों का, उपनिषदों का एवं ब्रह्मसूत्रों का अभ्यास किया जाय तो उससे कल्याण नहीं होता, ज्ञान नहीं मिलता।

लम्बे समय की गुरूसेवा के बाद आपका शुद्ध एवं शान्त मन आपका गुरू बनता है। जैसे पारस के संग से लोह सुवर्ण बनता है वैसे गुरू की चिरकाल पर्यन्त सेवा से आपमें भी गुरूत्व प्रकट होता है।

गुरूकृपा की अनिवार्यता

चाहे कितने ही फिलासफी के ग्रंथ पढ़ो, सारे विश्व का प्रवास करके व्याख्यान करो, हजारों वर्ष तक हिमालय की गुफा में रहो, वर्षों तक प्राणायाम करो, जीवनपर्यन्त शीर्षासन करो फिर भी गुरू की कृपा के बिना आपको मोक्ष की प्राप्ति नहीं हो सकती। रामायण में कहा हैः

गुरूबिन भवनिधि तरहिं न कोई।

चाहे विरंचि शंकर सम होई।।

आध्यात्मिक गुरू यह नहीं दिखा सकते कि ब्रह्म ऐसा है या वैसा है। प्रत्यक्ष अनुभव होने से पहले शिष्य समझ नहीं पाता कि ब्रह्म कैसा है। किन्तु गुरूकृपा शिष्य को अपनी हृदय गुहा में ही ब्रह्म का प्रत्यक्ष अनुभव गूढ़ रीति से करा सकेगी।

अपने माता, पिता एवं बुजुर्गों को मान दो।

अगर गुरू इजाजत दें तो उनकी पैरचंपी करो।

हर एक को अपने ज्ञान से, गुरू की सहाय से वेदान्त ग्रंथों का सच्चा रहस्य प्राप्त करके अपने भीतर ब्रह्म का अनुभव करना चाहिए।

साधक को गुरू अथवा आध्यात्मिक पथदर्शक मिले हों फिर भी उसे अपने प्रयासों से ही सब तृष्णाओं, वासनाओं एवं अहंभाव का नाश करना चाहिए और आत्म-साक्षात्कार करना चाहिए।

गुरू कृपा से प्राप्त होने वाली प्रसन्नता

गुरू के चरणकमलों का आश्रय लेने से जो परम आनन्द का अनुभव होता है उसकी तुलना में तीनों लोकों का सुख भी नहीं आ सकता।

अपने गुरू के साथ कभी लड़ो मत। उनको कभी कोर्ट मत ले जाओ।

गुरू की आज्ञा का उल्लंघन करने से सीधे नरक में पहुँचते हैं। गुरूद्रोही खुद तो डूबता है, अपने कुल को भी कलंकित करता है।

संत सताये तीनों जायी तेज बल और वंश।
एड़ा एड़ा केई गया रावण कौरव केरो कंस।।

पातकी एवं स्वार्थी लोग सदगुरू के लिए चाहे कैसी भी अफवाहें फैलायें फिर भी सुज्ञ समाज एवं शिष्यगण सदगुरू के पावन सान्निध्य और उनकी मधुर याद से अपना हृदय पावन रखते हैं।

गुरू एवं ज्ञानी पुरूषों का सान्निध्य मनुष्य जीवन में कभी-कभी ही मिल सके ऐसा दुर्लभ मौका है।

किसी भी प्रकार के ज्ञान की प्राप्ति, विशेषतः आत्मा विषयक मूल्यवान ज्ञान की प्राप्ति गुरू से ही हो सकती है।

गुरू की परोपकारी कृपा शिष्य के लिए सर्वस्व है। आत्मज्ञान के द्वार खोलने वाली गुरू की कृपा ही है।

आत्मसमर्पण का अर्थ है अपने आपको सम्पूर्णतः गुरू के शरण में छोड़ देना।

तृष्णा एवं अहंभाव आत्मसमर्पण में कदम कदम पर विघ्नरूप बनते हैं।

भगवान श्रीकृष्ण ने अपने गुरू सांदीपनी के चरणों का सेवन किया था। उन्होंने अपने गुरू की सेवा की थी। वे अपने गुरू के लिए लकड़ियाँ लाते थे। भगवान श्रीराम के गुरू वशिष्ठजी थे जिन्होंने उनको उपदेश दिया। देवों के गुरू बृहस्पति हैं। दैवी आत्माओं में सबसे महान सनतकुमार दक्षिणामूर्ति के चरणों में बैठे थे।

साधना का रहस्यमय मार्ग गुरू की कृपा के द्वारा ही जाना जा सकता है।

अगर आप सच्चे हृदय से, आतुरतापूर्वक प्रार्थना करेंगे तो ईश्वर गुरू के स्वरूप में आपके पास आयेंगे।

पूर्व अभ्यास की आवश्यकता

अगर आपको 'प्राथमिक चिकित्सा' का ज्ञान पाना हो तो केवल उसके विषयों की चर्चा करके पा सकते हैं, किन्तु आप अगर एम.बी.बी.एस. कहलाना चाहते हैं, फिजीशियन या सर्जन के रूप में काम करना चाहते हैं तो आपको नियमित रूप में छः वर्ष का अभ्यास करना चाहिए। इसी प्रकार आप उपासना, प्रार्थना आदि के द्वारा देवताओं को प्रसन्न करके उनकी कृपा प्राप्त कर सकते हैं। किन्तु प्रत्यक्ष आध्यात्मिक साक्षात्कार के लिए आपको तीन चीजें चाहिएः गुरूसेवा, गुरूभक्ति और गुरूकृपा।

गुरू को शिष्य का आत्मसमर्पण और गुरू की कृपा ये दो चीजें आपस में जुड़ी हुई हैं।

शरणागति गुरूकृपा को खींच लाती है और गुरूकृपा से शरणागति सम्पूर्ण बनती है।

शिष्य संसारसागर को पार कर सके इसके लिए ब्रह्मवेत्ता गुरू आत्मज्ञान देकर उसका अमूल्य हित करते हैं। यह काम गुरू के सिवाय और कोई नहीं कर सकता।

जिसके ऊपर सदैव गुरू की कृपा रहती है ऐसे शिष्य को धन्यवाद है।

हिन्दूओं के पुराणों में एवं अन्य पवित्र ग्रंथों में गुरूभक्ति की महत्ता गाने वाले सैंकड़ों उदाहरण भरे हुए हैं।

जिसको सच्चे गुरू प्राप्त हुए हैं ऐसे शिष्य के लिए कोई भी वस्तु अप्राप्य नहीं रहती।

आप अपने इष्ट देवता को गुरूकृपा के द्वारा ही प्रत्यक्ष मिल सकते हैं।

गुरू एक प्रकार का माध्यम हैं जिनके द्वारा ईश्वर की कृपा भक्त के प्रति बहती है।

सच्चे गुरू की अपेक्षा अधिक प्रेम बरसाने वाले, अधिक हितकारी, अधिक कृपालु और अधिक प्रिय व्यक्ति इस विश्व में मिलना दुर्लभ है।

शिष्य के लिए तो गुरू से उच्चतर देवता कोई नहीं है।

सचमुच गुरू के सत्संग जितनी उन्नतिकारक दूसरी एक भी वस्तु नहीं है। गुरू की आवश्यकता के सम्बन्ध में प्राचीन काल के तमाम साधु-संन्यासियों का एक समान ही अभिप्राय था।

गुरू के बिना साधक अपने लक्ष्य पर पहुँच सकता है ऐसा कहने का अर्थ होता है कि प्रवासी बाढ़ में उफनती हुई तुफानी नदी को नौका की सहायता के बिना ही पार कर सकता है।

सत्संग माने गुरू का सहवास। उस सत्संग के बिना मन ईश्वर की ओर मुड़ नहीं सकता।

आत्मवेत्ता गुरू के साथ एक क्षण का सत्संग भी लाखों वर्षों के तप की अपेक्षा कहीं उच्चतर है।

हे साधकों ! मनमुखी साधना कभी करना नहीं। पूर्ण श्रद्धा और भक्तिभाव से गुरूमुखी साधना करो।

जिसने गुरू किये हैं वह उपनिषदों में वर्णित ब्रह्म को जानता है।

गुरू साधक जगत के प्रकाशक दीप हैं।

निष्ठावान शिष्य के लिए जो गुरू सुख, शान्ति, आनन्द और अमरत्व का मूल एवं ध्रुवतारक हैं ऐसे गुरू की जयजयकार हो !

आपके गुरू अथवा योग सिखाने वाले आचार्य आपको प्रणाम करें उसके पहले आप उन्हें प्रणाम करो।

योग के साधक को अपने गुरू में एवं ईश्वर में श्रद्धा और भक्तिभाव होना जरूरी है।

उसे गुरू के उपदेश में एवं पवित्र शास्त्रों में श्रद्धा होना जरूरी है।

अनुक्रम

ॐॐॐॐॐॐॐॐॐॐॐॐॐॐॐॐॐॐॐॐॐॐॐॐॐॐ

प्रकरणः 5

गुरू की महत्ता

गुरू ही एक मात्र आश्रय

रसोई सीखने के लिए आपको सिखाने वाले की आवश्यकता पड़ती है, विज्ञान सीखने के लिए आपको प्राध्यापक की आवश्यकता पड़ती है। कोई भी कला सीखने के लिए आपको गुरू चाहिए। तो क्या आत्मविद्या सीखने के लिए गुरू की आवश्यकता नहीं है ?

संसारसागर से उस पार जाने के लिए सचमुच गुरू ही एकमात्र शरण है।

सत्य के कंटकमय मार्ग में आपको गुरू के सिवाय और कोई मार्गदर्शन नहीं दे सकता।

गुरूकृपा के परिणाम अदभुत होते हैं।

आपके दैनिक जीवन के संग्राम में गुरू आपको मार्गदर्शन देंगे और आपका रक्षण करेंगे।

गुरू ज्ञान के पथप्रदर्शक हैं।

गुरू, ईश्वर, ब्रह्म, आचार्य, उपदेशक, दैवी गुरू आदि सब समानार्थी शब्द हैं।

ईश्वर को प्रणाम करो उससे पहले गुरू को प्रणाम करो। क्योंकि वे आपको ईश्वर के पास ले जाते हैं।

आपके गुरू से मंत्र की दीक्षा लो। उससे आपको प्रेरणा मिलेगी और आप उच्च स्थिति पर पहुँच सकेंगे।

आपके बदले में गुरू का साधना नहीं करेंगे, साधना तो आपको ही करना होगा।

गुरू आपको सच्ची राह दिखाएँगे।

गुरू शिष्य के लिए सच्चा योग पसंद कर सकते हैं।

गुरू की कृपा से शिष्य अपने मार्ग में स्थित विघ्नों एवं संशयों को पार कर सकता है।

गुरू शिष्य को भयस्थानों में से एवं बन्धनों में से उठा लेंगे।

अपने गुरू की सेवा करने के लिए अपने प्राण एवं शरीर का बलिदान देने की तैयारी रखो, तब वे आपकी आत्मा की सँभाल लेंगे।

आपको उठाकर समाधि में रख देंगे ऐसा चमत्कार कर दिखाने की अपेक्षा आपके गुरू से रखना नहीं। आप स्वयं कठिन साधना करो। भूखे आदमी को खुद ही खाना चाहिए।

अगर आपको सदगुरू प्राप्त नहीं होंगे तो आप आध्यात्मिक मार्ग में आगे नहीं बढ़ सकेंगे।

अपने गुरू की पसन्दगी सोच-विचार कर एवं धैर्य से करो। क्योंकि बाद में आप गुरू से अलग नहीं हो सकते। अलग होने में बड़े में बड़ा पाप है।

गुरू-शिष्य का सम्बन्ध पवित्र एवं जीवन पर्यन्त का है। यह बात ठीक से समझ लेना।

साधना का रहस्य

पूरे अन्तःकरण से हृदयपूर्वक गुरू की सेवा करो। किसी भी प्रकार की अपेक्षा से रहति होकर आपके गुरू के प्रति प्रेम रखो। अपनी आय

का दसवाँ हिस्सा आपके गुरू को समर्पित करो। गुरू के चरणकमलों का ध्यान करो। इसी जन्म में आपको आत्म-साक्षात्कार होगा। यह साधना का रहस्य है।

गुरू की पूजा करने के लिए शिष्य के लिए गुरूवार पवित्र दिन है।

जिनको आत्मा विषयक ज्ञान है, शास्त्रों में जो पारंगत हैं, जो तमाम उत्कृष्ट गुणों से युक्त हैं वे सदगुरू हैं।

जिसको आत्म-साक्षात्कार सिद्ध किये हुए गुरू मिलते हैं वह सचमुच तीन गुना भाग्यशाली है।

अपने गुरू की क्षतियाँ न देखो। अपनी क्षतियाँ देखो और उन्हें दूर करने के लिए ईश्वर से प्रार्थना करो।

गुरू की कसौटी करना मुश्किल है। एक कबीर ही दूसरे कबीर को पहचान सकता है। अपने गुरू में ईश्वर के गुणों का आरोपण करो। तभी आपको लाभ होगा।

जिनके सान्निध्य में आपको आध्यात्मिक उन्नति महसूस हो, जिनके वक्तव्य से आपको प्रेरणा मिले, जो आपके संशयों को दूर कर सकें, जो काम, क्रोध, लोभ से मुक्त हों, जो निःस्वार्थ हों, प्रेम बरसाने वाले हों, जो अहंपद से मुक्त हो, जिनके व्यवहार में गीता, भागवत, उपनिषदों का ज्ञान छलकता हो, जिन्होंने प्रभुनाम की प्याऊ लगाई हो उन्हें आप गुरू करना। ऐसे जागृत पुरूष के शरण की खोज करना।

गुरूभक्ति के लिये योग्यता

गुरू के पास जाने के लिए आप योग्य अधिकारी होने चाहिए। आपमें वैराग्य की भावना, विवेक, गांभीर्य, आत्मसंयम एवं सदाचार जैसे गुण होने चाहिए।

अगर आप ऐसा कहेंगे कि 'अच्छा गुरू कोई है ही नहीं' तो गुरू भी कहेंगे कि 'कोई अच्छा शिष्य है ही नहीं।' आप शिष्य की योग्यता प्राप्त करें तो आपको सदगुरू की योग्यता, महत्ता दिखेगी और समझ में आयेगी।

गुरू आपके उद्धारक एवं संरक्षक हैं। सदैव उनकी पूजा करो, उनका आदर करो।

गुरूपद भयंकर शाप है।

जो सत्, चित् और परमानन्द स्वरूप हैं ऐसे गुरू को सदा साष्टांग प्रणाम करो।

शिष्य को अपने गुरू की मूर्ति सदा स्मरण में रखना चाहिए, गुरू के पवित्र नाम का सदा जप करना चाहिए, उनकी आज्ञा का पालन करना चाहिए। इसी में साधना का रहस्य निहित है।

शिष्य को गुरू की पूजा करना चाहिए क्योंकि गुरू से बड़ा और कोई नहीं है।

गुरू के चरणामृत से संसारसागर सूख जाता है और मनुष्य आवश्यक आत्मसम्पत्ति प्राप्त कर सकता है।

गुरू का चरणामृत शिष्य की तृषा शान्त कर सकता है।

आप जब ध्यान करने बैठें तब अपने गुरू का एवं पूर्वकालीन सब संतों का स्मरण करें। आपको उनके आशीर्वाद प्राप्त होंगे।

महात्माओं के ज्ञान के शब्द सुनें और उनका अनुसरण करें।

शास्त्र एवं गुरू के द्वारा निर्दिष्ट शुभ कर्म करें।

शान्ति का मार्ग दिखाने के लिए गुरू अनिवार्य है।

'वाहे गुरू' या गुरू नानक के अनुयाइयों का गुरूमंत्र है। 'ग्रन्थ साहब' पढ़ो तो आपको गुरू की महत्ता का परिचय होगा।

गुरू की पूजा करके सदा उनका स्मरण करो। इससे आपको सुख प्राप्त होगा।

श्रद्धा माने शास्त्रों में, गुरू के शब्दों में ईश्वर में और अपने आप में विश्वास।

किसी भी प्रकार के फल की अपेक्षा से रहित होकर गुरू की सेवा करना यह सर्वोच्च साधना है।

श्रवण माने गुरू के चरणकमलों में बैठकर वेद का श्रवण करना।

गुरूसेवा महान शुद्धि करने वाली है।

आत्म-साक्षात्कार के गुरू की कृपा आवश्यक है।

जितनी भक्तिभावना प्रभु के प्रति रखनी चाहिए उतनी ही गुरू के प्रति रखो। तभी सत्य की अनुभूति होगी।

सदैव एक ही गुरू से लगे रहो।

ईश्वर आदि गुरू हैं जिनको स्थान एवं समय (देश-काल) की सीमा नहीं होती। एक शाश्वत युग तक वे समग्र मनुष्य जाति के गुरू हैं।

कुण्डलिनी शक्ति को उसकी सुषुप्त अवस्था में से जागृत करने के लिए गुरू की अनिवार्य आवश्यकता रहती है।

गुरू के प्रकाश का अनुसरण करो

अज्ञान का नाश करने वाले तथा ज्ञान देने वाले सदगुरू के चरणकमलों में कोटि प्रणाम !

समदर्शी संत-महात्मा और गुरू के सत्संग का एक भी मौका चूकना नहीं।

आपके स्थूल मन के कहे अनुसार कभी चलना नहीं। आपके गुरू के वचनों का अनुसरण करें।

उच्च आत्माओं एवं गुरू के स्मरण मात्र से भौतिक मनुष्यों की नास्तिक वृत्तियों का नाश होता है और अन्तिम मुक्ति हेतु प्रयास करने के लिए उनको प्रेरणा मिलती है। तो फिर गुरूसेवा की महिमा का तो पूछना ही क्या ?

जिस प्रकार दो खरगोशों के पीछे दौड़ने वाला मनुष्य दो में से एक को भी पकड़ नहीं सकता उसी प्रकार जो शिष्य दो गुरूओं के पीछे दौड़ता है वह अपने आध्यात्मिक मार्ग में सफलता नहीं प्राप्त कर सकता।

अहंभाव का नाश करने से शिष्यत्व की शुरूआत होती है।

शिष्यत्व की कुंजी है ब्रह्मचर्य और गुरूसेवा।

शिष्यत्व की पहचान माने गुरूभक्ति।

गुरू के चरणकमलों में आजीवन आत्म-समर्पण करना यह शिष्यत्व की निशानी है।

गुरूदेव की मूर्ति का नियमित ध्यान करना यह शिष्यत्व की नींव है।

गुरू से मिलने की उत्कट इच्छा और उनकी सेवा करने की तीव्र आकांक्षा मुमुक्षत्व की निशानी है।

देव, द्विज, आध्यात्मिक गुरू एवं ज्ञानी पुरूषों की पूजा, पवित्रता, सरलता, ब्रह्मचर्य और अहिंसा शरीर का तप है।

ब्राह्मणों, पवित्र आचार्यों एवं ज्ञानी पुरुषों को प्रणाम करना, ब्रह्मचर्य और अहिंसा ये शारीरिक तपश्चर्याएँ हैं।

माँ बाप और आचार्यों की सेवा, गरीब और रोगियों की सेवा भी शारीरिक तपश्चर्या है।

गुरू द्वारा ब्रह्म का ज्ञान

ब्रह्मविषयक ज्ञान अति सूक्ष्म है। शंकाएँ पैदा होती हैं और उनको दूर करने के लिए एवं मार्ग दिखाने के लिए ब्रह्मज्ञानी आध्यात्मिक गुरू की आवश्यकता रहती है। सत्य के सच्चे खोजी को सहायभूत होने के लिए गुरू अत्यन्त महत्त्वपूर्ण भूमिका निभाते हैं।

आध्यात्मिक गुरू साधक को अपनी प्रेमपूर्ण एवं विवेकपूर्ण निगरानी में रखते हैं तथा आध्यात्मिक विकास के विभिन्न स्तरों में से उसे आगे बढ़ाते हैं।

आध्यात्मिक गुरू साधक को अपनी प्रेमपूर्ण एवं विवेकपूर्ण निगरानी में रखते हैं तथा आध्यात्मिक विकास के विभिन्न स्तरों में से उसे आगे बढ़ाते हैं।

सच्चे गुरू सदैव शिष्य के अज्ञान का नाश करने में तथा उसे उपनिषदों का ज्ञान देने में संलग्न रहते हैं।

वेद भी ज्ञानमार्ग के पथप्रदर्शक गुरू की प्रशस्ति गाना चूकते नहीं हैं।

साधक कितना भी बुद्धिमान हो फिर भी गुरू अथवा आध्यात्मिक आचार्य की सहाय के बिना वेदों की गहनता प्राप्त करना या उनका अभ्यास करना उसके लिए संभव नहीं है।

गुरू अपने शिष्य की दैवी शक्तियों को जागृत करते हैं।

प्रथम को अपने गुरू को, आध्यात्मिक आचार्य को खोज लो जो आपको अनन्त तत्त्व अथवा शाश्वत चेतनप्रवाह के साथ एकत्व साधने में सहाय कर सकें।

अध्यात्ममार्ग में सलामतीपूर्वक तथा मक्कमता से आगे बढ़ने के लिए अपने गुरू के द्वारा ही शिष्य को सूचनाएँ मिल सकती हैं।

अपने गुरू की इच्छा के शरण हो जाओ। उनको आत्मसमर्पण करो। तभी आपका उद्धार होगा।

गुरू ही ईश्वर

ईश्वर ही गुरू के रूप में दिखते हैं।

सच्चे गुरू एवं सच्चे साधक बहुत कम होते हैं।

योग्य शिष्यों को यशस्वी गुरू प्राप्त होते हैं।

ईश्वर की कृपा गुरू का रूप लेती है।

गुरू अपने शिष्य को अपने जैसा बनाते हैं, अतः वे पारस से भी महान हैं।

संसारसागर को पार करने के लिए गुरू जैसी कोई नौका नहीं है।

हे राम ! तुम्हारे तन, मन, धन, अपने सदगुरू के चरणों में समर्पित कर दो, जिन्होंने तुम्हें परम सुख या मोक्ष का मार्ग दिखाया है।

अपने गुरू या आचार्य के समक्ष हररोज अपने दोष कबूल करें, तभी आप इस दुन्यावी निर्बलताओं से ऊपर उठ सकेंगे।

गुरू दृष्टि, स्पर्श, विचार या शब्द के द्वारा शिष्य का परिवर्तन कर सकते हैं।

गुरू और ईश्वर सचमुच एकरूप हैं।

गुरू इस दुनिया में ईश्वर के सच्चे प्रतिनिधि हैं।

गुरू आपके लिए 'इलेक्ट्रिक लिफ्ट' हैं। वे आपको पूर्णता के शिखर पर पहुँचाएँगे।

गुरू के प्रति निःस्वार्थ एवं भक्तिभावपूर्वक सेवा यह पूजा, भक्ति, प्रार्थना और ध्यान है।

हे राम ! जिससे आत्म-साक्षात्कार को गति मिलती है, जिससे चेतना की जागृति होती है, उसे गुरूदीक्षा कहते है।

यदि आप गुरू में ईश्वर को नहीं देख सकते तो फिर और किसमें देख सकेंगे ?

जब तुम मेरे समक्ष निखालिस होकर अपना हृदय खोलोगे तभी मैं तुम्हे सहाय कर सकूँगा।

आपके मित्रों, आदर्शों तथा गुरू या आध्यात्मिक आचार्य के प्रति वफादार एवं सन्निष्ठ रहें।

अनुक्रम

ॐॐॐॐॐॐॐॐॐॐॐॐॐॐॐॐॐॐॐॐॐॐॐ

प्रकरणः 6

गुरूभक्ति का अभ्यास

अनुकूल होने का सिद्धान्त

अनुकूल होने का विरल गुण बहुत कम लोगों में होता है, और वह एक उत्तम गुण है। उसके द्वारा शिष्य अपना कैसा भी स्वभाव हो फिर भी वह अपने गुरू के प्रति अनुकूल बनता है।

आजकल प्रायः सभी साधक अपने गुरूभाइयों को अनुकूल होना नहीं जानते।

शिष्य को अपने गुरू के अनुकूल होना और उनसे हिलमिल जाना चाहिए।

गुरूभक्ति जगाने के लिए नम्रता और आज्ञापालन के गुण जरूरी हैं।

शिष्य जब एक ही गुरू के सान्निध्य में रहते हुए अपने गुरूभाइयों के साथ अनुकूल होना नहीं जानता तब घर्षण होता है और वह अपने गुरू को नाराज करता है।

जहाज का कप्तान सदैव सावधान रहता है। मच्छीमार भी सदैव सावधान रहता है। ऑपरेशन थीएटर में सर्जन सदैव सावधान रहता है। इसी प्रकार भूखे-प्यासे शिष्य को भी गुरूसेवा में सदैव सावधान रहना चाहिए।

शिष्यत्व के मूल तत्त्व

अति नींद करने वाला, जड़, स्थूलकाय, निष्क्रिय, आलसी एवं मूर्ख मन का शिष्य गुरू संतुष्ट हों इस प्रकार उनकी सेवा नहीं कर सकता।

जिस शिष्य में उपदेश के आचरण का गुण होता है वह अपने गुरू की सेवा में सफल होता है। आबादी एवं अमरत्व उसको आ मिलते है।

गुरू की सेवा करने की उत्कण्ठा एवं लगन शिष्य में होनी चाहिए।

गुरू के प्रति भक्तिभाव तमाम योग्य मानवमहेच्छाओं का एकमात्र ध्येय है।

शिष्य जब गुरू के पास रहकर अभ्यास करता हो तब उसके कान श्रवण के लिए तत्पर होने चाहिए। वह जब गुरू की सेवा करता हो तब उसकी दृष्टि सावधान होनी चाहिए।

शिष्य को अपने गुरू, माँ-बाप, बुजुर्ग, सब योगी एवं संतों के साथ अच्छी तरह बरताव करना चाहिए।

अच्छी तरह बरताव करना माने अपने गुरू के प्रति अच्छा आचरण करना।

गुरू शिष्य के आचरण पर से उसका स्वभाव तथा उसके मन की पद्धति जान सकते हैं।

अपने पवित्र गुरू के प्रति अच्छा आचरण परम सुख के धाम का पासपोर्ट है।

शिष्य जब गुरू की सेवा करता हो तब उसे तरंगी नहीं बनना चाहिए।

आचरण अपने गुरू की सेवा करके प्राप्त किये हुए व्यवहारू ज्ञान की अभिव्यक्ति है।

दैवी एवं उत्तम गुण दुकान से खरीद करने की चीजें नहीं हैं। वे गुण तो लम्बे समय तक की हुई गुरू सेवा, श्रद्धा एवं भक्तिभाव द्वारा ही प्राप्त किये जा सकते हैं।

गुरू को आत्मसमर्पण

ज्ञानार्जन के बाद गुरू को राजी-खुशी से, शीघ्र बिना झिझक से एवं बहुत राशि में गुरूदक्षिणा दो।

गुरूदक्षिणा से असंख्य पापों का नाश होता है।

गुरू को दी हुई दक्षिणा हृदयशुद्धि करने वाली महान वस्तु है।

जो दक्षिणा गुरू को दी जाती है वह व्यवहारू प्रेम का प्रतीक है।

तमाम गुरूभाइयों के कल्याण के लिए उदार भावना विकसित करो।

दान का प्रारम्भ अपने गुरू से ही होता है।

गुरू को दक्षिणा देने की आदत डालनी चाहिए।

शिष्य के पास जो कुछ हो वह गुरू को सप्रेम भेंट चढ़ा देना चाहिए।

गुरू के द्वारा चाहे जैसा भोजन, कपड़े एवं निवास प्राप्त हो उससे शिष्य को सन्तोष मानना चाहिए। अपने सच्चे मन एवं हृदय से गुरू की सेवा में तत्पर रहना चाहिए।

गुरू की सेवा के दौरान कैसी भी परिस्थितियों में साधक को मिलने वाला संतोष सदा आनन्द और शक्ति देता है।

जो कुछ घटना घटित हो, उसमें सदा संतोष रखना चाहिए। सदैव याद रखोः उच्चात्मा गुरू को जो अच्छा लगता है वह आपकी पसन्दगी की अपेक्षा अधिक होता है।

संतोष जैसे परम गुण से युक्त शिष्य पर ही गुरू की कृपा उतरती है।

गुरू की सेवा के दौरान शिष्य को अपनी साधारण बुद्धि का उपयोग करना चाहिए।

विवेक का घटक

उच्चात्मा गुरू की कृपा के द्वारा शिष्य के हृदय में विवेकबुद्धि का उदय होता है।

जिसको नैसर्गिक विवेकबुद्धि प्राप्त हुई है उसे अवश्य गुरूकृपा मिलती है।

किसी भी चीज की स्पृहा के बिना अपने गुरू के प्रति फर्ज अदा करो।

शिष्य का कर्त्तव्य गुरू के आदेशों का वफादारी-पूर्वक एवं अविलम्ब पालन करना है।

गुरू के प्रति अपने छोटे छोटे कर्त्तव्य निभाने में भी सतर्क रहो। आपको बहुत आनन्द एवं शान्ति की प्राप्ति होगी।

गुरू की सेवा में दासत्व जैसी कोई चीज नहीं है।

गुरू की सेवा माने गुरू को आत्म-समर्पण।

सब प्रकार की सेवा पवित्र एवं उत्तम है।

गुरू के प्रति अपना कर्त्तव्य अदा करना माने सत्य धर्म का आचरण करना।

अपने गुरू के प्रति अदा की हुई सेवा नैतिक फर्ज है, आध्यात्मिक टॉनिक है। उससे मन एवं हृदय दैवी गुणों से भरपूर बनते हैं, पुष्ट बनते हैं।

सम्पूर्ण शरणागति

तत्पर एवं सन्निष्ठ शिष्य अपने आचार्य की सेवा में अपने सम्पूर्ण मन एवं हृदय को लगा देता है।

तत्पर शिष्य किसी भी परिस्थिति में अपने गुरू की सेवा करने का साधन खोज लेता है।

अपने गुरू की सेवा करते हुए जो साधक सब आपत्तियों को सह लेता है वह अपने प्राकृत स्वभाव को जीत सकता है।

शान्ति का मार्ग दिखाने वाले गुरू के प्रति शिष्य को सदैव कृतज्ञ रहना चाहिए।

कृतघ्न बेवफा शिष्य इस दुनिया में हीनभाग एवं दुःखी है। उसका भाग्य दयनीय, शोचनीय एवं अफसोस-जनक है।

गुरू की प्रतिष्ठा

पवित्र वेदों के रहस्योंदघाटक, आदि एवं पूर्ण ब्रह्मरूप महान गुरू को मैं नमस्कार करता हूँ, जो ज्ञानविज्ञान रूप वेदों के सार को भ्रमर की तरह चूसकर अपने भक्तों को देते हैं।

सच्चे शिष्य को अपने हृदय के कोने में अपने सम्माननीय गुरू के चरणकमलों की प्रतिष्ठा करना चाहिए।

शिष्य जब अपने गुरू से मिले तब उसका सबसे प्रथम फर्ज है खूब नम्र भाव से अपने गुरू को प्रणाम करना।

भागवत में अवधूत की एक कथा आती है जिनको चौबीस उपगुरू थे, जैसे कि पंचमहाभूत, सूर्य, चन्द्र, समुद्र, प्राणी आदि। ये नगण्य होते हुए भी अपने अपने ढंग से उनको सर्वोच्च ज्ञान दिया था।

अन्य किसी का विचार किये बिना, एकाग्र मन से केवल अपने गुरू की ही पूजा करता है वह श्रेष्ठ शिष्य है।

जब साधक में सत्त्व की वृद्धि होती है तब वह सदाचारी बनता है और उसमें गुरू के प्रति भक्तिभाव विकसित होता है।

गुरू समदृष्टि के प्रतीक हैं अतः वे अपने तमाम शिष्यों के प्रति समभाव रखते हैं।

श्रीकृष्ण उद्धवजी से कहते हैं- "मैं पुरोहितों में वशिष्ठ हूँ, गुरूओं में बृहस्पति हूँ, साधुओं में मैं नारायण हूँ एवं ब्रह्मचारियों में सनत्कुमार हूँ।"

शिष्य जब अपने गुरू की सेवा करता हो तब उसे दूसरों की सेवा कभी लेना नहीं चाहिए। आध्यात्मिक विकास में उसके लिए यह एक महान अवरोध है।

दूसरों को गुरूभाई बनाकर अपने गुरू का यश बढ़ाओ। गुरूभक्ति विकसित करने का यह राजमार्ग है।

विद्वता से नम्रता बढ़कर है

आप महान विद्वान एवं धनवान हों फिर भी गुरू एवं महात्माओं के समक्ष आपको बहुत ही नम्र होना चाहिए।

शिष्य अधिक विद्वान न हो लेकिन वह मूर्तिमंत नम्रता का स्वरूप हो तो उसके गुरू को उस पर अत्यंत प्रेम होता है।

अगर आपको नल से पानी पीना हो तो आपको स्वयं नीचे झुकना पड़ेगा। इसी प्रकार अगर आपको गुरू करना हो तो आपको विनम्रता के प्रतीक बनना पड़ेगा।

जो मनुष्य वफादार एवं बिल्कुल नम्र बनते हैं उनके ऊपर ही गुरू ही कृपा उतरती है।

गुरू के चरणकमलों की पूजा के लिए नम्रता के पुष्प के अलावा और कोई श्रेष्ठ पुष्प नहीं है।

श्रद्धा का अर्थ

श्रद्धा माने गुरू का विश्वास।

श्रद्धा माने अपने पवित्र आचार्य एवं महात्माओं के कथन, वाणी, कार्यों, लेखन एवं उपदेशों में विश्वास।

आचार्य प्रमाण के रूप में जो कहें उसमें अन्य कोई प्रमाण या साबितियों की परवाह किये बिना दृढ़ विश्वास रखना उसका नाम है श्रद्धा।

गुरू में सम्पूर्ण श्रद्धा रखें और अपने आपको पूर्णतः गुरू के शरण में ले जायें। वे आपकी निगरानी करेंगे। इससे सब भय, अवरोध एवं कष्ट पूर्णतः नष्ट होंगे।

सदगुरू में दृढ़ श्रद्धा आत्मा की उन्नति करती है, हृदय को शुद्ध करती है एवं आत्म-साक्षात्कार की ओर ले जाती है।

गुरू के उपदेश में सम्पूर्ण श्रद्धा रखना यह शिष्यों का सिद्धान्त होना चाहिए।

आज्ञापालन का प्रकार

आज्ञापालन माने गुरू एवं बुजुर्गों के आदेशों को पालने की इच्छा।

जो शिष्य अपने गुरू की आज्ञा मानता है वही अपनी स्थूल प्रकृति पर नियंत्रण पा सकता है।

नम्रता, भक्तिभाव, निरहंकारीपना आदि सब दिव्य गुण गुरू की आज्ञा का पालन करने से ही प्रकट होते हैं।

गुरू के आदेशों में शंका नहीं करना या उनके पालन में आलस्य नहीं करना यही गुरू के प्रति सच्ची आज्ञाकारिता है।

गुरू की आज्ञा का पालन सब कार्यों में सफलता की जननी है।

गूरू जो आज्ञा करें वह काम करना और मना करें वह काम न करना यही गुरू के प्रति सच्ची आज्ञाकारिता है।

दंभी शिष्य गुरू की आज्ञा भय के कारण मानता है। सच्चा शिष्य प्रेम के खातिर शुद्ध प्रेम से गुरू की आज्ञा का पालन करता है।

शिष्य का प्रथम पाठ है गुरू के प्रति आज्ञाकारिता।

भलाई की एक नदी है जो ईश्वर के चरणकमलों में से निकलती है और गुरू के आज्ञापालन के मार्ग से बहती है।

यदि शिष्य के हृदय में संतोष न हो तो यह बताता है कि शिष्य मे गुरू के प्रति आज्ञापालन का भाव पूरा नहीं है।

आपमें भाव एवं तत्परता होगी तो गुरू आपकी भेंट से प्रसन्न होंगे, भेंट के प्रकारों से नहीं।

शिष्य को अत्यन्त तत्परतापूर्वक एवं ध्यानपूर्वक अपने गुरू की सेवा करना चाहिए।

आध्यात्मिक नीति-रीति

अपने आपको आचार्य की सेवा में सौंप दो। तन, मन एवं आत्मा को खूब तत्परता से अर्पण कर दो।

गुरूश्रद्धा का सक्रिय स्वरूप माने गुरू के चरण कमलों में सम्पूर्ण आत्मसमर्पण करना।

गुरू सेवा के नित्यक्रम में खूब नियमित रहो।

अपने आचार्य की दैनिक निजी सेवा में घड़ी के समान नियमित रहो।

आचार्य एवं हरएक संत का आदर करना यह नम्रता का चिह्न है।

आचार्य एवं आदरणीय व्यक्तियों की उपस्थिति में ऊँची आवाज से बोलो नहीं।

गुरू के वचनों में विश्वास रखना यह अमरत्व के द्वार खोलने के लिए गुरू चाबी है।

जब आप किसी महान गुरू के शिष्य हों तब अन्य किसी को आप अपने शिष्य बनाओ नहीं एवं खुद गुरू बनने का प्रयास करो नहीं। उनको अपने गुरूभाई मानो।

गुरू करना और बाद में उनको धोखा देकर उनका त्याग कर देना इसकी अपेक्षा गुरू नहीं करना और भवाटवी में भटकना बेहतर है।

जो मनुष्य विषयवासना का दास है वह गुरू की सेवा नहीं कर सकता, गुरू को आत्मसमर्पण नहीं कर सकता। फलतः वह संसार के कीचड़ से अपने आपको बचा नहीं सकता।

मिलन की शक्ति

गुरू से धोखा करना यह अपनी ही कब्र खोदने का साधन है।

गुरू और शिष्य के बीच जो शक्ति जोड़ने का काम करती है वह शुद्ध प्रेम होना चाहिए।

गुरू का कृपा-प्रसाद और शिष्य की कोशिस मिलती है तब अमरत्व रूपी बालक का जन्म होता है।

शिष्य को ज्ञान दिये बिना ही गुरू को उसके पास से गुरूदक्षिणा नहीं लेना चाहिए।

शिष्य को अपने समग्र जीवन के दौरान गुरू के यश की पताका लहराना चाहिए।

गुरू के चरणकमल में आत्मसमर्पण करना यह शिष्य का आदर्श होना चाहिए।

गुरू महान हैं। विपत्तियों से डरना नहीं। हे वीर शिष्यों ! आगे बढ़ो।

गुरूकृपा अणुशक्ति से अधिक शक्तिशाली है।

शिष्य के ऊपर जो आपत्तियाँ आती हैं वे छुपे वेश में गुरू के आशीर्वाद के समान होती हैं।

गुरू के चरणकमलों में आत्मसमर्पण करना यह सच्चे शिष्य का जीवनमंत्र होना चाहिए।

गुरू की सेवा

साक्षात् प्रेम एवं आनन्दस्वरूप अपने गुरू की सेवा करने का सौभाग्य प्राप्त हो जाय तो सेवा में असीम आनन्द एवं परम सुख मिलेगा।

नम्रतापूर्वक, स्वेच्छापूर्वक, संशयरहित होकर, बाह्य आडम्बर के बिना, द्वेष रहित बनकर, असीम प्रेम से अपने गुरू की सेवा करें।

पृथ्वी पर के साक्षात् ईश्वर स्वरूप गुरू के चरणकमलों में आत्मसमर्पण करेंगे तो वे भयस्थानों से आपका रक्षण करेंगे, आपकी साधना में आपको प्रेरणा देंगे तथा अन्तिम ध्येय तक आपके पथप्रदर्शक बनेंगे।

गुरू की कृपा अखूट, असीम और अवर्णनीय है।

गुरू का उच्छिष्ट प्रसाद लेने से असाध्य रोग मिटते हैं।

गुरू पर श्रद्धा एक ऐसी चीज है जो प्राप्त करने के बाद और कुछ प्राप्त करना शेष नहीं रहता।

इस श्रद्धा के द्वारा निमेष मात्र में आप परम पदार्थ पा लेंगे।

गुरू के वचन एवं कर्म में श्रद्धा रखो, श्रद्धा रखो, श्रद्धा रखो। यही गुरूभक्ति विकसित करने का मार्ग है।

अनुक्रम

ॐॐॐॐॐॐॐॐॐॐॐॐॐॐॐॐॐॐॐॐॐॐॐॐॐॐॐ

प्रकरणः 7

साधक के सच्चे पथप्रदर्शक

शिष्यत्व के मूल सिद्धान्त

साधक अगर श्रद्धा एवं भक्तिभाव से अपने गुरू की सेवा नहीं करेगा तो उसके तमाम व्रत, तप कच्चे घड़े में से पानी की तरह टपककर बह जाएँगे।

मन एवं इन्द्रियों का संयम, गुरूभगवान का ध्यान, गुरू की सेवा में धैर्य, सहन शक्ति, आचार्य के प्रति भक्तिभाव, संतोष, दया, स्वच्छता, सत्यवादिता, सरलता, गुरू की आज्ञा का पालन.... ये सब अच्छे शिष्य के लक्षण हैं।

सत्य के साधक को मन एवं इन्द्रियों पर संयम रखकर अपने आचार्य के घर रहना चाहिए और खूब श्रद्धा एवं आदरपूर्वक गुरू की निगरानी में शास्त्रों का अभ्यास करना चाहिए।

उसे चुस्तता से ब्रह्मचर्य का पालन करना चाहिए और आचार्य की पूजा करना चाहिए।

शिष्य को चाहिए कि वह आचार्य को साक्षात् ईश्वर के रूप में माने, मनुष्य के रूप में कदापि नहीं।

शिष्य को आचार्य के दोष नहीं देखना चाहिए क्योंकि वे तमाम देवों के प्रतिनिधि हैं।

शिष्य को गुरू के लिए भिक्षा माँगकर लाना चाहिए एवं खूब श्रद्धा तथा भक्तिभावपूर्वक उन्हें भोजन कराना चाहिए।

शिष्य को सब सुखवैभव का विष की त्याग कर देना चाहिए और अपना शरीर गुरू की सेवा में सौंप देना चाहिए।

शास्त्रों का अभ्यास पूरा करके शिष्य को चाहिए कि वह गुरू को दक्षिणा दे और उनकी आज्ञा लेकर अपने घर वापस लौटे।

जो गुरूपद का उपयोग आजीविका के साधन के रूप में करता है वह धर्म का नाश करने वाला है।

ब्रह्मचारी का मुख्य कर्त्तव्य पूरे हृदय से अपने आचार्य की सेवा करना है।

गुरू की कृपा प्राप्त करने के लिए उनकी निजि सेवा और उनकी आज्ञा का पालन जितना सहायरूप है उतना सहायरूप तप, यात्रा, भेंट, दान आदि नहीं है।

वेद, प्रत्यक्ष ज्ञान, गुरूवचन और अनुमान ये चार ज्ञान के प्रमाण हैं।

हरएक कर्म में दुःख के बीज समाविष्ट हैं किन्तु गुरू की सेवा के विषय में ऐसा नहीं है।

गुरू के आदेशों का पालन करने के लिए शिष्य को कभी भी धन, भोगविलास, सुखवैभव और अपने शरीर का भी त्याग करने के लिए तैयार रहना चाहिए।

गुरू सम्बन्धी धर्म

जो तन, मन और धन को गुरू के चरणों में अर्पण कर देता है वह गुरूभक्ति का विकास कर लेता है।

जिससे गुरूचरणों के प्रति भक्तिभाव बढ़े वह परम धर्म है।

नियम माने गुरूमंत्र का जप, गुरूसेवा के दौरान तपश्चर्या, गुरूवचन में श्रद्धा, आचार्य-सेवन, संतोष पवित्रता, शास्त्र का अध्ययन और गुरूभक्ति अथवा गुरू का शरण।

तितिक्षा माने गुरू के आदेशों का पालन करते हुए दुःख सहन करना।

त्याग माने गुरू का निषेध हो ऐसे कर्मों का त्याग करना।

जो अपने गुरू की आज्ञा का पालन नहीं करता तथा गुरू की सेवा नहीं करता वह मूर्ख है।

भगवान श्रीकृष्ण उद्धवजी से कहते हैं- "दुष्प्राप्य मनुष्यदेह मजबूत नौका जैसी है। गुरू उस नौका के कर्णधार हैं। वे नौका को संभालते हैं। उस नौका को चलाने वाला मैं (कृष्ण) अनुकूल पवन हूँ।" जो मनुष्य ऐसी नौका और ऐसे साधन से भवसागर पार करने का प्रयत्न नहीं करता वह सचमुच आत्मघातक है।

मनुष्य अनादि अज्ञान के प्रभाव में होने के कारण गुरू की सहाय के बिना आत्म-साक्षात्कार नहीं कर सकता।

गुरू जो कहते हैं उसमें कुछ गलत हो सकता है ? उसके लिए कारण होगा ही। मनुष्यबुद्धि वहाँ पहुँच नहीं पाती।

गुरू की निजी सेवा सर्वोच्च प्रकार का योग है।

गुरू की निजी सेवा करने से शिष्य अपने मन को वश में कर सकता है।

प्रकृति के तीन गुण

क्रोध, लोभ, असत्य, क्रूरता, याचना, दंभ, झगड़ा, भ्रम, निराशा, शोक, दुःख, निद्रा, भय, आलस्य.... ये सब तमोगुण हैं। जो अनेक जन्मों के बावजूद भी जीते जी नहीं जा सकते। किन्तु श्रद्धा एवं भक्ति से गुरू की की हुई निजी सेवा इन सब दुर्गुणों का नाश करती है।

गुरू के वचन में और ईश्वर में श्रद्धा रखना सत्त्वगुण है।

गुरू के भोजन के बाद जो खुराक बचा हो वह बहुत सात्त्विक होता है।

कामवासना का बिल्कुल त्याग

साधक को विजातीय व्यक्ति का सहवास नहीं करना चाहिए। जो लोग ऐसे सहवास के शौकीन हों उनका संग भी नहीं करना चाहिए। क्योंकि उससे मन क्षुब्ध होता है तब शिष्य भक्तिभाव और श्रद्धापूर्वक अपने गुरू की सेवा नहीं कर सकता।

शिष्य अगर अपने आचार्य की आज्ञा का पालन नहीं करता है तो उसकी साधना व्यर्थ है।

बुद्धिमान साधक को तमाम प्रकार के खराब संग से दूर रहना चाहे। उसे संतों एवं गुरू का संग करना चाहिए। उनके संग से वैराग्य विकसित होता है, तमाम वासनाएँ दूर होकर मन शुद्ध बनता है।

जैसे अग्नि के पास बैठने से ठण्ड, भय, अन्धकार दूर होता है वैसे ही जो शिष्य गुरू के पास रहता है उसके अज्ञान, मृत्यु का भय तथा सब अनिष्टों का नाश होता है।

जो इस संसार-सागर में इधर उधर डूबते उतरते हैं उनके लिए बुद्धिमान गुरू का आश्रय श्रेष्ठ है।

सूर्य के पास से केवल एक बाह्य दृष्टि ही प्राप्त होती है किन्तु गुरू के पास से ज्ञान प्राप्त करने के लिए कई प्रकार की कई दृष्टियाँ प्राप्त होती हैं।

गुरू माने साक्षात् देवता

गुरू इस पृथ्वी पर साक्षात् ईश्वर हैं, सच्चे मित्र एवं विश्वासपात्र बन्धु हैं।

"हे भगवान ! हे भगवान ! मैं आपके आश्रय में आया हूँ। मुझ पर दया करो। मुझे जन्म-मृत्यु के सागर से बचाओ।" ऐसा कहकर शिष्य को अपने गुरू को दण्डवत प्रणाम करना चाहिए।

निरपेक्ष भक्तिभावपूर्वक जो गुरू के चरणों की पूजा करता है उसे सीधी गुरू कृपा प्राप्त होती है।

आचार्य से प्राप्त की हुई तथा सेवा से तीक्ष्ण बनी हुई ज्ञानरूप तलवार एवं ध्यान की सहायता से शिष्य मन, वचन, प्राण और देह के अहंकार को काट देता है तथा सब रागद्वेष से मुक्त होकर इस संसार में स्वेच्छापूर्वक विहार करता है।

तीव्र गुरूभक्ति के शक्तिशाली शस्त्र से मन को दूषित करने वाली आसक्ति को मूल सहित काट दिया जाय तब तक विषयों का संग त्याग देना चाहिए।

गुरू का आश्रय लेकर जो योग का अभ्यास करता है वह विविध अवरोधों से पीछे नहीं हटता।

सच्चे शिष्य को अपने गुरू के पवित्र चरणों में किसी भी प्रकार की हिचकिचाहट या शर्म के बिना साष्टांग दंडवत् प्रणाम करना चाहिए। यह उसके सम्पूर्ण आत्मसमर्पण की निशानी है।

किसी भी फल की आशा से रहित होकर जो गुरूसेवा और गुरूपूजा में लगा रहता है वह उल्टे मार्ग में नहीं जाएगा। उसे सेवा पूजा का प्रकाश अवश्य प्राप्त होगा।

ज्ञान का प्रकाश फैलाने वाली पवित्र गुरूगीता का जो हररोज अभ्यास करता है वही सचमुच विशुद्ध है। उसे ही मोक्ष की प्राप्ति होती है।

जो अपने गुरू के यश में आनन्दित होता है और दूसरों के समक्ष अपने गुरू के यश का वर्णन करने में आनन्द का अनुभव करता है उसे सचमुच गुरू कृपा प्राप्त होती है।

परमात्मा और परब्रह्मस्वरूप गुरू की अज्ञाननाशक उपस्थिति में आपके सब संशयों का नाश होगा, जैसे सूर्योदय होते ही ओस की बूँदें नष्ट होती हैं।

"हे महान, परम सम्माननीय गुरू ! मैं आदरपूर्वक आपको नमस्कार करता हूँ। मैं आपके चरणकमलों के प्रति अचूक भक्तिभावव कैसे प्राप्त कर सकूँ और आपके दयालु चरणों में मेरा मन हमेशा भक्तिभावपूर्वक कैसे सराबोर रहे यह कृपा करके मुझे कहें।" इस प्रकार कहकर खूब नम्रतापूर्वक एवं आत्मसमर्पण की भावना से शिष्य को चाहिए कि वह गुरू को दण्डवत प्रणाम करे और उनके आगे गिड़गिड़ाए।

साक्षात् ईश्वर जैसे सर्वोच्च पद प्राप्त किये हुए गुरू की जय हो ! गुरू का यश गाने वाले धर्मशास्त्रों की जय हो ! जिसने केवल ऐसे गुरू का ही आश्रय लिया है ऐसे सच्चे शिष्य की जय हो !

गुरू कृपा से ईश्वर-साक्षात्कार

वादविवाद, बुद्धि, गहन अभ्यास, दान या तप से ईश्वर-साक्षात्कार नहीं होता। वह तो जिसने गुरूकृपा प्राप्त की हो उसको ही होता है।

गुरूकृपा का छोटे से छोटा बिन्दू भी इस संसार के कष्टों से मनुष्य को मुक्त करने में पर्याप्त है।

केवल गुरूकृपा के द्वारा ही साधक आध्यात्मिक मार्ग में लगा रह सकता है एवं तमाम प्रकार के बन्धनों एवं आसक्तियों को तोड़ सकता है।

जो शिष्य अहंकार से भरा हुआ है, जो गुरू के वचनों को सुनता नहीं है उसका आखिर नाश होता है।

जिन गुरू को आत्म-साक्षात्कार हुआ है ऐसे गुरू में और ईश्वर में कोई फर्क नहीं है। दोनों समान हैं और एकरूप हैं।

गुरू के सत्संग की सहाय के बिना नये नये साधक के कुसंस्कारों में मूलतः परिवर्तन करने की बिल्कुल आशा नहीं है।

गुरू का सहवास साधक के लिए एक सुरक्षित नौका है जो उसे अन्धकार के उस पार निर्भयता के किनारे पर पहुँचाती है।

शास्त्रों में गुरू की प्रशंसा

भागवत, रामायण, महाभारत, योगवाशिष्ठ आदि में गुरूभक्ति की महिमा सुन्दर ढंग से गायी गई है। हररोज उन ग्रन्थों का अभ्यास करो। आपको उनमें से प्रेरणा मिलेगी।

आत्म-साक्षात्कारी गुरू के लिखे हुए ग्रन्थ परोक्ष सत्संग जैसे हैं। आप जब संपूर्ण श्रद्धा और भक्ति से उनका अध्ययन करते हैं तब आपके पावन गुरू के साथ आपका पूर्ण सायुज्य होता है।

जो अपने साधनापथ में सच्चे हृदय से प्रयत्न करता है और जो ईश्वर-साक्षात्कार के लिए तड़पता है ऐसे योग्य शिष्य पर ही गुरू की कृपा उतरती है।

आजकल शिष्य लोग ऐश-आरामवाला जीवन जीते हैं और गुरू की आज्ञा का पालन किये बिना ही उनकी कृपा की आशा रखते हैं।

गुरू एवं महात्माओं के सत्संग की महिमा विषयक गुरू नानक, तुलसीदास, शंकराचार्य, व्यास और वाल्मीकि ने ग्रंथ लिखे हैं।

पुरंदरदास, निश्चलदास, सहजोबाई, मीराबाई, ज्ञानेश्वर, एकनाथ आदि ने गुरूकृपा की महिमा गाई है।

जो लोग नियमित सत्संग करते हैं उनमें ईश्वर और शास्त्रों में श्रद्धा, गुरू एवं ईश्वर के प्रति प्रेम और भक्ति का धीरे धीरे विकास होता है।

गुरू का संग 'माँग और पूर्ति' का प्रश्न है। अगर सच्चे हृदय की माँग हो तो पूर्ति तुरन्त हो जाएगी। कुदरत का यह अटल नियम है।

आपको अगर सचमुच ईश्वर-साक्षात्कार की तड़प होगी तो आपके आध्यात्मिक गुरू को आप अपने घर के द्वार पर खड़े पाएँगे।

आत्म-साक्षात्कारी महान गुरू का संग प्राप्त करना मुश्किल है, किन्तु वह संग बहुत ही लाभकारी है। आप अगर भक्तिभावपूर्वक, इमानदारी से प्रार्थना करेंगे तो वे स्वयं आपके पास आयेंगे।

इस दुनिया में उत्तम वस्तुएँ अत्यंत अल्प मात्रा में होती है जैसे की कस्तूरी, केसर, रेडियम, चन्दन, विद्वान, सदाचारी पुरूष तथा परोपकारी स्वभाव के लोग बहुत कम होते हैं। अगर ऐसा ही है तो संतों, भक्तों, योगियों, पयगम्बरों, दृष्टाओं तथा आत्म-साक्षात्कारी गुरू के विषय में तो कहना ही क्या ?

आप अगर आत्म-साक्षात्कारी गुरू की सेवा करेंगे तो आपके मोक्ष की समस्या हल हो जाएगी।

महात्माओं का संग ईश्वरकृपा से ही प्राप्त होता है।

गुरू की सेवा करके आशीर्वाद प्राप्त करने की इच्छुक साधकों को कुसंग से अवश्यदूर रहना चाहिए।

इस माया का रहस्य कौन जान सकता है ? जो कुसंग का त्याग करते हैं, जो उदार हृदयवाले गुरू की सेवा करते हैं, जो अहंभाव से मुक्त हैं और जो ममता रहित हैं वे इस माया का रहस्य जान सकते हैं।

राग-द्वेष से मुक्त ऐसे गुरू का संग करने से मनुष्य आसक्ति रहित बनता है। उसे वैराग्य प्राप्त होता है।

उसमें गुरू के चरणकमलों के प्रति भक्ति जागती है।

जो भक्तिभावपूर्वक गुरू की सेवा करता है वह जीवन के परम तत्त्व को प्राप्त करता है।

साधक का मन किसी भी प्रकार के प्रयत्न बिना ही, गुरू की सेवा से अपने आप एकाग्र बनता है।

गुरू ग्रथसाहब कहते हैं कि गुरू के बिना ईश्वरप्राप्ति का मार्ग नहीं मिल सकता। गुरू स्वयं ईश्वर स्वरूप होने के कारण वे साधक को ईश्वर प्राप्ति के मार्ग में ले जाते हैं। उस मार्ग में वे पथप्रदर्शक बनते हैं। गुरू ही शिष्य को ऐसा अनुभव करा सकते हैं कि वह स्वयं ही ईश्वर हैं।

गुरू का महान प्रेम

दैवी गुणों का विकास करने वाला महान रहस्य गुरूभक्ति में निहित है।

जो शिष्य अपने गुरू के चरणकमलों में सम्पूर्ण आत्म-समर्पण करता है उसे गुरू स्वयं ही सब दैवी गुण प्रदान करते हैं।

जो अपने मन पर संयम रखकर ध्यान नहीं कर सकते उनके लिए तो गुरूभक्ति जगाकर गुरूसेवा करना ही एक उपाय है।

गुरू शिष्य की मुश्किलियों एवं अवरोधों को जानते हैं, क्योंकि वे त्रिकालज्ञानी है। अतः मन में ही उनकी प्रार्थना करें। वे आपके अवरोधों को दूर करेंगे।

गुरू के दर्शन अन्धकार का सर्वथा नाश करते है और असीम आनन्द देते है।

भगवान आपका कल्याण करें और आप सब गुरूभक्ति जैसे दुर्लभ दैवी गुण का विकास करो।

भगवान स्वयं ही आचार्य के रूप में दीखते हैं। वे प्रत्यक्ष मानव के स्वरूप में दर्शन देते हैं अथवा ब्रह्मनिष्ठ महान ज्ञानी के रूप में दर्शन देते हैं।

जन्म से लेकर मृत्युपर्यन्त जीवन का एक मात्र हेतु महान गुरू की सेवा करना है।

गुरू के साथ तादात्म्य

केवल बुद्धिमान व्यक्ति के रूप में एक व्यक्ति की कोई सत्ता नहीं है। उसमें वास्तविकता का ज्ञान नही है। किन्तु जब व्यक्ति गुरू के सम्पर्क में आता है तब उसमें सच्चा ज्ञान, सच्ची शक्ति और सच्चा आनन्द प्रकट होता है। वे गुरू भी ऐसे हों जिन्होंने परमात्मा के साथ तादात्म्य स्थापित किया हो।

शिष्य घास के तिनके से भी अधिक नम्र होना चाहिए। तभी गुरू की कृपा उस पर उतरेगी।

जब शिष्य ध्यान नहीं कर सकता हो, जब आध्यात्मिक जीवन का मार्ग नहीं जान सकता हो तब उसे गुरू की सेवा करना चाहिए, उनके आशीर्वाद प्राप्त करना चाहिए। उसके लिए केवल यही उपाय है।

मन जब प्रशान्त और स्थिर हो तब आप ध्यान कर सकते हैं। मन अगर क्षुब्ध हो तो जप करें, पुस्तक पढ़ें और श्रद्धा-भक्तिपूर्वक गुरू की सेवा करें। गुरू के साथ मानसिक सम्बन्ध स्थापित करें। तभी आपका जल्दी विकास हो सकेगा।

जन्म से लेकर मृत्यु तक सारा जीवन विद्यार्थी अवस्था का समय है। तभी विद्यार्थी मोक्षदायक आध्यात्मिक ज्ञान प्राप्त कर सकता है।

जो शिष्य गुरूकुल में रहते हों उन्हें इस नाशवंत दुनिया की किसी भी चीज की तृष्णा न रहे इसके लिए हो सके उतना प्रयास करना चाहिए।

जिसने गुरू प्राप्त किये हैं ऐसे शिष्य के लिए ही अमरत्व के द्वार पर खुलते हैं।

साधकों को इतना ध्यान में रखना चाहिए कि केवल पुस्तकों का अभ्यास करने से या वाक्य रटने से अमरत्व नहीं मिलता। उससे तो वे अभिमानी बन जाते हैं। जिसके द्वारा जीवन का कूटप्रश्न हल हो सके ऐसा सच्चा ज्ञान तो गुरूकृपा से ही प्राप्त हो सकता है।

जिन्होंने ईश्वर के दर्शन किये हैं ऐसे गुरू का संग और सहवास ही शिष्य पर गहरा प्रभाव डालता है। तमाम प्रकार के अभ्यास की अपेक्षा गुरू का संग श्रेष्ठ है।

गुरू का सत्संग शिष्य का पुनर्जीवन करने वाला मुख्य तत्त्व है। वह उसे दिव्य प्रकाश देता है और उसके लिए स्वर्ग के द्वार खोल देता है।

गुरू का संग ही साधक को उसके चारित्र्य के निर्माण में, उसकी चेतना को जागृत करके अपने स्वरूप का सच्चा दर्शन करने में सहाय कर सकता है।

गुरू की सेवा, गुरू की आज्ञा का पालन, गुरू की पूजा और गुरू का ध्यान, ये चीजें बहुत महत्त्वपूर्ण हैं। शिष्य के लिए आचरण करने योग्य उत्तम चीजें हैं।

शिष्य को बार-बार देवी सरस्वती की, जिन्होंने आशीर्वाद दिये हों ऐसे गुरू की एवं सर्वोच्च पिता परमेश्वर की प्रार्थना करना चाहिए।

गुरू के पास अभ्यास पूरा करने के बाद भी समग्र जीवनपर्यन्त शिष्य को अपने आचार्य के प्रति कृतज्ञता का भाव बनाये रखना चाहिए।

गुरू की कृपा तो सदा रहती है। महत्त्वपूर्ण बात यह है कि शिष्य को गुरू के वचनों में श्रद्धा रखना चाहिए और उनके आदेशों का पालन करना चाहिए।

बुद्धि को तेजस्वी रखने के लिए स्वाध्याय की आवश्यकता है जिससे बुद्धि उल्टे मार्ग में न जाय या उसका दुरूपयोग न हो। उससे भी अधिक महत्त्वपूर्ण चीज है महात्माओं का सत्संग। अर्थात् हमें गुरू करना चाहिए जिससे हमें निरन्तर मार्गदर्शन प्राप्त होता रहे। वे हमें मार्ग में आने वाले भयस्थान दिखाते रहें। फिर गुरू से प्राप्त ज्ञान की सहायता से शिष्य योग्य पथ पर आगे बढ़ने में शक्तिमान होगा।

आत्म-साक्षात्कार का रहस्य

जीवन के परमतत्त्व रूपी वास्तविकता के सम्पर्क का रहस्य गुरूभक्ति है।

सच्चे शिष्य के लिए तो गुरूवचन माने कानून।

गुरू का दास बनना माने ईश्वर का सेवक बनना।

जिन्होंने प्रभु को निहारा है और जो योग्य शिष्य को प्रभु के दर्शन करवाते हैं वे ही सच्चे गुरू हैं।

बनावटी गुरू से सावधान रहना। ऐसे गुरू पूरे के पूरे शास्त्र रट लेते हैं और शिष्यों को उनमें से दृष्टान्त देते हैं लेकिन वे जो उपदेश देते हैं उसका आचरण वे खुद नहीं कर सकते।

आलसी शिष्य को गुरूसेवा नहीं मिल सकती।

राजसी स्वभाव के शिष्य को लोकसंग्रह करने वाले गुरू के कार्य समझ में नहीं आते।

किसी भी कार्य का प्रारंभ करने से पहले शिष्य को गुरू की सलाह लेना चाहिए।

अनुक्रम

ॐॐॐॐॐॐॐॐॐॐॐॐॐॐॐॐॐॐॐॐॐॐॐॐॐॐ

प्रकरणः 8

गुरूभक्ति का विवरण

आध्यात्मिक शिक्षा का अर्थ

मुक्तात्मा गुरू की सेवा, उन्होंने लिखे हुए पुस्तकों का अभ्यास और उनकी पवित्र मूर्ति का ध्यान, यह गुरूभक्ति विकसित करने का सुनहरा मार्ग है।

जो शिष्य नाम, कीर्ति, सत्ता, धन और विषयवासना के पीछे दौड़ता है वह सदगुरू के चरणकमलों के प्रति सच्चा भक्तिभाव नहीं रख सकता।

शिक्षा का क्षेत्र बहुत ही विशाल है और ज्ञानप्राप्ति की संभावनाएँ अपार हैं। अतः गुरू की आवश्यकता अनिवार्य है।

तैत्तीरीय उपनिषद कहती हैः "अब, ज्ञान के विषय में बात करते हैं। आचार्य प्रथम स्वरूप हैं। शिष्य आखिरी स्वरूप है। ज्ञान इन दोनों के

बीच की कड़ी है और उपदेश वह माध्यम है जो समन्वय कराता है। यह ज्ञान का क्षेत्र है।"

कठोपनिषद कहती हैः जिस आत्मा के विषय में भिन्न-भिन्न प्रकार से उपदेश दिया जाता है उस आत्मा विषयक जब निम्न स्तर की बुद्धिवाले व्यक्ति के द्वारा उपदेश दिया जाता है तब सरलता से समझ में नहीं आता। किन्तु जब वही आत्मा के विषय में ब्रह्मनिष्ठ गुरू उपदेश देते हैं तब बिल्कुल सन्देह नहीं रहता, अर्थात् भली प्रकार समझ में आ जाता है। आत्मा तो सूक्ष्म से भी सूक्ष्म है। केवल बौद्धिक कुस्ती से उसे प्राप्त नहीं किया जा सकता। केवल गुरू कृपा से ही ज्ञान प्राप्त हो सकता है।

गुरू शिष्य का सम्बन्ध

शिष्य को आचार्य के घर रहना चाहिए, बारह वर्ष तक सम्पूर्ण ब्रह्मचर्य का पालन करना चाहिए तथा कठिन तप करना चाहिए। उसे गुरू की सेवा करना चाहिए तथा उनके मार्गदर्शन में पवित्र शास्त्रों का अध्ययन करना चाहिए।

जो शिष्य को शिक्षा दे सकें और स्वयं जो शिक्षा दें उसको अपने आचरण में भी ला सकें वे ही गुरू हो सकते हैं।

मनुष्य को जिस किसी को भी गुरू के रूप में स्वीकार नहीं कर लेना चाहिए। एक बार गुरू के रूप में स्वीकार कर लेने के बाद किसी भी परिस्थिति में उनका त्याग नहीं करना चाहिए।

आत्म-साक्षात्कारी गुरू इस जमाने में सचमुच बहुत दुर्लभ हैं।

सचमुच आध्यात्मिक विकास कर लेने वाले व्यक्ति जब तक परमात्मा की आज्ञा नहीं होती तब तक गुरू के रूप में फर्ज अपने सिर पर नहीं लेते।

जब योग्य साधक आध्यात्मिक पथ की दीक्षा लेने के लिए गुरू की खोज में जाता है तब उसके समक्ष ईश्वर गुरू के स्वरूप में दिखते हैं और उसे दीक्षा देते हैं।

जो मुक्तात्मा गुरू हैं वे एक निराली जाग्रत अवस्था में रहते हैं जिसे तुरीयावस्था कहा जाता है। जो शिष्य गुरू के साथ एकता स्थापित करना चाहता हो उसे संसार की क्षणभंगुर चीजों के प्रति सम्पूर्ण वैराग्य का गुण विकसित करना चाहिए।

उच्चतर ज्ञान का मूल

जो उच्चतर ज्ञान चित् में से निष्पन्न होता है वह विचारों के रूप में नहीं अपितु शक्ति के रूप में होता है। वह ज्ञान गुरू को शिष्य के प्रति सीधे सीधा संक्रमित करना पड़ता है। ऐसे गुरू चित्शक्ति के साथ एक रूप होते हैं।

ईश्वर-साक्षात्कार केवल स्वप्रयत्न से ही नहीं हो सकता। उसके लिए गुरू कृपा अत्यन्त आवश्यक है।

शिष्य जब उच्चतर दीक्षा के लिए योग्य बनता है तब गुरू स्वयं ही उसे योग के रहस्यों की दीक्षा देते हैं।

गुरूश्रद्धा पर्वतों को हिला सकती है। गुरूकृपा चमत्कार कर सकती है। हे वीर ! निःसंशय बनकर आगे बढ़ो।

परमात्मा के साथ एकरूप बने हुए महान आध्यात्मिक पुरूष की जो सेवा करता है वह संसार के कीचड़ को पार कर जाता है।

अगर आप सांसारिक मनोवृत्तिवाले लोगों की सेवा करेंगे तो आपको सांसारिक लोगों के गुण मिलेंगे। उससे विपरीत, जो सदैव परम सुख में निमग्न रहते हैं, जो सर्व गुणों के धाम हैं, जो साक्षात् प्रेमस्वरूप हैं ऐसे

गुरू के चरणकमलों की सेवा करेंगे तो आपको उनके गुण प्राप्त होंगे। अतः उनकी सेवा करो... बस, सेवा करो।

आचरण के सिद्धान्त

अपने गुरू की सेवा करने वाले शिष्य को दूसरों के समक्ष लज्जित नहीं होना चाहिए, संकोच महसूस नहीं करना चाहिए।

गुरू ने भोजन न किया हो तब तक आप कभी भोजन मत करें।

गुरू का उच्छिष्ट प्रसाद (गुरू की थाली में बचा हुआ प्रसाद) जो ग्रहण करता है वह गुरू के साथ एकत्व का अनुभव करेगा। गुरूकृपा से वह उनके साथ एकरूप हो जायेगा।

अनिवार्य परिस्थितियों में भी जब गुरू निद्राधीन हों या आराम करते हों तब उन्हें जगाना नहीं चाहिए, विघ्न नहीं डालना चाहिए।

गुरू के साथ हँसी मजाक कभी मत करें। अगर ऐसा करेंगे तो धीरे-धीरे उनके प्रति आदर कम होता जायगा और आपको लगेगा कि मैं उनके बराबर हो गया हूँ।

बनावटी गुरू से सावधान रहना। उन्होंने अपनी बरबादी तो की है लेकिन वे आपकी भी बरबादी कर देंगे।

गुरू होना अच्छी बात है लेकिन गुरू का त्याग करना बहुत खराब बात है।

गुरू होना अच्छी बात है और गहरी श्रद्धा से उनकी सेवा करना यह उससे भी अच्छी बात है।

गुरू की आज्ञा का पालन करना ईश्वर की आज्ञा का पालन करने के बराबर है।

अनेक गुरू करना खराब बात है। गुरू से धोखा करना और उनकी आज्ञा का उल्लंघन करना बहुत खराब बात है।

गुरू की सेवा करने के लिये सदैव तत्पर रहो।

गुरू की अथक सेवा करके उनकी कृपा प्राप्त करो।

जिसने गुरू कृपा प्राप्त की है वही साधना का रहस्य जानता है।

गुरू होना अच्छी बात है। उनकी आज्ञा का पालन करना उससे भी अधिक अच्छी बात है और उनके आशीर्वाद प्राप्त करना श्रेष्ठ है।

जो अपने गुरू की सेवा करता है वही परम सत्य के सम्पर्क में आने की कला जानता है।

जो मोह से मुक्त बनता है वह कभी भी गुरू का द्रोह नहीं करेगा।

गुरू महाराज के जीवित होते हुए जो उनकी गद्दी पर बैठने की इच्छा करता है उसे सीधा नर्क का पासपोर्ट मिल जाता है। यमराज भी ऐसे आदमी से डरते रहते हैं कि शायद वह आदमी मेरी गद्दी भी छीन लेगा।

गुरूपूर्णिमा के दिन जो अपने गुरू की पादपूजा करता है उसे सारे वर्ष के दौरान सारे कर्मों में सफलता मिलती है।

गुरूभाई पर प्रेम रखना यह गुरूदेव के प्रति प्रेम रखने के बराबर है। गुरूभाई को सहाय करना यह गुरूदेव की सेवा करने के बराबर है।

गुरू की सेवा करना माने आत्मोद्धार करना।

गुरू की सेवा करना माँ-बाप की सेवा करना।

किसी भी चीज में अन्धश्रद्धा होना यह अच्छी बात नहीं है किन्तु ईश्वर के साथ एकत्व स्थापित किये हुए गुरू के वचनों में अन्धश्रद्धा रखना यह मोक्ष का राजमार्ग है।

आप कुछ ही समय में एक महान विद्वान बन सकते हैं किन्तु आसानी से सच्चे शिष्य नहीं बन सकते।

आजकल कई बनावटी गुरू तथा शिष्य दिखाई देते हैं। आपको गुरू की पसन्दगी करना हो तब ध्यान रखना।

शिष्य का कर्त्तव्य है गुरू के पवित्र मुख से जो आज्ञाएँ निकलें उनका पालन करना।

गुरू के निवास एवं आश्रम के आसपास के स्थान स्वच्छ एवं व्यवस्थित रखो।

गुरू और शिष्य के बीच प्रेमी और प्रेमिका जैसा सम्बन्ध है।

कभी कभी गुरू अपने शिष्य की कसौटी करें या उसे प्रलोभन में डालें तो शिष्य को गुरू के प्रति अपनी श्रद्धा के द्वारा उसका सामना करना चाहिए।

शिष्य को कोई भी चीज गुरू से छिपाना नहीं चाहिए। उसे स्पष्टवक्ता और प्रामाणिक बनना चाहिए।

रागद्वेष से मुक्त गुरू के चरणकमलों की धूलि बनना यह तो महान सौभाग्य है, दुर्लभ अधिकार है।

परमात्मा के साथ एकत्व स्थापित किये हुए आचार्य के पवित्र चरणों की धूलि तो शिष्य के लिए अलौकिक अलंकार है।

गुरूसेवा का एक भी दिन चूकना नहीं। किसी भी प्रकार के पंगु बहाने बनाना नहीं।

जो अपने को गुरूचरण की धूलि मानता है ऐसे मनुष्य को धन्य है।

जो शिष्य नम्र, सादा, आज्ञाकारी तथा गुरू के चरणकमलों के प्रति भक्तिभाव रखनेवाला है उस पर गुरूकृपा उतरती है।

गुरू के कार्य का एक साधन बनो।

गुरू जब आपकी गलतियाँ बतावें तब अपने कार्य उचित हैं ऐसा बचाव मत करें, केवल उनका कहा मानें।

जो गुरू विशेषज्ञ हों उनके मार्गदर्शन में आसन, प्राणायाम, ध्यान सीखो।

जिसकी निद्रा तथा आहार आवश्यकता से अधिक है वह गुरू की रूचि के मुताबिक उनकी सेवा नहीं कर सकता।

गुरू के पदचिह्नों पर

जो अधिक वाचाल है और शरीर की टीपटाप करना चाहता है वह गुरू की इच्छा के अनुसार सेवा नहीं कर सकता।

हररोज भक्तिभाव एवं भक्ति से गुरू के चरणकमलों की पूजा करो।

अगर अलौकिक भाव से अपने गुरू की सेवा करना चाहते हो तो स्त्रियों से एवं सांसारिक मनोवृत्तिवाले लोगों से हिलोमिलो नहीं।

गुरू के आशीर्वाद का खजाना खोलने के लिए गुरू सेवा गुरू चाबी है।

जहाँ गुरू हैं वहाँ ईश्वर हैं, यह बात सदैव याद रखो।

जो गुरू की खोज करता है वह ईश्वर की खोज करता है। जो ईश्वर की खोज करता है उसे गुरू मिलते हैं।

शिष्य को अपने गुरू के कदम का अनुसरण करना चाहिए।

गुरू की पत्नी को अपनी माता समझकर उनको इस प्रकार मान देना चाहिए।

अपने गुरू से क्षणभंगुर पार्थिव सुखों की याचना मत करना। अमरत्व के लिए याचना करो।

अपने गुरू से सांसारिक आवश्यकताओं की भीख नहीं माँगना।

सच्चे शिष्य के लिए आचार्य के चरणकमल ही एकमात्र आश्रय है।

जो कोई अपने गुरू की भावपूर्वक, अहर्निश अथक सेवा करता है उसे काम, क्रोध और लोभ कभी सता नहीं सकते।

गुरू के चरणों में

जो दैवी गुरू के चरणों में आश्रय लेता है वह गुरू की कृपा से आध्यात्मिक मार्ग में आने वाले तमाम विघ्नों को पार कर जाएगा।

योग के लिए श्रेष्ठ एकान्त स्थान गुरू का निवास स्थान है।

शिष्य के साथ गुरू रहते नहीं हों तो ऐसा एकान्त सच्चा एकान्त नहीं है। ऐसा एकान्त काम और तमस का आश्रयस्थान बन जाता है।

जिस शिष्य को अपने गुरू के प्रति भक्तिभाव है उसके लिये तो आदि से अन्त तक गुरू सेवा मीठे शहद जैसी बन जाती है।

गुरू के पवित्र मुख से बहते हुए अमृत का जो पान करता है वह मनुष्य धन्य है।

जो सम्पूर्ण भाव से अपने गुरू की अथक सेवा करता है उसे दुनियादारी के विचार नहीं आते। इस दुनिया में वह सबसे अधिक भाग्यवान है।

बस, अपने गुरू की सेवा करो, सेवा करो, सेवा करो। गुरूभक्ति विकसित करने का यह राजमार्ग है।

गुरू माने सच्चिदानंद परमात्मा।

गुरू की पूजा

पूज्य आचार्य की सेवा जैसी हितकारी और आत्मोन्नति करने वाली और कोई सेवा नहीं है।

सच्चा आराम दैवी गुरू की सेवा में ही निहित है। ऐसा दूसरा कोई सच्चा आराम नहीं है।

गुरूकृपा से जीवन का मर्म समझ में आता है।

किसी भी प्रकार के स्वार्थी हेतु के बिना आचार्य की पवित्र सेवा जीवन को निश्चित आकार देती है।

वेदान्त के थोड़े बहुत पुस्तक स्वतंत्र रीति से पढ़ लेने के बाद यों कहना कि 'न गुरूः न शिष्यः' यह सत्य के खोजी के लिए महान भूल है।

कभी कभी शिष्य के पापों को हर लेने से गुरू को शारीरिक पीड़ा भुगतनी पड़ती है। वास्तव में गुरू कोई भी शारीरिक रोग या पीड़ा नहीं भोगते, किन्तु बहुत भक्तिभाव और तत्परता से गुरू की सेवा करके हृदय को पवित्र बनाने के लिए शिष्य को प्राप्त एक विरल मौका है।

पुण्यशाली आचार्य का उत्तम विचार शिष्य को पार्थिवता और इन्द्रियविषयक जीवन से ऊपर उठने में सहायरूप है।

'उप' माने 'पास'। 'नि' माने 'नीचे'। 'षद' माने 'बैठना'। 'उपनिषद' माने आचार्य के पास नीचे बैठना। शिष्यों का समूह ब्रह्म के सिद्धान्त का रहस्य जानने के लिए आचार्य के पास बैठता है।

रहस्य-विद्या का दान

पवित्र शास्त्रों का गूढ़ रहस्य और प्राचीन सिद्धान्तों का अर्थ केवल पुस्तकें पढ़ने से या पाण्डित्यपूर्ण भाषण सुनने से समझ में नहीं आता। जो भाग्यशाली शिष्य आजीवन गुरू के साथ रहकर उनकी सेवा करते हैं और गुरू के प्रति आदर तथा भक्तिभाव रखते हैं उनको 'तत्त्वमसि', अहं ब्रह्मास्मि, सर्वं खल्विदं ब्रह्म' आदि उपनिषदों के कथन अच्छी तरह समझ में आते हैं और उनके अर्थ का साक्षात्कार होता है।

गुरूकृपा आत्मा का आन्तरदर्शन कराती है।

अनेकबार की बिनती और कठिन कसौटी के बाद ही सदगुरू अपने विश्वसनीय शिष्य को उपनिषद की रहस्य विद्या प्रदान करते हैं।

उपनिषद की परम्परा के मुताबिक आचार्य ब्रह्म-विद्या का रहस्य अपने योग्य पुत्र अथवा तो विश्वसनीय शिष्य को ही दे सकते हैं, और किसी को भी नहीं। फिर वह चाहे कोई भी हो और चारों ओर से पानी से आवृत्त, वैभव से समृद्ध सारी पृथ्वी गुरू को देने के लिए तैयार हो।

पावनकारी गुरू को दण्डवत् प्रणाम करने के बाद उनकी ओर पीठ करके शिष्य को जाना चाहिए।

आचार्य यदि वेदान्त को सच्चा अर्थ जानते हों और जीवन की विभिन्न अवस्थाओं को वह किस प्रकार लागू किया जा सकता है वह समझते हों तो एक बालक को भी वे वेदान्त सिखा सकते हैं।

जो व्यक्ति पैसे के पीछे दौड़ता है वह गुरू की सम्पत्ति चुराने में भी झिझकता नहीं है।

गुरू की सम्पत्ति के प्रति लोलुप मत बनो।

जो मुक्तात्मा पावनकारी गुरू हैं वे शान्ति और आनन्दस्वरूप हैं। वे समदृष्टिवाले और स्थितप्रज्ञ हैं। उनके लिए मान-अपमान, स्तुति-निन्दा, सुख-दुःख समान है। वे काम, क्रोध, लोभ, मद और मत्सर से मुक्त हैं। उनको रूचि अरूचि नहीं होती। उन्हें कोई आसक्ति नहीं होती। वे बालक जैसे निर्दोष, फिर भी ज्ञान के भण्डार हैं। वे अपनी उपस्थिति मात्र से या कृपादृष्टि से ही शिष्य के संशय दूर करते हैं।

गरीब और बिमार की सुश्रुषा करना, गुरू और माँ-बाप की सेवा करना, दया के उत्तम कार्य करना, गुरूकृपा से आत्मज्ञान पाना..... यह सब सचमुच सर्वश्रेष्ठ पुण्य है।

गुरू की निजी सेवा जैसी पावनकारी और कोई चीज नहीं है।

मोक्ष के श्रमजनक मार्ग में गुरूकृपा सचमुच विश्वसनीय साथी है।

केवल गुरू की शरण में जाने से ही जीवन जीता जा सकता है।

गुरूभक्तियोग के अभ्यास से मन को संयम में लाने से कामवासना की शान्ति हो सकती है।

गुरूसेवा आपको बिल्कुल स्वस्थ और तन्दुरूस्त रखती है।

गुरूभक्तियोग का अभ्यास आपको अमाप एवं अनहद आनन्द देता है।

गुरूसेवा अद्वैतभाव या एकरूपता पैदा करती है।

गुरूभक्तियोग साधक को चिरायु और अनन्त सुख देता है।

गुरूसेवा के बिना वेदान्त का अभ्यास व्यक्ति को तोते जैसा वेदान्ती बनाता है। अतः अपने पूज्य आचार्य की सेवा करो, सेवा करो, सेवा करो।

अपने दैनिक जीवन में मार्गदर्शन के लिए प्रत्येक क्षण पूज्य गुरू की प्रार्थना करो।

जो प्रार्थना शिष्य के निखालिस, पवित्र हृदय से निकलती है उसे गुरू की ओर से तत्काल प्रत्युत्तर मिलता है।

जो साधु-संत पूज्य गुरू हैं उनके पास श्रद्धा, भक्ति और नम्रतापूर्वक जाओ। ज्ञानरूपी औषध लो। सम्पूर्ण आज्ञाकारिता पथ्य है। तभी अज्ञानरूपी रोग पूर्णतः निर्मूल होगा और आप सर्वोच्च सुख का अनुभव कर सकेंगे।

अनुक्रम

ॐॐॐॐॐॐॐॐॐॐॐॐॐॐॐॐॐॐॐॐॐॐॐॐ

प्रकरणः 9

गुरूभक्ति की नींव

श्रद्धा का महत्त्व

गुरू में श्रद्धा गुरूभक्तियोग की सीड़ी का प्रथम सोपान है।

गुरू में श्रद्धा दैवी कृपा प्राप्त करने के लिए शिष्य को आशा एवं प्रेरणा देती है।

गुरू में सम्पूर्ण विश्वास रखो। तमाम भय, चिन्ता और जंजाल का त्याग कर दो। बिल्कुल चिन्तामुक्त रहो।

"गुरूवचन में श्रद्धा अखूट बल, शक्ति एवं सत्ता देती है। संशय मत कर। हे शिष्य आगे बढ़।"

ज्ञानीजनों के समागम से तथा पुराण और पवित्र शास्त्रों के अध्ययन से गुरू पर श्रद्धा दृढ़ करो।

गुरू के उपदेशों में गहरी श्रद्धा रखो। सदगुरू के स्वभाव और महिमा को स्पष्ट रीति से समझो। गुरू की सेवा करके दिव्य जीवन बिताओ। तभी ईश्वर की जीवन्त मूर्ति के समान सदगुरू के पवित्र चरणों में सम्पूर्ण आत्मसमर्पण कर सकोगे।

गुरू को विघ्नरूप बनने से तो मरना बेहतर है।

गुरू पर भक्तिभाव सब हीन वृत्तियों और आवेगों को दबा देता है तथा सब अवरोधों को दूर करता है।

गुरूभक्तियोग में गुरू के प्रति भक्तिभाव सबसे महान चीज है।

भक्ति के स्वरूप

गुरू की अचल भक्ति ईश्वर-साक्षात्कार करने के लिए बहुत असरकारक पद्धति मानी जाती है।

गुरू की महिमा का सतत स्मरण और उनके दिव्य सन्देश को सर्वत्र फैलाना या गुरू के प्रति सच्चा भक्तिभाव है।

आचार्य के पवित्र चरणों की भक्ति फूल है और उनके आशीर्वाद अमर फल है।

जीवन का ध्येय है परिणाम में दुःख देनेवाली कुसंगति का त्याग करना और अमरत्व देने वाले पवित्र आचार्य के चरणकमलों की सेवा करना।

साधक जब इहलोक और परलोक में चिरंतन सुख देने वाले गुरूभक्तियोग का आश्रय लेता है तभी उसका सच्चा जीवन शुरू होता है।

"जन्म-मृत्यु, सुख-दुःख, हर्ष-शोक के अविरत चक्र से मुक्ति नहीं होगी क्या ? हे शिष्य ! सावधान होकर सुन। उसके लिए एक निश्चित उपाय है। नाशवंत इन्द्रियविषयक पदार्थों में से अपना मन हटा ले और इन द्वन्द्वों से पार ले जाने वाले गुरूभक्तियोग का आश्रय ले।"

सच्चा स्थायी सुख बाहर के नाशवंत पदार्थों से नहीं अपितु गुरूशरणयोग का आश्रय लेने से मिल सकता है।

गुरूसेवायोग, गुरूशरणयोग आदि गुरूभक्तियोग के समानार्थी शब्द हैं। वे सब एक ही हैं।

गुरूभक्तियोग का अभ्यास माने गुरू के प्रति गहरा पवित्र प्रेम।

आचार्य के पावनकारी चरणकमलों के प्रति पवित्र प्रेम धीरे-धीरे विकसित करना चाहिए। उसके लिए कोई टूंका मार्ग नहीं है।

गुरूभक्तियोग सब विज्ञानों में श्रेष्ठ विज्ञान है।

सच्चे शिष्य के लिए पावनकारी आचार्य के चरणकमल ध्यान का मुख्य विषय हैं।

गुरूभक्तियोग सब योगों का राजा है।

गुरूभक्ति के अभ्यास से जब मन की बिखरी हुई शक्ति की किरणें एकत्रित होती हैं तब यह रोग चमत्कार कर देता है।

सब महात्माओं तथा आचार्यों ने गुरूभक्तियोग के अभ्यास द्वारा महान कार्य किये हैं। जनार्दन स्वामी के शिष्य एकनाथजी गुरूभक्ति से

महान हो गये और उनका शिष्य पूरणपोड़ा अविद्वान होते हुए गुरू का अपूर्ण ग्रन्थ पूर्ण कर सका। शंकराचार्य के शिष्य तोटकाचार्य ने गुरूभक्ति से चमत्कार कर दिखाया। एकलव्य और सहजोबाई गुरू-भक्तियोग के प्रत्यक्ष प्रमाण हैं। और भी असंख्य गुरूभक्तों ने गुरू के दैवी चिन्तन से, मधुर स्मृति से अथवा गुरू के दैवी कार्य में सेवा करके हृदय की ऐसी शीतलता, मन की मधुरता महसूस की है कि किताबें पढ़कर कथा करने वाले या सुनने वाले जिसकी कल्पना भी नहीं कर सकते। ऐसी है गुरूभक्ति की महिमा !

गुरूभक्तियोग की फिलासफी के मुताबिक गुरू और ईश्वर अभिन्न, एक ही हैं। अतः गुरू को सम्पूर्ण आत्मसमर्पण करना अनिवार्य है।

गुरूभक्तियोग में अन्य सब योग समाविष्ट हो जाते हैं। गुरूभक्तियोग का आश्रय लिए बिना कोई भी व्यक्ति अन्य कठिन योगों का अभ्यास नहीं कर सकता।

गुरूभक्तियोगकी फिलासफी आचार्य की उपासना के द्वारा गुरूकृपा करने के लिए मुख्य दृष्टान्त आगे रखती है।

गुरूभक्तियोग वेद और उपनिषदों के समय जितना प्राचीन है।

हृदय की पवित्रता प्राप्त करने के लिए ध्यान के लिए और आत्म-साक्षात्कार के लिए गुरूभक्तियोग की फिलासफी गुरूसेवा पर काफी जोर देती है।

जो अपने गुरू की आरोग्यता के लिए लगा रहता है वह मनुष्य धन्य है।

कृपा का कार्य

गुरूकृपा एक परिवर्तनकारी बल है।

जहाँ गुरूकृपा है वहाँ विजय है।

आचार्य के पावन चरणों की पूजा करने में और उनके दिव्य आदेशों का पालन करने में ही सच्चा जीवन है।

गुरूभक्तियोग के निरन्तर अभ्यास द्वारा मन की चंचल वृत्ति को निर्मूल करो।

इस लोक के आपके जीवन का परम ध्येय और लक्ष्य अमरत्व प्रदान करने वाली गुरूकृपा प्राप्त करना है।

गुरू की सेवा करते समय श्रद्धा, आज्ञापालन और आत्मसमर्पण, इन तीनों को याद रखो।

गुरूसेवा के आदर्श को अपने हृदय में गहरा उतर जाने दो।

कुसंग में से अपने मन को अलग करो और जो पूर्णता के प्रतीक हैं, सत्यवेत्ता हैं, सार्वत्रिक प्रेम के केन्द्र और मनुष्य जाति के नम्र सेवक हैं ऐसे गुरू के पावन चरणों में अपने मन को लगा दो।

ज्ञानी गुरू की सहायता से सतत आध्यात्मिक अभ्यास जारी रखो।

सच्चा साधक गुरूभक्तियोग के अभ्यास में लगा रहता है।

हो सके उतनी मात्रा में आचार्य के प्रति भक्तिभाव जगाओ। तभी उनके सर्वश्रेष्ठ आशीर्वाद का सुख भोग सकोगे।

पावनकारी आचार्य के पवित्र चरणों को निहारते निहारते सच्चे आनन्द की कोई सीमा नहीं रहती।

एक भी क्षण गँवाओ नहीं। जीवन थोड़ा है। समय जल्दी से सरक जाता है। मृत्यु कब आ जाय, कोई पता नहीं। उठो, जागो, तत्परतापूर्वक आचार्य की सेवा में लग जाओ।

आचार्य की सेवा में डूब जाओ।

गुरू पर श्रद्धा और उनके ज्ञान के वचनों से सज्ज बनो।

आध्यात्मिक मार्ग तीक्ष्ण धारवाली तलवार का मार्ग है। जिनको इस मार्ग का अनुभव है ऐसे गुरू की अनिवार्य आवश्यकता है।

आपके सब अहंभाव का त्याग करो और गुरू के चरणकमलों में अपने आपको सौंप दो।

गुरू आपको मार्ग दिखाएँगे और प्रेरणा देंगे। मार्ग में आपको स्वयं ही चलना होगा।

जीवन अल्प है। समय जल्दी से सरक रहा है। उठो, जागो, आचार्य के पावन चरणों में पहुँच जाओ।

जीवन थोड़ा है। मृत्यु कब आयेगी, निश्चित नहीं है। अतः गंभीरता से गुरू सेवा में लग जाओ।

हररोज आध्यात्मिक दैनिकी लिखो। उसमें अपनी प्रगति और निष्फलता की सच्ची नोट लिखो और हर महीने अपने गुरू के पास भेजो।

अपने गुरू से ऐसी शिकायत नहीं करना कि आपके अधिक काम के कारण साधना के लिए समय नहीं बचता। नींद के तथा गपशप लगाने के समय में कटौती करो और कम खाओ। तो आपको साधना के लिए काफी समय मिलेगा। आचार्य की सेवा ही सर्वोच्च साधना है।

गुरू की सेवा और गुरू के ही विचारों से दुनिया विषयक विचारों को दूर रखो।

अपने आध्यात्मिक आचार्य के आगे अपनी शक्ति की बड़ाई नहीं करना या प्रमाण नहीं देना। नम्र और सादे बनो। इससे आध्यात्मिक मार्ग में शीघ्र प्रगति कर सकोगे।

आचार्य के कार्यों की निन्दा, आलोचना एवं दोषदर्शन छोड़ देना। उनके प्रत्याघातों से सावधान रहना।

आचार्य की सेवा करते समय चाहे कितने भी दुःख आ जाएँ, उन्हें सह लेने की तैयारी रखना।

प्रेम एवं अनुकंपा की साक्षात् मूर्ति रूप अपने गुरू के समक्ष अपने दोषों को प्रकट करके एकरार करो।

आपके गुरू आपसे अपेक्षा रखें उससे भी अधिक सेवा करो।

गुरू के सिवाय और किसी से गाढ़ सम्बन्ध मत रखो। और लोगों से कम हिलोमिलो।

गुरू का प्रेम, उनको दयादृष्टि शिष्य की स्थूल प्रकृति का परिवर्तन करके शुद्धीकरण कर सकती है।

शिष्य की भावना

गुरू की महिमा को पहचान कर उसका अनुभव करो और उनका प्रेम-सन्देश मनुष्य जाति में फैलाओ। ऐसा करने से गुरू की कृपा आप पर उतरेगी।

आचार्य के प्रति कर्त्तव्यों में से कभी भी विचलित मत बनो।

श्रद्धा, विनय एवं भक्तिभावपूर्वक गुरू को खूब मूल्यवान भेंट देनी चाहिए।

गुरू को श्रेष्ठ दान दो। गुरू को लापरवाही में दी हुई भेंट भी शिष्य को वापस नहीं लेना चाहिए।

गुरू की सेवा करते समय अपने भीतर के हेतुओं पर निगरानी रखो। किसी भी प्रकार के फल, नाम, कीर्ति, सत्ता, धन आदि की आशा के बिना ही गुरू की सेवा करनी चाहिए।

आप अपने गुरू के साथ व्यवहार करें तब सच्चाई एवं निष्ठा रखना।

गुरूभक्तियोग में ईमानदारी के बिना आध्यात्मिक प्रगति संभव नहीं है।

जिस प्रकार चातक पक्षी केवल वर्षा के पानी की आशा में ही जीता है उसी प्रकार केवल गुरू कृपा की आशा से ही शिष्य आध्यात्मिक मार्ग में आगे बढ़ सकता है।

गुरू के प्रति आतिथ्यभाव दिखाना यह सर्वोच्च यज्ञ है। गुरूसेवा रूपी यज्ञ के पास अश्वमेध और अन्य महान यज्ञों की भी कोई कीमत नहीं है।

ईश्वर-साक्षात्कार का सबसे सरल मार्ग

गुरूचरण में आश्रय लेकर प्रेरणा पाओ।

प्रेम यह गुरू के चरणकमलों के साथ शिष्यों के हृदय को बाँधने वाली सुवर्ण की कड़ी है।

ईश्वर का अनुभव करने के लिए गुरूभक्तियोग सबसे सरल, सचोट, त्वरित और सलामत मार्ग है। आप सब गुरूभक्तियोग के अभ्यास के इसी जन्म में ईश्वर-अनुभव प्राप्त करें।

गुरू के नाम का शरण लो। सदैव गुरू का नाम रटन करो। कलियुग में गुरू की महिमा गाओ और उनका ध्यान करो। ईश्वर-साक्षात्कार के लिए यह श्रेष्ठ और सरल मार्ग है।

मोक्ष अथवा सनातन सुख के द्वार खोलने की गुरूचाबी गुरूभक्ति है।

जीवन मधुर फूल है, जिसमें गुरूभक्ति मीठा शहद है।

गुरू के चरणों की भक्त सच्चे शिष्य के लिए श्वासोच्छवास के बराबर है।

गुरूभक्तियोग के अभ्यास से अमरत्व, सर्वोत्तम शान्ति और शाश्वत आनन्द प्राप्त होता है।

गुरू प्रेम और करूणा की मूर्ति है। आपको अगर उनके आशीर्वाद प्राप्त करने हों तो आपको भी प्रेम और करूणा की मूर्ति बनना चाहिए।

गुरू के प्रति भक्ति अखूट और स्थायी होनी चाहिए।

गुरू सेवा के लिए पूरे हृदय की इच्छा ही गुरूभक्ति का सार है।

शरीर या चमड़ी का प्रेम वासना कहलाती है, जबकि गुरू के प्रति प्रेम गुरूभक्ति कहलाता है। ऐसा प्रेम प्रेम के खातिर होता है।

गुरू के प्रति भक्तिभाव ईश्वर के प्रति भक्तिभाव का माध्यम है।

जप, कीर्तन, प्रार्थना, ध्यान, साधुसेवा, अध्ययन और साधुसमागम के द्वारा अपने हृदयकुँज में शुद्ध गुरूभक्ति का फूल विकसित करो।

गुरू की सेवा आपके जीवन का एकमात्र लक्ष्य और ध्येय होना चाहिए।

अपने आपकी अपेक्षा गुरू पर अधिक प्रेम रखो।

विश्वप्रेम का विकास

अपने शत्रुओं पर प्रेम रखो। अपने से निम्न कोटि के लोगों पर प्रेम रखो। प्राणियों के प्रति प्रेम रखो। अपने गुरू पर प्रेम रखो। सब साधु संतों पर प्रेम रखो।

गुरू की निःस्वार्थ सेवा, महात्माओं का सत्संग, प्रार्थना और गुरूमंत्र के जप द्वारा धीरे धीरे विश्वप्रेम का विकास करो।

अन्य लोगों ने जो चीज महाप्रयत्न से सिद्ध की हो वह चीज आप गुरू कृपा से प्राप्त कर सकते हैं।

धन्य है विनम्र लोगों को, क्योंकि उन्हें तुरन्त गुरू कृपा मिल जाती है। जिन्होंने गुरू की शरण ली है ऐसे पवित्र आत्माओं को धन्यवाद है, क्योंकि उनको परम सुख अवश्य प्राप्त होता है।

गुरूकृपा की प्राप्ति के लिए नम्रता राजमार्ग है।

आध्यात्मिक आचार्य अथवा सच्चे महापुरूष की प्रथम कसौटी उनकी नम्रता है। यह उनका मूल सदगुण है।

गुरू के साथ तादात्म्य

सुई के छेद से ऊँट गुजर सके इससे भी अत्यन्त अधिक मुश्किल बात है गुरू कृपा के बिना ईश्वरकृपा प्राप्त करना।

जैसे पानी को दूध में डाला जाए तो वह दूध में मिल जाता है और अपना व्यक्तितत्व गँवा देता है वैसे सच्चे शिष्य को चाहिए कि वह अपने आपको सम्पूर्णतः गुरू को सौंप दे, उनके साथ एकरूप हो जाय।

जैसे छोटे छोटे झरने एवं नदियाँ महान पवित्र नदी गंगा से मिल जाने के कारण खुद भी पवित्र होकर पूजे जाते हैं और अन्तिम लक्ष्य समुद्र को प्राप्त होते हैं। इसी प्रकार सच्चा शिष्य गुरू के पवित्र चरणों का आश्रय लेकर तथा गुरू के साथ एकरूप बनकर शाश्वत सुख को प्राप्त होता है।

बालक बोलना-चलना क्या एक ही दिन में सीखता है ? बोलना-चलना सीखने के लिए बालक को आवश्यक ऐसे माँ-बाप के लम्बे सहवास एवं योग्य निगरानी तथा रस की आवश्यकता नहीं पड़ती क्या ? पड़ती ही है। इसी प्रकार सच्चे और ईमानदार शिष्य को गुरू के साथ लम्बे समय तक रहना चाहिए और तन मन से सब सेवा करना चाहिए। इस पूरे समय के दौरान सर्वोच्च विद्या सीखने के लिए हृदयपूर्वक ध्यान

देना चाहिए और उसमें रस लेना चाहिए। इस प्रकार उसे परम ज्ञान प्राप्त होगा, और किसी प्रकार से नहीं।

सब वरदान देने वाले

कल्पवृक्ष, कामधेन और चिन्तामणि माँगने वाले को उसका मनोवांछित वरदान अवश्य देते ही हैं। इसी प्रकार गुरू भी माँगने वाले को इष्ट वस्तु अवश्य देते हैं। अतः सच्चा शिष्य तो केवल मोक्ष प्राप्त करने के लिए उपनिषद की महाविद्या ही माँगता है।

जिस प्रकार बालक जब धीरे धीरे कदम रखता है और स्वतंत्र रीति से चलने की कोशिश करता है तब कभी कभी गिर पड़ता है और खड़ा होता है। माँ की सहायता की आवश्यकता पड़ने पर उसकी सहायता माँगता है। इसी प्रकार साधना के प्रारंभ के स्तरों में शिष्य को करूणामय गुरू की सहायता एवं मार्गदर्शन की आवश्यकता पड़ती है। अतः उसे वह माँगना चाहिए।

एक बालक की तरह सच्चे शिष्य को मोक्ष के लिए तीव्र आकांक्षा होनी चाहिए तथा संभव हों उतनी तमाम रीतियों से वह आकांक्षा प्रकट करनी चाहिए। तभी उसकी इच्छा की पूर्ति करने में गुरू उसे सहायभूत हो सकते हैं। इस आकांक्षा को प्रयत्न कह सकते हैं और गुरू की करूणामय सहाय को माता की वात्साल्मय कृपा कह सकते हैं।

सुन्दर ढंग से निर्मित मूर्ति के लिए दो चीजें आवश्यक हैं- एक है अखण्ड, कमीरहित अच्छा संगमरमर का टुकड़ा और दूसरी चीज, कुशल शिल्पी। संगमरमर का टुकड़ा शिल्पी के हाथ में रहना अनिवार्य है जिससे छीनी के द्वारा उसे कुरेदकर सुन्दर मूर्ति बनाया जाये। इसी प्रकार शिष्य को भी चाहिए की वह अपने आपको स्वच्छ और शुद्ध करके बिल्कुल क्षतिरहित संगमरमर के टुकड़े जैसा बनाए और गुरू के

कुशल मार्गदर्शन में रख दे, जिससे गुरू छीनी से उसे कुरेदकर प्रभु की दिव्य मूर्ति में परिवर्तित कर सकें।

जैसे सूर्योदय होते ही तमाम अन्धकार का तुरन्त नाश होता है वैसे ही गुरूकृपा उतरते ही शिष्य के मन में आवरण और अविद्या का तुरन्त नाश होता है।

जिस प्रकार सूर्य की प्रखर किरणों से जला हुआ मनुष्य वृक्ष की शीतल छाया में और दिन भर की गर्मी के बाद शीतल चाँदनी में असीम आनन्द की अनुभूति करता है उसी प्रकार संसार की प्रखर किरणों से जला हुआ और शान्ति के लिए व्याकुल बना हुआ मनुष्य ब्रह्मनिष्ठ गुरू के चरणों में इच्छित शान्ति और आनन्द की अनुभूति करता है।

जिस प्रकार चातक पक्षी लम्बे समय तक इन्तजार करने के बाद वर्षा के केवल एक ही जलबिन्दू से अपनी प्यास बुझाता है उसी प्रकार सच्चे शिष्य को अपने गुरू की सेवा करनी चाहिए और उपदेश वचन का इन्तजार करना चाहिए। इससे उसकी तमाम व्यथाएँ शान्त होंगी और वह सदा के लिए मुक्त हो जाएगा।

जैसे अग्नि का स्वभाव ही ऐसा है कि उसके निकट आनेवाली प्रत्येक वस्तु को जलाकर भस्म कर देती है, वैसे ही जो मनुष्य कृपालु गुरू की प्राप्ति कर लेता है उसके किसी भी गुण दोषों को देखे बिना ब्रह्मनिष्ठ गुरू की कृपा उसके तमाम पापों को जलाकर भस्म कर देती है।

आध्यात्मिक प्रवृत्ति की आवश्यकता

जो कोई मनुष्य दुःखों से पार होकर सुख एवं आनन्द प्राप्त करना चाहता हो उसे सच्चे अन्तःकरण से गुरूभक्तियोग का अभ्यास करना चाहिए।

गुरू के पवित्र चरणों के प्रति भक्तिभाव सर्वोत्तम गुण है। इस गुण को तत्परता एवं परिश्रमपूर्वक विकसित किया जाए तो इस संसार के दुःख और अज्ञान के कीचड़ से मुक्त होकर शिष्य अखूट आनन्द और परम सुख के स्वर्ग को प्राप्त करता है।

प्रारंभ में तरंग के रूप में दिखने वाली विषय वृत्तियाँ कुसंग के कारण महासागर का रूप धारण कर लेती है। अतः कुसंग का त्याग करके आचार्य के जीवनरक्षक चरणों का आश्रय लो।

अगर आप गुरूसेवा में रममाण रहते हैं तो आप चिन्ताओं को जीत सकते हैं। सब चिन्ताओं का यह अचूक मारण है।

उत्तम शिष्य को अपने गुरू पर किसी भी परिस्थिति में सन्देह नहीं लाना चाहिए या उनकी उपेक्षा नहीं करनी चाहिए।

आदरणीय गुरू के पवित्र चरणों में साष्टाँग दण्डवत् प्रणाम करने में लज्जित होना यह गुरूभक्तियोग के अभ्यास में बड़ा अवरोध है।

स्वावलम्बन, आत्मन्यायीपन की भावना, मिथ्याभिमान, आत्माभिमान, अपनी बात ही सत्य है ऐसा मानना, आलस्य, हठाग्रह, कूथली, कुसंग, बेईमानी, उद्दण्डता, काम, क्रोध, लोभ और मैं पना.... ये चीजें गुरूभक्तियोग के मार्ग में महान भयस्थान हैं।

कर्मयोग, भक्तियोग, राजयोग, हठयोग, ज्ञानयोग आदि सब योगों की नींव गुरूभक्तियोग है। जो शिष्य मानता है कि मैं सब कुछ जानता हूँ कि वह मैं पने की भावना के कारण अपने गुरू से कुछ भी नहीं सीख सकेगा।

वह खुद सच्चा है ऐसा गुरू के समक्ष दिखाना यह शिष्य के लिए बहुत ही खतरनाक आदत है।

आप जब गुरू की सेवा करते हों तब नम्र, मधुरभाषी, मृदु और विवेकी बनो। इससे गुरू का हृदय जीत सकोगे। गुरू के समक्ष वाणी या वर्तन में कभी उद्दण्डता मत दिखाओ।

मोटी बुद्धि का विद्यार्थी गुरूभक्तियोग के अभ्यास में किसी भी प्रकार की ठोस प्रगति नहीं कर सकता।

शिष्य को आदरणीय आचार्य के जीवन की उज्जवल बातें ही देखनी चाहिए।

मन में अगर गुरू के विषय में कुविचार आये तो स्वयं ही अपने को दण्ड दो।

आपके लिए केवल इतना ही आवश्यक है कि गुरूभक्तियोग के मार्ग में अन्तःकरणपूर्वक प्रामाणिक प्रयत्न करना है।

अपना गुरूमंत्र अथवा गुरू का पवित्र नाम हररोज एक घण्टे तक स्वच्छ नोटबुक में लिखो।

चलते हुए, खाते हुए, कार्यालय में काम करते हुए भी सदैव अपने गुरूमंत्र का जप करते रहो।

गुरू का उन्नतिकारक सान्निध्य

महान गुरू में स्थित चमत्कारिक आध्यात्मिक शक्ति के द्वारा शिष्य में जो अदभुत परिवर्तन किया जाता है उस उपकार के महान ऋण का पूरा वर्णन करने की शक्ति वाणी में नहीं है।

'सदगुरू साक्षात् ईश्वर हैं' ऐसा जो कहा गया है वह सत्य ही है। उनकी महानता शब्दातीत है।

गुरू का सान्निध्य प्रबल आध्यात्मिक स्पन्दनों के द्वारा शिष्य को ऊँची भूमिका पर ले जाता है और उसे प्रेरणा देता है। गुरू की महिमा शिष्य की स्थूल प्रकृति का परिवर्तन करने में निहित है।

सदगुरू के चरणों में आश्रय लेना ही सच्चा जीवन है, जीवन जीने की सही रीति है।

गुरू की शरणागति की स्वीकार करना यही आत्मसाक्षात्कार का मार्ग है।

गुरू में अविचल श्रद्धा न हो तब तक किसी को भी परम सुख भोगने को नहीं मिलता।

हमें अयोग्य लगता हो फिर भी गुरू जो करते हैं वह योग्य ही है।

गुरू के उपदेश में अविचल और अविरत श्रद्धा सच्ची गुरूभक्ति का मूल है।

गुरू सदैव अपने शिष्य के हृदय में बसते हैं।

कबीर जी कहते हैं- "गुरू और गोविन्द दोनों मेरे समक्ष खड़े हैं, तो मैं किसको प्रणाम करूँ ? धन्य हैं वे गुरूदेव जिन्होंने मुझे गोविन्द के दर्शन करवाये !"

केवल गुरू ही अपने योग्य शिष्य को दिव्य प्रकाश दिखा सकते हैं।

गुरू अपने शिष्य को 'असत्' में से 'सत्' में 'मृत्यु' में से 'अमरत्व' में, 'अन्धकार' में से 'प्रकाश' में और 'भौतिक' में से 'आध्यात्मिक' में ले जाते हैं।

जगहितकारी गुरू

सच्चे गुरू शिष्य का प्रारब्ध बदल सकते हैं।

सदगुरू पयगंबर और देवदूत है, विश्व के मित्र और जगत के लिए कल्याणमय हैं, पीड़ित मानवजाति के ध्रुवतारक हैं।

सच्चे गुरू की सेवा करने से काल का शस्त्र बुट्ठा बन जाता है। गुरू के ज्ञान के पवित्र शब्द शिष्य के हृदय में प्रवेश करते हैं। गुरूकृपा के बिना बन्धनमुक्ति नहीं है।

जो गुरूभक्तिमार्ग से विमुख बना है वह मृत्यु, अन्धकार और अज्ञान के भँवर में घूमता रहता है।

स्त्री एवं पुरूष अपनी आनुवंशिक शक्ति के मुताबिक मानवता के पथ का अनुसरण करने की कोशिश कर सकते हैं उनको महान गुरू का उपदेश सूर्य की प्रखर किरण की तरह जगत के भ्रांति रूपी अन्धकार को विदीर्ण करके प्रकाशित करता है।

गुरूकृपा से ही मनुष्य को जीवन का सच्चा उद्देश्य समझ में आता है और आत्म-साक्षात्कार करने की प्रबल आकांक्षा उत्पन्न होती है।

शिष्य के हृदय के तमाम दुर्गुण रूपी रोग पर गुरूकृपा सबसे अधिक असरकारक प्रतिरोधक एवं सार्वत्रिक औषध है।

यदि कोई मनुष्य गुरू के साथ अखण्ड और अविच्छिन्न सम्बन्ध बाँध ले तो जितनी सरलता से एक घट में से दूसरे घट में पानी बहता है उतनी ही सरलता से गुरूकृपा बहने लगती है।

केवल यंत्रवत् दण्डवत् प्रणाम करने से गुरूकृपा प्राप्त नहीं की जा सकती। वह तो गुरू के उपदेश को जीवन में उतारने से ही प्राप्त हो सकती है।

रात्रि को निद्राधीन होने से पहले अन्तर्मुख होकर शिष्य को निरीक्षण करना चाहिए कि गुरू की आज्ञा का पालन कितनी मात्रा में किया है।

हररोज गुरू की सेवा का प्रारंभ करने से पहले शिष्य को मन में निश्चय करना चाहिए कि पूर्व की अपेक्षा अब अधिक भक्तिभाव से एवं अधिक आज्ञाकारिता से गुरू की सेवा करूँगा।

गुरू में तथा शास्त्रों में थोड़ी बहुत श्रद्धा होती है वह भी कुसंग से शीघ्र नष्ट हो जाती है।

नैतिक पूर्णता की आवश्यकता

जो गुरू के पवित्र चरणों के प्रति सच्चा भक्तिभाव विकसित करना चाहते हों उन्हें सब प्रकार की खराब आदतों का त्याग कर देना चाहिए। जैसे कि धूम्रपान करना, पान खाना, नास सूँघना, मद्यपान करना, जुआ खेलना, सिनेमा देखना, अखबार-नोवेल पढ़ना, फेशन करना, माँस खाना, चोरी करना, दिन में सोना, गाली बोलना, निन्दा-आलोचना करना आदि।

जो गुरूभक्तियोग का अभ्यास करना चाहते हैं उन्हें सब दिव्य गुणों का विकास करना चाहिए। जैसे कि सत्य बोलना, न्यायपरायणता, अहिंसा, इच्छाशक्ति, सहिष्णुता, सहानुभूति, स्वाश्रय, आत्मश्रद्धा, आत्मसंयम, त्याग, आत्मनिरीक्षण, तत्परता, सहनशक्ति, समता, निश्चय, विवेक, वैराग्य, संन्यास, हिम्मत, आनन्दी स्वभाव, हरएक वस्तु में मर्यादा रखना आदि।

आनन्द के लिए बाहर क्यों व्यर्थ खोज करते हो ? सदगुरू के चरणों के समीप जाओ और शाश्वत सुख का उपभोग करो।

सदगुरू के चरणों में श्रद्धा और भक्तिभाव ये दो पंख हैं जिनकी सहायता से शिष्य पूर्णता के शिखर पर पहुँचने में शक्तिमान बनता है।

अनुक्रम

ॐॐॐॐॐॐॐॐॐॐॐॐॐॐॐॐॐॐॐॐॐॐॐॐ

प्रकरणः 10

गुरूभक्ति का संविधान

योग्य व्यवहार के नियम

गुरू के कार्य की अविचारी आलोचना नहीं करनी चाहिए।

गुरू को अविचारी सलाह नहीं देना चाहिए। हमेशा चुप रहो।

जाने अनजाने गुरू की भावना को ठेस मत पहुँचाओ।

सदगूरू के चरणकमल की धूलि अमरत्व प्रदान करने वाली है।

गुरू के पावनकारी चरणों की पवित्र धूलि शिष्य के लिए सचमुच वरदान स्वरूप है।

आचार्य के पवित्र चरणों की धूलि ललाट पर लगाना सबसे महान भाग्य की बात है।

जीवन का सबसे महान और दुर्लभ सौभाग्य गुरू के चरणकमल का स्पर्श है।

गुरूकृपा और स्त्री का मुख (काम) वे दोनों परस्पर विरूद्ध चीजें हैं। अगर आपको एक की आवश्यकता हो तो दूसरी का त्याग करो।

गुरू के पावन चरणों की पवित्र धूलि शिष्य को रिद्धि-सिद्धि दिलाती है।

सदगुरू के जीवनदायी चरणों की धूलि पूजने योग्य है।

शिष्य की सबसे महान संपत्ति अपने सदगुरू के चरणकमल की पवित्र धूलि है।

जो व्यक्ति अपने गुरू के चरणकमल की पवित्र धूलि को अपने ललाट पर लगाता है उसका हृदय शीघ्र पवित्र बनता है।

गुरू के चरणकमल की धूलि की महिमा अवर्णनीय है।

इस पृथ्वी पर हमारा जीवन अन्तःकरणपूर्वक सदगुरू के प्रति दिनोंदिन वर्धमान भक्तिभाव से, अधिक से अधिक उनकी सेवा करने के लिए उनकी आज्ञा में रहने के लिए एक उत्तम मौका है।

गुरूभक्तियोग की नींव गुरू के प्रति अखण्ड श्रद्धा में निहित है।

शिष्य को समझ में आता है कि हिमालय की एकान्त गुफा में समाधि लगाने की अपेक्षा गुरू की निजी सेवा करने से वह उनके ज्यादा

संयोग में आ सकता है, गुरू के साथ अधिक एकता स्थापित कर सकता है।

गुरू को सम्पूर्ण, बिनशरती आत्म-समर्पण करने से अचूक गुरूभक्ति प्राप्त होती है।

जीवनजंजाल से परे

जब आप मुश्किलियों एवं मुसीबतों में आ जायें तब गुरू की कृपा के लिए प्रार्थना करें। अपने सच्चे हृदय से बार-बार प्रार्थना करें। सब सरल बन जाएगा।

प्रातःकाल में जगने के तुरन्त बाद और रात्रि के समय सोने से पहले गुरू का चिन्तन करो। पूर्णतः उनकी शरण में जाओ।

सोने से पहले, दिन के दौरान अगर गुरू की सेवा के बारे में आज्ञापालन में निष्ठा का अभाव या ऐसी कोई भूल हुई हो तो उसका विचार करो।

अपनी आवश्यकताएँ कम करो। पैसे बचाओ और गुरू के चरणकमलों में अर्पण करो। इसमें आपकी गुरूभक्ति की कसौटी है।

ब्रह्मनिष्ठ गुरू के चरणकमलों के सान्निध्य में जाने के लिए कला, विज्ञान या विद्वता कुछ भी आवश्यक नहीं है। आवश्यक है केवल उनके प्रति उनके प्रति प्रेम और भक्ति से पूर्ण हृदय, जो फल की अपेक्षा से रहित, केवल उनमें ही निरत रहने के संकल्पवाला होना चाहिए। केवल उनके ही कार्य में लगा हुआ केवल उनके ही प्रेम में मग्न रहने वाला होना चाहिए।

मानसिक शान्ति और आनन्द गुरू को किये हुए आत्मसमर्पण का फल है।

गुरू के प्रति सच्चे भक्तिभाव की कसौटी आन्तरिक शान्ति और उनके आदेशों का पालन करने की तत्परता में निहित है।

गुरूसेवा के द्वारा ज्ञान में वृद्धि करो और मुक्ति पाओ।

गुरूकृपा से जिनको विवेक और वैराग्य प्राप्त हुए हैं उनको धन्यवाद है ! वे सर्वोत्तम शान्ति और सनातन सुख का भोग करेंगे।

शिष्य गुरू को जब तक योग्य गुरूदक्षिणा नहीं देगा तब तक गुरू के दिये हुए ज्ञान का फल मिलेगा नहीं।

गुरूभक्तियोग मन का संयम और गुरू की सेवा द्वारा उसमें होने वाला परिवर्तन है।

शिष्यों के प्रकार

उत्तम शिष्य पैट्रोल जैसा है। काफी दूर होते हुए भी गुरू उपदेश की चिंगारी को तुरंत पकड़ लेता है।

दूसरी कक्षा का शिष्य कपूर जैसा है। गुरू के स्पर्श से उसकी अन्तरात्मा जाग्रत होती है और वह उसमें आध्यात्मिकता की अग्नि को प्रज्जवलित करता है।

तीसरी कक्षा का शिष्य कोयले जैसा है। उसकी अन्तरात्मा को जाग्रत करने में गुरू को बहुत तकलीफ उठानी पड़ती है।

चौथी कक्षा का शिष्य केले के तने जैसा है। उसके लिए किये गये कोई भी प्रयास काम नहीं लगते। गुरू कितना भी करे फिर भी वह ठण्डा और निष्क्रिय रहता है।

"हे शिष्य ! सुन। तू केले के तने जैसा मत होना। तू पैट्रोल जैसा शिष्य बनने का प्रयास करना अथवा तो कम-से-कम कपूर जैसा तो अवश्य बनना

आप जब अपने गुरू के पवित्र चरणों की शरण में जाएँ तब उनसे दुन्यावी आवश्यकताएँ या और कोई चीजें माँगना नहीं किन्तु उनकी कृपा ही माँगना जिसके कारण आपमें उनके प्रति सच्चा भक्तिभाव और स्थायी श्रद्धा जगे।

गुरू ही मार्ग हैं, जीवन हैं और आखिरी ध्येय हैं। गुरूकृपा के बिना किसी को भी सर्वोत्तम सुख प्राप्त नहीं हो सकता।

गुरू ही मोक्षद्वार हैं। गुरू ही मूर्तिमन्त कृपा हैं।

जीने के लिए मरो। अपने गुरू के चरणकमलों में मरो। अहंभाव का त्याग करके मरो जिससे पुनः सच्चा दिव्य जीवन जी सको। जिस जीवन में गुरूकृपा के प्राणों की धड़कन नहीं है, जो जीवन गुरूकृपा से दिव्य स्वरूप को प्राप्त नहीं हुआ है वह सच्चा जीवन नहीं है।

गुरू और शिष्य के बीच जो वास्तविक सम्बन्ध है उसका वर्णन नहीं हो सकता, वह लिखा नहीं जा सकता, वह समझाया नहीं जा सकता। सत्य के सच्चे खोजी को करूणास्वरूप ब्रह्मनिष्ठ गुरू के पास श्रद्धा और भक्तिभाव से आना चाहिए। उनके साथ चिरकाल तक रहकर सेवा करना चाहिए।

गुरूभक्तियोग एक स्वतंत्र योग है।

शिष्य की कसौटी करने के लिए गुरू जब विघ्न डालें तब धैर्य रखना चाहिए।

गुरू सेवा के कार्य में आत्मभोग देना यह गुरू के पवित्र चरणों के प्रति भक्तिभाव विकसित करने का उत्तम साधन है।

प्रार्थना, जप, कीर्तन, समाधि, गुरूसेवा, ऊँचे भव्य विचार और समझ में से मन की शान्ति उत्पन्न होती है।

गुरू की सेवा के दौरान शिष्य को बहुत ही नियमित रहना चाहिए।

गुरू के दिव्य कार्य हेतु शिष्य को मन, वचन और कर्म में बहुत ही पवित्र रहना चाहिए।

आपके हृदय रूपी उद्यान में निष्ठा, सादगी, शान्ति, सहानुभूति, आत्मसंयम और आत्मत्याग जैसे पुष्प सुविकसित करो और वे पुष्प अपने गुरू को अर्घ्य के रूप में अर्पण करो।

ब्रह्मनिष्ठ गुरू की कृपा से प्राप्त न हो सके ऐसा तीनों लोकों में कुछ भी नहीं है।

गुरूभक्तियोग का अभ्यास किये बिना साधक के लिए ईश्वर-साक्षात्कार की ओर ले जाने वाले आध्यात्मिक मार्ग में प्रविष्ट होना संभव नहीं है।

गुरूभक्तियोग दिव्य सुख के द्वार खोलने के लिए गुरूचाबी है।

गुरूभक्तियोग के अभ्यास से सर्वोच्च शान्ति के राजमार्ग का प्रारंभ होता है।

सदगुरू के पवित्र चरणों में आत्मसमर्पण करना ही गुरूभक्तियोग की नींव है।

अगर आपको सदगुरू के जीवनदायक चरणों में दृढ़ श्रद्धा एवं भक्तिभाव होगा तो आपको गुरूभक्तियोग के अभ्यास में अवश्य सफलता मिलेगी।

केवल मनुष्य का पुरूषार्थ ही योगाभ्यास के लिए पर्याप्त नहीं है लेकिन गुरूकृपा अनिवार्यतः आवश्यक है।

बाघ, सिंह या हाथी जैसे जंगली प्राणियों को पालना बहुत ही आसान है, पानी या आग पर चलना बहुत आसान है लेकिन मनुष्य में

अगर गुरूभक्तियोग के अभ्यास के लिए तमन्ना न हो तो गुरू के चरणकमलों में आत्मसमर्पण करना बहुत कठिन है।

गुरूभक्तियोग के अभ्यास से शिष्य को सर्वोत्तम शान्ति, आनन्द और अमरता प्राप्त होती है।

जीवन का ध्येय गुरूभक्तियोग का अभ्यास करके सदगुरू की कल्याणकारी कृपा प्राप्त करना है।

गुरूभक्तियोग के अभ्यास से जन्म-मृत्यु के चक्कर से मुक्ति मिलती है।

गुरूभक्तियोग अमरता, सनातन सुख, मुक्ति, पूर्णता, अखूट आनन्द एवं चिरंतन शान्ति देता है।

संसार या सांसारिक प्रक्रिया के मूल में मन है। बन्धन और मुक्ति, सुख और दुःख का कारण मन है। इस मन को गुरूभक्तियोग के अभ्यास से ही नियंत्रित किया जा सकता है।

सदगुरू के दिव्य कार्य के वास्ते आत्मसमर्पण करना अथवा तन, मन, धन अर्पण करना चाहिए। सदगुरू की कल्याणकारी कृपा प्राप्त करने के लिए उनके पवित्र चरणों का ध्यान करना चाहिए। गुरू के पवित्र उपदेश को सुनकर निष्ठापूर्वक उसके मुताबिक चलना चाहिए।

उल्लू सूर्यप्रकाश के अस्तित्व में माने या न माने फिर भी सूर्य तो सदा प्रकाशित रहता है। उसी प्रकार अज्ञानी और चंचल मनवाला शिष्य माने या न माने फिर भी गुरू की कल्याणकारी कृपा तो चमत्कारी परिणाम देती है।

अपने गुरू को ईश्वर मानकर उनमें विश्वास रखो, उनका आश्रय लो, ज्ञान की दीक्षा लो।

केवल शुद्ध भक्ति से ही गुरू प्रसन्न होते हैं।

गुरूभक्तियोग के अभ्यास के मन की शान्ति और स्थिरता प्राप्त होती है।

जिसने सदगुरू के पवित्र चरणों में आश्रय लिया है ऐसे शिष्य के पास से मृत्यु पलायन हो जाती है।

गुरूभक्तियोग का अभ्यास सांसारिक पदार्थों के प्रति वैराग्य और अनासक्ति पैदा करता है और अमरता प्रदान करता है।

सदगुरू के जीवनप्रदायक चरणों की भक्ति महापापी का भी उद्धार कर देती है।

जिसने सदगुरू के पवित्र चरणों में आश्रय लिया है ऐसे पवित्र हृदयवाले शिष्य के लिए कोई भी वस्तु अप्राप्त नहीं है।

साधुत्व और संन्यास से, अन्य योगों से एवं दान से, मंगल कार्य करने आदि से जो कुछ भी प्राप्त होता है वह सब गुरूभक्तियोग के अभ्यास से शीघ्र प्राप्त होता है।

गुरूभक्तियोग शुद्ध विज्ञान है। वह निम्न प्रकृति को वश में लाने की एवं परम आनन्द प्राप्त करने की रीति सिखाता है।

गुरूदेव की कल्याणकारी कृपा प्राप्त करने के लिए आपके अन्तःकरण की गहराई से उनको प्रार्थना करो। ऐसी प्रार्थना चमत्कार कर सकती है।

जिस शिष्य को गुरूभक्तियोग का अभ्यास करना है उसके लिए कुसंग एक महान शत्रु है।

जो नैतिक पूर्णता, गुरू की भक्ति आदि के बिना ही गुरूभक्तियोग का अभ्यास करता है उसे गुरूकृपा नहीं मिल सकती।

गुरू में अविचल श्रद्धा शिष्य को कैसी भी मुसीबत से पार होने की गूढ़ शक्ति देती है।

गुरू में दृढ़ श्रद्धा साधक को अनन्त ईश्वर के साथ एकरूप बनाती है।

जिस शिष्य को गुरू में श्रद्धा है वह दलील नहीं करता, विचार नहीं करता, तर्क नहीं करता। वह तो केवल आज्ञा ही मानता है।

शिष्य जब गुरू में श्रद्धा खो देता है तब उसका जीवन उजाड़ मरूभूमि जैसा बन जाता है। साधक जब गुरू में श्रद्धा खो बैठता है तब उसके जीवन का वैभव नष्ट हो जाता है।

जीवन का पानी गुरू में दृढ़ श्रद्धा है।

सदैव याद रखोः मनुष्य जब पवित्र गुरू के शब्दों में श्रद्धा खो देता है तब वह सब कुछ खो बैठता है। अतः गुरू में पूर्ण श्रद्धा रखो।

गुरू के चरणकमलों की प्रार्थना शिष्य के हृदय को प्रफुल्ल बनाती है। उसके मन को शक्ति, शान्ति एवं शुद्धि से भर देती है।

गुरूदेव के पावन चरणों का भावपूर्वक प्रक्षालन करके उस चरणोदक को अपने सिर पर छिड़को। यह महान शुद्धि करने वाला है।

दिव्य गुरू के पवित्र चरणों की धूलि बनना यह जीवन का अमूल्य लाभ है।

आध्यात्मिक गुरू के पवित्र चरणों की प्रार्थना सुबह की चाबी और शाम का ताला है। अर्थात सुबह होने से पहले एवं शाम होने के बाद प्रार्थना करना चाहिए।

सदगुरू के चरणों के प्रति श्रद्धा एवं भक्तिभाव रहित जीवन मरूभूमि में खड़े हुए रसहीन वृक्ष जैसा है।

गुरू के पवित्र चरणों की प्रार्थना शिष्य के हृदय की गहराई में से निकलनी चाहिए।

शिष्य के शुद्ध, निखालिस हृदय से निकली हुई आर्जवपूर्ण प्रार्थना ब्रह्मनिष्ठ गुरू तुरन्त सुनते हैं।

दुःख से मुक्ति पाने के लिए नहीं अपितु दुःख सहन करने की शक्ति एवं तितिक्षा प्राप्त करने के लिए प्रार्थना करो।

सब दोषों से पार होने की शक्ति के लिए सदगुरू के चरणकमलों की प्रार्थना करो।

हर एक अपने ढंग से गुरू की सेवा करना चाहता है लेकिन गुरू चाहें उस प्रकार गुरू की सेवा करना कोई नहीं चाहता।

शिष्य अपने गुरू की सेवा करना तो चाहता है पर किसी प्रकार का कष्ट सहना नहीं चाहता।

सच्चे सुख का मूल

सच्चा सुख सदगुरू की सेवा में निहित है।

शिष्य गुरूसेवा के द्वारा ही देहाध्यास से छूटकर ऊँची कक्षा प्राप्त कर सकता है।

अपने गुरू में, गुरू की महिमा में और गुरू के नामजप के प्रभाव में सच्ची, पूर्ण, जीवन्त और अविचल श्रद्धा रखो।

गुरू की सम्पूर्णतः शरणागति लेना गुरूभक्ति की अनिवार्य शर्त है।

जब तक आपको गुरू में अखण्ड श्रद्धा न जगे तब तक गुरू की कृपा आप उतरेगी ऐसी आशा मत करना।

जो गुरू मुक्तात्मा है उनके कार्य अश्रद्धा से या सन्देह से नहीं देखना चाहिए।

ईश्वर, मनुष्य एवं ब्रह्माण्ड के विषय में सच्चा ज्ञान गुरू से लिया जाता है।

गुरू साधना रूपी नाव का सुकान हैं लेकिन पतवार तो साधक को ही चलानी होगी।

गुरूभक्ति तमाम आध्यात्मिक प्रवृत्तियों का मूल है।

गुरू के प्रति भक्तिभाव ईश्वरप्राप्ति का सरल एवं आनन्ददायक मार्ग है।

गुरू भक्ति धर्म का सार है।

गुरू के चरणकमलों के प्रति भक्तिभाव जीवन को सचमुच सार्थक बनाता है।

गुरूभक्ति का आदि, मध्य और अन्त मधुर एवं सुखदायक है।

गुरूप्रेम एवं संसारप्रेम दोनों एक साथ नहीं रह सकते।

गुरू की एवं लक्ष्मी की एक साथ सेवा नहीं हो सकती।

गुरूद्रोह ईश्वरद्रोह के बराबर है।

भक्ति का अर्थ

गुरू पर भक्तिभाव होना आध्यात्मिक निर्माण कार्य की नींव है।

भावना की उफान या उत्तेजना गुरूभक्ति नहीं कहलाती।

शरीरप्रेम यानी गुरू प्रेम का इन्कार। शिष्य अगर अपने शरीर की अधिक देखभाल करता है तो वह गुरू की सेवा नहीं कर पाता।

साधक के दुष्ट स्वभाव का एकमात्र उपाय गुरूसेवा है।

गुरू बिल्कुल हिचकिचाहट से रहित, निःशेष एवं सम्पूर्ण आत्मसमर्पण के सिवाय और कुछ नहीं चाहते। जैसे प्रायः आजकल के शिष्य करते हैं वैसे आत्मसमर्पण केवल शब्दों की बात ही नहीं होना चाहिए।

गुरू को जितनी अधिक मात्रा में आत्मसमर्पण करोगे उतनी अधिक गुरूकृपा प्राप्त करोगे।

कितनी मात्रा में गुरूकृपा उतरेगी इसका आधार कितनी मात्रा में आत्मसमर्पण हुआ है इस पर है।

शिष्य का कर्त्तव्य गुरू के प्रति प्रेम रखने का एवं गुरू की सेवा करने का है।

गुरू की कृपा गुरूभक्तियोग का आखिरी लक्ष्य है।

गुरूभक्तियोग का अभ्यास जीवन के परम लक्ष्य के साक्षात्कार का सचोट मार्ग प्रस्तुत करता है।

जहाँ गुरूकृपा है वहाँ योग्य व्यवहार है और जहाँ योग्य व्यवहार है वहाँ रिद्धि-सिद्धि और अमरता है।

माया रूपी नागिन के द्वारा डसे हुए लोगों के लिए गुरू का नाम एक शक्तिशाली रामबाण औषधि है।

पवित्रता, भक्तिभाव, प्रकाश एवं ज्ञान के लिए गुरू की प्रार्थना करो।

गुरूसेवा की भावना आपकी रग-रग में, नस-नस में, प्रत्येक हड्डी में एवं शरीर के तमाम कोषों में गहरी उतर जानी चाहिए। गुरू सेवा की भावना को उग्र बनाओ। उसका बदला अमूल्य है।

गुरूभक्तियोग ही सर्वत्तम योग है।

कुछ शिष्य गुरू के महान शिष्य होने का आडम्बर करते हैं लेकिन उनको गुरूवचन में या कार्य में विश्वास और श्रद्धा नहीं होती।

जो अद्वितीय हैं ऐसे सर्वशक्तिमान गुरू की सम्पूर्ण शरण में जाओ।

गुरूभक्तियोग आपको इसी जन्म में धीरे-धीरे दृढ़तापूर्वक, निश्चिंततापूर्वक एवं अविचलतापूर्वक ईश्वर के प्रति ले जाता है।

अहंभाव के विनाश से गुरूभक्तियोग का प्रारंभ होता है और शाश्वत सुख की प्राप्ति में परिणत होता है।

गुरूभक्तियोग का अभ्यास आपको भय, अज्ञान, निराशावादी स्वभाव, मानसिक अशान्ति, रोग, निराशा, चिन्ता आदि से मुक्त होने में सहायभूत होता है।

गुरूभक्तियोग जीवन के अनिष्टों का एकमात्र उपाय है।

गुरूभक्तियोग के अभ्यास से सर्वसुखमय, अविनाशी आत्मा को भीतर ही खोजो।

एक अन्धा दूसरे अन्धे का मार्गदर्शन नहीं कर सकता। एक कैदी दूसरे कैदी को नहीं छुड़ा सकता। इसी प्रकार जो खुद दुनियादारी के कीचड़ में फँसा हुआ हो वह दूसरों को मुक्ति नहीं करा सकता। इसीलिए गुरूभक्तियोग के अभ्यास के लिए गुरू की अनिवार्य आवश्यकता है।

गुरूभक्तियोग को जीवन का एकमात्र हेतु, ध्येय एवं वास्तविक रस का विषय बनाओ। आप सर्वोच्च सुख प्राप्त करोगे।

गुरू के प्रति भक्तिभाव के बिना आध्यात्मिकता नहीं आ सकती।

यदि आपको गुरूभक्तियोग का अभ्यास करना हो तो कामवासनावाला जीवन जीना छोड़ दो।

अगर आपको सचमुच ईश्वरप्राप्ति की कामना हो तो दुन्यावी भोगविलासों से विमुख बनो और गुरूभक्तियोग का आश्रय लो।

गुरूकृपा से शिष्य के हृदय में विवेक वैराग्य का उदय होता है।

ध्यान के समय शिष्य को सदगुरू से प्रार्थना करना चाहिए कि उनके चरणकमलों की भक्ति उत्तरोत्तर बढ़ती जाय और वह अविचल श्रद्धा प्रदान करे।

जो गुरू के नाम का जप करता है उसको केवल मोक्ष ही नहीं लेकिन सांसारिक समृद्धि, आरोग्यता, दीर्घायु एवं दिव्य ऐश्वर्य की प्राप्ति होती है।

शिष्य को अपने गुरूदेव का जन्मदिन बड़ी भव्यता से मनाना चाहिए।

अनुक्रम

ॐॐॐॐॐॐॐॐॐॐॐॐॐॐॐॐॐॐॐॐॐॐॐॐॐॐ

गुरू और दीक्षा

योग का अभ्यास गुरू के सान्निध्य में करना चाहिए। विशेषतः तंत्रयोग के बारे में यह बात अत्यंत आवश्यक है। साधक कौन सी कक्षा का यह निश्चित करना एवं उसके लिए योग्य साधना पसन्द करना गुरू का कार्य है।

आजकल साधकों में एक ऐसा खतरनाक एवं गलत ख्याल प्रवर्तमान है कि वे साधना के प्रारंभ में ही उच्च प्रकार का योग साधने के लिए काफी योग्यता रखते हैं। प्रायः सब साधकों का जल्दी पतन होता है इसका यही कारण है। इसी से सिद्ध होता है कि अभी वह योगसाधना के लिए तैयार नहीं है। सचमुच में योग्यतावाला शिष्य नम्रतापूर्वक गुरू के पास आता है, गुरू को आत्मसमर्पण करता है, गुरू की सेवा करता है और गुरू के सान्निध्य में योग सीखता है।

गुरू और कोई नहीं है अपितु साधक की उन्नति के लिए विश्व में अवतरित परात्पर जगज्जननी दिव्य माता स्वयं ही हैं। गुरू को देव मानो, तभी आपको वास्तविक लाभ होगा। गुरू की अथक सेवा करो। वे स्वयं ही आपर पर दीक्षा के सर्वश्रेष्ठ आशीर्वाद बरसाएँगे।

गुरू मंत्र प्रदान करते हैं यह दीक्षा कहलाती है। दीक्षा के द्वारा आध्यात्मिक ज्ञान प्राप्त होता है, पापों का विनाश होता है। जिस प्रकार एक ज्योति से दूसरी ज्योति प्रज्जवलित होती है उसी प्रकार गुरू मंत्र के रूप में अपनी दिव्य शक्ति शिष्य में संक्रमित करते हैं। शिष्य उपवास करता है, ब्रह्मचर्य का पालन करता है और गुरू से मंत्र ग्रहण करता है।

दीक्षा से रहस्य का पर्दा हट जाता है और शिष्य वेदशास्त्रों के गूढ़ रहस्य समझने में शक्तिमान बन जाता है। सामान्यतः ये रहस्य गूढ़ भाषा में छुपे हुए होते हैं। खुद ही अभ्यास करने से वे रहस्य प्रकट नहीं होते। खुद ही अभ्यास करने से तो मनुष्य अधिक अज्ञान में गर्क होता है। केवल गुरू ही आपको शास्त्राभ्यास के लिये योग्य दृष्टि दीक्षा के द्वारा प्रदान करते हैं। गुरू अपनी आत्म-साक्षात्कार की ज्योति का प्रकाश उन शास्त्रों के सत्य पर डालेंगे और वे सत्य आपको शीघ्र ही समझ में आ जाएँगे।

जप के लिए मंत्र

ॐ गुरूभ्यो नमः।

ॐ श्री सदगुरू परमात्मने नमः।

ॐ श्री गुरवे नमः।

ॐ श्री सच्चिदानन्द गुरवे नमः।

ॐ श्री गुरु शरणं मम।

अनुक्रम

ॐॐॐॐॐॐॐॐॐॐॐॐॐॐॐॐॐॐॐॐॐॐॐॐॐॐ

मंत्रदीक्षा के लिए नियम

गुरू में सम्पूर्ण श्रद्धा तथा विश्वास रखना चाहिए तथा शिष्य को पूर्णरूपेण उनके प्रति आत्मसमर्पण करना चाहिए।

दीक्षाकाल में गुरू के द्वारा दिये गये तमाम निर्देशों का पूर्ण रूप से पालन करना चाहिए। यदि गुरू ने विशेष नियमों की चर्चा न की हो तो निम्नलिखित सर्व सामान्य नियमों का पालन करना चाहिए।

मंत्रजप से कलियुग में ईश्वर-साक्षात्कार सिद्ध होता है, इस बात पर विश्वास रखना चाहिए।

मंत्रदीक्षा की क्रिया एक अत्यन्त पवित्र क्रिया है, उसे मनोरंजन का साधन नहीं मानना चाहिए। अन्य की देखादेखी दीक्षा ग्रहण करना उचित नहीं। अपने मन को स्थिर और सुदृढ़ करने के पश्चात गुरू की शरण में जाना चाहिए।

मंत्र को ही भगवान समझना चाहिए तथा गुरू में ईश्वर का प्रत्यक्ष दर्शन करना चाहिए।

मंत्रदीक्षा को सांसारिक सुख-प्राप्ति का माध्यम नहीं बनाना चाहिए, भगव्तप्राप्ति का माध्यम बनाना चाहिए।

मंत्रदीक्षा के अनन्तर मंत्रजप को छोड़ देना घोर अपराध है, इससे मंत्र का घोर अपमान होता तथा साधक को हानि होने की संभावना भी रहती है।

साधक को आसुरी प्रवृत्तियाँ - काम, क्रोध, लोभ, मोह, ईर्ष्या, द्वेष आदि का त्याग करके दैवी सम्पत्ति सेवा, त्याग, दान, प्रेम, क्षमा, विनम्रता आदि गुणों को धारण करने का प्रयत्न करते रहना चाहिए।

गृहस्थ को व्यवहार की दृष्टि से अपना कर्त्तव्य आवश्यक मानकर पूरा करना चाहिए, परन्तु उसे गौण कार्य समझना चाहिए। समग्र परिवार के जीवन को आध्यात्मिक बनाने का प्रयत्न करना चाहिए। मन, वचन तथा कर्म से सत्य, अहिंसा तथा ब्रह्मचर्य का पालन करना चाहिए।

प्रति सप्ताह मंत्रदीक्षा ग्रहण किये गये दिन एक वक्त फलाहार पर रहना चाहिए और वर्ष के अंत में उस दिन उपवास रखना चाहिए।

भगवान को निराकार-निर्गुण और साकार-सगुण दोनों स्वरूपों में देखना चाहिए। ईश्वर को अनेक रूपों में जानकर श्रीराम, श्रीकृष्ण, शंकरजी, गणेशजी, विष्णु भगवान, दुर्गा, लक्ष्मी इत्यादि किसी भी देवी-देवता में विभेद नहीं करना चाहिए। सभी के इष्टदेव सर्वव्यापक, सर्वज्ञ सभी देवता के प्रति विरोधभाव प्रकट नहीं करना चाहिए। हाँ, आप अपने इष्टदेव पर अधिक विश्वास रख सकेत हो, उसे अधिक प्रेम कर सकते हो परन्तु उसका प्रभाव दूसरे के इष्ट पर नहीं पड़ना चाहिए। भगवद् गीता में कहा भी हैः

यो मां पश्यति सर्वत्र सर्वं च मयि पश्यति।
तस्याहं न प्रणश्यामि स च मे न प्रणश्यति।।

'जो पुरूष सम्पूर्ण भूतों में सबके आत्मरूप मुझ वासुदेव को ही व्यापक देखता है और सम्पूर्ण भूतों को मुझ वासुदेव के अन्तर्गत देखता है, उसके लिए मैं अदृश्य नहीं होता और वह मेरे लिय अदृश्य नहीं होता' (6, 30)

इस प्रकार गोस्वामी जी ने भी लिखा है किः

सिया राम मय सब जग जानी।
करहुँ प्रनाम जोरि जुग पानी।।

अपना इष्ट मंत्र गुप्त रखना चाहिए।

पति पत्नी यदि एक ही गुरू की दीक्षा लें तो यह अति उत्तम है, परन्तु अनिवार्य नहीं है।

लिखित मंत्रजप करना चाहिए तथा उसे किसी पवित्र स्थान में सुरक्षित रखना चाहिए। इससे वातावरण शुद्ध रहता है।

मंत्रजप के लिए पूजा का एक कमरा अथवा कोई स्थान अलग रखना संभव हो तो उत्तम है। उस स्थान को अपवित्र नहीं होने देना चाहिए।

प्रत्येक समय अपने गुरू तथा इष्टदेव की उपस्थिति का अनुभव करते रहना चाहिए.

प्रत्येक दीक्षित दम्पति को एक पत्नीव्रत तथा पतिव्रता धर्म का पालन करना चाहिए।

अपने घर के मालिक के रूप में गुरू तथा इष्टदेव को मानकर स्वयं अपने को उनके प्रतिनिधि के रूप में कार्य करना चाहिए।

मंत्र की शक्ति पर विश्वास रखना चाहिए। उससे सारे विघ्नों का निवारण हो जाता है।

प्रतिदिन कम से कम 11 माला का जप करना चाहिए। प्रातः और सन्ध्याकाल को नियमानुसार जप करना चाहिए।

माला फिराते समय तर्जनी, अंगूठे के पास की तथा कनिष्ठिका (छोटी) उंगली का उपयोग नहीं करना चाहिए। माला नाभि के नीचे जाकर लटकती हुई नहीं रखनी चाहिए। यदि सम्भव हो तो किसी वस्त्र (गौमुखी) में रखकर माला फिराना चाहिए। सुमेरू के मनके को (मुख्य मनके को) पार करके माला नहीं फेरना चाहिए। माला फेरते समय सुमेरू तक पहुँचकर पुनः माला घुमाकर ही दूसरी माला का प्रारम्भ करना चाहिए।

अन्त में तो ऐसी स्थिति आ जानी चाहिए कि निरन्तर उठते बैठते, खाते-पीते, चलते, काम करते तथा सोते समय भी जप चलते रहना चाहिए।

आप सभी को गुरू देव का अनुग्रह प्राप्त हो, यह हार्दिक कामना है। आप सभी मंत्रजप के द्वारा अपना ऐच्छिक लक्ष्य प्राप्त करने में सम्पूर्णतः सफल हों, ईश्वर आपको शान्ति, आनन्द, समृद्धि तथा आध्यात्मिक प्रगति प्रदान करें ! आप सदा उन्नति करते रहें और इसी जीवन में भगवत्साक्षात्कार करें। हरि ॐ तत्सत्।

अनुक्रम

ॐॐॐॐॐॐॐॐॐॐॐॐॐॐॐॐॐॐॐॐॐॐॐॐॐॐॐॐॐॐॐॐॐॐॐॐ

जप के नियम

स्वामी शिवानन्द सरस्वती

जहाँ तक सम्भव हो वहाँ तक गुरू द्वारा प्राप्त मंत्र की अथवा किसी भी मंत्र की अथवा परमात्मा के किसी भी एक नाम की 1 से 200 माला जप करो।

रूद्राक्ष अथवा तुलसी की माला का उपयोग करो।

माला फिराने के लिए दाएँ हाथ के अँगूठे और बिचली (मध्यमा) या अनामिका उँगली का ही उपयोग करो।

माला नाभि के नीचे नहीं लटकनी चाहिए। मालायुक्त दायाँ हाथ हृदय के पास अथवा नाक के पास रखो।

माला ढंके रखो, जिससे वह तुम्हें या अन्य के देखने में न आये। गौमुखी अथवा स्वच्छ वस्त्र का उपयोग करो।

एक माला का जप पूरा हो, फिर माला को घुमा दो। सुमेरू के मनके को लांघना नहीं चाहिए।

जहाँ तक सम्भव हो वहाँ तक मानसिक जप करो। यदि मन चंचल हो जाय तो जप जितने जल्दी हो सके, प्रारम्भ कर दो।

प्रातः काल जप के लिए बैठने के पूर्व या तो स्नान कर लो अथवा हाथ पैर मुँह धो डालो। मध्यान्ह अथवा सन्ध्या काल में यह कार्य जरूरी नहीं, परन्तु संभव हो तो हाथ पैर अवश्य धो लेना चाहिए। जब कभी समय मिले जप करते रहो। मुख्यतः प्रातःकाल, मध्यान्ह तथा सन्ध्याकाल और रात्रि में सोने के पहले जप अवश्य करना चाहिए।

जप के साथ या तो अपने आराध्य देव का ध्यान करो अथवा तो प्राणायाम करो। अपने आराध्यदेव का चित्र अथवा प्रतिमा अपने सम्मुख रखो।

जब तुम जप कर रहे हो, उस समय मंत्र के अर्थ पर विचार करते रहो।

मंत्र के प्रत्येक अक्षर का बराबर सच्चे रूप में उच्चारण करो।

मंत्रजप न तो बहुत जल्दी और न तो बहुत धीरे करो। जब तुम्हारा मन चंचल बन जाय तब अपने जप की गति बढ़ा दी।

जप के समय मौन धारण करो और उस समय अपने सांसारिक कार्यों के साथ सम्बन्ध न रखो।

पूर्व अथवा उत्तर दिशा की ओर मुँह रखो। जब तक हो सके तब तक प्रतिदिन एक ही स्थान पर एक ही समय जप के लिए आसनस्थ होकर बैठो। मंदिर, नदी का किनारा अथवा बरगद, पीपल के वृक्ष के नीचे की जगह जप करने के लिए योग्य स्थान है।

भगवान के पास किसी सांसारिक वस्तु की याचना न करो।

जब तुम जप कर रहे हो उस समय ऐसा अनुभव करो कि भगवान की करूणा से तुम्हारा हृदय निर्मल होता जा रहा है और चित्त सुदृढ़ बन रहा है।

अपने गुरूमंत्र को सबके सामने प्रकट न करो।

जप के समय एक ही आसन पर हिले-डुले बिना ही स्थिर बैठने का अभ्यास करो।

जप का नियमित हिसाब रखो। उसकी संख्या को क्रमशः धीरे-धीरे बढ़ाने का प्रयत्न करो।

मानसिक जप को सदा जारी रखने का प्रयत्न करो। जब तुम अपना कार्य कर रहे हो, उस समय भी मन से जप करते रहो।

अनुक्रम

ॐॐॐॐॐॐॐॐॐॐॐॐॐॐॐॐ

मनुष्य के चार विभाग

साधारण संसारी मनुष्य दूध जैसा है। वह जब दुष्ट जनों के सम्पर्क में आता है तब उल्टे मार्ग में चला जाता है और फिर कभी वापस नहीं लौटता। उसी दूध में अगर थोड़ी सी छाछ डाली जाती है तो वह दूध दही बन जाता है। संसारी मनुष्य को गुरू दीक्षा देते हैं। अतः जो स्वयं सिद्ध हैं ऐसे गुरू दही जैसे हैं।

छाछ डालने के बाद दूध को कुछ समय तक रख दिया जाता है। इसी प्रकार दीक्षित शिष्य को एकान्त का आश्रय लेकर दीक्षा का मर्म समझना चाहिए। तभी दूध का दही बनेगा, अर्थात् शिष्य का परिवर्तन होगा और वह ज्ञानी बनेगा।

अब दही सरलता से पानी के साथ मिलजुल नहीं जाएगा। अगर दही में पानी डाला जाएगा तो वह तले में बैठ जाएगा। अगर दही को जोर से बिलोया जाएगा तो ही वह पानी के साथ मिश्रित होगा। इसी प्रकार विवेवकवाला मनुष्य जब बुरी संगत में आता है तब दुराचारी लोगों के साथ सरलता के मिलता जुलता नहीं है। लेकिन संगत अत्यंत प्रगाढ़ होगी तो वह भी उल्टे मार्ग में जाएगा। जब दही को सूर्योदय से पहले ब्राह्ममुहूर्त में अच्छी तरह बिलोया जाएगा तब उसमें से मक्खन मिलेगा। इसी प्रकार विवेकी साधक ब्राह्ममुहूर्त में ईश्वर का गहन चिन्तन करता है तो उसे आत्मज्ञान रूपी नवनीत प्राप्त होता है। फिर वह आत्म-साक्षात्कारी साधुरूप बन जाता है।

इस मक्खन (नवनीत) को अब पानी में डाल सकते हैं। वह पानी में मिश्रित नहीं होगा, पानी में डूबेगा नहीं अपितु तैरता रहेगा। आत्म-साक्षात्कार सिद्ध किये हुए साधु अगर दुर्जनों के सम्पर्क में आयेंगे तो भी उल्टे मार्ग में नहीं जाएँगे। दुन्यावी बातों से अलिप्त रहकर आनन्द से संसार में तैरते रहेंगे। अगर इस नवनीत को पिघलाकर घी बनाया जाय और बाद में उसे पानी में डाला जाय तो वह सारे पानी को अपनी सुवास से सुवासित कर देगा। इस प्रकार साधु को निःस्वार्थ प्रेम की आग से पिघलाया जाय तो वह दैवी चैतना रूप घी बनकर अपने संग से सबको पावन करेगा, सबकी उन्नति करेगा। उसके सम्पर्क में आने वालों के जीवन में अपने ज्ञान, महिमा एवं दिव्यता का सिंचन करेगा।

अनुक्रम

ॐॐॐॐॐॐॐॐॐॐॐॐॐॐॐॐॐॐॐॐॐॐॐॐॐॐॐॐ

'गुरूकृपा हि केवलं.....'

साधक के जीवन में सदगुरू-कृपा का क्या महत्त्व है, इस विषय में पूज्यपाद संत श्री आसारामजी बापू अपने सदगुरूदेव की अपार कृपा का स्मरण करते हुए कहते हैं-

"मैंने तीन वर्ष की आयु से लेकर बाईस वर्ष की आयु तक अनेकों साधनाएँ की, दस वर्ष की आयु में अनजाने ही रिद्धि-सिद्धियों के अनुभव हुए, भयानक वनों, पर्वतों, गुफाओं में यत्र-तत्र तपश्चर्या करके जो प्राप्त किया वह सब, सदगुरूदेव की कृपा से जो मिला उसके आगे तुच्छ है। सदगुरूदेव ने अपने घर में ही घर बता दिया। जन्मों की साधना पूरी हो गई। उनके द्वारा प्राप्त हुए आध्यात्मिक खजाने के आगे त्रिलोकी का साम्राज्य भी तुच्छ है।"

हम न हँसकर सीखे हैं न रोकर सीखे हैं।
जो कुछ भी सीखे हैं सदगुरू के होकर सीखे हैं।।

अनुक्रम

ॐॐॐॐॐॐॐॐॐॐॐॐॐॐॐॐॐॐॐॐॐॐॐॐॐॐ

पूज्य संत श्री आशाराम जी बापू की पद्यमय संक्षिप्त जीवनगाथा

निवेदन

तत्त्वज्ञ महापुरुषों का सान्निध्य बड़ा दुर्लभ है। संत कबीर जी कहते हैं-

सुख देवें दुःख को हरें, करें पाप का अंत।
कह कबीर वे कब मिलें, परम स्नही संत।।
संत मिले यह सब मिटे, काल जाल जम चोट।
सीस नमावत ढही पड़े, सब पापन की पोट।।

ब्रह्मज्ञानी महापुरुष के आगे जिन्हें अपने शीश को, अहंकार को झुकाने का सौभाग्य मिल जाता है, वे धन्य हो उठते हैं। स्थूल देह धारण कर अवतरित हुए ऐसे परमात्म-पुरुष को भाग्यशाली ही पहचान पाते हैं। लोग परमात्मा को ढूँढने जाते हैं परंतु परमात्मा इन आँखों से कहीं नज़र नहीं आता क्योंकि वह अगम्य है। निराश मनुष्य फिर क्या करे ? उस अलख को कैसे जाने ? कैसे देखे ? संत कबीर जी ने कहा है-

अलख पुरुष की आरसी, साधु का ही देह।
लखा जो चाहे अलख को, इन्हीं में तू लख लेह।।

हे मानव ! यदि तुझे उस अलख को लखना हो, जो जानने से परे है उसे जानना हो, जो देखने से परे है उसे देखना हो तो तू किन्हीं आत्मानुभव से संतृप्त संत-महापुरुष को देख ले क्योंकि उन्हीं में वह अपने पूर्ण वैभव के साथ प्रकट हुआ है।

ऐसे महापुरुष संसाररूपी मरूस्थल में त्रिविध तापों से तप्त मानव के लिए विशाल वटवृक्ष हैं, शीतल जल के झरने हैं। उनकी पावन देह को स्पर्श करके आने वाली हवा भी जीव की जन्म-जन्मांतरों की थकान को उतारकर उसके हृदय को आत्मिक शीतलता से भर देती है। ऐसे महापुरुष की महिमा गाते-गाते तो वेद और पुराण भी थककर कहते हैं- नेति.... नेति.... हमने बहुत वर्णन किया फिर भी बहुत कुछ बाकी रह जाता है।

ऐसे ही एक जीवंत महापुरुष की पद्यमय संक्षिप्त जीवनगाथा को यहाँ जिज्ञासु-हृदयों के समक्ष प्रस्तुत किया गया है।

इस दिव्य शीतल अमृतमय सरिता में नहायें... अपने जन्म-जन्मांतरों के पापों को धोयें.... थकान को उतारें और अपने परमात्म-प्राप्ति के लक्ष्य के पथ पर अग्रसर हों।

गुरु बिन भव निधि तरइ न कोई। जौं विरंचि संकर सम होई।। संत तुलसीदास

प्रकाशक एवं वितरकः महिला उत्थान ट्रस्ट
संत श्री आशाराम जी आश्रम, साबरमती, अहमदाबाद-380005 (गुजरात)
मुद्रकः हरि ॐ मैन्युफेक्चरर्स, कुंजा मतरालियों, पोंटा साहिब (हिमाचल प्रदेश)

श्री आशारामायण

गुरु चरण रज शीष धरि, हृदय रूप विचार।
श्री आशारामायण कहौं, वेदांत को सार।।
धर्म कामार्थ मोक्ष दे, रोग शोक संहार।
भजे जो भक्ति भाव से, शीघ्र हो बेड़ा पार।।

भारत सिंधु नदी बखानी, नवाब जिले में गाँव बेराणी।
रहते एक सेठ गुण खानि, नाम थाउमल सिरुमलानी।।
आज्ञा में रहती मंगीबा, पतिपरायण नाम मंगीबा।
चैत वद छः[1] उन्नीस चौरानवे, आसुमल अवतरित आँगने।।
(1 हिन्दी पंचाग अनुसार वैशाख कृष्ण पक्ष की षष्ठी)
माँ मन में उमड़ा सुख सागर, द्वार पै आया एक सौदागर।
लाया एक अति सुंदर झूला, देख पिता मन हर्ष से फूला।।
सभी चकित ईश्वर की माया, उचित समय पर कैसे आया।
ईश्वर की ये लीला भारी, बालक है कोई चमत्कारी।।
हरि ॐ हरि ॐ हरि ॐ हरि ॐ हरि ॐ हरि ॐ हरि ॐ हरि ॐ

संत सेवा औ' श्रुति श्रवण, मात पिता उपकारी।
धर्म पुरुष जन्मा कोई, पुण्यों का फल भारी।।

सूरत थी बालक की सलोनी, आते ही कर दी अनहोनी।
समाज में थी मान्यता जैसी, प्रचलित एक कहावत ऐसी।।
तीन बहन के बाद जो आता, पुत्र वह त्रेखन कहलाता।
होता अशुभ अमंगलकारी, दरिद्रता लाता है भारी।।
विपरीत किंतु दिया दिखायी, घर में जैसे लक्ष्मी आयी।
तिरलोकी का आसन डोला, कुबेर ने भंडार ही खोला।।
मान प्रतिष्ठा और बढ़ायी, सबके मन सुख शांति छायी।।
हरि ॐ हरि ॐ हरि ॐ हरि ॐ हरि ॐ हरि ॐ हरि ॐ हरि ॐ

तेजोमय बालक बड़ा, आनंद बड़ा अपार।
शील शांति का आत्मधन, करने लगा विस्तार।।

एक दिन थाउमल द्वारे, कुलगुरु परशुराम पधारे।
ज्यूं ही वे बालक को निहारे, अनायास ही सहसा पुकारे।।
यह नहीं बालक साधारण, दैवी लक्षण तेज है कारण।

नेत्रों में है सात्त्विक लक्षण, इसके कार्य बड़े विलक्षण।।
यह तो महान संत बनेगा, लोगों का उद्धार करेगा।
सुनी गुरु की भविष्यवाणी, गद्गद हो गये सिरुमलानी।
माता ने भी माथा चूमा, हर कोई लेकर के घूमा।।
हरि ॐ हरि ॐ हरि ॐ हरि ॐ हरि ॐ हरि ॐ हरि ॐ
ज्ञानी वैरागी पूर्व का, तेरे घर में आय।
जन्म लिया है योगी ने, पुत्र तेरा कहलाय।।
पावन तेरा कुल हुआ, जननी कोख कृतार्थ।
नाम अमर तेरा हुआ, पूर्ण चार पुरुषार्थ।।
सैंतालीस में देश विभाजन, सिंध में छोड़ा भू पशु औ' धन।
भारत अमदावाद में आये, मणिनगर में शिक्षा पाये।।
बड़ी विलक्षण स्मरण शक्ति, आसुमल की आशु युक्ति।
तीव्र बुद्धि एकाग्र नम्रता, त्वरित कार्य औ' सहनशीलता।।
आसुमल प्रसन्नमुख रहते, शिक्षक हँसमुखभाई कहते।
दे दे मक्खन मिश्री कूजा, माँ ने सिखाया ध्यान औ' पूजा।।
ध्यान का स्वाद लगा तब ऐसे, रहने न मछली जल बिन जैसे।
हुए ब्रह्मविद्या से युक्त वे, वही है विद्या या विमुक्तये।
बहुत देर तक पैर दबाते, भरे कंठ पितु आशिष पाते।।
हरि ॐ हरि ॐ हरि ॐ हरि ॐ हरि ॐ हरि ॐ हरि ॐ
पुत्र तुम्हारा जगत में, सदा रहेगा नाम।
लोगों के तुमसे सदा, पूरण होंगे काम।।
सिर से हटी पिता की छाया, तब माया ने जाल फैलाया।
बड़े भाई का हुआ कुशासन, व्यर्थ हुए माँ के आश्वासन।।
गये सिद्धपुर साधना करने, कृष्ण के आगे बहाये झरने।
सेवक सखा भाव से रीझे, गोविंद माधव तब हैं रीझे।।
एक दिना एक माई आयी, बोली हे भगवन सुखदायी।
पड़े पुत्र दुःख मुझे झेलने, खून केस दो बेटे जेल में।।
बोले आसु सुख पावेंग, निर्दोष छूट जल्दी आवेंगे।
बेटे घर आये माँ भागी, आसुमल के पाँवों लागी।।
हरि ॐ हरि ॐ हरि ॐ हरि ॐ हरि ॐ हरि ॐ हरि ॐ
आसुमल का पुष्ट हुआ, अलौकिक प्रभाव।
वाकसिद्धि की शक्ति का, हो गया प्रादुर्भाव।।

बरस सिद्धपुर तीन बिताये, लौट अमदावाद में आये।
करने लगी लक्ष्मी नर्तन, किया भाई का दिल परिवर्तन।।
सिनेमा उन्हें कभी न भाये, बलात् ले गये रोते आये।
जिस माँ ने था ध्यान सिखाया, उसको ही अब रोना आया।।
माँ करना चाहती थी शादी, आसुमल का मन वैरागी।
फिर भी सबने शक्ति लगाई, जबरन कर दी उनकी सगाई।।
शादी को जब हुआ उनका मन, आसुमल कर गये पलायन।
करत खोज में निकल गया दम, मिले भरूच में अशोक आश्रम।।
कठिनाई से मिला रास्ता, प्रतिष्ठा का दिया वास्ता।
घर में लाये आजमाये गुर, बारात ले पहुँचे आदिपुर।।
विवाह हुआ पर मन दृढ़ाया, भगत ने पत्नी को समझाया।
सांसारिक व्यौहार तब होगा, जब मुझे साक्षात्कार होगा।
साथ रहे ज्यूँ आत्मा-काया, साथ रहे वैरागी माया।।
हरि ॐ हरि ॐ हरि ॐ हरि ॐ हरि ॐ हरि ॐ हरि ॐ हरि ॐ

अनश्वर हूँ मैं जानता, सत चित हूँ आनंद।
स्थिति में जीने लगूँ, होवे परमानंद।।

मूल ग्रंथ अध्ययन के हेतु, संस्कृत भाषा है एक सेतु।
संस्कृत की शिक्षा पायी, गति और साधना बढ़ायी।।
एक श्लोक हृदय में पैठा, वैराग्य सोया उठ बैठा।
आशा छोड़ नैराश्यवलम्बित, उसकी शिक्षा पूर्ण अनुष्ठित।।
लक्ष्मी देवी को समझाया, ईशप्राप्ति ध्येय बताया।
छोड़ के घर मैं अब जाऊँगा, लक्ष्य प्राप्त कर लौट आऊँगा।।
केदारनाथ के दर्शन पाये, गुरु खोजत पग आगे बढ़ाये।
आये कृष्ण लीलास्थली में, वृंदावन की कुंज गलिन में।
कृष्ण ने मन में ऐसा ढाला, वे जा पहुँचे नैनिताला।।
वहाँ थे श्रोत्रिय ब्रह्मनिष्ठित, स्वामी लीलाशाह प्रतिष्ठित।
भीतर तरल थे बाहर कठोरा, निर्विकल्प ज्यूँ कागज कोरा।
पूर्ण स्वतंत्र परम उपकारी, ब्रह्मस्थित आत्मसाक्षात्कारी।।
हरि ॐ हरि ॐ हरि ॐ हरि ॐ हरि ॐ हरि ॐ हरि ॐ हरि ॐ

ईशकृपा बिन गुरु नहीं, गुरु बिना नहीं ज्ञान।
ज्ञान बिना आत्मा नहीं, गावहिं वेद पुरान।।

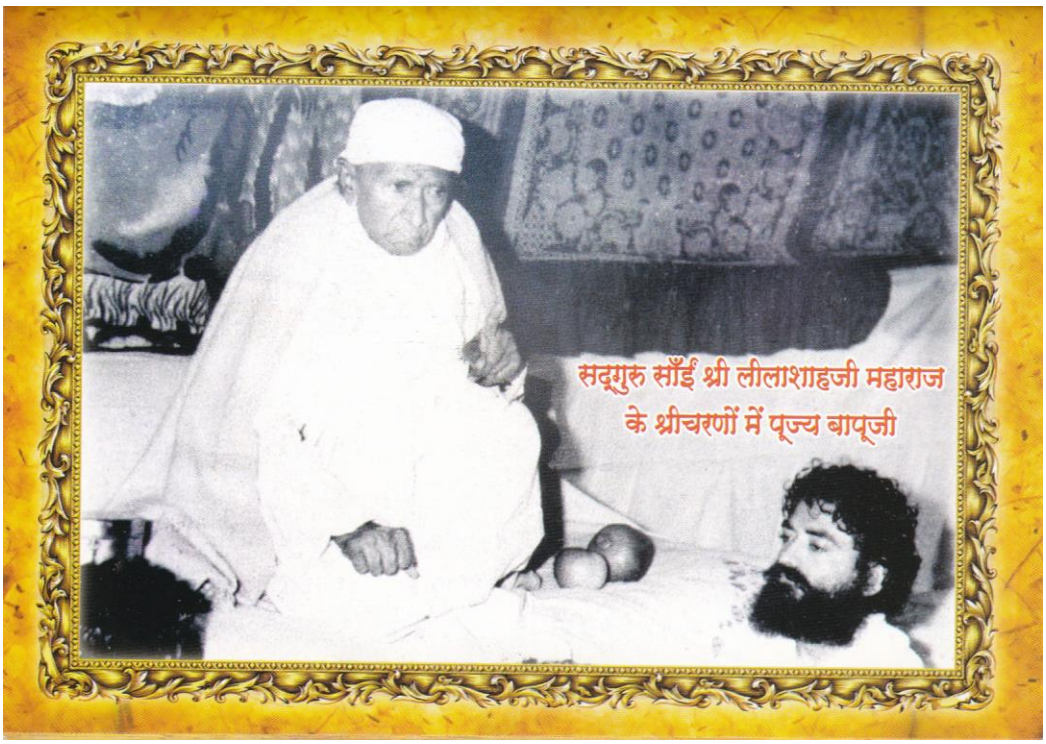

जानने को साधक की कोटि, सत्तर दिन तक हुई कसौटी।
कंचन को अग्नि में तपाया, गुरु ने आसुमल बुलवाया।।
कहा गृहस्थ हो कर्म करना, ध्यान भजन घर पर ही करना।
आज्ञा मानी घर पर आये, पक्ष में मोटी कोरल धाये।।
नर्मदा तट पर ध्यान लगाये, लाल जी महाराज अति हरषाये।
भगवत्प्रीति देख मन भाये, दत्त कुटीर में सादर लाये।।
उमड़ा प्रभु प्रेम का चसका, अनुष्ठान चालीस दिवस का।
मरे छः शत्रु स्थिति पायी, ब्रह्मनिष्ठता सहज समायी।।
शुभाशुभ सम रोना गाना, ग्रीष्म ठंड मान औ' अपमाना।
तृप्त हो खाना भूख अरु प्यास, महल औ' कुटिया आसनिरास।
भक्तियोग ज्ञान अभ्यासी, हुए समान मगहर औ' कासी।।
हरि ॐ हरि ॐ हरि ॐ हरि ॐ हरि ॐ हरि ॐ हरि ॐ हरि ॐ

भाव ही कारण ईश है, न स्वर्ण काठ पाषान।
सत चित आनंदरूप है, व्यापक है भगवान।।
ब्रह्मेशान जनार्दन, सारद सेस गणेश।
निराकार साकार है, है सर्वत्र भवेश।।

हुए आसुमल ब्रह्माभ्यासी, जन्म अनेकों लागे बासी।
दूर हो गयी आधि व्याधि, सिद्ध हो गयी सहज समाधि।।
इक रात नदी तक मन आकर्षा, आयी जोर से आँधी वर्षा।
बंद मकान बरामदा खाली, बैठे वहीं समाधि लगा ली।।
देखा किसी ने सोचा डाकू, लाये लाठी भाला चाकू।
दौड़े चीखे शोर मच गया, टूटी समाधि ध्यान खिंच गया।।
साधक उठा थे बिखरे केशा, राग द्वेष न किंचित् लेशा।
सरल लोगों ने साधु माना, हत्यारों ने काल ही जाना।।
भैरव देख दुष्ट घबराये, पहलवान ज्यूँ मल्ल ही पाये।
कामीजनों ने आशिक माना, साधुजन कीन्हें परनामा।।
हरि ॐ हरि ॐ हरि ॐ हरि ॐ हरि ॐ हरि ॐ हरि ॐ हरि ॐ

एक दृष्टि देखे सभी, चले शांत गम्भीर।
सशस्त्रों की भीड़ को, सहज गये वे चीर।।

माता आयी धर्म की सेवी, साथ में पत्नी लक्ष्मी देवी।

दोनों फूट-फूट के रोयी, रुदन देख करुणा भी रोयी।।
संत लाल जी हृदय पसीजा, हर दर्शन आँसू में भीजा।
कहा सभी ने आप जाइयो, आसुमल बोले कि भाइयों।।
चालीस दिवस हुआ न पूरा, अनुष्ठान है मेरा अधूरा।
आसुमल की तीव्र तितिक्षा, माँ-पत्नी ने की परतीक्षा।।
जिस दिन गाँव से हुई विदाई, जार-जार रोये लोग लुगाई।
अमदावाद को हुए रवाना, मियाँगाँव से किया पयाना।।
मुंबई गये गुरु की चाह, मिले वहीं पै लीलाशाह।
परम पिता ने पुत्र को देखा, सूर्य ने घटजल में पेखा।।
घटक तोड़ जल जल में मिलाया, जल प्रकाश आकाश समाया।
निज स्वरूप का ज्ञान दृढ़ाया, ढाई दिवस ब्रह्मानंद छाया।।
हरि ॐ हरि ॐ हरि ॐ हरि ॐ हरि ॐ हरि ॐ हरि ॐ

आसोज सुद दो दिवस, संवत् बीस इक्कीस।
मध्याह्न ढाई बजे, मिला ईस से ईस।।
देह सभी मिथ्या हुई, जगत हुआ निस्सार।
हुआ आत्मा से तभी, अपना साक्षात्कार।।

परम स्वतंत्र पुरुष दर्शाया, जीव गया और शिव को पाया।
जान लिया हूँ शांत निरंजन, लागू मुझे न कोई बंधन।।
यह जगत सारा है नश्वर, मैं ही शाश्वत एक अनश्वर।
नयन हैं दो पर दृष्टि एक है, लघु गुरु में वही एक है।।
सर्वत्र एक किसे बतलाये, सर्वव्याप्त कहाँ आये जाये।
अनंत शक्तिवाला अविनाशी, रिद्धि सिद्धि उसकी दासी।
यदि वह संकल्प चलाये, मुर्दा भी जीवित हो जाये।।
हरि ॐ हरि ॐ हरि ॐ हरि ॐ हरि ॐ हरि ॐ हरि ॐ

ब्राह्मी स्थिति प्राप्त कर, कार्य रहे न शेष।
मोह कभी न ठग सके, इच्छा नहीं लवलेश।।
पूर्ण गुरु किरपा मिली, पूर्ण गुरु का ज्ञान।
आसुमल से हो गये, साँईं आशाराम।।

जाग्रत स्वप्न सुषुप्ति चेते, ब्रह्मानंद का आनंद लेते।
खाते पीते मौन या कहते, ब्रह्मानंद मस्ती में रहते।।
रहो गृहस्थ गुरु का आदेश, गृहस्थ साधु करो उपदेश।
किये गुरु ने वारे न्यारे, गुजरात डीसा गाँव पधारे।।

मृत गाय दिया जीवन दाना, तब से लोगों ने पहचाना।
द्वार पै कहते नारायण हरि, लेने जाते कभी मधुकरी।।
तब से वे सत्संग सुनाते, सभी आर्ती शांति पाते।
जो आया उद्धार कर दिया, भक्त का बेड़ा पार कर दिया।
कितने मरणासन्न जिलाये, व्यसन मांस और मद्य छुड़ाये।।
हरि ॐ हरि ॐ हरि ॐ हरि ॐ हरि ॐ हरि ॐ हरि ॐ

एक दिन मन उकता गया, किया डीसा से कूच।
आयी मौज फकीर की, दिया झौंपड़ा फूँक।।

वे नारेश्वर धाम पधारे, जा पहुँचे नर्मदा किनारे।
मीलों पीछे छोड़ा मंदर, गये घोर जंगल के अंदर।।
घने वृक्ष तले पत्थर पर, बैठे ध्यान निरंजन का धर।
रात गयी प्रभात हो आयी, बाल रवि ने सूरत दिखायी।।
प्रातः पक्षी कोयल कूकंता, छूटा ध्यान उठे तब संता।
प्रातर्विधि निवृत्त हो आये, तब आभास क्षुधा का पाये।।
सोचा मैं न कहीं जाऊँगा, यहीं बैठकर अब खाऊँगा।

जिसको गरज होगी आयेगा, सृष्टिकर्ता खुद लायेगा।।
ज्यूँ ही मन विचार वे लाये, त्यूँ ही दो किसान वहाँ आये।
दोनों सिर पर बाँधे साफा, खाद्य पेय लिए दोनों हाथा।।
बोले जीवन सफल है आज, अर्घ्य स्वीकारो महाराज।
बोले संत और पै जाओ, जो है तुम्हारा उसे खिलाओ।।
बोले किसान आपको देखा, स्वप्न में मार्ग रात को देखा।
हमारा न कोई संत है दूजा, आओ गाँव करें तुम्हरी पूजा।।
आशाराम जी मन में धारे, निराकार आधार हमारे।
पिया पेय थोड़ा फल खाया, नदी किनारे जोगी धाया।।
इक दिन साबरमती तट आये, ऋषि भूमि के स्पंदन पाये।
बन गया मोक्ष कुटीर वहाँ पर, तीरथ बना संत को पाकर।।
हरि ॐ हरि ॐ हरि ॐ हरि ॐ हरि ॐ हरि ॐ हरि ॐ हरि ॐ
अमदावाद गुजरात में, है मोटेरा ग्राम।
ब्रह्मनिष्ठ श्री संत का, यहीं है पावन धाम।।
आत्मानंद में मस्त हैं, करें वेदांती खेल।
भक्ति योग और ज्ञान का, सदगुरु करते मेल।।
साधिकाओं का अलग, आश्रम नारी उत्थान।
नारी शक्ति जागृत सदा, जिसका नहीं बयान।।
वट वृक्ष पर डाली दृष्टि, कर दी अपनी कृपा की वृष्टि।
परिक्रमा इसकी जो करते, मनोकामना कारज फलते।।
गुरुदर पर है सब कुछ मिलता, श्रद्धा से जीवन है खिलता।
ब्रह्मज्ञानी की महिमा भारी, शरण पड़े उनकी बलिहारी।।
गैस कांड विकराल घटा जब, काँप उठा भोपाल नगर तब।
जहरी गैस की फैली हवाएँ, हजारों ने प्राण गँवाए।।
आशाराम जी के जो साधक, बचे सभी सद्गुरु थे रक्षक।

गुरुमंत्र जो निशदिन जपते, वे न अकाल मृत्यु से मरते।।
कहर सुनामी ने हो ढाया, बाढ़ अकाल भूकम्प हो आया।
जब भी कोई आपदा आयी, गुरुवर ने सेवा पहुँचायी।।
आशाओं के राम हमारे, कहलाते हैं 'बापू' प्यारे।
बापू हैं योगी ब्रह्मवेत्ता, कृपाभिलाषी जन गण नेता।।
अटल जी ने जब आशीष पाया, प्रधानमंत्री पद शोभाया।
विपतकाल में अर्जी लगायी, सत्ता पूर्ण काल तक पायी।।
हिन्दू मुस्लिम सिक्ख ईसाई, बापू चाहे सबकी भलाई।
कितनों को सन्मार्ग दिखाया, प्रभु प्रेम आनंद बरसाया।।
हरि ॐ हरि ॐ हरि ॐ हरि ॐ हरि ॐ हरि ॐ हरि ॐ हरि ॐ

गुरुनिंदक के संग से, होता सत्यानाश।
गुरुनिंदा जो करै सुनै, पड़े वो यम की फाँस।।

गुरुआज्ञा पालन करे, अन्य भावना त्याग।
ब्रह्मज्ञान का लक्ष्य रहे, शिष्य वही बड़भाग।।
गुरुमंत्र जपता रहे, करता जो नित ध्यान।
गुरुसेवा में लगा रहे, निश्चित हो कल्याण।।

घटना है गोधरा की न्यारी, दुनिया में चर्चित हुई भारी।
आशाराम जी का हेलिकॉप्टर, गिरा गोधरा की धरती पर।।
पुर्जे चकनाचूर हो गये, और गगन में दूर उड़ गये।
हजारों की भीड़ थी आयी, फिर भी किसी को खरोंच न आयी।।
श्वेत इंधन की फूटी टंकी, लगी आग बुझ गयी स्वयं ही।
हादसा जब भी ऐसा हुआ है, ना कोई जीवित स्वस्थ बचा है।।
बापू तुरंत पंडाल पधारे, किया नृत्य हर्षित हुए सारे।
चमत्कार था अजब अनोखा, दुनिया ने घर बैठे देखा।।
हरि ॐ हरि ॐ हरि ॐ हरि ॐ हरि ॐ हरि ॐ हरि ॐ

लोगों ने यशगान किया, लख-लख किया बखान।
दस सेकंड का हादसा, चमत्कार ये महान।।
महाकाल को काल ने, शत शत किया प्रणाम।
सर्वसमर्थ हैं सद्गुरु, समरथ है प्रभुनाम।।

बालक वृद्ध और नर नारी, सभी प्रेरणा पायें भारी।
एक बार जो दर्शन पाये, शांति का अनुभव हो जाये।।
नित्य विविध प्रयोग करायें, नादानुसंधान बतायें।
नाभि से वे ओम कहलायें, हृदय से वे राम कहलायें।।
सामान्य ध्यान जो लगायें, उन्हें वे गहरे में ले जायें।
सबको निर्भय योग सिखायें, सबका आत्मोत्थान करायें।।
लाखों के हैं रोग मिटाये, शोक करोड़ों के हैं छुड़ाये।
अमृतमय प्रसाद जब देते, भक्त का रोग शोक हर लेते।।
जिसने नाम का दान लिया है, गुरु अमृत का पान किया है।
उनका योगक्षेम वे रखते, वे न तीन तापों से तपते।।
धर्म कामार्थ मोक्ष वे पाते, आपद रोगों से बच जाते।
सभी शिष्य रक्षा हैं पाते, सर्वव्याप्त सद्गुरु बचाते।।
सचमुच गुरु हैं दीनदयाल, सहज ही कर देते निहाल।
वे चाहते सब झोली भर लें, निज आत्मा का दर्शन कर लें।।
एक सौ आठ जो पाठ करेंग, उनके सारे काज सरेंगे।

रहें न चिंता दुःख निराशा, होंगी पूर्ण सभी अभिलाषा।।

हरि ॐ हरि ॐ हरि ॐ हरि ॐ हरि ॐ हरि ॐ हरि ॐ हरि ॐ

वराभयदाता सद्गुरु, परम हि भक्त कृपाल।

निश्छल प्रेम से जो भजे, साँईं करें निहाल।।

मन में नाम तेरा रहे, मुख पे रहे सुगीत।

हमको इतना दीजिये, रहे चरण में प्रीत।।

ॐॐॐॐॐॐॐॐॐॐॐॐॐॐॐॐॐॐॐॐॐॐ

श्री गुरु - महिमा

गुरु बिन ज्ञान न उपजे, गुरु बिन मिटे न भेद।

गुरु बिन संशय न मिटे, जय जय जय गुरुदेव।।

तीरथ का है एक फल, संत मिले फल चार।

सद्गुरु मिले अनंत फल, कहत कबीर विचार।।

भव भ्रमण संसार दुःख, ता का वार न पार।

निर्लोभी सद्गुरु बिना, कौन उतारे पार।।

पूरा सद्गुरु सेवतां, अंतर प्रगटे आप।

मनसा वाचा कर्मणा, मिटें जन्म के ताप।।

समदृष्टि सद्गुरु किया, मेटा भरम विकार।

जहँ देखो तहँ एक ही, साहिब का दीदार।।
आत्मभ्रांति सम रोग नहीं, सद्गुरु वैद्य सुजान।
गुरु आज्ञा सम पथ्य नहीं, औषध विचार ध्यान।।
सद्गुरु पद में समात हैं, अरिहंतादि पद सब।
तातैं सद्गुरु चरण को, उपासो तजि गर्व।।
बिना नयन पावे नहीं, बिना नयन की बात।
सेवे सद्गुरु के चरण, सो पावे साक्षात्।।

नर - जन्म किसका है सफल ?

दुःसंग में जाता नहीं, सत्संग करता नित्य है।
दुर्ग्रंथ न पढ़ता कभी, सद्ग्रंथ पढ़ता नित्य है।।
शुभ गुण बढ़ाता है सदा, अवगुण घटाने में कुशल।
मन शुद्ध है वश इन्द्रियाँ, नर जन्म उसका है सफल।।
धन का कमाना जानता, धन खर्च करना जानता।
सज्जन तथा दुर्जन तुरंत, मुख देखते पहिचानता।।
हो प्रश्न कैसा ही कठिन, झट ही समझ कर देय हल।
धर्मज्ञ भी मर्मज्ञ भी, न जन्म उसका है सफल।।
चिंता न आगे की करे, न सोच पीछे की करे।
जो प्राप्त हो सो लेय कर, मन में उसे नाहीं धरे।।
ज्यों स्वच्छ दर्पण 'चित्त अपना', नित्य त्यों रक्खे विमल।
चढ़ने न उस पर देय मल, नर जन्म उसका है सफल।।
लाया न था कुछ साथ में, ना साथ कुछ ले जायगा।
मुट्ठी बँधा आया यहाँ, खोले यहाँ से जायगा।।
रोता हुआ जन्मा यहाँ, हँसता हुआ जाये निकाल।
रोते हुए सब छोड़कर, नर जन्म उसका है सफल।।
बांधव न जाते साथ में, सब रह यहाँ ही जाय हैं।
'नाता निभाया बहुत', मर्घट माँहिं पहुँचा आय हैं।।
ऐसा समझकर व्यवहार उनसे, धीर जो करता सरल।
न प्रीति ही ना बैर ही, नर जन्म उसका है सफल।।
मम देह है तू मानता, तब देह से तू अन्य है।
है माल से मालिक अलग, यह बात सबको मन्य है।।
जब देह से तू भिन्न है, क्यों फिर बने हे देह-मल।
जो आपको जाने अमल, नर जन्म उसका है सफल।।

तू जागने को, स्वप्न को, अरु नींदद को है जानता।
ये है अवस्था देह की, क्यों आत्म इनको मानता।।
ना जन्म तेरा, ना मरण, तू तो सदा ही है अटल।
जो जानता आत्मा अचल, नर जन्म उसका है सफल।।
कारण बना है जब तलक, ना कार्य तब तक जायगा।
भोला ! बना है चित्त तब तक, चेत्य ना छुट पायगा।।
पाता वही साम्राज्य अक्षय, चित्त जिसका जाय गल।
इस चित्त को देवे गला, नर जन्म उसका है सफल।।

है दुःख केवल मूढ़ता !

यदि पुत्र होता दुष्ट तो, वैराग्य है सिखलावता।
पुत्रेच्छु पाता दुःख है, है दुःख केवल मूढ़ता।।
सेवक न देते दुःख हैं, देते सभी आराम हैं।
आज्ञानुसारी होय हैं, करते समय पर काम हैं।।
नेत्रादि सेवक साथ फिर भी, मूढ़ ! सेवक चाहता।
पाता उसी से दुःख है, है दुःख केवल मूढ़ता।।
आत्मा कभी मरती नहीं, मरती सदा ही देह है।
ना देह हो सकती अमर, इसमें नहीं संदेह है।।
पर देह भी नाहीं मरे, नर मूढ़ आशा राखता।
पाता इसी से दुःख है, है दुःख केवल मूढ़ता।।

सद्गुरु

छुड़वाय कर सब कामना, कर देय हैं निष्कामना।
सब कामनाओं का बता घर, पूर्ण करते कामना।।
मिथ्या विषय सुख से हटा सुख सिंधु देते हैं बता।
सुख सिंधु जल से पूर्ण, अपना आप देते हैं जता।।
इक तुच्छ वस्तु छीनकर, आपत्तियाँ सब मेटकर।
प्याला पिलाकर अमृत का, मर को बनाते हैं अमर।।
सब भाँति से कृतकृत्य कर, परतंत्र को निज तंत्र कर।
अधिपति से रहित देते बना, भय से छुड़ा करते निडर।।
सद्गुरु जिसे मिल जायँ, सो ही धन्य है जग मन्य है।
सुर सिद्ध उसको पूजते, ता सम न कोऊ अन्य है।।
अधिकारी हो गुरुदेव से, उपदेश जो नर पाय है।
भोला ! तरे संसार से, नहिं गर्भ में फिर आय है।।

ईश्वरकृपा से, गुरुकृपा से, मर्म मैंने पा लिया।
ज्ञानाग्नि में अज्ञान कूड़ा, भस्म सब है कर दिया।।
अब हो गया है स्वस्थ सम्यक्, लेश नहीं भ्रांत है।
शंका हुई निर्मूल सब, अब चित्त मेरा शांत है।।
ॐॐॐॐॐॐॐॐॐॐॐॐॐॐॐॐ

साखियाँ

गुरु को सिर पर राखिये, चलिये आज्ञा माँहिं।
कहै कबीर ता दास को, तीन लोक डर नाहिं।।
गुरु मानुष करि जानते, ते नर कहिये अंध।
महा दुःखी संसार मं, आगे जम के बंध।।
नाम रतन धन मुज्झ में, खान खुली घट माँहिं।
सेंत-मेंत (मुफ्त) ही देत हौं, गाहक कोई नाहिं।।
नाम बिना बेकाम ह , छप्पन कोटि बिलास।
का इन्द्रासन बैठिबो, का बैकुंठ निवास।।
सुमिरन से सुख होत है, सुमिरन से दुःख जाय।
कह कबीर सुमिरन किये, साँईं माँहिं समाय।।
ॐॐॐॐॐॐॐॐॐॐॐॐॐॐॐॐॐॐॐॐॐ

प्रार्थना

गुरुर्ब्रह्मा गुरुर्विष्णुः गुरुर्देवो महेश्वरः।
गुरुर्साक्षात्परब्रह्म तस्मै श्रीगुरवे नमः।।
ध्यानमूलं गुरोर्मूर्तिः पूजामूलं गुरोः पदम्।
मंत्रमूलं गुरोर्वाक्यं मोक्षमूलं गुरोः कृपा।।
अखण्डमण्डलाकारं व्याप्तं येन चराचरम्।
तत्पदं दर्शितं येन तस्मै श्रीगुरवे नमः।।
त्वमेव माता च पिता त्वमेव त्वमेव बन्धुश्च सखा त्वमेव।
त्वमेव विद्या द्रविणं त्वमेव त्वमेव सर्वं मम देव देव।।
ब्रह्मानंद परमसुखदं केवलं ज्ञानमूर्तिं।
द्वन्द्वातीतं गगनसदृशं तत्त्वमस्यादिलक्ष्यम्।।
एकं नित्यं विमलमचलं सर्वधीसाक्षिभूतं।
भावातीतं त्रिगुणरहितं सद्गुरु तं नमामि।।
ॐॐॐॐॐॐॐॐॐॐॐॐॐॐॐॐॐ

गुरु-वंदना

जय सद्गुरु देवन देव वरं, निज भक्तन रक्षण देह धरं।
पर दुःख हरं सुख शांति करं, निरूपाधि निरामय दिव्य परं।।1।।
जय काल अबाधित शांतिमयं, जन पोषक शोषक ताप त्रयं।
भय भंजन देत परम अभयं, मन रंजन भाविक भाव प्रियं।।2।।
ममतादिक दोष नशावत हैं, शम आदिक भाव सिखावत हैं।
जग जीवन पाप निवारत हैं, भवसागर पार उतारत हैं।।3।।
कहुँ धर्म बतावत ध्यान कहीं, कहुँ भक्ति सिखावत ज्ञान कहीं।
उपदेशत नेम अरु प्रेम तुम्हीं, करते प्रभु योग अरु क्षेम तुम्हीं।।4।।
मन इन्द्रिय जाही न जान सके, नहीं बुद्धि जिसे पहचान सके।
नहीं शब्द जहाँ पर जाय सके, बिनु सद्गुरु कौन लखाय सके।।5।।
नहीं ध्यान न ध्यातृ न ध्येय जहाँ, नहीं ज्ञातृ न ज्ञान न ज्ञेय जहाँ।
नहीं देश न काल न वस्तु तहाँ, बिनु सद्गुरु को पहुँचाय वहाँ।।6।।
नहीं रूप न लक्षण ही जिसका, नहीं नाम न धाम कहीं जिसका।
नहीं सत्य असत्य कहाय सके, गुरुदेव ही ताही जनाय सके।।7।।
गुरु कीन कृपा भव त्रास गयी, मिट भूख गयी छुट प्यास गयी।
नहीं काम रहा नहीं कर्म रहा, नहीं मृत्यु रहा नहीं जन्म रहा।।8।।
भग राग गया हट द्वेष गया, अघ चूर्ण भय अणु पूर्ण भया।
नहीं द्वैत रहा सम एक भया, भ्रम भेद मिटा मम तोर गया।।9।।
नहीं मैं नहीं त नहीं अन्य रहा, गुरु शाश्वत आप अनन्य रहा।
गुरु सेवत ते नर धन्य यहाँ, तिनको नहीं दुःख यहाँ न वहाँ।।10।।
ॐॐॐॐॐॐॐॐॐॐॐॐॐॐॐॐॐॐॐॐॐॐॐ

गुरु शिष्य संबंधः जीवन का महानतम संबंध - स्वामी विवेकानंद

शिष्य को अपने गुरु में विश्वास होना चाहिए। गुरु के साथ जो संबंध है, वह जीवन में महानतम है। जीवन में मेरे प्रियतम और निकटतम संबंधी मेरे गुरु हैं, उसके बाद मेरी माता, फिर मेरे पिता। मेरा प्रथम आदर गुरु के लिए है। यदि मेरे पिता कहें 'यह करो' और मेरे गुरु कहें 'इसे मत करो' तो मैं वह नहीं करूँगा। पिता और माता मुझे शरीर देते हैं पर गुरु मुझे आत्मा में नया जन्म देते हैं।

गुरु का स्पर्श, आध्यात्मिक शक्ति का संचरण तुम्हारे हृदय में जान फूँक देगा। तब विकास आरम्भ होगा। तुम आगे, और आगे बढ़ते जाते हो।

गुरु ऐसा मनुष्य होना चाहिए, जिसने जान लिया है, दैवी सत्य को वास्तव में अनुभव कर लिया है। मेरे समान एक वाचाल मूर्ख बातें बहुत बना सकता है पर गुरु नहीं हो सकता।

मैंने सब धर्मग्रंथ पढ़े हैं, वे अदभुत है पर जीवंत शक्ति तुमको पुस्तकों में नहीं मिल सकती। वह शक्ति, जो एक क्षण में जीवन को परिवर्तित कर दे, केवल उन जीवंत प्रकाशवान आत्माओं से ही प्राप्त हो सकती है जो समय-समय पर हमारे बीच में प्रकट होते रहते हैं।

शिष्य को गुरु की पूजा स्वयं ईश्वर के समान करनी चाहिए। जब तक मनुष्य ईश्वर का साक्षात्कार स्वयं ही न कर ले, वह अधिक से अधिक सजीव ईश्वर को, मनुष्य के रूप में ईश्वर को जान सकता है, इसके अतिरिक्त वह ईश्वर को कैसे जानेगा ! गुरु ईश्वर हैं, उससे तनिक भी कम नहीं। मैं गुरु को नमस्कार करता हूँ, जो देवी आनंद की मूर्ति हैं, उच्चतम ज्ञान के विग्रह हैं और महानतम दैवी आनंद के दाता है, जो शुद्ध, पूर्ण, अद्वितीय, सनातन, सब सुख-

दुःखों से परे, सर्वगुणातीत और सर्वोच्च हैं। वास्तव में गुरु ऐसे होते हैं। इसमें आश्चर्य की कोई बात नहीं कि शिष्य उन्हें ईश्वर समझता है और उनमें विश्वास रखता है, श्रद्धा रखता है, उनकी आज्ञा पालता है और बिना शंका किये उनके पीछे चलता है। गुरु और शिष्य के बीच का संबंध ऐसा ही है।

(स्वामी विवेकानंद साहित्य, खंड 3, पृष्ठः 195-200 से संकलित)

ॐॐॐॐॐॐॐॐॐॐॐॐॐॐॐॐॐॐॐॐॐॐॐॐ

अमृत-बिंदु

किसी भी प्रकार के फल की आकांक्षा न रखते हुए सेवा करना यह सर्वोत्तम साधना है।

गुरुदेव की सेवा और गुरुदेव की आज्ञा का पालन करते वक्त आने वाली तमाम आपत्तियों को सहन करने की हिम्मत जो रखता है वही अपने प्राकृत स्वभाव को जीत सकता है।

कृतघ्न शिष्य इस विश्व में अभागा व दुःखी है। उसका भाग्य दयाजनक, कंगाल और अत्यंत शोकजनक है।

अपने गुरुदेव में कमियाँ मत खोजो। अपनी कमियाँ खोजो और उनके दूर करने का प्रयत्न करो। वे शीघ्र दूर हो जायें इसलिए ईश्वर से प्रार्थना करो। (स्वामी शिवानंद सरस्वती)

ॐॐॐॐॐॐॐॐॐॐॐॐॐॐॐॐॐॐॐॐॐॐॐ

डॉ. रमन सिंह
मुख्यमंत्री, छत्तीसगढ़
श्री शिवराज सिंह चौहान
मुख्यमंत्री, मध्य प्रदेश
श्रीमती वसुंधरा राजे सिंधिया
मुख्यमंत्री, राजस्थान
प्रकाश सिंह बादल
मुख्यमंत्री, पंजाब
श्री अशोक सिंहलजी
तत्कालीन मुख्य संरक्षक, विहिप
श्री मोहन भागवत
सरसंघचालक, रा.स्व.संघ
श्री प्रवीण तोगड़िया
अंतर्राष्ट्रीय कार्यकारी अध्यक्ष, विहिप
श्री लालकृष्ण आडवाणी
पूर्व उपप्रधानमंत्री
श्री कैलाश विजयवर्गीय
राष्ट्रीय महासचिव, भाजपा
श्री उद्धव ठाकरे
शिवसेना प्रमुख
श्री फारुख अब्दुल्ला, तत्कालीन केन्द्रीय अक्षय
ऊर्जा मंत्री व पूर्व मुख्यमंत्री, जम्मू-कश्मीर
श्रीमती कृष्णा तीरथ, तत्कालीन
केन्द्रीय महिला एवं बाल विकास मंत्री
श्री मोतीलाल वोरा, कोषाध्यक्ष
काँग्रेस, पूर्व मुख्यमंत्री, म.प्र.

विदेश यात्रा
सेवा में रत बापूजी व साधक
पाकिस्तान के सत्संग में उपस्थित जनसमुदाय
विश्व धर्म संसद, शिकागो में
१९९३ में भारत का प्रतिनिधित्व
पूज्य बापूजी द्वारा विश्व के अनेक देशों में सत्संग-ज्ञान गंगा प्रवाहित हुई है।
सत्संग द्वारा
सर्वांगीण विकास
मकान-वितरण
गुरुकुल
गौशालाएँ
बाल संस्कार केन्द्र
युवा सेवा संघ
महिला उत्थान मंडल
'ऋषि प्रसाद', 'लोक कल्याण सेतु',
'ऋषि दर्शन' का प्रति माह प्रकाशन

श्रद्धापूर्वाः सर्वधर्मा मनोरथ फल प्रदाः। श्रद्धया साध्यते सर्वं श्रद्धया तुष्यते हरिः।।

सनक जी कहते हैं- नारद ! श्रद्धापूर्वक आचरण में लाये हुए सब धर्म मनोवांछित फल देने वाले होते हैं। श्रद्धा से सब कुछ सिद्ध होता है और श्रद्धा से ही भगवान श्रीहरि संतुष्ट होते हैं। (नारद पुराणः 4.1)

कथा कीर्तन जो घर भये, संत भये मेहमान।
वा घर प्रभु वासा कीन्हा, वो घर है वैकुंठ समान।।
कथा कीर्तन जा घर नहीं, संत नहीं मेहमान।
वा घर डेरा जमड़ा दीन्हा, साँझ पड़े श्मशान।।
अलख पुरुष की आरसी, साधु का ही देह।
लखा जो चाहे अलख को, इन्हीं में तू लख लेह।। (संत कबीर)

दृढ़ श्रद्धा और अथाह धैर्य वाले के मनोरथ अवश्य पूर्ण होते हैं।

ॐॐॐॐॐॐॐॐॐॐॐॐॐॐॐॐॐ

निर्भय बनो.....

अपने-आपको परिस्थितियों के गुलाम कभी मत समझो। तुम स्वयं अपने भाग्य के आप विधाता हो। (पूज्य संत श्री आशाराम जी बापू)।

ॐॐॐॐॐॐॐॐॐॐॐॐॐॐॐॐॐॐॐॐॐॐॐॐ

पूज्य बापूजी की
संक्षिप्त
जीवन झाँकी
सबमें एक ईश्वर
को देखनेवाले
प्राणिमात्र के हितैषी
पूजनीया श्री माँ महँगीबाजी
की गोद में पूज्य बापूजी
सिद्धावस्था में
आत्मानंद की मस्ती
विलक्षण
साधनावस्था
अपने सद्गुरु स्वामी
श्री लीलाशाहजी महाराज के
श्रीचरणों में पूज्य बापूजी
देदीप्यमान बाल्यावस्था
शैशव
युगप्रवर्तक संत
श्री आशारामजी बापू